हिन्दी-साहित्य और बिहार

(द्वितीय खण्ड)

[उन्नीसवीं शती पूर्वार्द्ध]

सम्पादक
आचार्य शिवपूजन सहाय

सहायक सम्पादक
श्री बजरंग वर्मा

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
पटना

प्रकाशक
बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्
पटना



प्रथम संस्करण २१०० । शकाब्द १८८५ । विक्रमाब्द २०२० । खृष्टाब्द १९६३

मूल्य : सजिल्द ८·००

मुद्रक
युनाइटेड प्रेस लिमिटेड
पटना ४



आचार्य शिवपूजन सहाय

वक्तव्य

'हिन्दी-साहित्य और बिहार' नामक ग्रन्थमाला के इस दूसरे खण्ड का प्रकाशन करते हुए हम पितृऋण और ऋषिऋण से आंशिक मुक्ति का अनुभव कर रहे हैं। यह तो सब विदित है कि 'बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्' आचार्य श्रीशिवपूजन सहाय के तपस्तेज का एक सुमधुर एवं सुपक्व फल है पर यह ग्रन्थ-गुच्छ तो उनके साहित्यिक जीवन की विराट् कल्पना थी, जिसका सुष्ठु और मूर्त रूप देने का अवसर उन्हें तब मिला, जब वे बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद् के मंत्री हुए। उन्होंने सन् १९५१ ई० में ही परिषद् के संचालक मण्डल के समक्ष इस माला के लेखन, सम्पादन और प्रकाशन कराने का प्रस्ताव रखा, जिसे मण्डल ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। किन्तु, संयोग ऐसा कि उनके संचालनकाल में, इसका एक खण्ड भी प्रकाशित न हो सका। हाँ इतना अवश्य हुआ कि जब आचार्य शिवपूजन सहायजी सन् १९५९ ई० के अगस्त मास में परिषद् की सेवा से निवृत्त हुए, तब इस ग्रन्थमाला की अधिकांश सामग्री एकत्र हो गई थी और कालक्रम के अनुसार विषयों का वर्गीकरण भी हो चुका था। साथ ही, सन् १९५९ ई० के अगस्त तक प्रथम खण्ड के कई फर्मे भी छप चुके थे। उस समय इस ग्रन्थ के सामग्री-सञ्चयन और लेखन में श्रीसहायजी की सहायता मुख्यरूप से श्रीगदाधरप्रसाद अम्बष्ठ और श्रीबजरंग वर्मा, एम्० ए० कर रहे थे। ग्रन्थ का प्रथम खण्ड सन् १९६० ई० में प्रकाशित हो सका, जिसमें ७वीं शती से १८वीं शती तक के बिहारवासी हिन्दी-साहित्य-सेवियों के विवरणात्मक परिचय प्रकाशित किये गये हैं। इस प्रथम खण्ड के वक्तव्य और प्रस्तावना में इस ग्रन्थमाला के प्रणयन की पृष्ठभूमि का रोचक इतिहास श्रीसहायजी स्वयं लिख गये हैं।

यह प्रस्तुत प्रकाशन उक्त ग्रन्थमाला का ही दूसरा खण्ड है। इस ग्रन्थ-गुच्छ में उन्नीसवीं शती के पूर्वार्द्ध (सन् १८०१ से १८५० ई० तक) में जिन बिहारवासी हिन्दी साहित्यिकों का जन्म हुआ है, उन्हीं का विवरणात्मक परिचय दिया गया है। इस खण्ड की सामग्री के संकलन तथा वर्गीकरण के लिए आरंभ में श्रीगदाधरप्रसाद अम्बष्ठ ने हाथ बँटाया था किन्तु प्रारम्भ से अन्त तक सहायक रूप में काम करने का श्रेय साहित्यिक इतिहास विभाग के अनुसन्धायक श्रीबजरंग वर्मा को है जिनका नाम भी सहायक सम्पादक के रूप में हम दे रहे हैं। श्रीवर्मा ने सहायजी के निर्देशन में अन्वेषण, सामग्री-संचयन, लेखन तथा सम्पादन में अच्छी तरह योगदान किया है। परिषद् के कार्यकर्त्ता श्रीचन्द्रेश्वरप्रसाद सिंह 'नीरव', एम्० ए०, डिप्० इन० एड्० ने भी इसके लेखन और सामग्री-संचयन में पूरी सहायता की है। प्राचीन ग्रन्थ शोध विभाग के प्रधान अनुसन्धायक श्रीरामनारायण शास्त्री तथा परिषद् के पुस्तकालयाध्यक्ष श्रीपरमानन्द पाण्डेय, एम् ए० बी० एल्० से भी कई बहुमूल्य सूचनाएँ प्राप्त हुई हैं।

हम अपने इन सभी सहयोगियों का हृदय से धन्यवाद ज्ञापन करते हैं। इसके अतिरिक्त और भी जिन सज्जनों से इसके निर्माण में साहाय्य प्राप्त हुआ है, उन सभी का परिषद् कृतज्ञ है।

आचार्य शिवपूजन सहायजी के जीवन की जो थोड़ी अभिलाषाएँ शेष थीं, उनमें से एक इस ग्रन्थमाला का प्रकाशन भी था। उन्होंने अपनी इस अभिलाषा की कई बार चर्चा भी की थी। अपनी ऐसी निष्ठा के कारण ही परिषद् के संचालकत्व से जब विराम ग्रहण किया तब भी परिषद् में नियमित रूप से आकर इस ग्रन्थ का लेखन-सम्पादन करना उन्होंने नहीं छोड़ा। उन्होंने इस साहित्यिक इतिहास के निर्माण में अपनी अस्वस्थ अवस्था में भी जीवन के अन्तिम क्षण तक, जबतक वे होश में थे जिस तन्मयता और परिश्रम से कार्य किया, वह सर्वथा अभिनन्दनीय एवं वन्दनीय है। यह श्लोक सरस्वती के उस वरद पुत्र के लिए यहाँ समर्पित है—

जयन्ति ते सुकृतिनः रससिद्धाः कवीश्वराः।
नास्ति येषां यशःकाये जरामरणजं भयम्॥

निश्चय ही, स्वर्गीय आचार्य शिवपूजन सहायजी की दिवंगत आत्मा को इस प्रकाशन से परम प्रसन्नता प्राप्त होगी; क्योंकि यही उनके जीवन की शेष अभिलाषा थी।

पहले खण्ड की तरह प्रस्तुत खण्ड के भी प्रथम परिशिष्ट में साहित्यिकों का विवरण प्रकाशित किया गया है, जिनका जन्म-स्थान बिहार प्रान्त नहीं है; पर उनका साहित्य सृजन का कार्यक्षेत्र बिहार ही रहा है। ग्रन्थ के दूसरे परिशिष्ट में प्रथम खण्ड से सम्बद्ध कुछ और सामग्री संकलित की गई है, जिसका समावेश उसमें नहीं हो सका था तथा जिनका अन्वेषण अनुसन्धान उसके प्रकाशन के पश्चात् हुआ है। प्रथम खण्ड का जब द्वितीय संस्करण छपने लगेगा, तब इस सामग्री का समावेश उसमें यथास्थान किया जायगा।

'हिन्दी-साहित्य और बिहार' के प्रथम खण्ड के प्रकाशन की प्रशंसा विद्वानों ने की है। इस दूसरे खण्ड में ऐसी कई बहुमूल्य शोध-सामग्री प्रस्तुत की गई है, जो अबतक अन्धकार में पड़ी थी। अतः परिषद् का यह प्रकाशन विद्वन्मण्डली में विशेष रूप से समादर प्राप्त करेगा, ऐसा हमें विश्वास है। इस ग्रंथमाला के शेष तीन खण्डों के प्रकाशन की भी व्यवस्था परिषद् कर रही है, जिसमें तीसरे खण्ड में उन्नीसवीं शती का उत्तरार्ध होगा और चौथे खण्ड में बीसवीं शती का पूर्वार्द्ध तथा पाँचवें खण्ड में बीसवीं शती का उत्तरार्ध। भगवान् की महती कृपा से ही ऐसे महदनुष्ठान निर्विघ्न सम्पन्न होते हैं। हमें उनकी अहैतुकी मङ्गलमयी सर्वसमर्थ कृपा का सदा सहारा है।

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
शारदाश्विन, २०२० वि०

भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव'
निदेशक

प्रस्तावना

आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार, हिन्दी-साहित्येतिहास के उत्तर मध्य अथवा रीति-काल की अन्तिम सीमा सन् १८४३ ई० (सं० १९०० वि०) है। उनके मतानुसार हिन्दी-साहित्य के आधुनिक अथवा गद्य-काल का आरम्भ उक्त ईसवी से ही होता है। 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' के प्रस्तुत द्वितीय खण्ड का सम्बन्ध सन् ईसवी की उन्नीसवीं शती पूर्वार्द्ध से है। इसमें मुख्यतः बिहार के उन हिन्दी-साहित्यसेवियों के परिचय, उनकी रचनाओं के उदाहरणों के साथ, संगृहीत हैं, जिनके जन्म उक्त काल खण्ड (सन् १८०१ से ५० ई०) में हुए हैं।

इस पुस्तक के प्रथम खण्ड में जो बिहार के बारह सौ वर्षों का इतिहास प्रस्तुत किया गया है, उसे कई कारणों से, 'अन्धकार-युग का इतिहास' कहा गया है। उक्त खण्ड में साहित्यकारों के जन्म-मरण-काल की अनिश्चितता के कारण, प्रत्येक शती में, साहित्यकारों के नाम अक्षरानुक्रम से ही रखे गये हैं। उन्नीसवीं शती पूर्वार्द्ध वाले प्रस्तुत खण्ड में हमें कुल ४३ साहित्यकारों की निश्चित जन्म तिथियाँ ज्ञात हो सकी हैं। इनमें अनेक ऐसे भी हैं, जिनके निधन की तिथियाँ भी उपलब्ध हुई हैं। इन्हीं साहित्यकारों को पाठकों की सुविधा के लिए, प्रस्तुत पुस्तक के प्रथम अध्याय में रखा गया है। इस अध्याय के ४३ साहित्यकारों में, ८ की रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले। द्वितीय अध्याय में उन साहित्यकारों के परिचय संगृहीत हैं, जिनका जन्म-काल उन्नीसवीं शती पूर्वार्द्ध में ही अनुमित है। इस अध्याय में साहित्यकारों की संख्या ७१ है, जिनमें १७ की रचनाओं के उदाहरण अनुपलब्ध हैं। इसी प्रकार, अन्तिम, अर्थात् तृतीय अध्याय में उन साहित्यकारों के परिचय आये हैं, जिनका जन्म-काल उक्त काल-खण्ड में ही अनिश्चित है। इस अध्याय के साहित्यकारों की संख्या ६९ है, जिनमें ३५ की रचनाओं के उदाहरण नहीं प्राप्त हो सके।

पुस्तक के अंत में, छह प्रकार के परिशिष्ट हैं। उनमें सामग्री विभाजन इस प्रकार हुआ है—परिशिष्ट १ में उन ६८ बिहारी साहित्यकारों के नाम और रचनाओं के उदाहरण दिये गये हैं, जिनके परिचय के विषय में विशेष बातें ज्ञात नहीं होतीं। परिशिष्ट २ में उन चौदह अन्यप्रान्तीय हिन्दी-साहित्यकारों की चर्चा है, जिनका कार्यक्षेत्र मुख्यतः बिहार ही रहा है। परिशिष्ट ३ में पुस्तक के प्रथम खण्ड से सम्बद्ध ५२ साहित्यकारों के सम्बन्ध में नवीन सूचनाएँ और २० नवीन परिचय भी हैं, जो नई खोज के क्रम में प्राप्त हुए हैं। इन २० नवीन परिचयों में कुल १० के ही उदाहरण उपलब्ध हो सके हैं। परिशिष्ट ४ में प्रस्तुत खण्ड से सम्बद्ध तीन साहित्यकारों के परिचय-मात्र हैं। परिशिष्ट ५ में एक परिचय-तालिका दी गई है, जिससे पाठक सुगमतापूर्वक प्रस्तुत खण्ड के मुख्य तीन अध्यायों का सिंहावलोकन कर सकें। अंत में, परिशिष्ट ६ में, मूल पुस्तक में संकलित उदाहरणों की प्रथम पंक्ति की, अकारादिक्रम से सूची दी गई है।

हम अपने इन सभी सहयोगियों का हृदय से धन्यवाद ज्ञापन करते हैं। इनके अतिरिक्त और भी जिन सज्जनों से इसके निर्माण में साहाय्य प्राप्त हुआ है, उन सभी का परिषद् कृतज्ञ है।

आचार्य शिवपूजन सहायजी के जीवन की जो थोड़ी अभिलाषाएँ शेष थीं, उनमें से एक इस ग्रन्थमाला का प्रकाशन भी था। उन्होंने अपनी इस अभिलाषा की कई बार चर्चा भी की थी। अपनी ऐसी निष्ठा के कारण ही परिषद् के संचालकत्व से जब विराम ग्रहण किया तब भी परिषद् में नियमित रूप से आकर इस ग्रन्थ का लेखन-सम्पादन करना उन्होंने नहीं छोड़ा। उन्होंने इस साहित्यिक इतिहास के निर्माण में अपनी अस्वस्थ अवस्था में भी जीवन के अन्तिम क्षण तक, जबतक वे होश में थे जिस तन्मयता और परिश्रम से कार्य किया, वह सर्वथा अभिनन्दनीय एवं वन्दनीय है। यह श्लोक सरस्वती के उस वरद पुत्र के लिए यहाँ समर्पित है—

जयन्ति ते सुकृतिनः रससिद्धाः कवीश्वराः।
नास्ति येषां यशःकाये जरामरणजं भयम्॥

निश्चय ही, स्वर्गीय आचार्य शिवपूजन सहायजी की दिवंगत आत्मा को इस प्रकाशन से परम प्रसन्नता प्राप्त होगी; क्योंकि यही उनके जीवन की शेष अभिलाषा थी।

पहले खण्ड की तरह प्रस्तुत खण्ड के भी प्रथम परिशिष्ट में साहित्यिकों का विवरण प्रकाशित किया गया है, जिनका जन्म-स्थान बिहार प्रान्त नहीं है; पर उनका साहित्य सृजन का कार्यक्षेत्र बिहार ही रहा है। ग्रन्थ के दूसरे परिशिष्ट में प्रथम खण्ड से सम्बद्ध कुछ और सामग्री संकलित की गई है, जिनका समावेश उसमें नहीं हो सका था तथा जिनका अन्वेषण अनुसन्धान उसके प्रकाशन के पश्चात् हुआ है। प्रथम खण्ड का जब द्वितीय संस्करण छपने लगेगा, तब इस सामग्री का समावेश उसमें यथास्थान किया जायगा।

'हिन्दी-साहित्य और बिहार' के प्रथम खण्ड के प्रकाशन की प्रशंसा विद्वानों ने की है। इस दूसरे खण्ड में ऐसी कई बहुमूल्य शोध-सामग्री प्रस्तुत की गई है, जो अबतक अन्धकार में पड़ी थी। अतः परिषद् का यह प्रकाशन विद्वन्मण्डली में विशेष रूप से समादर प्राप्त करेगा, ऐसा हमें विश्वास है। इस ग्रंथमाला के शेष तीन खण्डों के प्रकाशन की भी व्यवस्था परिषद् कर रही है, जिसमें तीसरे खण्ड में उन्नीसवीं शती का उत्तरार्द्ध होगा और चौथे खण्ड में बीसवीं शती का पूर्वार्द्ध तथा पाँचवें खण्ड में बीसवीं शती का उत्तरार्द्ध। भगवान् की महती कृपा से ही ऐसे महदनुष्ठान निर्विघ्न सम्पन्न होते हैं। हमें उनकी अहैतुकी मङ्गलमयी सर्वसमर्थ कृपा का बड़ा सहारा है।

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
शिवरात्रि, २०२० वि०

भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव'
निदेशक

प्रस्तावना

आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार, हिन्दी-साहित्येतिहास के उत्तर मध्य अथवा रीति-काल की अन्तिम सीमा सन् १८४३ ई० (सं० १९०० वि०) है। उनके मतानुसार हिन्दी-साहित्य के आधुनिक अथवा गद्य-काल का आरम्भ उक्त ईसवी से ही होता है। 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' के प्रस्तुत द्वितीय खण्ड का सम्बन्ध सन् ईसवी की उन्नीसवीं शती पूर्वार्द्ध से है। इसमें मुख्यतः बिहार के उन हिन्दी-साहित्यसेवियों के परिचय, उनकी रचनाओं के उदाहरणों के साथ, संगृहीत हैं, जिनके जन्म उक्त काल खण्ड (सन् १८०१ से ५० ई०) में हुए हैं।

इस पुस्तक के प्रथम खण्ड में जो बिहार के बारह सौ वर्षों का इतिहास प्रस्तुत किया गया है, उसे कई कारणों से, 'अन्धकार-युग का इतिहास' कहा गया है। उक्त खण्ड में साहित्यकारों के जन्म-मरण-काल की अनिश्चितता के कारण, प्रत्येक शती में, साहित्यकारों के नाम अक्षरानुक्रम से ही रखे गये हैं। उन्नीसवीं शती पूर्वार्द्ध वाले प्रस्तुत खण्ड में हमें कुल ४८ साहित्यकारों की निश्चित जन्म तिथियाँ ज्ञात हो सकी हैं। इनमें अनेक ऐसे भी हैं, जिनके निधन की तिथियाँ भी उपलब्ध हुई हैं। इन्हीं साहित्यकारों को पाठकों की सुविधा के लिए, प्रस्तुत पुस्तक के प्रथम अध्याय में रखा गया है। इस अध्याय के ४६ साहित्यकारों में, ८ की रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले। द्वितीय अध्याय में उन साहित्यकारों के परिचय संगृहीत हैं, जिनका जन्म-काल उन्नीसवीं शती पूर्वार्द्ध में ही अनुमित है। इस अध्याय में साहित्यकारों की संख्या ७१ है, जिनमें १७ की रचनाओं के उदाहरण अनुपलब्ध हैं। इसी प्रकार, अन्तिम, अर्थात् तृतीय अध्याय में उन साहित्यकारों के परिचय आये हैं जिनका जन्म-काल उक्त काल-खण्ड में ही अनिश्चित है। इस अध्याय के साहित्यकारों की संख्या ६६ है, जिनमें ३५ की रचनाओं के उदाहरण नहीं प्राप्त हो सके।

पुस्तक के अंत में, छह प्रकार के परिशिष्ट हैं। उनमें सामग्री विभाजन इस प्रकार हुआ है—परिशिष्ट १ में उन १८ बिहारी साहित्यकारों के नाम और रचनाओं के उदाहरण दिये गये हैं, जिनके परिचय के विषय में विशेष बातें ज्ञात नहीं होतीं। परिशिष्ट २ में उन चौदह अन्यप्रान्तीय हिन्दी-साहित्यकारों की चर्चा है, जिनका कार्यक्षेत्र मुख्यतः बिहार ही रहा है। परिशिष्ट ३ में पुस्तक के प्रथम खण्ड से सम्बद्ध ५२ साहित्यकारों के सम्बन्ध में नवीन सूचनाएँ और २० नवीन परिचय भी हैं, जो नई खोज के क्रम में प्राप्त हुए हैं। इन २० नवीन परिचयों में कुल १० के ही उदाहरण उपलब्ध हो सके हैं। परिशिष्ट ४ में प्रस्तुत खण्ड से सम्बद्ध तीन साहित्यकारों के परिचय-मात्र हैं। परिशिष्ट ५ में एक परिचय-तालिका दी गई है, जिससे पाठक सुगमतापूर्वक प्रस्तुत खण्ड के मुख्य तीन अध्यायों का सिंहावलोकन कर सकें। अंत में, परिशिष्ट ६ में, मूल पुस्तक में संकलित उदाहरणों की प्रथम पंक्ति की, अकारादिक्रम से सूची दी गई है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्रस्तुत खण्ड के मूलांश में कुल १५८ बिहारी साहित्यकारों के परिचय संगृहीत हैं। इनमें चम्पारन निवासी साहित्यसेवियों की संख्या सर्वाधिक अर्थात् ४१ है। इसका कारण यह है कि चम्पारन में प्राचीन साहित्यानुसंधान की प्रगति गत दो दशकों में बड़ी तीव्रगति से हुई है। इस दिशा में कई विद्वान् प्रवृत्त हैं। हिन्दी के सुपरिचित लेखक एवं कवि श्रीरमेशचन्द्र झा ने तो 'चम्पारन की साहित्य साधना' की रचना कर चम्पारन की साहित्यिक प्रगति के सम्बन्ध में बहुत ही आवश्यक सामग्री पाठकों के सामने प्रस्तुत की है। चम्पारन के बाद इस काल-खंड में साहित्यकारों की संख्या की दृष्टि से, 'सारन' का नाम आता है, जहाँ ३५ साहित्यकार हुए। सारन में, साहित्यानुसंधान का कार्य अभीतक योजनाबद्ध रूप से नहीं हुआ है। किन्तु, जैसा कि उक्त संख्या से स्पष्ट है, यदि इस क्षेत्र में उक्त कार्य का आरम्भ हो, तो और भी अनेक साहित्यकारों के नाम सामने आयेंगे। चम्पारन और सारन के बाद विभिन्न क्षेत्रों का नामानुक्रम निम्नलिखित रीति से निर्धारित किया जा सकता है—शाहाबाद २७, दरभंगा २४, पटना २१, गया १७, मुजफ्फरपुर तथा पूर्णियाँ ९-९, छोटानागपुर ४, भागलपुर ३ और मुंगेर २। उक्त क्षेत्रों में साहित्यानुसंधान का कार्य केवल दरभंगा और गया में ही उल्लेखनीय रूप में हुआ है जिसके परिणामस्वरूप डॉ० जयकान्त मिश्र-कृत 'हिस्ट्री ऑफ् मैथिली लिटरेचर' (दो खण्डों में) और श्रीद्वारकाप्रसाद गुप्त[1] लिखित 'गया के लेखक और कवि' नामक कृतियाँ हमारे सामने हैं। शेष कुछ क्षेत्रों के लोग इस दिशा में प्रवृत्त हैं और कुछ क्षेत्रों में तो इस दिशा में कुछ कार्य ही नहीं हो रहा है। इनमें पहली कोटि में शाहाबाद, पटना और मुजफ्फरपुर के नाम लिये जा सकते हैं। पूर्णियाँ, छोटानागपुर, भागलपुर, मुंगेर आदि के नाम दूसरी कोटि में आयेंगे।

प्रस्तुत काल-खण्ड में सबसे अधिक संख्या उन साहित्यकारों की है, जिन्होंने काव्य-रचना द्वारा साहित्य की श्रीवृद्धि की है। इनमें अधिकांश कवियों ने ब्रजभाषा का सहारा लिया है। अवधी में जिन कवियों ने रचनाएँ की हैं, उनकी रचनाओं में भी यत्र तत्र ब्रजभाषा का ही पुट मिलता है। इसी कारण इस काल में विशुद्ध अवधी के उतने अधिक कवि नहीं मिलते। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि ब्रजभाषा की तुलना में अवधी काव्य-रचना के लिए हिन्दी-संसार में बहुत प्रचलित नहीं हुई। काव्य-रचना के लिए ब्रजभाषा का जितना देशव्यापी प्रचार अबतक हुआ, उतना खड़ीबोली को छोड़कर अन्य किसी भी भाषा का नहीं। ब्रजभाषा और अवधी के बाद खड़ीबोली,

---

१ श्रीद्वारकाप्रसाद गुप्त ने 'बिहार के हिन्दी-लेखक' शीर्षक से बिहार के साहित्यिक इतिहास के सम्बन्ध में एक लम्बी लेख भी थी। ११ जनवरी १९१२ ई० (भाग १४ अंक ८) के 'सुरसर' (पृ० ११) में उनका 'बिहार के हिन्दी-सेवियों के नाम-निर्देश' प्रकाशित हुआ था, जिसमें उन्होंने सूचित किया है कि मगध प्रान्त के १०० मृत तथा जीवित साहित्यकारों के विषय में जानकारी प्राप्त कर ली है जिनमें, पटना, गया, शाहाबाद के ७० व्यक्तियों की नामावलियाँ 'सुरसर' में 'बिहार के हिन्दी-लेखक' के नाम से प्रकाशित हो चुकी हैं। श्रीगुप्त का यह निवेदन १८ अक्टूबर १९१५ ई० (भाग ११ अंक १८, पृ० १०४) तथा २८ जनवरी, १९१८ ई० (भाग २०, अंक २१ पृ० १११) के 'सुरसर' में भी छपा था।

मैथिली और भोजपुरी की रचनाएँ मिलती हैं। इन तीनों भाषाओं में रचनाएँ प्रायः समरूप से हुई हैं। दुर्भाग्यवश, बिहार की अन्य भाषाओं की कोई भी रचना इस काल खण्ड में नहीं मिली है। केवल गया के पाठकबिगहा निवासी हरिनाथ पाठक के विषय में यह उल्लेख मिलता है कि उन्होंने मगही में अनेक गीतों की रचना की थी, जो आज नहीं मिलते। सम्भव है, भावी अनुसंधान के फलस्वरूप मगही, अंगिका, वज्जिका आदि अन्य भाषाओं की रचनाएं हमें प्राप्त हों जिनसे तत्सम्बन्धी क्षेत्रों की साहित्यिक प्रगति का भी कुछ परिचय मिल सके।

भाषा की सफाई, भाव के माधुर्य एवं छन्दप्रवाह की सुगमता की दृष्टि से प्रस्तुत काल-खण्ड के उल्लेख्य कवियों के नाम इस प्रकार हैं—

(क) व्रजभाषा—यशोदानन्द, धनारंग दुबे, भगनारायण सिंह, बच्चू दुबे, राधावल्लभ शास्त्री, रामकुमार सिंह, नर्मदेश्वरप्रसाद सिंह, रामबिहारी सहाय, रामलोचन मिश्र, अक्षयकुमार, बालगोविन्द मिश्र, रामफलराय ठग मिश्र, शंकरनाथ पाठक, भवदत्त त्रिपाठी, शुकप्रसाद सिंह, गोपीश्वर सिंह, कमलेश्वरी राय, जयनन्दलाल बख्शी, कुकुरलाल मिश्र मुनीन्द्र, रामकवि रिपुभंजन सिंह, लालदास, शिवप्रसाद अम्बिकाचरण, कृपानारायण, जयगोविन्द महाराज, द्वारकाप्रसाद मिश्र, माधवेन्द्रप्रताप शाही, राजेन्द्र प्रसाद सिंह तथा शिवकविराय।

(ख) अवधी—हेमलता, भवानीचरण, हरनाथप्रसाद शर्मा, भगवानप्रसाद 'रूपकला', कामदनी सहाय, कामयमणि, टिम्मल ओझा, मालक, भजनदेव स्वामी, भागवतनारायण सिंह हरिचरणदास और धवलराम।

(ग) खड़ीबोली—हेमलता, बनवारीलाल मिश्र, गुरुसहाय लाल, चतुर्भुज मिश्र, सैयद अली मुहम्मद, राजेन्द्रशरण तथा मोहनलाल।

(घ) मैथिली—दामोदर झा, भामा झा, चन्दा झा, हर्षनाथ झा, गोपीश्वर सिंह, कपूरीलाल, रत्नपाणि, धनेश्वरी बहुआसिन तथा यदुवंश झा।

(ङ) भोजपुरी—भगवानप्रसाद 'रूपकला', सैयद अली मुहम्मद, लक्ष्मीसखी, ईनरराम, केशवदास, मुक्तानन्द, दरसनदास, योगेश्वरराम तथा शब्दराम।

प्रस्तुत काल की काव्य-रचनाओं के सिंहावलोकन से यह स्पष्ट विदित होता है कि इस काल में भी, अठारहवीं शती की तरह भक्ति और रीतिकाल की प्रवृत्तियाँ ही प्रमुख रहीं। साथ ही, आधुनिक काल की प्रवृत्ति के बीज भी यत्र-तत्र देखने को मिलते हैं। ऊपर यह कहा जा चुका है कि उक्त काल-खण्ड से ही हिन्दी-साहित्य के आधुनिक-काल का आरम्भ हो जाता है।

रस की दृष्टि से देखा जाय तो भक्ति अथवा शान्त, शृंगार एवं वीर-रसों की प्रमुखता है। भक्ति एवं शृंगार रस की रचनाएँ तो इस काल में भरी पड़ी हैं। वीर-रस की रचनाएँ मुख्य रूप से, अविराम कमलाधर मिश्र रामकवि तथा शिवकविराम की ही मिलती हैं।

नाम ये हैं—नर्मदेश्वरप्रसाद सिंह, रामचन्द्रराय, भवनाथ त्रिपाठी, चन्द्रेश्वरीराम, परमानन्दराय, कस्तूरीलाल तथा मोहनलाल।

युग की महत्ता पर विचार करते समय निम्नलिखित बातें ध्यातव्य हैं—

१. इस काल-खण्ड से ही आधुनिक अथवा गद्य-काल का आरम्भ होता है। अतः, स्वभावतः इस काल में गद्य-रचना की प्रवृत्ति में, प्रखरता दीखती है। इस समय की गद्य-रचना के जो उदाहरण प्राप्त हुए हैं, उनमें पं० चन्दा झा के गद्य को छोड़कर सभी खड़ीबोली के ही हैं। पं० चन्दा झा की गद्य-रचना मैथिली में मिलती है। शेष प्रमुख गद्यकारों के नाम ये हैं—विनायक मिश्र, अयोध्याप्रसाद मिश्र, हरनाथप्रसाद खत्री, नर्मदेश्वरप्रसाद सिंह, भगवानप्रसाद 'रूपकला', ईश्वरनाथ पाठक तथा जयपति सिंह।

२. इस काल में निम्नांकित नाटककार बड़े महत्त्व के हुए—

(क) भानु झा — प्रभावतीहरण।
(ख) चन्दा झा — अहिल्याचरित-नाटक
(ग) प्रभविहारीलाल — (१) प्रबोधचन्द्रोदय-नाटक
(२) रत्नावली-नाटिका
(३) संगीत-हरिश्चन्द्र
(४) विद्यासुन्दर-नाटक
(घ) हर्षनाथ झा — (१) उषाहरण
(२) माधवानन्द
(३) रामकृष्ण मिलन-लीला
(ङ) कान्हारामदास — गौरी-स्वयंवर
(च) रामदत्त मिश्र — बाल-विवाह-रूपक
(छ) मदनदेव स्वामी — प्रद्युम्नरूप-रूपक
(ज) रत्नपाणि — उषाहरण
(झ) मेगन्नाथ झा — मारत भ्रम-भंग

कविता एवं नाटक के अतिरिक्त इस काल में साहित्य की अन्य विधाओं को विशेष प्रश्रय नहीं मिला। वैसे, छिटपुट कुछ रचनाएँ अवश्य मिलती हैं। ऐसी रचनाओं में, जीवनी-साहित्य के अन्तर्गत रामलोचन मिश्र-कृत 'आत्मजीवनी' तथा विनायक मिश्र-रचित 'विद्यावली' उपन्यास का उल्लेख किया जा सकता है।

३. इस काल-खण्ड में निम्नलिखित अनुवादकों ने मुख्य रूप से हिन्दी-अनुवाद की गति को आगे बढ़ाया—

(क) अयोध्याप्रसाद मिश्र— श्रीमद्भगवद्गीतार्थचन्द्रिका (संस्कृत और हिन्दी में गद्य-पद्यानुवाद)
(ख) चन्दा झा — पुरुष-परीक्षा (विद्यापति-कृत 'पुरुष-परीक्षा' का मैथिली में गद्य-पद्यानुवाद)
(ग) राधावल्लभ चौधरी — 'महिम्नस्तोत्र' का हिन्दी-अनुवाद

(घ) भगवानप्रसाद 'रूपकला'— शरीर-पालन (बँगला से अनुवाद)

(ङ) रामलोचन मिश्र — (१) श्रीसत्यनारायणव्रत-कथा का हिन्दी पद्यानुवाद
(२) बहुलाव्रत-कथा का हिन्दी-पद्यानुवाद
(३) चर्पट-मंजरी (मोहमुद्गर) का हिन्दी-पद्यानुवाद

(च) हरिनाथ पाठक — (१) ललित-रामायण (श्रीवाल्मीकि रामायण का पद्यानुवाद)
(२) ललित-भागवत (श्रीमद्भागवत का पद्यानुवाद)

(छ) हरिराम द्विवेदी — वाल्मीकि-रामायण का हिन्दी-पद्यानुवाद (अपूर्ण)

(ज) अम्बालिका देवी — 'राजपूत-रमणी' का अनुवाद

(झ) भुवन झा — सत्यनारायणव्रत-कथा का पद्यानुवाद

४ इस काल में निम्नलिखित प्रमुख टीकाकार हुए—

(क) भगवानप्रसाद 'रूपकला'— (१) श्रीभगवद्वचनामृत (भगवद्गीता के बारहवें अध्याय की टीका)
(२) भक्तमाल की टीका

(ख) शिवप्रकाश लाल — (१) विनयपत्रिका की टीका
(२) गीतावली-टीका
(३) रामगीता-टीका

(ग) रामसहाय लाल — (१) श्रीतत्त्वचिन्तामणि (श्रीमद्भगवद्गीता के 'सर्वधर्मान्परित्यज्य' श्लोक पर टीका)
(२) सन्त मनउन्मनी (रामचरितमानस के बालकाण्ड की टीका)

(घ) दिवाकर भट्ट — (१) कविप्रिया (केशव) की टीका
(२) रसिकप्रिया (,,) ,,
(३) बिहारी सतसई ,,
(४) भाषा-भूषण (मतिराम) ,,
(५) रसराज ,, ,,

(ङ) छक्कूलाल मिश्र — बिहारी-सतसई की टीका

(च) हरनारायणदास — रामचरितमानस ,, ,,

(छ) जानकीप्रसाद — 'मानस-अभिप्राय-दीपक' पर वार्तिक-टीका

(ञ) वासुदेवदास — रसिक-प्रकाश (भक्तमाल की सुबोधिनी टीका)

५. इस काल-खण्ड की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह देखने को मिलती है कि इसमें विभिन्न शास्त्रों से सम्बद्ध पुस्तकों के निर्माता भी हुए। काव्य भाषा धर्म, दर्शन, आयुर्वेद संगीत, गणित, नीति, राजनीति ज्योतिष काम आदि भिन्न भिन्न शास्त्रों पर भी लेखकों ने अपनी लेखनी चलाई है। सबसे अधिक पुस्तकें काव्य शास्त्र पर ही मिलती हैं। कुछ महत्त्वपूर्ण लेखकों के नाम इस प्रकार हैं—

(क) अयोध्याप्रसाद मिश्र — सुधाबिंदु (छन्द-परिचय)
(ख) भगवतशरण — युगल-शृङ्गार-भरण (अलंकार)
(ग) राधावल्लभ जोशी — अंग-रत्नाकर (नखशिख)
(घ) गणेशानन्द शर्मा — (१) ऋतु-वर्णन
(२) नायिका-नायक-तत्त्व (नायिका-भेद)
(ङ) बैजनाथ द्विवेदी — (१) श्रीसीतारामाभरण-मंजरी (अलंकार)
(२) नखशिख
(३) रामरहस्य (रस)
(४) दूषणनिदोष-वर्णन
(५) काम विलास (नायिका भेद)
(६) उद्दीपन-शृङ्गार-मंजरी (रस)
(७) अनुभव-रहस्य (रस)
(८) चित्राभरण (अलंकार)
(९) भूषण-चन्द्रिका (अलंकार)
(च) नर्मदेश्वरप्रसाद सिंह — शृङ्गार-दर्पण (नखशिख)
(छ) रामलोचन मिश्र — पिङ्गल-कल्पद्रुमाष्टक-वर्णन (छन्द)
(ज) रामरूपदास — पावस-पचीसी (रस एवं नायिका-भेद)
(झ) दिवाकर भट्ट — (१) नखशिख
(२) नवोढ़ारत्न (नायिका-भेद)
(३) वेश्या विलास
(ञ) परमानन्ददास — बारहमासा (ऋतुवर्णन एवं नायिका-भेद)
(ट) बिहारी सिंह — (१) बिहारी नखशिख-भूषण
(२) दूती-दर्पण (नायिका-भेद)
(ठ) जयगोविन्द महाराज — अलंकार आकर (अलंकार)
(ड) महादेव प्रसाद — नखशिख रामचन्द्रजी

अन्य शास्त्रों के प्रमुख लेखकों और उनकी कृतियों के विवरण इस प्रकार हैं—

भाषाशास्त्र—

(क) राधावल्लभ जोशी — भाषाभूतधात

(ख) हरनाथप्रसाद शर्मा — व्याकरण-वाटिका

(ग) अभयकुमार — शब्दबोध (सर्वोन्नत हिन्दी-व्याकरण)

धर्मशास्त्र—

(क) जयप्रकाश लाल — धर्मोपकारक

(ख) दिवाकर भट्ट — (१) धर्माधर्मविवेक-संहिता
(२) धर्म निर्णय

(ग) काशीदास — भक्त-विवेक

(घ) मधुसूदन रामानुजदास— भगवद्धर्म-दीपिका

दर्शनशास्त्र—

(क) गुरुसहाय लाल — (१) सुमन विलास (सर्वथा भक्तियोग सम्बन्धी विचार)
(२) निर्वाणशतकम् (एक सौ प्रश्नों की युक्तियाँ)
(३) श्रीगुरुराम विलास (अष्टांगयोग, प्राणायाम खेचरी-षट्कर्म, समाधि आदि का वर्णन)
(४) पातंजल योग-दर्शन (केवल पाँच सूत्रों का भाष्य)
(५) परतर-अभिधानम् (श्रुति-स्मृति के प्रमाणों के साथ योगादि के गूढ़ रहस्यों का वर्णन)

आयुर्वेद-शास्त्र—

(क) दामोदर झा — (१) मिथिला आयुर्वेद शब्दकोश
(२) आयुर्वेद-संग्रह

(ख) अयोध्याप्रसाद मिश्र — (१) आरोग्य-शिक्षा
(२) मांस भक्षण-मीमांसा
(३) दीर्घ जीवन सिद्धान्त
(४) द्रव्यगुण-दर्पण (कोष)

संगीत-शास्त्र—

(क) कन्नू दुबे — (१) सुर-प्रकाश
(२) रस-प्रकाश
(३) संगीत-प्रकाश
(४) भैरव प्रकाश

(ख) रघुनाथ सिंह — भारत-संगीत

गणित-शास्त्र—

(क) रमानाथ मिश्र — (१) गणित-बत्तीसी
(२) गणित-छत्तीसी
(३) गणित-सार
(४) रेखागणित

नीतिशास्त्र—

(क) नर्मदेश्वरप्रसाद सिंह — धर्मप्रदर्शनी
(ख) व्रजबिहारी लाल — (१) नीतिदृष्टांत रामायण
(२) नीति-दृष्टांतमाला
(ग) बनवारी लाल — सुनीति-संग्रह

राजनीति-शास्त्र—

(क) गुरुप्रसाद सिंह — राजनीति-रत्नमाला

ज्योतिष-शास्त्र—

(क) अयोध्याप्रसाद मिश्र — स्वप्न विचार

कामशास्त्र—

(क) दामोदर झा — कामदर्पण

उक्त शास्त्रों के अतिरिक्त तीन विज्ञान विषयक पुस्तकों (तार बिजली-बल, रगड़ बिजली-बल और वायु विद्या) के रचयिता सोहनलाल और एक कृषि-संबंधी पुस्तक (खेतीबारी) के लेखक रमानाथ भी इस युग में हुए। दो-तीन इतिहास और भूगोल विषयक पुस्तकों के रचयिता भी इस युग में हुए। उदाहरणार्थ, शिवप्रकाशलाल तथा अम्बिकाप्रसाद उपाध्याय-कृत 'इतिहास-लहरी' एवं 'नेपाल का इतिहास' और गणपत सिंह रचित 'भूगोल-वर्णन' नामक पुस्तकें ली जा सकती हैं।

६ इस काल के महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों में भगवानप्रसाद 'रूपकला', चन्दा झा, श्रीलक्ष्मणकिला (अयोध्या) के श्रीयुगलानन्यशरणजी 'हेमलता', लक्ष्मीसखी तथा सोहनलाल के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। भगवानप्रसाद 'रूपकला' अखिल भारतीय हरिनाम-यश-संकीर्तन-सम्मेलन के संस्थापक एक महान संत-कवि थे। इन्होंने भोजपुरी और अन्य भाषाओं में भी बहुत मार्मिक रचनाएँ की हैं। चन्दा झा आधुनिक मैथिली-साहित्य के जन्मदाता माने गये हैं और अपनी बहुमुखी प्रतिभा के कारण मिथिला में ये अपर-विद्यापति के रूप में समादृत हैं। युगलानन्यशरणजी 'हेमलता' इस काल के सर्वाधिक ग्रंथों के रचयिता हुए। कहते हैं, इन्होंने विभिन्न विषयों के चौरासी ग्रंथों की रचना की थी, जिनमें पचहत्तर आज भी इनके आश्रम में वर्तमान हैं। काशी नागरी-प्रचारिणी सभा में भी इनके अधिकांश ग्रंथ सुरक्षित हैं। लक्ष्मीसखी ने एक नये पंथ 'सखी-सम्प्रदाय' को अपनी रचनाओं द्वारा विशेष बल दिया। इस सम्प्रदाय के प्रमुख उपासक के रूप में टीकामदासजी आज भी छपरा में वर्तमान हैं। इसी प्रकार, बड़ी

बोली के प्रमुख अध्यापक अयोध्याप्रसाद खत्री के मतानुसार मोहनलाल हिन्दी को 'मुंशी-स्टाइल' के जनक थे।

७. इस काल की शोभा-वृद्धि में तीन महिलाओं का भी सक्रिय सहयोग है। उनके नाम हैं—(क) सुखासिनदाई, (ख) अम्बालिका देवी तथा (ग) कनेश्वरी बहुआसिन। इनमें केवल अंतिम की ही कुछ ललित पद उपलब्ध हो सके हैं।

८. यहाँतक आश्रयदाताओं का प्रश्न है इस काल में डुमराँव, सुरसुरा, जगदीशपुर, टेकारी, रामगढ़, नरहन, श्रीनगर, मकोलिया, सीतामढ़ी, दरभंगा, बनैली, बेतिया, हथुआ, माँझा, रामनगर आदि रियासतों के राजा एवं जमींदारों ने कवियों एवं कलावंतों को आश्रय प्रदानकर अपनी साहित्यिक अभिरुचि का प्रशंसनीय परिचय दिया। उक्त रियासतों में आज भी योजनाबद्ध रूप में यदि साहित्यानुसंधान कराया जाय, तो निश्चय ही और भी अनेक साहित्यिक-रत्न प्रकाश में आयेंगे।

परिशिष्ट १ के ६८ साहित्यकारों की रचनाओं में अधिकांश की काव्य रचनाएँ मैथिली में मिली हैं। अतः, यह सहज ही अनुमेय है कि वे मिथिला या उसके आसपास के निवासी रहे होंगे। इन मैथिली कवियों की रचनाएँ मुख्यत: भक्ति रस की हैं। राधा कृष्ण के प्रसंग में, अनेक स्थलों पर शृंगार-रस भी आ गया है। इस परिशिष्ट में आये ब्रजभाषा के कवियों के नाम ये हैं—आशाशरण, जानकीशरण, धनुषधारी सिंह, मंगलाप्रसाद सिंह रघुवीरनारायण सिंह तथा वृन्दावनबिहारीशरण सिंह। इनमें दो-एक को छोड़कर सभी की गणना ब्रजभाषा के साधारणतया अच्छे कवियों में की जा सकती है। ये सभी कवि मदेढ़ी (सारन) के निवासी प्रसिद्ध व्यक्ति श्रीनयनारायण सिंह के समकालीन और संभवतः सारन अथवा उसके आसपास के निवासी थे। इनकी रचनाएँ बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित ग्रंथ-अनुसंधान विभाग में उपलब्ध हस्तलिखित पोथी 'युगलप्रियतरंगिणी' से प्राप्त हुई हैं। इस परिशिष्ट में, एक अवधी और एक खड़ीबोली के भी कवि हैं। अवधी-कवि 'रामदास' नाम के कई कवि हिन्दी में हो गये हैं। अतः इनके विषय में निश्चित रूप से कुछ कहना अभी संभव नहीं। यही बात खड़ीबोली के कवि 'मथुरादास' के सम्बन्ध में भी है।

परिशिष्ट २ के १४ अन्यप्रान्तीय साहित्यकारों में कुल ६ की रचनाओं के उदाहरण उपलब्ध हैं। इनमें दो—दामोदरशास्त्री सप्रे और बिहारीलाल चौबे—को छोड़कर शेष सबकी काव्य-रचनाओं के ही उदाहरण मिले हैं। उक्त लेखकद्वय ने खड़ीबोली में केवल गद्य-रचना की थी। अत', इनकी गद्य-रचना के ही उदाहरण प्राप्त हुए हैं। इस परिशिष्ट के ब्रजभाषा-कवियों में कुछ उल्लेखनीय नाम ये हैं—बिहारीलाल चौबे, मारकण्डेयलाल, मुरलीमनोहर तथा सुमेरसिंह साहबजादे। अवधी और खड़ीबोली के केवल एक एक कवि ही इस परिशिष्ट में हैं। उन कवियों के नाम हैं—रामशरण तथा रामानन्द। इस परिशिष्ट के कवियों ने विशेषतः राधाकृष्ण को आलंबन बनाकर शृंगार-रस की रचनाएँ की हैं। इनमें वीर-रस के कवि के रूप में एकमात्र मारकण्डेय लाल की ही गणना की जा सकती है। इनमें भक्ति अथवा शान्त-रस का कोई भी कवि उल्लेख्य नहीं दीखता।

इन अन्यप्रान्तीय साहित्यकारों में सबसे अधिक संख्या अनुवादकों की ही दीखती है। आवश्यक विवरणों के साथ कुछ उल्लेख्य नाम और रचनाएँ इस प्रकार हैं—

(क) दामोदरशास्त्री सप्रे — 'राजतरंगिणी' (कल्हण) का अनुवाद
(ख) बालरामदास — पातंजल दर्शन प्रकाश (पातंजल योग दर्शन का अनुवाद)
(ग) बिहारीलाल चौबे — (१) लेम्ब-टेल्स (शेक्सपियर के नाटकों की कहानियों का अनुवाद)
(२) दशकुमारचरित (दण्डी) का अनुवाद
(३) सीता (बँगला) का अनुवाद
(घ) सुरेश मुखोपाध्याय — बँगला की अनेक पुस्तकों के अनुवाद
(ङ) सुमेरसिंह साहबजादे — (१) विजयनामा (गुरुगोविन्द सिंह-कृत 'जफरनामा' का अनुवाद)
(२) अविचल नगर-माहात्म्य (पद्मपुराण में वर्णित 'पुण्योदक' तीर्थस्थल की कथा का दोहा-चौपाई में अनुवाद)

शेष उल्लेख्य नाम विषयानुसार ये हैं—

नाटक—
(क) दामोदरशास्त्री सप्रे — बालखेल वा ध्रुवचरित
(ख) शीतलाप्रसाद त्रिपाठी — जानकीमंगल-नाटक

काव्यशास्त्र—
(क) बिहारीलाल चौबे — बिहारी तुलसी भूषण (अलंकार)
(ख) सुमेरसिंह साहबजादे — भवाभरण वा सुमेरभूषण (,,)

इतिहास—
(क) दामोदरशास्त्री सप्रे — (१) चित्तौरगढ़ का इतिहास
(२) लखनऊ का इतिहास
(ख) सुमेरसिंह साहबजादे — (१) सिक्ख-सम्प्रदाय की मुख्य मुख्य घटनाओं का संक्षिप्त वर्णन

यात्रा—
दामोदरशास्त्री सप्रे — (१) मेरी पूर्व दिग्यात्रा
(२) मेरी दक्षिण दिग्यात्रा
(३) मेरी जन्मभूमि-यात्रा

भाषाशास्त्र—
दामोदरशास्त्री सप्रे — आदर्श भाषा व्याकरण

टीका—
सुमेरसिंह साहबजादे — (१) ओंकारमर-चरित्र-पाठ पत्रिका (आप की टीका)
(२) जगत जय-जयकारी (,,)
(३) जपजी की टीका

परिशिष्ट २ के साहित्यकारों में तीन-चार बड़े महत्त्व के मिलते हैं। इनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति थे भूदेव मुखोपाध्याय जो बंगाली थे। कहते हैं, बिहार की अदालतों में फारसी और कैथी लिपि के स्थान पर नागरी लिपि का प्रचलन कराने का श्रेय इन्हें ही है। कुछ विद्वान् तो बिहार में हिन्दी-भाषा के प्रचार का श्रेय इन्हें देते हैं। उनका कहना है कि बिहार में बाबू रामदीनसिंह के सहयोग से इन्होंने विविध विषयों की अनेक पाठ्य-पुस्तकें नागराक्षर में पहले-पहल प्रकाशित कराई थीं। ये हिन्दी के अनन्य समर्थक थे और आज से लगभग सौ वर्ष पहले ही इन्होंने यह भविष्यवाणी की थी कि हिन्दी एक समय राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन होकर ही रहेगी। दूसरे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति हैं राधालाल माथुर। ये उन लोगों में प्रमुख थे, जिन्होंने हिन्दी में पहले-पहल पाठ्य-पुस्तकें तैयार की थीं। इनका सबसे महत्त्वपूर्ण काम हुआ 'हिन्दी शब्दकोश' का निर्माण, जिसे इन्होंने प्रसिद्ध भाषाकार फैलन साहब के आदेश पर तैयार किया था। इन्होंने विभिन्न बिहारी लोकभाषाओं के गीतों, कथाओं, लोकोक्तियों आदि का भी एक वृहद् संकलन तैयार किया था। पं० शीतलाप्रसाद त्रिपाठी इनमें तीसरे उल्लेख्य व्यक्ति हुए। इन्होंने ही उस प्रसिद्ध नाटक 'जानकी-मंगल' की रचना की थी, जिसे हिन्दी का सबसे पहला अभिनीत नाटक माना जाता है। कहते हैं, इनके समान कोई भी दूसरा वैयाकरण इनका समकालीन नहीं हुआ। कदाचित् इसी कारण महाराजकुमार बाबू रामदीन सिंह इनसे हिन्दी-भाषा का एक वृहद् व्याकरण लिखवा रहे थे जो इनके निधन के कारण पूरा न हो सका। अन्त में, सुमेरसिंह साहबजादे का नाम आता है, जिनकी गणना बिहार के तत्कालीन सुप्रसिद्ध कवियों में होती है। इन्होंने सन् १८८७ ई० में, पटना में एक कवि समाज की स्थापना की थी, जिसकी ओर से बाबू ब्रजनन्दन सहाय 'ब्रजवल्लभ' के सम्पादकत्व में 'समस्यापूर्ति' नामक एक मासिक पत्रिका भी प्रकाशित होती थी।

उपसंहार

उन्नीसवीं शती पूर्वार्द्ध के केवल उन्हीं साहित्यकारों के विवरण ऊपर दिये गये हैं, जिनकी रचनाओं के उदाहरण अथवा पुस्तकों के नाम उपलब्ध हैं। जिनकी रचनाओं के न तो उदाहरण ही प्राप्त हुए, न कृतियों के नामोल्लेख ही, उनके सम्बन्ध में प्रामाणिक रूप से कुछ कहना कठिन है। भविष्य में प्राचीन साहित्यानुसंधान के परिणामस्वरूप यदि कुछ सामग्री सामने आयगी तभी उनके सम्बन्ध में कुछ कहना न्याय-संगत होगा।

जहाँतक हो सका है, साहित्यकारों के सम्बन्ध में जो बातें प्रामाणिक सिद्ध हुईं उन्हीं का उल्लेख इस पुस्तक में किया गया है। प्रामाणिकता के लिए स्वभावतः हमें भिन्न भिन्न सूत्रों पर निर्भर रहना पड़ा है। अतः, यदि किसी परिचय में कहीं कुछ अप्रामाणिक सामग्री का समावेश भी हो गया हो, तो कुछ आश्चर्य नहीं। पुस्तक के छप जाने पर एक ऐसी भूल हमारी दृष्टि में आई है जिसका उल्लेख यहाँ कर देना अप्रासंगिक न होगा। बाबू रिपुमर्दन सिंह[1] के परिचय में कहा गया है कि सन् सत्तावन

१ प्रस्तुत पुस्तक, पृ० १११ से ११।

की क्रांति में, इन्होंने अँगरेजों का साथ दिया था। किन्तु, ऐतिहासिक तथ्य तो यह है कि ये उक्त क्रांति के प्रमुख विद्रोही सरदारों में एक थे।[1] इसके अतिरिक्त पृ० १० पर भगवानप्रसाद के परिचय में उनके निधन का काल सन् १८१२ ई० के बदले सन् १९१२ ई० होना चाहिए। संभव है, अन्य परिचयों में भी कुछ ऐसी अप्रामाणिक सामग्री आ गई हो। आशा है सुधी पाठक उन्हें यथायोग्य सुधारकर पढ़ेंगे।

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
विजयादशमी, विक्रमाब्द २०२० } बजरंग वर्मा



१—देखिए, 'Biography of Kunwar Singh and Amar Singh' (Dr K.K. Datta), P 94 114 Appendix (III) आदि तथा 'Eighteen Fifty-Seven' (Dr Surendranath Sen) P 259 द्वितीय पुस्तक की निम्नांकित पंक्तियाँ विशेष रूप से द्रष्टव्य हैं—"Among the Principal Lieutenants of Kunwar Singh were his brother Amar Singh, his nephew Ritbhanjan Singh (Ripubhanjan Singh) his Tahsildar Harkishan Singh and his friend Nishan Singh, then a man of sixty"

विषयानुक्रमणिका

प्रथम अध्याय

द्वितीय अध्याय

क्र० सं०	साहित्यकारों के नाम	पृ० सं०
१४	गुलकन्द लाल	११७
१५	गुलाबचन्द्र लाल	११७
१६	गोपी महाराज	११८
१७	गोपीश्वर सिंह	११८
१८	गोविन्ददेव	१२१
१९	चतुर्भुज सहाय	१२१
२०	चन्द्र शर्मा	१२१
२१	चन्द्रेश्वरी राय	१२२
२२	छकनलाल	१२५
२३	छोटक पाठक	१२६
२४	जगदम्बालाल बख्शी	१२६
२५	जगदेवनारायण सिंह	१२८
२६	जगन्नाथ तिवारी	१२९
२७	डिम्बल ओझा	१२९
२८	ठाकुर	१३०
२९	देवदत्त मिश्र	१३२
३०	नान्हक	१३२
३१	नारायण	१३३
३२	नारायणदत्त उपाध्याय	१३२
३३	परमानन्ददास	१३३
३४	पल्टू लाल	१३६
३५	बदरीनाथ	१३७
३६	बधुमन झा	१३८
३७	बहादुरदास	१३८
३८	बिहारी सिंह	१३९
३९	बुधूराम	१३९
४०	बोधिदास	१३९
४१	भगवानप्रसाद वर्मा	१४
४२	भजनदेव स्वामी	१४०
४३	भवानीचरण मुखोपाध्याय	१४२
४४	भागवत नारायन सिंह	१४२
४५	मधुसूदन रामानुजदास	१४४
४६	महावीर चौबे	१४२
४७	मीरादास	१४५

परिशिष्ट—१

परिशिष्ट—२

परिशिष्ट—२

हिन्दी-साहित्य और बिहार

प्रथम अध्याय

[वे साहित्यकार, जिनका जन्म-काल ज्ञात है।]

अमृतनाथ

आप मुझौसेनरा (रामगढ़वा, चम्पारन) के निवासी थे।[1] आपके वंशज श्रीगुरदयाल झा के मतानुसार आपका जन्म सन् १८०१ ई० (सं० १८५८ वि०) में हुआ था। उन्हीं के कथनानुसार आपकी मृत्यु सन् १८८६ ई० (सं० १९४३ वि०) में हुई।

आपका सम्बन्ध बेतिया राज (चम्पारन) के दरबार से था। एक बार स्व० श्रीवैद्यनाथ मिश्र के पितामह श्रीहरजी मिश्र का वंश-परिचय लिखकर आपने बेतिया के तत्कालीन महाराज को प्रसन्न किया था, जिसके पुरस्कार-स्वरूप श्रीहरजी मिश्र ने अपनी ओर से आपको पाँच बीघे जमीन दी थी, जो आज भी आपके वंशजों के अधिकार में सुरक्षित है।

साहित्य के अतिरिक्त संगीत के प्रति भी आपका विशेष अनुराग था। आपकी बारह रचनाएँ हस्तलिखित रूप में उपलब्ध हुई हैं। आपकी सैकड़ों रचनाएँ आपके गाँव के लोगों में प्रचलित हैं। आपकी अधिकांश रचनाएँ शिवभक्ति-सम्बन्धिनी हैं।

उदाहरण

महादेव त्रिभुवन के ठाकुर काहे कहत भिखारी।
परम दयाल दया संजन पर शिव सम को उपकारी।
गरल ज्वाल निज कंठहि राखत त्रिभुवन लेत उबारी।
जाको नाम लेत भवसागर पार करत अघ भारी।
ताको कहत बाउर बरजोरी सो तुम परम गँवारी।
ध्यान लगाय जोगी सब हारे कहत वेद सब हारी।
'अमृतनाथ' मिले नगपुर में प्रकट मिले त्रिपुरारी।
महादेव त्रिभुवन के ठाकुर काहे कहत भिखारी।[2]



1. चम्पारन की साहित्य-साधना (श्रीरमेशचन्द्र झा, प्रथम सं०, सं० २०१३ वि०) पृ० २४।
2. वही पृ० २१।

सुवामिनदाई

आपका जन्म सन् १८०१ ई० (सं० १८५८ वि०) में मधुमकेर (चम्पारन) में हुआ था।[1] आप सुखीसेमरा (चम्पारन) में ब्याही गई थीं। सुखीसेमरा के प्रसिद्ध कवि 'अमृतनाथ' के पदों का जो प्रचार मिथिला में हुआ, उसका सम्पूर्ण श्रेय आपको ही है। आप सन् १८८६ ई० (सं० १९४३ वि०) में परलोकगामिनी हुईं। आपने स्वयं भी हिन्दी में अनेक पदों की रचना की थी, किन्तु वे उदाहरणार्थ उपलब्ध नहीं हुए।

हितनारायण सिंह

आप पटना जिले के 'पुनपुन'-नदी तटस्थ तारनपुर नामक ग्राम के निवासी नरवरिया क्षत्रिय थे। आपका जन्म सं० १८५८ वि० (सन् १८०१ ई०) में हुआ था।[2] आपके पिता का नाम बाबू कमलेश्वर सिंह था। आपके तीन पुत्र हुए—बाबू गदाधर सिंह, बा० ठाकुरदयाल सिंह और बा० रामचरण सिंह।

आप एक अच्छे समाज-सुधारक थे। आयुर्वेद में आपकी अभिरुचि विशेष रूप से थी। कहते हैं, आपने आयुर्वेद-सम्बन्धी एक पुस्तक की रचना भी सामान्य जनता के लाभ के लिए की थी, जो अब उपलब्ध नहीं होती।[3]

हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत और फारसी भाषाओं पर भी आपका अच्छा अधिकार था। अँगरेजी का भी आपको साधारण ज्ञान था। हिन्दी में आपकी कुछ लोकोपदेशपूर्ण काव्य-रचनाएँ भी हैं, किन्तु कहा जाता है कि वे आपकी बाल्यावस्था की कृतियाँ हैं।

आप सन् १८६६ ई० (सं० १९२३ वि०) में परलोक सिधारे।

उदाहरण

(१)

क्षत्री कुल में जनम लै, कियो नहीं उपकार।
मात-पिता-कुल को अहै, तात तुम्हें धिक्कार॥
लाज न लागत कहन मैं, क्षत्री वाक्य विचार।
नाम धर्म को पाइ कै, करु जग में उपकार॥
ना तो निज कहिबो करो, तात भली सहाय।
अब क्षत्रिय के कहन में, गइ मरजाद बिलाय॥

---

१ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ० ५७।
२ 'बिहार-दर्पण' (रामदीन सिंह लिखित सं० सन् १८८३ ई०), पृ० १००।
३ वही।

क्षत्रिराजकुल जो अहै, सोचो मन ठहराय।
गो-हत्या को देखि के, क्यो न तरस उर आय॥
बनी यहाँ की वस्तु जो, ताकर करु सनमान।
अपर देश के वस्तु से, होत यहाँ अति हान॥[1]

(२)

दारू सम या देस में, ताडी जान सुजान।
नसा दोऊ में तुल्य है, कहत सकल मतिमान॥
घर जोरू के वस्त्र को, बदले मे धरि देत।
पी करके अनुराग-वस, गाली सबको देत॥
वमन करत जहँ-तहँ रहत, बकत भूत अस भाइ।
याहू पर छोड़त नहीं, तो भी श्रेष्ठ कहाइ॥
आप गये कर सोच नहिं, संग और को लेत।
जा मन में आवत रहे, बकत कछुक नहिं चेत॥
या से मैं बरजत अहो, सुना सकल दै कान।
प्यारी ताडी त्यागि के, राखो पर धनवान॥[2]

❁

कृष्णदत्त पाण्डेय

आपका जन्म शाहाबाद जिला के माधपुर ग्राम में, सन् १८०५ ई० (सं० १८६२ वि०) में, हुआ था।[3] आपका मृत्यु-काल सन् १८४६ ई० (सं० १९१६ वि०) बतलाया जाता है। आप एक प्रसिद्ध शिवभक्त हो गये हैं। 'कृष्णरत्नावली' और 'भारत का गदर' नामक दो पुस्तकों की रचना आपने की थी, जो अग्निकांड में जलकर नष्ट हो गईं। आपका एक कवित्त भी 'मिश्रबन्धु विनोद' में है, पर वह बिलकुल बेतुका है।

उदाहरण

लंबोदर की मातु के पति जो भजनहार,
पर जोरे तेहि विनय करु जिनन मारा मार।[4]

१ 'बिहार-दर्पण' (वही), पृ० २।
२. वही।
३. 'मिश्रबन्धु-विनोद' (मिश्रबन्धु, तृतीय भाग, द्वितीय सं० सं० १९८५ वि०) पृ० १०१७।
४. वही। जो के स्थान पर 'जा' होता तो सार्थक रहता। किन्तु, वह दूसरे चरण के 'जोरे' के मेल में ठीक ही है।

सुवासिनदाई

आपका जन्म सन् १८०१ ई० (सं० १८५८ वि०) में मधुबनेर (चम्पारन) में हुआ था।[1] आप सुखीछेमरा (चम्पारन) में ब्याही गई थीं। सुखीछेमरा के प्रसिद्ध कवि 'अमृतनाथ' के पदों का जो प्रचार मिथिला में हुआ, उसका सम्पूर्ण श्रेय आपको ही है। आप सन् १८८८ ई० (सं० १९४५ वि०) में परलोकगामिनी हुईं। आपने स्वयं भी हिन्दी में अनेक पदों की रचना की थी, किन्तु वे उदाहरणार्थ उपलब्ध नहीं हुए।

हितनारायण सिंह

आप पटना जिले के 'पुनपुन' नदी तटस्थ तारनपुर नामक ग्राम के निवासी नरवरिया क्षत्रिय थे। आपका जन्म सं० १८६० वि० (सन् १८०३ ई०) में हुआ था।[2] आपके पिता का नाम बाबू ठाकेश्वर सिंह था। आपके तीन पुत्र हुए—बाबू गदाधर सिंह, बा० ठाकुरदयाल सिंह और बा० रामचरण सिंह।

आप एक अच्छे समाज-सुधारक थे। आयुर्वेद में आपकी अभिरुचि विशेष रूप से थी। कहते हैं, आपने आयुर्वेद-सम्बन्धी एक पुस्तक की रचना भी सामान्य जनता के लाभ के लिए की थी, जो अब उपलब्ध नहीं होती।[3]

हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत और फारसी भाषाओं पर भी आपका अच्छा अधिकार था। अँगरेजी का भी आपको साधारण ज्ञान था। हिन्दी में आपकी कुछ लोकोपदेशपूर्ण काव्य-रचनाएँ भी हैं, किन्तु कहा जाता है कि वे आपकी बाल्यावस्था की कृतियाँ हैं।

आप सन् १८६४ ई० (सं० १९२१ वि०) में परलोक सिधारे।

उदाहरण

(१)

क्षत्री कुल में जनम लै, कियो नहीं उपकार।
मात-पिता-कुल को सहै, तास तुम्हें धिक्कार॥
लाज न लागत कहन मैं, क्षत्री शब्द विचार।
नाम अघ को पाइ कैं, करु जग में उपकार॥
ना तो निज कढ़ियो करो, तातें भली सहाय।
अब क्षत्रिय के कहन में, गइ मरजाद बिलाय॥

---

१ चम्पारन की साहित्य-साधना (वही) पृ० २७।
२ बिहार-दर्पण (रामदीन सिंह, द्वितीय सं० सन् १८८३ ई०), पृ० १००।
३ वही।

क्षत्रियराजकुल जो भये, साचा मन ठहराय।
गो-हत्या को देखि के, क्या न लग्न उर धाय॥
धर्मी यहाँ का मन्तु जो, [illegible] मुसलमान।
मगर [illegible] के बन्दे ने, [illegible] मति [illegible]॥[1]

(३)

दारू [illegible] का [illegible], [illegible]।
नशा [illegible] [illegible], [illegible]॥
घर [illegible], [illegible]।
पी [illegible], [illegible]।
वमन [illegible], [illegible]।
याहू पर [illegible], [illegible]।
मार [illegible], [illegible]।
जा मन [illegible], [illegible]
या [illegible], [illegible]।
प्यारी [illegible] लागि है, [illegible]।[2]

*

कृष्णदत्त पाण्डेय

आपका जन्म ग्राम [illegible] में, हुआ था।[3] आपका मृत्युकाल सन् [illegible] ई० ([illegible]) [illegible] है। आप एक प्रसिद्ध [illegible] हैं। [illegible] दो पुस्तकों की रचना [illegible] हो गई। [illegible] एक कवित्त भी 'मिश्रबन्धु विनोद' में [illegible] है।

उदाहरण

संवाद[illegible] की [illegible] भजनहार,
[illegible] मार।[4]

---

१. [illegible] (वही) [illegible]
२. वही।
३. 'मिश्रबन्धु-विनोद' ([illegible]) पृ० [illegible]
४. वही। [illegible]

यशोदानन्द[१]

आपका जन्म शाहाबाद जिले के अख्तियारपुर नामक ग्राम में सं० १८७० वि० (सन् १८१३ ई०) में हुआ था।[२]

आपके पिता मुन्शी रघुवंश सहाय सारन जिले के नन्दपुर ग्राम के निवासी थे, जो किसी कारण अपने श्वशुर मुन्शी हनुमान सहाय के यहाँ (अख्तियारपुर में) आकर, सं० १८६५ वि० (सन् १८०८ ई०) से, रहने लगे थे। सन्तानहीन होने के कारण मुन्शी हनुमान सहाय ने अपने नाती (अर्थात् आप) को ही गोद ले लिया।

आपने अख्तियारपुर, नासरीगंज (शाहाबाद) तथा आजमगढ़ (उत्तरप्रदेश) में रह कर फारसी, हिन्दी और कुछ-कुछ संस्कृत की भी शिक्षा प्राप्त की। इसके पश्चात् एक वैद्य को साथ रखकर आपने वैद्यक ग्रन्थों का भी अध्ययन किया। इसी अध्ययन के आधार पर आप निर्धन रोगियों की चिकित्सा भी करने लगे। आपने सरकारी नौकरी पन्द्रह सोलह वर्ष की अवस्था से आरम्भ की। सबसे पहले आजमगढ़ में आप मिसिल-नवीस हुए। कुछ दिनों तक प्रयाग में कमीश्नरी के सिरिश्तेदार भी रहे। फिर, इन दोनों स्थानों में कुछ दिनों के लिए तहसीलदार और डिप्टी-कलक्टर भी हुए। आप सन् १८५० ई० (सं० १९०७ वि०) से सरकारी काम-काम छोड़कर अख्तियारपुर में ही रहने लगे। आपके चार पुत्र थे।[३]

आप नानकपंथी थे, पर सर्वदा भगवतीजी का पूजन किया करते थे। हिन्दी में आपके द्वारा रचित स्फुट भजन आदि काव्य-रचनाएँ उपलब्ध होती हैं।[४]

उदाहरण

(१)

कर्म-सुभाव कै पाप-प्रभाव परयौ बहु जन्म जहाँ जब से।
आस-भरोस सदा हमरो पद लागि रहै तुमरो तब से॥
रीझत राम अहो सुखधाम करो सुखिया जग में सब से।
सोझत मोर बसाव नहीं 'जसुदानँद' जन्म न ल्यों भव से॥[५]

---

१ आपका परिचय बाबू शिवनन्दन सहाय (स्व०) द्वारा प्रेषित सूचनाओं के आधार पर तैयार किया गया है।

२ वही।

३ पुत्रों के नाम इस प्रकार हैं—कन्हैयालाल, बिहारीलाल, भवानीप्रसाद तथा लक्ष्मीनारायण। इनमें प्रथम के वंशधर आज भी हैं।

४ उर्दू में भी आपने कई पुस्तकों की रचना की थी, जिनमें एक प्रकाशित भी हुई थी। आपकी उर्दू-पुस्तकों की विशेषता यह है कि उनमें जहाँ-तहाँ हिन्दी के दोहे भी समाविष्ट हैं।

५ बाबू शिवनन्दन सहाय (वही) से प्राप्त।

(२)

रूप न रङ्ग न भेष कोई नहिं जाम न कर्म कहे श्रुति चारो।
सोई कृपाल कृपा करिकै दुखिया अबला बहुतेक उबारी ॥
ऐसो गरीब-निवाज तुहीं रघुनाथ कहीं मुख नाहिं पुकारो।
लाज रखो सब सोक हरो 'जसुदानँद' लाल गुपाल हमारो ॥[१]

(३)

चन्द्र ललाट भभूति लसै जिहि तेज की एक कला न विभाकर।
हाथ त्रिसूल गले मुंडमाल उढ़े मृगछाल चढ़े वरदा वर ॥
कौन कहै तुमरी छवि को अध-अंग सिवा अरु गंग जटा पर।
नाथ निहाल करो 'जसुदानँद' दीनदयाल कृपाल कृपाकर ॥[२]

*

तपस्वीराम

आप 'तपसीराम' के नाम से प्रसिद्ध थे।

आप सारन जिले के मुबारकपुर[३] नामक ग्राम के निवासी थे।[४] आपका जन्म सन् १८१५ ई० (सं० १८७२ वि०) में हुआ था। आपके पिता का नाम था मुन्शी केवल कृष्णजी। वे भालमगंज (इलाहाबाद) की नील-कोठी में मीर मुन्शी थे। आप अपने पिता के द्वितीय पुत्र थे। आपके बड़े भाई तुलसीरामजी एक प्रसिद्ध संत थे। छोटे भाई का नाम था बख्शीरामजी। आपकी दो शादियाँ हुई थीं, जिनसे आपके तीन पुत्र और दो कन्याएँ हुईं। स्वनामधन्य भगवद्भक्त महात्मा श्रीसीतारामशरण भगवानप्रसाद 'रूपकला' जी आपके ही द्वितीय पुत्र थे। आपके प्रथम पुत्र का नाम था लालताप्रसाद और तृतीय पुत्र का सीतारामभजनप्रसाद।

१ श्री शिवशरण सहाय (बड़ी) से प्राप्त।
२ वही।
३ यह ग्राम छपरा नगर के उत्तर-पूर्व सात मील पर 'थोमा' परगने में स्थित है। प्राचीन काल में यहाँ मुबारकशाह नाम के एक प्रसिद्ध पीर हो गये हैं। उनका समाधि-स्थल माड़ो-बारी के तट पर भग्नावस्था में आज भी वर्तमान है। इस समाधि की आज भी बड़ी प्रतिष्ठा है। क्या हिन्दू, क्या मुसलमान सभी अपनी मनःकामना सिद्ध होने पर चादर चढ़ाते हैं। इस ग्राम में श्रीतपस्वीरामजी के अतिरिक्त और भी कई हरिभक्त हो गये हैं, जैसे पं० रामचरणजी, शिवशरणजी, अवधबिहारीशरणजी आदि।
४ 'श्रीसीतारामशरण भगवानप्रसादजी की जीवनी' (शिवनन्दन सहाय द्वितीय सं० सं० १९६० वि०) पृ० ५।१०।

आप स्वयं भी एक धर्मात्मा सद्गृहस्थ रामोपासक संत थे। साधु-संतों की सेवा के लिए आपने गंगासागर और मथुरा के बीच अनेकानेक स्थानों का भ्रमण किया था। महाराज श्रीसीतारामजी 'युगलप्रिया' (चिरान, छपरा), श्रीरामदासजी (बक्सर, इलाहाबाद) तथा श्रीरामचरणदासजी (प्रमोदवन कुटिया, अयोध्या) के आप बड़े कृपा पात्र थे। कहते हैं, एक दिन स्वप्न में श्रीसीताजी ने आपको दर्शन देने की कृपा की थी और उनके चरण-कमल के अँगूठे को बालक के समान चाट-चाटकर आपने अनिर्वचनीय आनन्द का अनुभव किया था।

आप बड़े विद्यानुरागी और फारसी तथा अन्य कई भाषाओं के पंडित थे। मिश्रबन्धुओं ने आपका रचना-काल सं० १९२५ वि० (सन् १८६८ ई०) बतलाया है।[१]

आप हिन्दी के एक अच्छे कवि थे। आपकी कविताएँ स्वभावतः भक्तिरसात्मक होती थीं। आपने हिन्दी में कई पुस्तकों की रचना की थी, जिनमें केवल पाँच के नाम प्राप्य हैं—(१) श्रीनामभक्तसूची, (२) श्रीअयोध्या-माहात्म्य, (३) कथामाला, (४) प्रेम-गंग तरंग[२] और (५) श्रीसीताराम-चरण चिह्न।[३]

आपका निधन ७० वर्ष की आयु में, सन् १८८५ ई० (सं० १९४२ वि०) की वैशाख-कृष्ण नवमी (बुधवार) को, छपरा नगर के समीप गंगा-सरयू-संगम पर हुआ था।

---

१ मिश्रबन्धु-विनोद, (वही, तृतीय भाग द्वितीय सं० सं० १९८५ वि०) क्रम-सं० २११ पृ० ११६२।

२. इसपर भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र और डॉ० ग्रियर्सन की सम्मतियाँ क्रमशः इस प्रकार थीं—

(क) "ग्रंथ गद्य-पद्य (प्राकृत भाषा) में लिखा गया है। सबों का सर्वस्व ही है। ग्रन्थकार की अनन्य भक्ति ग्रन्थ से दृष्टिगोचर होती है।"—देखिए, श्रीसीतारामशरण भगवानप्रसादजी की जीवनी (वही) पृ० १२।

(ख) 'Owing to the number of books sent to me for criticism I have been obliged to make a rule to refuse to give my opinion on any I however make an exception in favour of 'Premgang-Tarang of your (Rupkala-Jee s) father (M. Tapasvi Ram) It is a book I have read with pleasure both on an account of simple and graceful style of its prose and on account of the many excellent poems scattered through it proving a pleasing anthology of the story of Ram "—वही।

३ मिश्रबन्धुओं ने आपके लिखे दो फारसी ग्रंथों की भी चर्चा की है—(१) दफ्तरे मेहरिफत और (२) बागचे देहली। —देखिए 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही), पृ० ११६२। आपने भक्तमाल की एक उर्दू-टीका भी प्रकाशित करायी थी।

उदाहरण

(१)

जय जयति जय सीतारमन, जय जय रमापति सुखसदन।
जय राम संसृतिदुखसमन, भवभयहरन असरनसरन ॥
जय अवधपति रघुकुलमनो, निजदासबस त्रिभुवनधनो।
आनन्दकन्द कृपायतन, भवभयहरन असरनसरन ॥
अव्यक्तमेकमगोचरम्, विज्ञानघन चरनोधरम्।
मयदनमही निस्चरदमन, भवभयहरन असरनसरन ॥
लावण्यनिधि राजिवनयन, कलिमलदहन मंगलभवन।
'तपसी' सुखद करुना-अयन, भवभयहरन असरनसरन ॥'[1]

(२)

ध्यावहिं मुनिन्द्र सोयपदकंजचिह्नराज,
सन्तनसहायक सुमगल सँदोहहीं।
ऊर्द्धरेखा, स्वस्तिक औ अष्टकोन, लक्ष्मी, हल,
मूसल औ मस, सर, जनजिय जोहहीं ॥
अम्बर, कमल, रथ, वज्र, जव, कल्पतरु,
अंकुस, ध्वजा, मुकुट मुनिमन मोहहीं।
चक्र, सिंहासन औ यमदण्ड, चामर,
त्यों छत्र, नर, जयमाल वामपद सोहहीं ॥
सरजू दच्छिनपद, मही, कलस,
औ पताक, जम्बुफल, अर्द्धचन्द्र राजहीं।
संख, षटकोन, तीनकोन, गदा, जव, बिन्दु,
शक्ति, साधुकुण्ड, त्रिवली, सुध्यान काजहीं ॥
मीन, पूर्नचन्द्र, बीन, बंसी औ धनुष, तून,
हंस, चन्द्रिका विचित्र चौबिस बिराजहीं ॥
एते चिह्न जनककिशोरी-पद-पंकज के,
'तपसी' मंगल-मूल सब सुख साजहीं ॥'[2]

❀

---

१ श्री सीतारामशरण भगवानप्रसादजी की जीवनी' (वही) पृ० ११।
२ वही पृ० ११ १२।

हेमलता[1]

आपकी रचनाओं में आपका उपनाम 'युगलानन्यशरण' मिलता है।

आपका जन्म पटना जिले के इस्लामपुर नामक ग्राम के एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण परिवार में, सं॰ १८७५ वि॰ (सन् १८१८ ई॰) की कार्तिक शुक्ला सप्तमी को, हुआ था।[2] बाल्यावस्था में ही माता का देहान्त हो जाने के कारण आपको केवल अपने पिता का ही स्नेह मिला। आपके दो भाई और दो बहनें थीं। आरम्भ में आपने कृष्णजी नामक एक विद्वान् से विभिन्न शास्त्रों की शिक्षा प्राप्त की। इसी समय आपने संगीत और मल्ल विद्याओं का भी अभ्यास किया। लगभग पन्द्रह वर्ष की अवस्था में आपने संत युगलप्रियाजी[3] का शिष्यत्व ग्रहण कर लिया। तत्पश्चात् आपकी प्रवृत्ति तीर्थाटन की ओर हुई। सर्वप्रथम आप काशी गये। वहाँ एक वर्ष रहकर आप चित्रकूट चले गये। चित्रकूट में आपने बिलकुल विरक्त का वेश धारण कर लिया। इसी वेश में आप फिर अयोध्या आये और 'लक्ष्मण किला' में रहने लगे। वहाँ पं॰ उमापतिजी तथा परमहंस शीलमणिजी से आपकी बड़ी घनिष्ठता हो गई। इसी बीच आप अयोध्या से चौबीस मील दूर घृताची कुंड पर लगभग चौदह महीने के लिए मौन व्रत की साधना करते रहे। वहाँ से आने पर आपकी अच्छी ख्याति हो गई। उसी समय रसिकों के विशेष आग्रह पर आपने श्रीमधुराचार्य विरचित 'भगवद्गुण-दर्पण' की कथा कही थी। अयोध्या से जब पुनः कुछ दिनों के लिए आप चित्रकूट गये, तब जानकीघाट पर ठहरे। आपकी ख्याति सुनकर रीवाँ के महाराज विश्वनाथ सिंह[4] आपके दर्शन के लिए गये थे। कहते हैं, महाराज ने आपको अपने यहाँ आमंत्रित भी किया था, किन्तु कुछ कारणवश आप न जा सके। इस बार चित्रकूट से अयोध्या वापस आकर आप निमलकुण्डी पर एक कुटी बनाकर

१ प्रस्तुत परिचय डॉ॰ भगवतीप्रसादसिंह-कृत 'रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय' नामक ग्रंथ (प्रथम सं॰ सं॰ २०१४ वि॰) में दिये हुए परिचय के आधार पर तैयार किया गया है।—देखिए, वही, पृ॰ ४९१-९६।

२ वही पृ॰ ४९५।

३ इनकी प्रशंसा आपने 'भक्तमाली' नामक एक संत से सुनी थी। इन्होंने ही आपका नाम 'युगलानन्यशरण' रखा था।

४ महाराज विश्वनाथ सिंह के ब्रजभाषा में रचे 'आनन्द-रघुनन्दन' नाटक को भारतेन्दुजी ने हिन्दी का सबसे पहला नाटक माना है और आचार्य शुक्लजी ने भी इनको हिन्दी के सर्वप्रथम नाटककार के रूप में स्मरणीय कहा है। इनका जन्म सं॰ १८४६ वि॰ (सन् १७८९ ई॰) में, सिंहासनारोहण सं॰ १८९१ वि॰ (सन् १८३४ ई॰) में और साकेतवास सं॰ १९११ वि॰ (सन् १८५४ ई॰) में हुआ था। इनके पुत्र महाराज रघुराजसिंह का जन्म सं॰ १८८० वि॰ (सन् १८२३ ई॰) में, राज्यारोहण सं॰ १९११ वि॰ (सन् १८५४ ई॰) में तथा साकेतवास सं॰ १९३६ वि॰ (सन् १८७९ ई॰) में हुआ था। ये भी प्रसिद्ध साहित्यसेवी थे।—देखिए 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, तृतीय भाग, द्वितीय सं॰ सं॰ १९८५ वि॰) पृ॰ १०७५ और 'कविताकौमुदी' (पं॰ रामनरेश त्रिपाठी, प्रथम भाग, सप्तम सं॰, सन् १९४५ ई॰), पृ॰ ४०१।

रहने लगे। सन् १८५७ ई० की क्रान्ति में आप उस स्थान को छोड़कर फिर लक्ष्मणकिला[1] में ही चले आने को बाध्य हुए और अपने जीवन के अंतिम क्षणों तक वहीं रहे।

आप एक प्रसिद्ध राम भक्त थे। राम भक्ति शाखा में जो रसिक-सम्प्रदाय चला, उसके आप एक प्रसिद्ध सन्त हुए। आपके ही प्रभाव से रसिक-सम्प्रदाय का बहुत व्यापक प्रचार हुआ। एक संत के रूप में आपको अपने जीवन-काल में ही पर्याप्त प्रतिष्ठा मिल चुकी थी। कहते हैं, मौलाना रूम तथा अन्य सूफी संतों के कलाम पढ़ने और कुरान के बहुत-से गूढ़ स्थलों को समझने के लिए मौलवी लोग भी दूर-दूर से आपके पास आया करते थे। आप रहते भी थे सूफियाना ढंग से। लम्बा चमकीला चोगा, ऊपर उठी हुई चमकीली टोपी और हाथ में एक लम्बी माला—ये चीजें बराबर आपके साथ रहा करती थीं।

आप संस्कृत और हिन्दी के प्रकांड विद्वान् तो थे ही, अरबी और फारसी में भी आपकी गहरी पैठ थी। आपकी काव्य-रचना भक्तिभाव-पूर्ण होती थी। ग्रंथों की संख्या की दृष्टि से सम्प्रदाय के पूरे इतिहास में इतनी अधिक पुस्तकाकार रचना और किसी की नहीं मिलती। आपके रचे हुए कुल चौरासी ग्रंथ बतलाये जाते हैं, जिनमें निम्नलिखित पचहत्तर आज भी आपके आश्रम में वर्तमान हैं—(१) सीतारामस्नेहसागर, (२) रघुवर-गुण-दर्पण, (३) मधुर मंजुमाला, (४) सीताराम-नाम-प्रताप प्रकाश,[2] (५) प्रेम परत्वप्रभा दोहावली, (६) विनय विहार, (७) प्रेम-प्रकाश, (८) नाम प्रेम प्रदर्शिनी, (९) सत्संग-सतसई, (१०) भक्त-नामावली, (११) प्रेम-पत्रिका, (१२) सुमति-प्रकाशिका, (१३) हृदय-हुलासिनी, (१४) अभ्यास प्रकाश (१५) उपदेशनीति शतक, (१६) उज्ज्वल उत्कंठा विलास, (१७) मंजुमोद चौंतीसी, (१८) वर्षविहार, (१९) मनबोधशतक, (२०) विरतिशतक, (२१) मनबोध, (२२) बोधामोद, (२३) पंचरत्नी-ग्रंथ (२४) चौंतीसा ग्रंथ, (२५) इष्ट-प्रकाश, (२६) अनन्य प्रमोद[1], (२७) भजन-नाम-चिंतामणि, (२८) संत वचन विलासिका, (२९) रूप उमंग, (३०) रूपरहस्य-पदावली, (३१) रूपरहस्यानुभव, (३२) संतसुख-प्रकाशिका, (३३) अवधवासी-परत्व, (३४) रामनाम-परत्व-पदावली, (३५) सीताराम-सम्बन्ध प्रकाशिका, (३६) अवध विहार, (३७) सुखसीमा दोहावली, (३८) उज्ज्वल उपदेश-पत्रिका, (३९) नाममय एकाक्षरकोष, (४०) वाराविंदु-तरंग, (४१) युगल-रस विलास, (४२) प्रबोधदीपिका दोहावली, (४३) विम्बप्रदीप प्रकाशिका, (४४) प्रमोदसाधिका दोहावली, (४५) वर्षविहारमोद चौंतीसी, (४६) रसरचरित्रमनोहरी,

---

१ रीवाँ-नरेश महाराज रघुराजसिंह आपके कृपापात्र थे। इन्हीं की सहायता से आपके निवास-स्थान (लक्ष्मणकिला, अयोध्या) पर की विशाल मंदिर बनवाया था, वह आज भी वर्तमान है।

२. रामनाम की महिमा पर यह सर्वोत्तम प्रामाणिक एवं मौलिक ग्रंथ माना जाता है। इसका भाषा-टीका-सहित तीसरा संस्करण सन् १९१९ ई० में लखनऊ के नवल किशोर प्रेस से प्रकाशित हुआ था। —देखिए 'रामभक्ति-साहित्य में मधुर उपासना' (डॉ० भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव', प्रथम सं०, सन् १९५७ ई०), पृ० १७५-८२।

(४७) अष्टयाम-रहस्य, (४८) जानकीस्नेह-हुलासशतक, (४९) नामपरत्व-पंचाशिका, (५०) धर्मविहार दोहा, (५१) संतविनय शतक, (५२) विरक्ति शतक, (५३) सिद्धान्तवस्तु बोधावली, (५४) तत्त्वोपदेशाष्टक, (५५) वारवाराशि शतवार, (५६) भक्ति माल, (५७) सर्वांगपंचक, (५८) मन-नसीहत, (५९) फारसीहुरूफतहज्जीवार मुक्तना, (६०) शिवा शिव अगस्त्य-सुतीक्ष्ण-संवाद, (६१) वैष्णवोपयोगिनिर्णय, (६२) पंचाशुभ-कोश, (६३) मुक्तन-फारसी-हुरूफ, (६४) मुक्तन हिन्दी-वर्ण, (६५) मीरवतीसी, (६६) पन्द्रा-जग, (६७) अष्टयाम ककहरा, (६८) अनन्य प्रमोद[१], (६९) प्रीति-पंचाशिका, (७०) नाम विनोद-असावन-बरवै, (७१) राम-नवरत्न, (७२) गुरु महिमा, (७३) संत-वचनावली, (७४) पारस भाग और (७५) विनोद विलास।[१]

आप सं० १९३३ वि० (सन् १८७६ ई०) की मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी को साकेत वासी हुए।

उदाहरण

(१)

रे मन निशिदिन नाम सुच-धाम जपन उत्कंठ।
करत रहो पुलकित वपुष निदरि धाम-बैकुंठ॥
कौन काम की मुक्ति से जहँ न रटन सियराम।
नाम-राग बिन निदरिहौं सोउ दिन अति अभिराम॥
जगमग पग-पंकज परम प्रेम-प्रवाह निहारि।
ह्वै रहिहै मेरी सुमति सुरति सोहाय विचारि॥
ललित ललन लोने युगल पद-पंकज प्रिय अंक।
अति अनूप नव रंग से रँगिहौं विगत कलंक॥
अरुन हरन-मन नख-प्रभा राकापति शत-सूल।
मृदुल सचिक्कन चाहि कब ह्वै जैहौं भवमूल॥
अमल ललित अँगुरीन-छवि मधुर आभरन-संग।
कब जोहत युग जाइहैं निमिष समान सरंग॥[२]

---

१ इनमें कई रचनाएँ प्रकाशित भी हो चुकी हैं। प्रकाशित रचनाओं में अधिकांश लखनऊ के नवल प्रेस में छपी हैं। कुछ रचनाएँ रामचरण प्रेस (अयोध्या) और कुछ धर्म विजय प्रेस (गोरखपुर) से भी प्रकाशित हुई थीं।

२ 'रामभक्ति-साहित्य में मधुर उपासना' (वही), पृ० २६०।

(२)

निराकार सब में बसत, भक्तन हिय साकार।
युगल अनन्य विचार बिनु, भटकहिं अन्ध गँवार।।
निराकार मे सुख नहीं, केवल व्यापक रूप।
सरस रहस साकार मधि, श्री श्रुति शेष निरूप।।[1]

(३)

रटन-रस-रसिया विरले देखे।
जिनके प्रान-अधार नाम-सुख सार न तजहिं निमेखे।।
विमल बरन हिय हरन हार करि परिहरि विषय विशेषे।
अगुन सगुन युग रूप एक जिय लखहिं अलेख सुवेखे।।
पगे प्रेम पन प्यार पान तन अतन होन विन रेखे।
युगल-अनन्य शरन तिनकी सुचि सोहबत चाहु परेखे।।[2]

(४)

राम-रस पीवत जौन सुभागी।
तिनके भाग अदाग सराहत सुर मुनीश अनुरागी।।
लाय लाय लय लगन मगन मन मत्त धान सम त्यागी।
होय रहे मदहोश जोश छकि परा प्रीति मति पागी।।
युगल-अनन्य-शरन सखि सब लौंको विमल विरागी।[3]

(५)

कोइ वाम रूप भजि शाक्त हुए कोइ अस्मृति शासन ग्रसे हुए।
कोइ निर्गुण ब्रह्म समझते हैं सुषमाना आसन कसे हुए।
काइ महाविष्णु को जाप किये उर माल छाप भुज लसे हुए।
आसिम ! हम हाय कहाँ जावें तेरे जुल्फ-जाल में फँसे हुए।।[4]

---

१ 'रामभक्ति-साहित्य में मधुर उपासना' (वही) २१६।
२ वही पृ० २७३-७८।
३ वही, पृ० २७४।
४ 'रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय' (वही), पृ० ४९६।

(६)

ललन कैसे निबहैगी मोरी-तोरी प्रीति।
जो मारुत हिय शीष प्रानप्रिय तेहि पथ चलत सभीत।
महा मलीन मूल परगट वपु तासन नेह प्रतीत।
पलभर कह्यो न मानत मम मन रचत रीत विपरीत।
'युगल-अनन्य शरण' तापित मन कीजिय सपदि सुसीत॥[१]

(७)

होरी के रंग अंग में क्या मौज नई है।
हर चार तरफ बाग बहारों से छई है॥
खेले उमंग संग सजन सोहनी लिये।
हर तान आसमाने तलक होश हुई है॥
मोहर मरोरदार मधुमास मई है।
श्री जानकी-जीवन से लगन होरी में लगी है।
सब तौर 'युगल-अनन्य' भली मौज मई है॥[२]

*

घनारंग दुबे[३]

आप 'घना मलिक' के नाम से भी प्रसिद्ध थे।

आपका जन्म सं० १८७६ वि० (सन् १८१९ ई०) में शाहाबाद जिले के मनवाँई[४] नामक ग्राम में हुआ था।[५] आप गौड़ ब्राह्मण थे। आपका जीवन अत्यन्त

---

१ 'रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय' (वही) पृ० ४६१।

२. वही।

३. आपका प्रस्तुत परिचय मुख्य रूप से श्रीजगदीश शुक्ल (नूरपुर शाहाबाद) द्वारा लिखित लेख के आधार पर तैयार किया गया है।—देखिए, 'नईधारा' (मासिक, वर्ष १ अंक ७ अक्टूबर, सन् १९५१ ई०), पृ० ७५।

४ पंजीया वालों का यह प्रसिद्ध ग्राम भोजपुर की प्राचीन राजधानी डुमराँव से सात मील दक्षिण में आज भी स्थित है।

५ 'नईधारा' (वही) पृ० ७५। आपने स्वयं ही लिखा है—

'शाहाबाद जिला जानो, पुनि प्रगने दनवार।
मनवाँई ग्राम अमर, घनारंग मोपार॥'

किन्तु, दिनांक ६-२ ... के पत्र में ... (मुजफ्फरपुर)-निवासी श्री ... ने आपका निवास-स्थान शाहाबाद (शाहाबाद) बतलाया है यद्यपि वे भी यह स्वीकार करते हैं कि आपके वंशज ग्राम मनवाँई में हैं। उनके कथनानुसार आज भी आपके वंशजों के पास आपके द्वारा रचित ग्रंथों की हस्तलिखित प्रतियाँ सुरक्षित हैं।—ले०

सरल था। बाहरी ठाटबाट और तड़क-भड़क से बहुत दूर थे। आपकी पगड़ी एक बार बँधती, तो महीनों चलती थी। जूता तो कभी पहनते ही न थे। सवारी पर भी चलने की लत नहीं थी। कोसों पैदल ही चला करते थे।

वास्तव में आप एक पहुँचे हुए कृष्णभक्त थे। अतः आपका मन भगवान् कृष्ण की भक्ति-भावना में ही बराबर डूबा रहता था। संगीत के आप एक अपूर्व ज्ञाता थे।

आपके साथ लगभग पचास अन्य संगीतज्ञ एवं कवि थे, जिन्हें आपने संगीत की शिक्षा दी थी।[1] प्रसिद्ध संगीतज्ञ एवं कवि प्रकाश मलिक (बच्चू मलिक)[2] आपके ही भानजे थे।

आपका सम्बन्ध मुख्य रूप से 'डुमराँव' (शाहाबाद) के राज-दरबार से था। यों तो सूर्यपुरा (शाहाबाद) के राज-दरबार से भी आपका सम्पर्क बराबर रहा। डुमराँव-नरेश महाराजा सर महेश्वरबक्शसिंह आपका बहुत आदर करते थे। उनके निधन के पश्चात् आप उस दरबार से विदा होना चाहते थे, किन्तु उनके उत्तराधिकारी महाराजा राधाप्रसाद सिंह के विशेष अनुरोध पर आपने अपनी यह इच्छा कुछ काल के लिए त्याग दी। महाराज का आदेश-पालन करके कुछ ही दिनों के बाद आप अपने गाँव चले आये और दस वर्षों तक वहीं रहे। इसी अवधि में आपका सम्पर्क सूर्यपुरा रियासत के तत्कालीन स्वामी दीवान रामकुमारसिंह[3] से हुआ। उनके स्वर्गवासी हो जाने के पश्चात् स्वभावतः आपका सम्पर्क उनके पुत्र राजा राजराजेश्वरीप्रसादसिंह से हुआ। कहते हैं, वे आपका बड़ा सम्मान करते थे। आपका अन्तिम समय भगवद्भजन एवं सत्संग में बड़े ही आनन्द के साथ व्यतीत हुआ। आप सं० १९४४ वि० (सन् १८८७ ई०) में परलोकगामी हुए। उस समय आपकी आयु अड़सठ वर्ष की थी।

आप निस्सन्तान थे। आपके निधन के पश्चात् आपकी धर्मपत्नी श्रीमती राज कुमारी को डुमराँव-दरबार से आजीवन वृत्ति मिलती रही।[4]

आप एक कुशल कवि भी थे। कहते हैं कि आप अपनी कविताएँ अधिकतर कोयले या कंकड़ से दीवार अथवा जमीन पर ही पहले लिखते और पीछे उसे कागज पर उतार लेते थे। इस कार्य में कभी-कभी आपकी सहायता आपके भानजे प्रकाश मलिक भी करते थे। स्फुट रचनाओं के अतिरिक्त आपकी एक ही ग्रन्थाकार रचना मिलती है—

---

१ उनलोगों में रामसहाय जोशी (मिर्जापुर) रामचरित्र तिवारी हुलास कवि फूलचन्द मलिक जगदीश्वर प्रसाद, रामलाल [illegible] (लाले मलिक) और कान्हजी साहब प्रमुख थे।

२ इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य।

३ इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य।

४ 'आपके वर्तमान वंशधर श्रीमहदेव दुबे, जो सूर्यपुरा के राजासाहब के दरबार में गायक थे, शास्त्रीय संगीत के मर्मज्ञ हैं। वे आजकल वहीं राम-[illegible] में संगीताध्यापक हैं। इनके पुत्र भगवानजी भी एक अच्छे गायक हैं।'—सं०

'कृष्ण-रामायण'।[1] इस ग्रन्थ की रचना आपने अपने प्रसिद्ध आश्रयदाता महाराजा सर मोहेश्वरबख्शसिंह के आदेश पर की थी।

उदाहरण

(१)

कंचन की परी कैधौं कुसुम की छरी कैधौं
मोतिन की लरी कैधौं थीर भई दामिनी।
कैधौं करतार सुधा साँचे माँह ढारि काढ्यो
कैधौं प्रगटी है आज शुक्लपक्ष यामिनी।
कैधौं हीरा-खानि कैधौं चन्द्रमा-सरूप कैधौं
संतन के हृदय-पयोनिधि-विश्रामिनी।
आगे रूपरासि में तिलोत्तमा भई है तिल
कृष्ण ढिग राजे 'घनारंग' की सो स्वामिनी।[2]

(२)

चंचल चलाके सब कला के हैं भरे दोऊ
लाज के पताके खंज मीन के कताके हैं।
घूँघट उठा के भ्रू चढ़ा के ताके आके मोर
सो गिरे तड़ाके घवड़ा के मुरझा के हैं।
सब उपमा के कंज मृगा के दबा के ताके
ऐसो ना उमा के ना रमा के सारदा के हैं।
द्वै जब सला के सुरमा के 'घनारंग' सुख
छाके हैं सुधा नैन बाँके राधिका के हैं।[3]

---

१ इसका प्रकाशन श्रीरुद्र मल्लिक (प्रकाश मल्लिक) ने बहुत पहले करवाया था। इसकी रचना कवि ने ४२ वर्ष की अवस्था में की थी। इसकी रचना गोस्वामी तुलसीदास के अनुकरण पर दोहा-चौपाई में हुई है। कथानक भी 'मानस' से बहुत कुछ मिलता-जुलता है। थोड़ा परिवर्तन यह है कि पार्वतीजी को जब शिवजी रामायण की कथा सुनाने लगते हैं, तब इसके बीच में कृष्ण-कथा भी आ जाती है। देवताओं की प्रार्थना पर जब कृष्णावतार होता है तब एक दिन यशोदा मैया बालक कृष्ण को रामायण की कथा सुनाने लगती हैं। इसी में वे 'रामचरित-मानस' की सारी कथा सुना जाती हैं। कृष्णजी को सुनाये जाने के कारण ही इसका नाम 'कृष्ण-रामायण' रखा गया। अंत में पार्वतीजी के पूछने पर शिवजी ने सम्पूर्ण कृष्ण-कथा भी सुना दी है। इसमें रामकांड से ऊपर सात उन सातों कांड तो हैं ही, अंत में 'भक्तिविलास' नामक एक आठवाँ कांड भी जोड़ दिया गया है। इस कांड का अन्तिम भाग संगीत-शास्त्र का मनोहर दर्पण है।—'नईधारा' (वही), पृ० ७४ और ७७।

२ नईधारा' (वर्ष १० अंक ६ दिसम्बर, सन् १९५६ ई०) पृ० ६२।

३ वही, पृ० ६२-६३।

(३)

कलुष-मृग मारिबे को वही गंग धन्वाकार
असी और वरना घाट बाँध्यो प्रबला-सो है।
मूठ मनिकर्णिका अहेरी प्रबल विस्वनाथ
चूके ना निसाना यह तारक-मन्त्र सासी है।
मौन सम लोलारक सुकवि कहैं 'घनारंग'
जानत जहान यह महिमा सुप्रकासी है।
इहि प्रकार से उदार खेलत सिकार नित्य
आपै अविनासी सिव आनँद-वन कासी है।[1]

(४)

सान्तरस-तख्त पै बिचार स्वेत गादी राखि
वुद्धि मसनन्द प्रेम-चादर बिछाये हैं।
सुकृत-मनोरथ आ बैठेंगे मुसाहिब-वृन्द
संयम और नेम चोबदार ये दिखाये हैं।
ग्यान-ध्यान चामर लै खवासो में पुन्य साथ
छमा-सील पखा मनकिंकर झुलाये हैं।
चरन विहार अब त्रिभुवन-बादसाह कब
धौं हमारे हिय-महफिल में आये हैं।[2]

(५)

नचत त्रिभङ्ग ए
ब्रजचन्द बंसीवट जमुनतट प्रचुर मनसिज-मान-खंडन,
करन कुण्डल झमक मानों उदित जु ताल पतङ्ग। नचत०—
नख ज्योति मनि इव चरन अम्बुज सदृश नूपुर ताल गति रव,
जघन रम्भा खम्भ उलट्यो कटि निरखि मृगराज भृङ्गी दङ्ग। नचत०—
दामिनि छटा सम पीत पट दुति लसत कटि अब नचत गति वर,
मेखला धुनि करत मानों दुन्दुभी निजकर बजायो विस्व जीति अनङ्ग। नचत०—
नवजलद सम सर्वाङ्गसुन्दर सिपज माला हृदय ऊपर,
मध्य रोमावलि जमुन मनु नीलगिरि ते धार द्वै ह्वै चली छिति पर गङ्ग। नचत०—
सिर मुकुट रत्नावलि खचित भृत कुटिल कच अलि अवलि मानो,
भौंह बाँके दृग रसीले अधर विद्रुम मुरलि धारे उठत तान-तरङ्ग।[3] नचत०—

1. 'प्रमाद' (वही) पृ ११।
2. वही।
3. वही, (वर्ष १० अंक ८, अगस्त, सन् १९२९ ई०), पृ ७७-७८।

नगनारायण सिंह[1]

आप सारन जिले के परेढ़ी-ग्राम[2] के निवासी एक प्रतिष्ठित कायस्थ जमींदार थे।[3] आपका जन्म उसी ग्राम में सं० १८७६ वि० (सन् १८१९ ई०) को ज्येष्ठ शुक्ला षष्ठी को हुआ था।

आपके पिता का नाम दुलारलालसिंह और पितामह का कर्त्तारामसिंह था। आप अपने पिता के ज्येष्ठ पुत्र थे। आपका विवाह मुजफ्फरपुर के एक कुलीन परिवार में हुआ था, जिससे आपके तीन पुत्र और दो पुत्रियाँ हुईं।[4] आपका शरीर गौर वर्ण का, बड़ा हृष्ट पुष्ट और सुन्दर रूप बड़ा आकर्षक था। जमघदार मिर्जई, बँधी पगड़ी, चुनदार धोती और शाल-चादर आपकी पोशाक थी। गर्मियों में केवल मलमल की पोशाक पहनते थे। पूजापाठ के समय केवल पीताम्बर धारण करते थे और गो-पद की तरह मोटी शिखा रखते तथा ललाट पर त्रिपुण्ड्र लगाते थे। प्रातःकाल से दस बजे तक पूजापाठ करके दो बजे दिन तक कचहरी करते और चार बजे नित्य भोजन से निवृत्त होते थे। आप कभी अकेला नहीं खाते थे, सदा सत्तर-पचहत्तर व्यक्तियों के साथ भोजन करने बैठते थे। भोजनोपरान्त 'नजरबाग' में टहलते और उसी समय दरबार भी होता। फिर, रात में भी सभा में साहित्य-चर्चा काफी देर तक होती रहती और रात का भोजन भी दो बजे तक समाप्त हो पाता था। आपकी बाँह पर यंत्र के रूप में एक बीजक बँधा रहता था, जिसपर सिंह-वाहिनी भगवती दुर्गा की छाप थी। उसकी भी पूजा आप नित्य किया करते थे। आप परम श्रद्धालु शाक्त थे और जगदम्बा की उपासना-आराधना बड़ी भक्ति से करते थे।

आप बड़े शाहखर्च थे। त्योहारों के दिन विशेष उत्सव करते और ब्राह्मणों तथा पंडितों को पर्याप्त दान देते थे। कंगालों को भी कपड़े और अन्न बाँटते थे। आपको [illegible] देने का भी अभ्यास था। विवाहादि में मुक्तहस्त हो खर्च करते रहे, पर कायस्थ-महासभा ने जब तिलक-दहेज की प्रथा उठा देने का निर्णय किया, तब आप भी उसके अनुसार काम करने लगे। समाज-सुधार की भावना भी आपमें भरपूर थी। अतिथि-सत्कार, गुणियों और कलावन्तों का सम्मान, दीन-दुखियों की सेवा-सहायता आदि आपके विशेष गुण थे। आप सनातन-धर्म के श्रद्धालु अनुयायी और बड़े शीलवान् रईस थे।

---

१ आपका प्रस्तुत परिचय पं० रामविदेश शास्त्री-लिखित जीवनी के आधार पर तैयार किया गया है। —देखिए, 'गंगा' (मासिक, भाग ६, तरंग ४ मई, सन् १९३६ ई०) पृ० ३०५—०८।

२. यह ग्राम बहुत दिनों से धनी-मानी कायस्थों की बस्ती होने के कारण जिले और प्रान्त में आज भी प्रसिद्ध है। कहते हैं, आपके कुल की जमींदारी में चार सौ चौरासी गाँव थे और वार्षिक आय लगभग लाख रुपये की थी।

३. 'गंगा' (वही) पृ० ३०७।

४. आपके एक पौत्र श्रीमुरलीधर नारायणसिंह जी वकील थे।

आपको बाग-बगीचे का बड़ा शौक था। आपके बाग में तरह-तरह के फूल फल थे। बाग में जाने पर आप सभी फलों को लोगों में बाँट देते थे। पालतू पशु-पक्षियों के पालन पोषण में आपकी बड़ी ममता थी। हाथियों को प्रतिदिन अपने सामने दाना खिलाते थे। तीतर, बटेर, बुलबुल, मुर्गे, कबूतर, बत्तख आदि आपके चिड़ियाखाने में सदा शोभा पाते थे। कभी-कभी आप इनमें से लड़ाकू चिड़ियों की लड़ाइयाँ देख मनोरंजन किया करते थे। हथियारों के भी आप बड़े शौकीन थे, और खासकर आपको तलवार की बड़ी अच्छी परख थी। आपके निजी पुस्तकालय में विशेषतः हस्तलिखित ग्रंथों का संग्रह था। इन ग्रन्थों की प्रतिलिपियाँ तैयार कराने के लिए आपने कितने ही सुलेखकों को नियुक्त कर रखा था। आपके संग्रह में अनेक उत्तम एवं दुर्लभ ग्रन्थ थे।

अपनी बड़ी जमींदारी के प्रबन्ध में आप ऐसे कुशल थे कि कुछ ही दिनों में आपने अपनी रियासत को उन्नत दशा में पहुँचा दिया। आप बड़े प्रजावत्सल और उदाराशय व्यक्ति थे। अपने असामियों को सन्तान-तुल्य मानते थे। गरीबों से बाकी लगान वसूल करने में आप काफी छूट दिया करते थे।[1] बकाया लगान वसूलने के लिए रियायों पर कभी नालिश नहीं करते थे। किसी प्रजा से न कभी आप दण्ड लेते और न दूध दही-घी माँगते। सलामी में मिले हुए रुपये को भी आप लगान में कटवा देते थे। बिना उचित मूल्य दिये कभी किसी असामी की भेंट नहीं स्वीकार करते थे। अपने नौकरों से कभी नाराज होते, तो यही दण्ड देते कि उनसे काम नहीं लेते, पर कभी किसी को कार्यच्युत नहीं करते थे। आपके मुँह से कभी किसी के प्रति कोई अपशब्द नहीं सुना गया।

आपने काव्यशास्त्र के अतिरिक्त आयुर्वेद, ज्योतिष और संगीत शास्त्रों का भी गहन अध्ययन किया था। वैद्यक के अनुसार उत्तमोत्तम दवाएँ बनवाकर आप गरीबों को निःशुल्क वितरित किया करते थे। ज्योतिष-सम्बन्धी शास्त्रार्थ में आप पंडितों से भी लोहा लेते थे और उनकी निश्चित की हुई लग्न-वेला में मीन मेष निकालना आपके बायें हाथ का खेल था।

आरम्भ में आपने अरबी-फारसी की शिक्षा पाई थी। उसके बाद आपने संस्कृत और हिन्दी को भी स्वाध्याय के बल से अधिकृत कर लिया। आप हिन्दी, संस्कृत, फारसी और उर्दू[2] में अच्छी कविता करते थे। आपने हिन्दी में देवी-देवता-सम्बन्धी डेढ़-दो हजार पदों एवं गीतों की रचना की थी। इनमें आपके राग रागिनियों के विशद

---

१ एक बार एक जबरदस्त किसान से मुकदमेबाजी में आप कलकत्ता-हाईकोर्ट तक जीत गये। पर, जब वह आपकी शरण में आकर गिड़गिड़ाया, तब आपने पचीस हजार की डिग्री माफ कर दी। इसपर उसने आपको सुनहली मूठवाली एक तलवार भेंट की जो आपके वंशजों में 'आरण-दुलारी' नाम से प्रसिद्ध रही। इतना ही नहीं जिस दिन वह व्यक्ति मर गया, आपने उस दिन भोजन नहीं किया। —सं०

२ फारसी संस्कृत-रचनाओं के लिए देखिए—'साहित्य' (त्रैमासिक वर्ष ३ अंक १ अप्रैल सन् १९५२ ई०) पृ० ४८ तथा वही (अंक २ जुलाई, सन् १९५२ ई०) पृ० ३८।

ज्ञान का भी परिचय मिलता है। संस्कृत में रचित 'श्रीदुर्गासार-संग्रह'[1] के अतिरिक्त आपने व्रजभाषा में 'श्रीदुर्गाप्रेमतरंगिणी'[2] नामक पुस्तक रची थी। इस 'तरंगिणी' में एक और भी छोटी हिन्दी-रचना सम्मिलित है— 'दुर्गानामार्थ दोहावली'। इसके अतिरिक्त आपकी कुछ विविध विषयक स्फुट हिन्दी-रचनाएँ तथा आपके समकालीन और दरबारी कवियों की भी दो चार रचनाएँ मिलती हैं, जो आपकी ही प्रशंसा में लिखी गई हैं।

सन् १८८० ई० में, अयोध्या में, इकहत्तर वर्ष की आयु में आप संग्रहणी रोग के शिकार हो गये और उसी वर्ष आपका स्वर्गवास हो गया।[3]

उदाहरण

(१)

जय देवि दुर्गे अमितरूपिनि अलख-गति अद्भुतस्वरूपिनि
अक्षय-यश माया अनूपिनि ब्रह्मरूपिनि हे।
अचर-चर-जग-जीव-पोषिनि अपर सुर-मुनि-भक्त-तोषिनि
कलुष-कल्मष-सिन्धु-शोषिनि दनुज रोषिनि हे।
विधि-हरि-पुरारि-हृदय-रंजिनि कुमति-मोह-गलीम-गंजिनि
पाश-यम-भवभाति-भंजनि नयन-रंजनि हे।
दनुज-सुर-सुख-राशि-मंडिनि अति प्रचंडिनि हे।
अति भयंकर रूपधारिनि चण्ड-मुण्ड-प्रचण्ड-दारिनि
सुरन के सन्तापहारिनि अभयकारिनि हे।
दुसह-दुख-अघ-औघ-नासिनि सकलसुखगुनज्ञानरासिनि
भक्तजन 'नग'-हृदयवासिनि विन्ध्यवासिनि हे॥[4]

---

१ आपने शिव, दुर्गा, राम, कृष्ण आदि के अनेक स्तोत्र संस्कृत में भी रचे हैं।—देखिए 'साहित्य' (पत्री) पृ ४४ तथा ५७।

२. बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रन्थ अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित।

३ अन्तिम समय में आपने अयोध्या पहुँचने पर यह दोहा कहा था— कोटि काल काशी बसे मथुरा कल्प इक निमिष सरयू बसे, तुले न तुलसीदास। कहते हैं, वहाँ जाने के दूसरे ही दिन आपका शरीरपात हो गया।—सं

४ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रंथ-अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित हस्तलिखित 'दुर्गाप्रेमतरंगिणी' (पत्र ७(क)) से।

(२)

सखि री देखु अचरज बात।
अंग अंग विचित्र सोभा जगजननि के गात॥
राहु लखि निसिपति डरत निसिपति निरखि जलजात।
त्यागि सरवर बास लीन्हो मृदुल युवती-गात॥
धनुष लखि सुक अति हि डरपत सुक निरखि तत्काल।
दाड़िमी फल बिहँसि अन्तर दसन खोल्यो लाल॥
मृगहि लखि फल बिम्ब डरपत मृग निरखि मृगराज।
सिंह लखि गजराज डरपत यह अचम्भा काज॥
वैर करत न काहु रिपु सन करत एक सँग वास।
कहत 'नग' जगदम्ब-महिमा सत्रु से नहिं त्रास॥[1]

(३)

सोभा केस कारे घुघरारे लखि हारे कवि
जैसे बिधु पूरन निसंक राहु घेरे हैं।
कैसे बिधु पूरन निसंक राहु घेरे कहि
जैसे ससि पास स्याम मेघ चहुँ फेरे हैं।
कैसे ससि पास स्याम मेघ चहुँफेरे कहि
जैसे चन्द चूसत मिलि छौना अहि कारे हैं।
कैसे चन्द चूसत मिलि छौना अहि कारे कहि
जैसे मुख ऊपर केस कारे घुँघरारे हैं॥[2]

(४)

सुन्दर सुरग सुचि सारी जरतारी भारी
मोतिन किनारी धारी झालर जरकारी है।
जाके लखे वे वरनारी पनिहारी भई
पन्नगीकुमारी दसा देह की बिसारी है।
यारी है कुमारी वारी सारी सुकुमारी सखी
अति ही अहारी सन सुधि ना सम्हारी है।
बिनती हमारी सुनु सैल की कुमारी वारी
सखि के तव सारी सब हारी देवनारी है।[3]

---

१ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रंथ-अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित '[illegible]' (प्रथम तरंग) से।
२ ३ वही।

(५)

मन मतङ्ग को चाहिए सतगुरु दृढ़ गजपास।
ग्यानांकुस से बस करे प्रेम जँजीरा डास॥
तन दीपक मन तेल भरि ग्यान ज्योति ते बार।
ध्यान सुरत मगु पग धरहु देखु दरस उजियार॥
ग्यान जगावे विरह को विरह जगावे जीव।
जीव मिले जो पीव सों वहां जीव नहिं पीव॥
सुमति सील सिंगार करु प्रेम सहित सब भाय।
जय गोविन्द प्रभु कहत 'नग' विरह-व्यथा मिटि जाय।'[1]



दामोदर झा[2]

आपका उपनाम 'कविनाथ' था।

आप महरैल (दरभंगा) के निवासी और दरभंगा-नरेश महाराजा माधवसिंह (सन् १७७६ १८०८ ई०) के दौहित्र पं० मनोहर झा के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८२१ ई० में हुआ था।

आपकी शिक्षा तो सामान्य ही हुई थी, किन्तु स्वाध्याय के बल पर आपने प्रशंसनीय पाण्डित्य अर्जित कर लिया था। शास्त्रों और पुराणों में आपका गहरा प्रवेश था। आप एक अच्छे जमीन्दार थे, परन्तु पीछे निर्धन होने पर भी आप पूर्ववत् अध्ययन एवं लेखन के काम में मृत्यु-पर्यन्त संलग्न रहे। आपकी गणना एक प्रसिद्ध लिपिकार के रूप में भी होती थी। आपने लगभग एक सौ संस्कृत हिन्दी-ग्रंथों को बड़े मनोयोग से अपने हाथों लिखकर तैयार किया था। आपके हस्तलिखित ग्रंथों में कुछ के नाम ये हैं—(१) साम्बपुराण, (२) ब्रह्मवैवर्तपुराण, (३) रसिकप्रिया, (४) कविप्रिया, (५) जगद्विनोद, (६) पिंगल, (७) अध्यात्मरामायण, (८) गयापद्धति, (९) दशकर्मपद्धति, (१०) महाभारत शान्तिपर्व, (११) देवी भागवत, (१२) गरुड़पुराण, (१३) छन्दोमंजरी, (१४) वृत्तरत्नाकर (१५) पदवाक्यरत्नाकर, (१६) न्याय कुसुमांजलि, (१७) वेदान्त परिभाषा, (१८) संस्कार-दीपक, (१९) कुमारसंभव, (२०) शकुन्तला आदि। उक्त प्राचीन हस्तलेखों के अतिरिक्त आपके स्वरचित ग्रंथों की संख्या सात है। उनके नाम इस प्रकार हैं—(१) देवीगीत शतक, (२ कामदर्पण, (३) कृष्णकुतूहल, (४) पुरुषचरित,

---

१ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रंथ अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित 'दुर्गाभक्तितरंगिणी' से।

२. श्रीगिरिजानन्द झा बी० ए० (प्रधानाध्यापक, श्रीदुर्गा मिडिल स्कूल महरैल) द्वारा प्रेषित सूचनाओं के आधार पर।

(५) गीतावली, (६) मिथिला आयुर्वेद शब्दकोश और (७) आयुर्वेद-संग्रह। इन सात ग्रंथों में प्रथम (देवीगीत शतक) को आपके देहान्त के बहुत दिन पश्चात् भीमेश झा, न्यायव्याकरणाचार्य ने प्रकाशित कराया था।

उदाहरण

हम अति विकल विषय रस मातल भगवति तोर भरोसे।
अशरण शरण हरण-दुख-दारिद तुअ पद-पङ्कज-कोसे॥
विधि-हरि शिव सनकादिक सुरमुनि पावि मनोरथ दाने।
तुअ गुण यश वरणत कर अनुछन वेद पुरान बखाने॥
जे तुअ साधक पुरल तनिक मन अवसर आएल मोरा।
अह अभिलाख सतत वरदाइनि करिय विनय किछु तोरा॥
'आदिनाथ' पर कृपायुक्त भै निशिदिन करु कल्याने।
सुत सम्पति सुख मुद मङ्गल दै चारि पदारथ दाने॥[1]



भाना झा

आपकी रचनाओं में आपका नाम 'भानुनाथ' मिलता है।

आप दरभंगा जिले के पिलखवाड़ नामक ग्राम के निवासी थे।[2] आपका जन्म सं० १८८० वि (सन् १८२३ ई०) में हुआ था।[3] आपके पिता का नाम था महामहोपाध्याय पं० दीनबन्धु झा।[4] प्रसिद्ध नैयायिक एवं कवि महामहोपाध्याय पं० मधुसूदन झा[5] आपके ही अनुज थे।[6]

आप दरभंगा-राजकुल के प्रसिद्ध महाराज महेश्वर सिंह (सन् १८५०-६० ई०) के दरबार में राज-ज्योतिषी थे। कहते हैं, उक्त महाराज के यहाँ आपको अत्यधिक प्रतिष्ठा प्राप्त थी। उक्त दरबार से आपका सम्बन्ध महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह (सन् १८८०-९८ ई०) के काल तक बना रहा।

---

१ A History of Maithili Literature (J Mishra Vol I 1949) P 432.
२ 'मैथिली-गीत-रत्नावली' (पं० बदरीनाथ झा, प्रथम सं० सं० २००६ वि०) पृ० ८९।
३ 'मिथिलानु-विनोद' (वही तृतीय-भाग द्वितीय सं० सं० १९५५ वि०) पृ० ११०।
४ वे 'मधुसूदन झा' या 'नेपाल झा' के नाम से प्रसिद्ध थे। इन्हें अपनी विद्वत्ता के पुरस्कार-स्वरूप नेपाल के तत्कालीन शासक से सन् १८५४ ई० में नेपाल में ही एक ग्राम प्राप्त हुआ था।—A History of Maithili Literature (वही) P 348
५ कविशेखराचार्य पं० बदरीनाथ झा ने इनका उल्लेख आपके पिता के रूप में किया है।
६ 'पुस्तक-भण्डार रजत-जयन्ती-स्मारक-ग्रंथ' (सम्पादक-मण्डल सन् १९४२ ई०), पृ० २।

आपने अनेक ग्रंथों की रचना की थी, जिनमें 'प्रभावतीहरण' नाटक प्रसिद्ध है। आपके इस नाटक की गणना मिथिला के कीर्त्तनिया नाटकों की परम्परा में होती है; क्योंकि इसके गीत मैथिली में लिखे गये हैं। मैथिली में रचित आपके कुछ स्फुट पद भी मिलते हैं, जो बड़े ही मार्मिक हैं।

उदाहरण

(१)

चलल शयन-गृह मनमथ रे नागरि कर लागी।
जलद विजुलि जनि विपकुल रे निज-निज तनु भागी।
सुमन सुवासल परिहन रे कुसुमित वर धारे।
भावित गीत ललित पद रे तेहि गमन गँभीरे।
सिन्दुर रेख चिकुर-बिच रे अनुरूप प्रकारे।
उदगत भेल यमुन बिच रे जनि भारति धारे।
धवल बसन शिर शोभित रे युत श्यामल माले।
नागरि पगु नूपुर-रव रे जनि पूरथि ताले।
हृदयिक प्रेम नेकल कत रे कर-पल्लव जाँती।
नागरि विहँसि-विहँसि रहु रे अभिनव कय काँती।
'भानुनाथ' कह मन गुनि रे बसि नृपक समाजे।
पावथु सतत एहन सुख रे मिथिलापति राजे॥[1]

(२)

आज देखल पथ कामिनि रे दामिनि सम रूपे।
इन्दुवदनि मृगलोचनि रे गति परम अनूपे॥
कुन्तल रुचिर विराजित रे मुखमण्डल पाए।
अमिय लोभ शशि चौदिश रे फणि रहु लपटाए॥
अधर दसन छवि कि कहब रे अनुपम तसु काँती।
मधदल निकट बइसाओल रे दाडिम बिज पाँती॥
कनक-लता भुज उपमित रे कुच युग निरमाई।
मदन जगत जिति राखल रे दुन्दुभि उनटाई॥

---

१ 'प्रभावतीहरण' (एशीय सं०) पृ० २१।

जघन उपर रोमावलि रे छवि बुझु संगोपे।
गुपुत नीवि जनि विसरय रे लत मनमथ रोपे॥
'भानुनाथ' भन मन दय रे कत कयल वखाने।
कवि गुन बुझ्यु नृपति भावे रे अपनहिं अनुमाने॥[1]

(३)

जदुपति बुझिअ विचारी। अभिनव विरह वेआकुल नारी॥
नलिन सयन नहिं भावे। तनि पथ हेरइत दिवस गमावे॥
केअओ चानन कर लेपे। केअओ कहुए जनि रहल संक्षेपे॥
कोन परि करति निवाहे। सितकर किरन सतत करु दाहे॥
तप जनि करए सकामे। निसदिन जपइत रह तसु नामे॥
'भानुनाथ' कवि माने। रस बुझ महेस्वर सिंह सुजाने॥[2]

(४)

माधव! कि कहब तनिक विशेषे।
जनिक वदन देखइत चतुरानन चानहुँ देथि परिवेषे॥
चिकुर निकर वेणीकृत लम्बित एहन देखल अभिरामे।
लोहित विन्दु सुरुजसमुदित जनि तिमिर पाछु परिणामे॥
दशन वसन नासा रद लोचनु निरखि लाग अनरीती।
वन्धुक तील कुन्द सरसीरुह एकहि समय परतीती॥
सरस मृणाल वास चकवा युग शैवल गिरिवल कूले।
सतत अमिअ सन वचन-सुसचित तें नहि हो उनमूले॥
केहरि समाज राज-गज कर-युग तसु तनु पल्लव भासे।
कामिनि-पुण्य-प्रताप-दाप तहँ न करए तुरित गरासे॥
'भानुनाथ' भन हंस-गमनि छवि रस-विन्दक नहि भाने।
सरडवलाकुल-कमल-दिवाकर महेस्वर सिंह सुजाने॥[3]

---

१ पदावलीरत्न' (वही तृतीय भाग), पृ० २१।
२ Journal of the Asiatic Society of Bengal [Vol LIII Part I, Special No 1884] P 86
३ मैथिली-गीत-रत्नावली' (वही) पद सं० ८० पृ० ५१।

चिरंजीवी मिश्र

आप सिरिआवाँ (गया) निवासी शाकद्वीपीय ब्राह्मण थे।[1] आपका जन्म सं० १८८३ वि० (सन् १८२६ ई०) में और मृत्यु सं० १९६८ वि० (सन् १९११ ई०) में, पचासी वर्ष की आयु में, हुई थी। आप संस्कृत हिन्दी और आयुर्वेद के विद्वान् होने के अतिरिक्त एक सफल चिकित्सक तथा यशस्वी कवि भी थे। आपकी रचनाएँ प्रायः 'साहित्यसरोवर', 'साहित्यचन्द्रिका' आदि तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करती थीं। अपनी रचनाओं की सरलता और प्रसादपूर्णता के कारण अपने युग के साहित्य-जगत् में आप बड़े प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध थे। आपने आयुर्वेद-सम्बन्धी कई निबन्ध तो लिखे ही थे, विविध विषयों की छोटी-मोटी पुस्तकें भी लिखी थीं; पर वे दुष्प्राप्य हैं।

आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।

*

बच्चू दुबे[2]

आप 'प्रकाश मल्लिक' के नाम से प्रसिद्ध थे। आपकी रचनाओं में आपका नाम 'प्रकाश' ही मिलता है।

आप शाहाबाद जिला के धनगाँई नामक ग्राम के निवासी गौड़ ब्राह्मण[3] थे। आपका जन्म सं० १८८४ वि० (सन् १८२७ ई०) में हुआ था।[4] आपके पिता का नाम

1. 'गया के लेखक और कवि' (श्रीहरप्रसाद गुप्त, प्रथम सं० सन् १९५ ई०) पृ० ६०।
2. आपका विस्तृत जीवन-परिचय आपके जीवन-काल में ही श्री ... ने लिखा था।—देखिए, 'देवनागर' (मासिक, भाग २, अंक ..., सं० १९६९ वि० ...) पृ० ३१७–२१। इसके बाद यही परिचय 'गंगा' में किञ्चित् परिवर्तन के साथ प्रकाशित हुआ।—देखिए, 'गंगा' (मासिक, वर्ष २, तरंग १, ..., सन् १९३२ ई०) पृ० ...। इधर श्रीहरिप्रसाद गुप्त (गया) तथा श्रीजगदीश शुक्ल (शाहाबाद) द्वारा लिखित आपके परिचय भी उपलब्ध हुए हैं।—देखिए, 'गृहस्थ' (साप्ताहिक, भाग ११, अंक ५, १४ जनवरी सन् १९३१ ई०) पृ० १४ तथा 'गंगोत्री' (मासिक, वर्ष १, अंक २१, जनवरी, सन् १९३१ ई०), पृ० ८१।
3. 'देवनागर' (वही) पृ० ३१८। आपने स्वयं अपनी जाति की उत्पत्ति लिखी है जिसमें वराहवंश तथा तत्कालिक अनेक ग्रन्थों के उद्धरणों का अवलम्बन कर आपने अपने को ब्राह्मण सिद्ध किया है। इन लोगों में ब्राह्मणों की ही भाँति दुबे, मिश्र, पाठक, उपाध्याय, तिवारी आदि पदवियाँ नाम के साथ लगाई जाती हैं, किन्तु सर्वसाधारण में ये लोग 'मल्लिक' नाम से ही प्रसिद्ध हैं। ये लोग अपने को 'गौड़ ब्राह्मण' (अर्थात् गौड़ देश में रहनेवाले गौड़ ब्राह्मण) कहते हैं। इनकी जाति के लोग प्रयाग से पूर्व और वैद्यनाथ-क्षेत्र से पश्चिम में बहुत हैं।—देखिए, वही।
4. पं० शिवनन्दन सहाय (कल्याणपुर, शाहाबाद) ने भी आपका जन्मकाल यही बतलाया है। किन्तु श्रीजगदीश शुक्ल (नूर्नपुरा, शाहाबाद) आपका जन्म-काल सन् १८१४ ई० अर्थात् सं० १८७१ वि० बतलाते हैं। —देखिए, 'बिहार की साहित्यिक प्रगति' (बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रथम सं० सन् १९५६ ई०) पृ० ९१ तथा 'गंगोत्री' (वही), पृ० ८१।

पदार्पण हुये और पितामह का आगमन हुआ था।[1] प्रसिद्ध कवि 'पन्नारंग' (पन्ना मलिक)[2] आपके पितृव्य थे। आप स्वयं निःसंतान हुए। आपके अनुज फूलचन्द्र हुए[3] थे, जिनसे आपका वंश चला।

बाल्यकाल से ही आपकी प्रवृत्ति संगीत शिक्षा की ओर थी। प्रारम्भ में आपने पन्ना मलिक, काली मलिक, ठाकुर मलिक और श्रीकृष्ण मलिक से इस विषय की शिक्षा प्राप्त की। आगे चलकर काशी निवासी प्रसिद्ध गायक अलीबख्श खाँ के भी आप शिष्य हुए। परिणाम-स्वरूप आपकी प्रसिद्धि संगीत शास्त्र के एक प्रख्यात पंडित के रूप में हुई। एक प्रकार से आप अपने युग के तानसेन ही थे। एक ही गीत में अनेकानेक राग-रागिनियों को प्रदर्शित कर देना आपके बायें हाथ का खेल था। साधारण-से-साधारण गीतों को भी आप इस प्रकार गाया करते थे कि बड़े-बड़े संगीतज्ञ आश्चर्य-चकित रह जाते थे। उस समय की भारत प्रसिद्ध बनारसी गायिकाएँ 'तोती' और 'मैना' भी आपके गान सुनकर दाँतों उँगली दबाकर रह जाती थीं। आपके संगीत से प्रसन्न होकर आपके आश्रयदाताओं ने आपको भूमि, वाटिका, भवन आदि देकर चिरंतन काल तक के लिए सुखी कर दिया।[4]

एक बार भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजी के समक्ष भी आपने अपनी संगीत विद्या की सिद्धि प्रकट की थी, जिसपर मुग्ध होकर उन्होंने आपको 'संगीताचार्य' की उपाधि से विभूषित कर आपको पुरस्कृत[5] किया।

आपके मंत्रगुरु श्यामसखाजी थे। आप एक सच्चरित्र, सहृदय, सरल और निरभिमान व्यक्ति थे। स्वाध्याय से आपने हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत और उर्दू में भी अच्छी गति प्राप्त कर ली थी।

१ ये लोग भी गान-विद्या में परम प्रवीण थे। इसी कारण तत्कालीन डुमराँव-नरेश ने इन्हें अपनी राजधानी (डुमराँव) में बुलाकर रख लिया था। —सं०

२. इनका जीवन इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य।

३. ये सितार, पखावज, मृदंग आदि बजाने में बड़े ही निपुण थे। इनका स्वर्गवास बहुत ही अल्पावस्था में हो गया। —सं०

४ एक बार महाराज प्रभुनारायण सिंह (सन् १८८१ ई०) के दरबार में आपने ऐसी विदेशी गुणी ... आपने पद को दो घण्टों में भिन्न-भिन्न रागों में इस प्रकार गाकर सुनाया कि महाराज ने मुग्ध होकर आपको पचीस बीघे भूमि दे डाली। —सं०

—'भक्तचरित-चन्द्र' (श्री ... मिश्र, प्रथम सं० सं० १९६४ वि०) पृ० ११।

५ भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजी ने आपको बड़े ही निराले ढंग से पुरस्कृत किया था। उन्होंने एक लिफाफे में पुरस्कार के रुपये और नोट बन्द करके आपको देते हुए कहा—'मलिकजी इस लिफाफे में एक भजन है उसे आप याद कर लीजियेगा। अगर राग-ताल में कुछ गलती हो तो कल आकर बता दीजियेगा।' अपने डेरे पर आकर रात को जब आपने लिफाफा खोला, तब गीत के बदले नोट पाकर स्तब्ध रह गये। आपने समझा कि ये नोट भूल से आपको दे दिये गये हैं। इस भूल के मार्जन के लिए जब दूसरे दिन पुनः उनके सम्मुख उपस्थित होकर आपने उन नोटों को वापस करना चाहा तब भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजी ने हँसकर उत्तर दिया—'मैंने इसलिए यह नोट उसमें छिपाकर आपको दिया कि यह आपके गुण के योग्य नहीं है। आपके सामने इतना कम पारितोषिक देने में मुझे लज्जा आई।'

—वैष्णवाचार (बड़ी) पृ० ११६।

आरम्भ में आप डुमराँव-राज्य के महाराज जयप्रकाश सिंह, महाराज जानकी प्रसाद सिंह और महाराज महेश्वरबख्श सिंह (सन् १८४१–८१ ई०) के दरबार में, अपने पितामह तथा पिता के साथ, आया-जाया करते थे। आगे चलकर, महाराज राधाप्रसाद सिंह (सन् १८८१—९४ ई०) ने तो आपको अपने दरबार में स्थायी रूप से रख ही लिया। उक्त महाराज के परलोक-गमन के पश्चात् आप कुछ दिनों तक महारानी बेनीप्रसाद कुमारी और महाराजकुमार श्रीनिवासप्रसाद सिंह[1] के दरबार में भी रहे। आपको अनेक राज-दरबारों से निमंत्रण आये, किन्तु डुमराँव-दरबार छोड़कर आप कहीं नहीं गये।[2] आपके जीवन-काल में ही आपके अनुज पुत्ररत्न मल्लिक का देहान्त हो गया, जिससे आपके हृदय पर बहुत चोट पहुँची। किसी किसी प्रकार आपने उनके दो पुत्रों को देखकर धैर्य धारण किया। किन्तु, जब कुछ ही दिनों के बाद उनमें से भी एक जगदीश्वर प्रसाद[3] का देहान्त सं० १९६६ वि० में हो गया तब आप संसार से बिलकुल विरक्त होकर ईश्वर भक्ति में लग गये।[4]

डुमराँव-नरेश महाराज राधाप्रसाद सिंह के आदेश पर ही आप हिन्दी-काव्य-रचना की ओर प्रवृत्त हुए थे। उन्हीं का आदेश प्राप्त कर आपने काशी जाकर श्रीकाशी-नरेश के आश्रित सुविख्यात 'सरदार कवि' से काव्य-रचना की शिक्षा प्राप्त की और कुछ ही काल तक अभ्यास करने पर आप सुन्दर रचना करने लगे। संगीत के सम्मिश्रण से आपकी कविता में और भी निखार आ गया। हिन्दी में आपकी लिखी संगीत-काव्य विषयक चार पुस्तकें हैं—(१) सुर प्रकाश, (२) रस-प्रकाश, (३) संगीत-प्रकाश और (४) भैरव प्रकाश।[5] आप सं० १९६६ वि० (सन् १९०९ ई०) में बयासी वर्ष की आयु में, परलोकवासी हुए।[6]

---

१ ये जगदीशपुर (शाहाबाद) के इतिहास-प्रसिद्ध वीर बाबू कुँवरसिंह के वंश के निवासी थे। डुमराँव की महारानी बेनी कुँअरी (महाराजा राधाप्रसाद सिंह की विधवा) ने इनको गोद लिया था। रानी के दत्तक पुत्र होने पर बालपन में इन्हें प्रोफेसर [illegible] मिश्र ने राँची में इनके साथ रहकर पढ़ाया था। इनके साथ डुमराँव-राजवंश के बाबू केशवप्रसाद सिंह ने राज्याधिकार के लिए मुकदमा लड़ा था। उनके विजयी होने पर इन्हें समझौता में कई लाख रुपये मिले थे।—सं०

२ श्रीजगदीश शुक्ल का कहना है कि आपका सम्बन्ध सूर्यपुरा-दरबार से भी था। उनके कथनानुसार श्रीसूर्यपुराधीश राजा राजराजेश्वरीप्रसाद सिंह "प्यारे" आपको बहुत मानते थे। 'प्यारे' कवि का भी घरेलू नाम 'धनपूरी' था, इसी आधार पर वे आपको मीत कहा करते थे।—देखिए, 'आर्यावर्त' (पटना) पृ० ८१।

३ ये भी गाने-बजाने में बड़े ही कुशल थे। इनके अनुज का नाम [illegible] था।—सं०

४ डुमराँव में आपके बनवाये दो देवमंदिर (एक शिव-मंदिर और एक विष्णु-मंदिर) आज भी वर्तमान हैं।—सं०

५ इनमें केवल अंतिम (भैरवप्रकाश) ही नवलकिशोर प्रेस (लखनऊ) से सं० १९५२ वि० में प्रकाशित हुई थी। शेष पुस्तकें अप्रकाशित हैं जिनकी हस्तलिखित प्रतियाँ परिषद् के हस्तलिखित ग्रन्थ-अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित हैं।—सं०

६ श्रीजगदीश शुक्ल आपका निधन-काल सन् १९१२ ई० अर्थात् सं० १९६९ वि० मानते हैं।
—देखिए, 'आर्यावर्त' (पटना), २ [illegible]।

उदाहरण

(१)

रजनी बरसे सरसे आ कहो बर सजा रचौं तन सौं सजनी।
सज नीक पुसाक करों तन को तनको मत देर भयो करनी॥
करनी धरि अंक करौं पिय को पिय को अमरामृत होव घना।
घमनी नहिं जोग सबै अबला अब लावहु पी पग लूं रजना॥[1]

(२)

पूरब सुकृत-फल मनुज-सरीर होत द्विपद कहाय वृथा फिरत जहान में।
ग्याहि बाम चौपद बनत पसु बुद्धि भ्रष्ट शोडत अनङ्ग-रङ्ग चित न गहान में॥
सुत लहि षट्पद भौंर बन-बन डोले लेइ सुख भूल परो रस के दहान में।
अष्टपद मकरी सौं फँस्यो परिवार-जाल भजत न राम सठ कहत महान में॥[2]

(३)

ह्वै कर प्रचंड जग जाय खंड-खंड कीन्हो,
दनुज नसाय सब सुरन बचाये तू।
बड़े-बड़े पापी औ सुरापी सबै दोषी कहे,
दुख हरि सीमे कासिमम में पठाये तू।
तन-हीन धन-हीन जन-हीन मन-हीन,
जेते दीन-हीन गनि सके न अघाये तू।
दीन कोतवाली शिव जग पालिबे के हेतु,
मेरी ओर हेरि लघरूप से सजाये तू।[3]

---

१ 'रसकुसुमाकर' (वही) पृ० १४० तथा 'शृंगार' (वही) पृ० १४१। इस चमत्कारपूर्ण पद को सुनकर ही उसने महाराज प्रतापनारायण सिंह से प्रभूत पुरस्कार प्राप्त किया था। —सं०

२. 'रसकुसुमाकर' (वही) पृ० १४०।

३. 'मर्यादा' (वही, वर्ष १ अंक १२, मार्च सन् १९१० ई०), पृ० ५१।

(४)

गिरिजापति को नर भजै तो तरि जा सब पाय।
मिरजा इनके टहल में टरिजा सकल बलाय॥
टरिजा सकल बलाय लाय हृदये महँ ले हर।
करैं सदा प्रतिपाल पिता जिमि पुत्र छोहकर॥
इत उत फिरि क्यों मरे अभागे जिय घट घिरिजा।
सिरजा इन सब जगत ताहि बरनन पर गिरिजा।[1]

(५)

जोई सीतानाथ सोई राधानाथ मानत,
जोई धनुधारे सोई मुरली सँवारे हैं।
जोई रघुपति सोई जदुपति प्राणप्यारे,
जोई काकपक्ष सोई मोर-पक्षवारे हैं।
अवध बिहारी जोई सोई ब्रज के बिहारी,
जोई सोभा देख सोई तन-मन वारे हैं।
जोई राम सोई कृष्ण रूप नाम है 'प्रकाश',
एकई प्रभाव सब जग रखवारे हैं॥[2]



अयोध्याप्रसाद मिश्र

आप गया नगर के 'नई गोदाम' मुहल्ले के निवासी थे।[3] आपके पिता का नाम था पं० गोपीनाथ मिश्र। आपके एक पुत्र आनन्दीप्रसाद मिश्र[4] भी साहित्यिक हुए।

आपका जन्म सन् १८३० ई० (सं० १८८७ वि०) में हुआ था। सन् १९१० ई० में, अस्सी वर्ष की आयु में, आप परलोक सिधारे।

आपको पटना स्थित संस्कृत-पाठशाला में संस्कृत हिन्दी की शिक्षा प्राप्त हुई थी। तेरह वर्ष की उम्र में पितृ वियोग हो जाने पर आर्थिक संकट के कारण विद्यार्थी-जीवन समाप्त कर आपको पटना-स्थित टेकारी-राम-मंदिर में पुजारी का काम करना पड़ा।

---

१ 'अंधकार' (वही), पृ० ५२।

२ वही, पृ० ५६।

३. 'गया के लेखक और कवि' (वही) पृ० ५।

४ इनका परिचय अगले खण्ड में प्रकाशित होगा।

इसी समय आपने संस्कृत-साहित्य और आयुर्वेद के अध्ययन का क्रम चालू रखा। स्वाध्याय के द्वारा अर्जित पाण्डित्य के प्रभाव से टिकारी (गया)-नरेश महाराज श्रीकृष्ण सिंह के आप कृपा-पात्र बन गये। फलतः, पुजारी का काम छोड़ने के बाद आपने जीवन के अंतिम काल तक आप उक्त महाराज के दरबार में राजवैद्य रहे।

प्रसिद्ध भाषातत्त्व-वेत्ता डॉ॰ ग्रियर्सन[1] आपके समय में गया के जिलाधीश थे। वे भी आपकी साहित्यिक सुरुचि के बड़े प्रशंसक रहे।

आपकी रचनाएँ हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत में भी मिलती हैं। कहते हैं, धर्मशास्त्र में आपकी अच्छी गति थी और उक्त विषय पर तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में आपके जो विचार प्रकट होते थे वे, प्रमाण-रूप में गृहीत होते थे। आपकी हिन्दी-कविताओं का प्रमुख गुण था माधुर्य। यों, चित्रकाव्य के भी आप सफल रचयिता माने गये हैं।

आपकी रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं—(१) सुधा बिन्दु (छन्द-परिचय), (२) स्वप्न विचार, (३) आरोग्य शिक्षा, (४) संध्या-शोधन, (५) मांस-भक्षण-मीमांसा (६) जीव-जीवन सिद्धान्त, (७) द्रव्य-गुण-वर्णन (आयुर्वेदीय कोष) तथा (८) श्रीमद्भगवद्गीतार्थ-चन्द्रिका (संस्कृत और हिन्दी में गद्यपद्यानुवाद)।[2]

उदाहरण

(१)

जो पुरुष कर्मेन्द्रियों को विषय की ओर जाने नहीं देता है उनको रोके रहता है परन्तु इन्द्रियों के भोग के वस्तु का ध्यान करता रहता है सो मूढ़ निर्विवेकी और पापन्धी कहलाता है।[1]

---

१ इनका परिचय अगले खण्ड में प्रकाशित होगा।

२. अंतिम को छोड़कर सभी रचनाएँ पुस्तकाकार में प्रकाशित हैं, पर दुर्लभ। अंतिम रचना को आपके पुत्र पं॰ भगवतीप्रसाद मिश्र ने प्रकाशित करवाया था। उक्त रचना की 'प्रस्तावना' में उन्होंने लिखा है— "पुस्तक परम पूज्यपाद मेरे पिता श्रीयुत पंडित अयोध्याप्रसाद मिश्र महाराज जी ने इस ग्रन्थ के प्रस्तुत करने में पूर्ण परिश्रम किया था। खेद है कि ग्रंथ प्रकाश होने के पूर्व ही आप निज इष्टदेव परमपूज्य श्रीसाकेतविहारी श्रीमन्महाराज श्रीरामचन्द्रजी के चरण कमल रेणु में लीन हो गये। शरीरांत होने के एक सप्ताह पूर्व आपने एक पत्र लिखकर 'श्रीमद्भगवद्गीता' में रख दिया था जिसमें यह लिखा पाया कि 'पुस्तक छपने में विलम्ब हुआ और हम यह आशा करते कि 'श्रीमद्भगवद्गीतार्थचन्द्रिका' को मित्रों के करकमल में स्वहस्त से मैं अर्पण करूँ'।"

—देखिए, श्रीमद्भगवद्गीतार्थचन्द्रिका' (पं॰ अयोध्याप्रसाद मिश्र, प्रथम सं॰, सं॰ १९४६ वि॰)

—प्रस्तावना।

१ कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते॥

—देखिए श्रीमद्भगवद्गीतार्थचन्द्रिका' (यही अध्याय ३ श्लोक ६) पृ॰ ४५।

(२)

जिसका योग भ्रष्ट हो गया है सो जीव उस लोक में जाता है जहाँ अश्वमेधादि यज्ञ करके पुण्यात्मा जन सुख का भोग्य करते हैं (अर्थात् स्वर्ग में) और बहुत वर्ष वहाँ निवास करके फिर इस लोक में पवित्र और धनी पुरुष के गृह में जन्म लेते हैं।[1]

(३)

हे राजन् एक मेरे ही में मन लगाकर सदा सब काल में जो पुरुष मुझको स्मरण करता रहता है और बराबर मेरी भक्ति ही में बना रहता है ऐसे योगी को बिना परिश्रम ही मैं मिल जाता हूँ।[2]

(४)

जिस प्राणी से लोगों को क्लेश नहीं पहुँचे तथा जिसको लोगों से दुःख न होय और जो हर्ष, इर्षा, भय और उद्वेग से छूट गया हो सो मेरा प्रिय है।[3]

(५)

काम (अप्राप्त का चाहना) क्रोध और लोभ ये तीनों नरक के दरवाजे हैं जीव को बिगाड़नेवाले हैं इसलिए इन तीनों को त्याग देना उचित है।[4]

*

अलिराज[5]

आप शाहाबाद जिले के डुमराँव नामक स्थान के निवासी भूमिहार ब्राह्मण थे। आपका जन्म सन् १८३० ई० में हुआ था।[6]

---

१ प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः ।
शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते ॥
—देखिए, श्रीमद्भगवद्गीतार्थचन्द्रिका (वही अध्याय ६ श्लोक ४१), पृ० १६८।

२ अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥
—वही (अध्याय ८, श्लोक १४), पृ० १४८।

३ यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः ।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः ॥
—वही (अध्याय १२ श्लोक १५), पृ० २६८।

४ त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ॥
—वही (अध्याय १६ श्लोक २१), पृ० ३११।

५ आपका प्रस्तुत परिचय श्रीआरा नागरी प्रचारिणी सभा के ... के आधार पर तैयार किया गया है। —देखिए, 'गृहस्थ' (वही, भाग १६, अंक ४६, गुरुवार १० दिसम्बर, सन् १९११ ई०), पृ० ५।

६ वही। इनके जन्म-स्थान के विषय में इनकी स्वयं ये पंक्तियाँ लिखी हैं—
नगर सरैया ... ... , ... परिवार हमारा।
... ... के वासी ... डुमराँव निवासी ॥

आपको यद्यपि विशेष स्कूली शिक्षा प्राप्त न थी, तथापि स्वाध्याय के बल पर आपने अच्छी विद्वत्ता प्राप्त कर ली थी। आपकी विद्वत्ता के कारण ही आपके समकालीन हिन्दी प्रेमी आपको बड़े आदर और श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे। हिन्दी के अतिरिक्त आप संस्कृत और फारसी के भी अच्छे ज्ञाता थे। आप कुश्ती की कला में भी बड़े ही निपुण थे। कहते हैं पटना के प्रसिद्ध 'अलि अखाड़ा' की स्थापना आपने ही की थी।

आपने हिन्दी में दो पुस्तकों की रचना की थी—(१) कुंवर-हजारा[1] और (२) भक्तमाल। इनमें आपकी प्रथम रचना विशेष प्रसिद्ध हुई।

उदाहरण

दिल्ली सुलतान लड़े, टीपू मैदान लड़े,
और लड़े भरतपुर रोम चीन रूस म।
काबू कंधार लड़े, रामू मैदान लड़े,
हटे नहि काहू से भी फिरंग रहे रूस में॥
उज्जैन-वंश-वीर से काँपि गयो कम्पनी,
जैसे लोग आड़ जाल सिहरे माघ पूस में।
'अमर' कृपान के बखाने 'अलिराज' करे,
देखि साहेबान सब घुसि गये घूस में॥[2]

*

चन्दा झा[3]

आप आधुनिक मैथिली-साहित्य के जन्मदाता माने जाते हैं। अपनी बहुमुखी प्रतिभा एवं लोकप्रियता के कारण ही मिथिला में आप 'अपर विद्यापति' के रूप में समादृत हैं।[4] आपकी रचनाओं में कहीं-कहीं आपका नाम 'चन्द्र' भी मिलता है। पर, आपकी अधिक प्रसिद्धि 'कवीश्वर' के नाम से थी।

---

१ इसमें सन् सत्तावन के सिपाही-विद्रोह के प्रसिद्ध अमर सेनानी बाबू कुँअरसिंह से सम्बद्ध ओजपूर्ण कवित्तादि संगृहीत हैं। —सं०

२. 'गृहस्थ' (वही) पृ० ९।

३ आपका प्रस्तुत परिचय मुख्यतः पं० रमानाथमिश्र-लिखित 'कवीश्वर पं० चन्दा झा' नामक पुस्तक के आधार पर तैयार किया गया है।

४ सन् १९०८ ई० में कवीश्वर पं० चन्दा झा क प्रथम दर्शन हमरा दरभंगा विद्यालय में भेल छल। [illegible] ... —मैथिलिक पं० [illegible] मिश्र क कथा मे हम [illegible] कवीश्वर [illegible] ... [illegible]
—कवीश्वर पं० चन्दा झा (पं० [illegible] मिश्र, प्रथम सं०, सन् १९४८ ई०), पृ० १०।

आपका जन्म तो सन् १८३० ई० में चैत्र-रामनवमी को दरभंगा जिले के पिंडारुछ ग्राम में हुआ था[1], किन्तु आगे चलकर जब दुष्टों ने आपको बड़ा कष्ट दिया, तब आप उस ग्राम को छोड़ 'ठाढ़ी' (दरभंगा) में आ बसे।[2]

आपके पिता का नाम था पं० भोला झा, जो एक प्रकाण्ड पंडित एवं सरल जीवन व्यतीत करनेवाले सात्त्विक प्रकृति के व्यक्ति थे। आपको प्रारम्भिक शिक्षा अपने ननिहाल 'बड़ग्राम' (सहरसा) में मिली थी। कुछ ही दिनों में आपने न्याय, व्याकरण, दर्शन और साहित्य में एक साथ दक्षता प्राप्त कर ली। इसी समय आप काशी चले गये। जिस समय आप काशी से मिथिला वापस आये उस समय तक आपकी कीर्त्तिलता फैल चुकी थी। उसी समय (अर्थात्, सन् १८६० ई० के लगभग) नरहन रियासत (दरभंगा) के बाबू साहब ने आपको अपने यहाँ आमंत्रित किया। आप उस आमंत्रण को स्वीकार कर वहाँ सहर्ष गये ही नहीं, पंद्रह वर्षों तक रहे भी। पीछे जब सन् १८७८ ई० में महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह दरभंगा के अधीश्वर हुए, तब उनके आमंत्रण पर आप उनकी छत्रच्छाया में दरभंगा चले आये। यहाँ महाराज ने आपको अपने पुस्तकालय के साहित्य विभाग का अध्यक्ष बना दिया। अपने जीवन के शेषकाल तक आप उसी पद की शोभा बढ़ाते रहे। महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह के पश्चात् महाराजाधिराज रमेश्वर सिंह बहादुर गद्दी पर बैठे। इनके हृदय में भी आपके प्रति अपार श्रद्धा थी।

आप एक बड़े शिव-भक्त एवं आत्मज्ञानी तो थे ही, मौलिक चिन्तक, इतिहास के सजग अनुसंधायक, समाज-सुधारक तथा गम्भीर दार्शनिक भी थे। आपका व्यक्तित्व बड़ा ही आकर्षक था। शील और धैर्य आपके व्यक्तित्व के प्रधान गुण थे।[3] जिस दिन

---

१ '[illegible]' ([illegible], वर्ष ५८ अंक ४ [illegible]), पृ० २६० तथा 'आर्यावर्त्त' (दैनिक, चैत्र शुक्ल १० शाके १८८१, तदनुसार बुधवार, ६ अप्रैल, सन् १९६० ई०) पृ० ४।

२ कहते हैं, आपने अपने ग्राम-परित्याग के सम्बन्ध में कई पदों की रचना की थी। उनमें से निम्नलिखित पद बहुत प्रसिद्ध है—

सिव सिव मोहि [illegible]
[illegible] सुखि गेल [illegible] ।
[illegible] ।
[illegible] सिव सिव [illegible] ।
[illegible] ।

—देखिए, '[illegible]' (पटना) पृ० ९६।

३ कहते हैं, दरभंगा-राजकीय संस्कृत-महाविद्यालय की जगह के अपने आवास में आपने एक सुन्दर वाटिका लगा रखी थी। उस वाटिका में एक मीठे पानी का कुँआ भी था। जब कभी विद्यालय के छात्रों और कर्मचारियों को पीने के पानी की आवश्यकता होती थी, तब वे उस कुँए में [illegible] [illegible] कर लिया करते थे। जब इस बात की सूचना आपको मिली तब आप बड़े दुःखी हुए। फिर भी आपने विद्यालय के अधिकारियों के पास इस बात की शिकायत इसलिए नहीं की कि कदाचित् उन्हें इस बात से दुःख हो। आपने केवल वाटिका के [illegible] में यह चेतावनी लिखकर टाँग दी—

"[illegible]।
[illegible] ॥"—'[illegible]' (पटना) पृ० ७।

आपके एकमात्र पुत्र का देहान्त हो गया था उस दिन भी आप शान्तभाव से एक सत अतिथि का सत्कार कर रहे थे।

आप संस्कृत, मैथिली, ब्रजभाषा, अवधी और खड़ीबोली—इन सभी भाषाओं के विद्वान् थे। मैथिली तो आपकी मातृभाषा थी ही, अतः उसके विकास में आप सतत यत्नशील रहे। विद्यापति साहित्य के प्रसिद्ध अनुसंधायक श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त एवं डॉ० ग्रियर्सन के पथप्रदर्शक आप ही थे। आपने मिथिला के क्रमबद्ध इतिहास की भी खोज की। इस विषय के आपके अनुसंधान भविष्य के अनुसंधायकों के लिए आधारशिला बने।

आपने मिथिला के गाँवों के नामों की व्युत्पत्ति ऐतिहासिक आधार पर ढूँढ़ने के भी प्रयास किये थे, जिससे अनेक नवीन तथ्य सामने आये। मिथिला के गाँवों में घूम घूमकर आपने अनेक पोथियों एवं तालपत्रों का भी संकलन किया था। कहते हैं, वर्तमान दरभंगा राज-पुस्तकालय में दुर्लभ ग्रन्थ-संग्रह के पीछे भी आपका ही अध्यवसाय था।

अपने जीवन के अंतिम दिनों (सन् १९०९ ई०) में आप पक्षाघात के शिकार हो गये। अंतिम घड़ियों में आपकी इच्छा के अनुसार आप काशी ले जाये गये जहाँ आप ७७ वर्ष की आयु में सुरलोक सिधारे।

कतिपय स्फुट रचनाओं को छोड़कर आपकी सारी रचनाएँ मैथिली में ही मिलती हैं। आपके द्वारा रचित ग्रन्थों में प्रमुख ये हैं—

(१) मैथिली-भाषा-रामायण[1], (२) विद्यापति-कृत 'पुरुष-परीक्षा' का मैथिली गद्य-पद्यानुवाद[2], (३) चन्द्रपद्यावली[3], (४) महेशवाणी गीतिसुधा[4] (५) अहल्याचरित नाटक, (६) वाणासुर काव्य तथा (७) श्रीलक्ष्मीश्वर विलास।[5]

आपके इन सारे प्रकाशित ग्रंथों के अतिरिक्त आपकी बहुत सी ऐसी रचनाएँ भी हैं, जिनके प्रकाशन की व्यवस्था अब हो रही है। उनमें प्रमुख हैं—(१) रस-कौमुदी और (२) मूलग्राम। साथ ही, आपके असंख्य गीत एवं अनेक गवेषणात्मक निबन्ध भी (जो 'चिट्ठा पट्टी' और 'पोथ' के रूप में हैं) अभी प्रकाश नहीं पा सके हैं।[6]

---

१ इसकी रचना आपने १८०० शाके आश्विन शुक्ल १४ शुक्र को महाराज श्रीलक्ष्मीश्वर सिंह की आज्ञा से की थी। इसका प्रकाशन पहली बार फसली सन् १२९९ में वृन्दावन यंत्रालय (प्रयाग) से हुआ था।

२ इसका प्रकाशन पहली बार फसली सन् १२९९ में राजदरभंगा-यंत्रालय से हुआ था। —सं०

३ इसका प्रकाशन सं० १९८८ वि० में श्री रमेश्वर-यंत्रालय (दरभंगा) से हुआ था। —सं०

४ इसका प्रकाशन स्वर्गीय पं० रमानाथ झा ने किया था। श्रीमार्कण्डेय झा का कहना है कि 'हर-गौरी पदावली' नामक आपकी एक पुस्तक पं० गंगानाथ झा के संपादन में ... प्रेस (प्रयाग) से प्रकाशित हुई थी।—देखिए 'सुधा' (वही, वर्ष ६, खंड २ सं० ५, जून सन् १९३३ ई०) पृ० ४६०।

५ श्रीभुवनेश्वर सिंह 'भुवन' ने आपके एक और ग्रंथ 'श्रीत-रागरसी' की चर्चा की है। उनका कहना है कि आपने विद्यापति की एक पदावली का भी संकलन और सम्पादन किया था।
—देखिए 'गंगा' (वही भाग १ तरंग ३, मार्च, सन् १९३१ ई०) पृ० ४ ३-८४।

६ श्रीकुबेरनाथ शुक्ल के अनुसार आपने मिथिला-पुरातत्त्व विषय पर जो कुछ लिखा था वो संभवतः 'मिथिला-तत्त्व-विमर्श' के रूप में प्रकाशित हुआ है। 'मैथिली में मिथिला-तत्त्व-विमर्श' नामक एक पुस्तक तरौनी (दरभंगा) ग्राम निवासी पं० परमेश्वर झा के नाम पर मिलती है। —सं०
—देखिए, 'माधुरी' (वही, वर्ष ६ खंड २, संख्या ५, जून सन् १९२८ ई०) पृ० ६१२।

उदाहरण

(१)

जय जय निर्गुण सगुण महाशय जय जय विश्व निवास ।
जय जय दक्षयज्ञक्षयकारक सुरनायक निरुपास ॥
जय जय करुणा कन्द शिव शङ्कर निजजनपालनदक्ष ।
गिरितनयामुखसरसिजदिनकर पुरहर कृतसुरपक्ष ॥
जय जय देव निरीह निरञ्जन हृतमनसिजगुरुगर्व्व ।
जय जय सकलाशापरिपूरक जय सर्वेश्वरशर्व्व ॥
चन्द्रललाट वितर मयि निजपद भक्ति स्मरहर नाथ ।
परिपालय श्रायुतमियिमंशं श्रुतिस्तकृतगुणगाथ ॥[1]

(२)

परिहरु मानिनि असमय मान ।
मनकर सघन सुनिम अनु कान ॥
प्रबल नवलघन गगन सघन अछि ।
चातक शिखिगण करइछ गान ॥
सारिगमपधिनि इ स्वर धुनि सुनि सुनि ॥
मुनिहुँक हठमठ छुटइछ ध्यान ॥
नवकन्दम्ब नवकेतक वन सों ।
परिमल बहल अनिल सय भान ॥
मलिका लपटि-लपटि नव मधुकर ।
मधुर मधुर मधु करइछ पान ॥
प्रिय सखि प्रियतम नम किंकर सम ।
छथि अनुकूल चतुर भगवान ॥
श्रीलक्ष्मीश्वर सिंह नृपतिवर ।
करपालित मन चन्द्र महान ॥[2]

---

[1] 'लक्ष्मीश्वर-विलास' (चन्द्र कवि और उनका [illegible]) पृ० ६।
[2] [illegible], ([illegible], [illegible] सं० १९०८ वि०), पद-सं० ११६ पृ० ९८।

(३)

दसमनि एक अनि जुगल-कुमार, हरषहि रहल न देह सँभार।
गल छल छपि से सखि सँग फूटि, तनिक भेल जनु मन धन लूटि॥
कहु की देखल कहु को भेल, पुछलहु क्षण नहिँ उत्तर देल।
किछु न उपद्रव किछु नहि व्याधि, सहजहि लागल मदन समाधि॥
सभ उपचार करथि भरि पोष, चेतए कहल आन नहि दोष।
विद्यमान एत युगलकुमार, देखल तनि शोभा-विस्तार॥
रहितहुँ देवि सरस्वति शेष, कहि सकितहुँ सौन्दर्य्य विशेष।
विश्व मनोहर वयस किशोर, अति सुन्दर वर श्यामल गोर॥
जौँ गिरिनन्दिनि होथि सहाय, देथि जनकगृह योग्य जमाय।
देखल न एहन सुनल नहि कान, नहि परतक्ष विषम परमाण॥[1]

(४)

सीता अरपल रामक हाथ, रमा जलधि जकेँ जनक सनाथ।
लक्ष्मणकाँ निज कन्या देल, नाम उर्मिला हर्षित भेल॥
विख्याता श्रुतिकीर्ति कुमारि, देल भरत काँ जनक विचारि।
माण्डवि प्रस्थित कयल जमाय, शत्रुघ्न समय शुभ पाय॥
चारु कुमार दारसम्पन्न, लोकपाल सन लोकप्रसन्न।
जनक कहल हरषित तहि ठाम, सीता लाभ जेना एहि धाम॥
सुनु वसिष्ठ मुनि विश्वामित्र, कहइतछी कन्याक चरित्र।
भूमि-विशुद्धि यज्ञ करबाक, नृपतिहुँ काँ भेल हर धरबाक॥
देखल तत हम जोतइत भूमि, बहराइलि कन्या काँ घूमि।
चारि बरख वयसक परमान, कन्या एहन देखल नहि आन॥
के इ थिकथि कोना के आन, हृत भेल ज्ञान छिनक लेल ध्यान।
मानस घर में पूजा भाव, उपमा हिनक आन के पाव॥[2]

(५)

छल यमुनातीर मेँ योगिनीपुर नाम नगर। तत्य अल्लावद्दीन यवनराज छलाह। ओ एक समय कोनहु कारण महामहिमसाहि सेनाधिपक उपर अत्यन्त कोप करइत भेलाह। महिमसाहि तनि स्वामी

१ 'मैथिली रामायण' (पं. चन्दा झा १११७ साल) पृ. १८।
२. वही, पृ. ११।

कौं क्रोधातुर जानल। प्राणहरण प्रकारण करसाहे ई मन मानि की कर्त्तव्य चिन्ता करइत भेल, विचारल, क्रोधातुर राजा क विश्वास नहीं।[1]

(४)

एहि गङ्गातीर म चम्पिका नाम नगरी। तत्र हेमाङ्गद नामक राजा छलाह। से स्वर्ग प्राप्त भेला मन्त्रिलोक तनि राजा क पुत्र रत्नाङ्गद नाम कुमार कैं राजा कयल। से पुन राज्य पावि पितृधन सौं गर्वित ओ यौवनमद सौं अन्याय प्रवृत्त होइत भेलाह।[2]

भगवतशरण

आपका उपनाम 'भगवती' था। आपकी प्रसिद्धि इसी नाम से थी।

आप सारन जिले के मांझी थाने के अन्तर्गत शीतलपुर नामक ग्राम के प्रसिद्ध पाण्डेय (कायस्थ)-वंश में सं० १८८७ वि० (सन् १८३० ई०) में आपका जन्म हुआ था।[3] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अरबी और फारसी में हुई। हिन्दी आपने स्वाध्याय से सीखी। बचपन से ही आपमें ईश्वर-भक्ति के लक्षण दीख पड़ते थे और कदाचित् इसी कारण बड़े होने पर विवाह करना नहीं चाहते थे। किन्तु अपने पिता की आज्ञा मानकर आपको एक ही नहीं, दो-दो विवाह करने पड़े। जब आपकी दूसरी पत्नी का देहान्त हो गया, तब आपने घर से विरक्त होकर संन्यास ले लेना चाहा। किन्तु, अपने अनुज बाबू रामसिंहासन लाल के अत्यधिक अनुरोध के कारण आप वैसा नहीं कर सके। आपको पुनः सांसारिक प्रपंच के बन्धन में डालने की दृष्टि से आपके अनुज ने आपकी तीसरी शादी करा दी। तब से आप बराबर घर पर ही रहकर भजन भाव में अपना जीवन व्यतीत करने लगे। बीच में तीन-चार वर्षों तक जीविका की तलाश में आपने पंजाब के प्रमुख स्थानों का भ्रमण भी किया। किन्तु, कोई जीविका-साधन न मिलने पर आप आरा चले आये, जहाँ कुछ दिनों तक आपने जैतपुर की अमीनी की। अन्त में ईश्वर भजन में बाधा पड़ते देखकर यह नौकरी भी छोड़ दी। आपके दो पुत्र हुए, जो अब जीवित नहीं हैं।

---

१ [illegible] (वही भूमिका) पृ० ५।

२. वही।

३ 'गंगा' (वर्ष ४, अंक १, पूस, सन् १९३३ ई०) पृ० [illegible]। स्व० बाबू रामेश्वर सहाय सिंह 'अर्चनिकर' (शीतलपुर, सारन) के आप समीप थे। उन्होंने 'गंगा' के उक्त अंक में प्रकाशित भगवती की 'रामनाम मंजरी' शीर्षक अपने लेख में आपके व्यक्तित्व पर इस प्रकार प्रकाश डाला है—" भगवती मेरे समीप ही होने से इसलिए आपके मिलने-जुलने का मुझे बार-बार अवसर मिलता था। आप बड़े भक्त और वैदिक वैष्णव थे। मैं जब कभी आपके पास जाता, तब आपको आसन पर रामायण पोथी पाठ करते हुए पाता था। आपके चौड़े ललाट में मोटा ऊर्ध्व पुण्ड्र सदा चमका करता था। आप कद के लम्बे और कुछ स्थूलकाय थे। आपके शरीर का रंग गेहुँआ था। आपकी आँखें बड़ी और नाक ऊँची तथा नुकीली थी। आपकी सौम्य मुखाकृति से शान्ति टपकी पड़ती थी। वाणी मधुर तथा स्वभाव विनम्र और कोमल था। आपका अधिक समय भजन-पूजन में बीतता था। आप सन्त और सुकवि दोनों थे, परन्तु बीच-बीच में आप शासित-सेवा करने के लिए भी कुछ समय निकाला करते थे। —देखिए, वही।

आप रामानन्दी सम्प्रदाय के वैष्णव थे। आपके आराध्य देव थे भगवान् श्रीरामचन्द्र। श्रीहनुमान्‌जी में भी आपकी बड़ी श्रद्धा थी।[1] आपके गुरु थे छपरा निवासी श्रीयुगलानन्द स्वामीजी, जिनमें आपकी अपार श्रद्धा भक्ति थी। उन्हीं के साथ आपने चारों धाम की यात्रा पैदल ही की थी। आप एक भजनानन्दी सद्‌गृहस्थ तो थे ही, दान-पुण्य करने में भी आपकी अच्छी प्रवृत्ति थी। कहते हैं, आपके दरवाजे से कोई याचक हताश नहीं लौटता था। संगीत के भी आप प्रेमी थे। संगीत विद्या के अभ्यासी न होने पर भी संगीतज्ञों का बड़ा आदर-सत्कार किया करते थे।

आप एक सन्त-कवि थे। आपकी तीन पुस्तकों का पता चला है—(१) अध्यात्म ज्ञान मंजरी,[2] (२) युगल-शृंगार मरन्द[3] तथा (३) संसार विटप-नाराचणी। इनमें प्रथम दो पुस्तकें प्रकाशित भी हो चुकी हैं।

आप सं० १९६० वि० (सन् १९०३ ई०) के बैशाख में, ७१ वर्ष की आयु में, परलोक गामी हुए।

उदाहरण

(१)

बन्दौं बानी बुद्धिवर बैदेही वर नाम।
परवस बस जाके रहत, ब्रह्म निरंजन राम॥
वारन-बदन कृपा-सदन, कदन-बिपादि-कलेस।
बिघन हरन संसय-दरन, बन्दौं चरन गनेस॥
बुधिवर स्रुतिधर बरनवर, बरनायक वर दैन।
बन्दौं द्विजवर भद्रबर, बरनाच्छर वर बैन॥[4]

---

१ रघुनाथपुर गाँव के बाहर आपका बनवाया श्रीहनुमान्‌जी का मन्दिर आज भी विराजमान है। मन्दिर के एक पत्थर पर यह दोहा खुदा है—
'उन्नीससौ को विक्रम शुभ संवत अनुमान। इन मन्दिर भगवत दास थापित हनुमान॥'
इस मन्दिर के निकट श्रीराम, जानकी और लक्ष्मण का एक मन्दिर पहले से बना हुआ था। ये दोनों मन्दिर भी एक सुन्दर तालाब के निकट आज वर्तमान हैं।—सं

२. इस पुस्तक की एक प्राचीन प्रति, जो सन् १८७४ ई० में लीथो में छपी थी, स्व० बाबू दामोदर सहाय 'कविकिंकर' को मिली थी। उसी प्रति का अध्ययन कर उन्होंने अपना एक लेख 'गंगा' में लिखा था। इस पुस्तक का सम्पादन कविकिंकरजी ने भी किया था जो प्रकाशित नहीं हो सकी। इस पुस्तक का विषय रामायण की कथा है जो अयोध्या से आरम्भ न होकर लंका से आरम्भ होती है। इस विषय के सम्बन्ध में विस्तृत विवेचन के लिए देखिए, 'गंगा' (वही) पृ० ७७१-७७।

३ इस पुस्तक को मोतीशंकर लाल नामक एक सज्जन ने प्रकाशित कराया था। इसे भी देखने का सौभाग्य 'कविकिंकरजी' को प्राप्त हुआ था। उनके कथनानुसार इस पुस्तक में 'सोलहो शृंगार और बारहो आभरण का वर्णन बड़ी सुन्दर कविता में किया गया है। —देखिए, वही, पृ० ७७८।

४ वही, पृ० ७७१।

(९)

सुनि आशा हुंकार राय विधिनायक निसिचर।
हरपा वेल भटोरि योरि सठताई बसहर॥
साहस सूम विराग निशाचर रचि रचि बाँधे।
चहुँ दिसि नगर फिराव मजूरि विरहानल साँधे॥
लायो मनल गढ़ लक वपुष आवरन समेता।
सहित ईपना भटा झरोखा मन्दिर जेता॥
पंच कोस षट कोस जड़ित कंचन मनि काँचे।
जरै सकल पै एक जीव आतम-गृह बाँचे॥'



राधावल्लभ जोशी[1]

आपका उपनाम 'प्रियवल्लभ' था। आपकी रचनाओं में आपका यही नाम मिलता है, कहीं-कहीं 'वल्लभप्रिय' और 'वल्लभ' नाम भी मिलते हैं। अपने निवास-स्थान पर आप 'काकाजी' के नाम से प्रसिद्ध थे।

आप डुमराँव (शाहाबाद) निवासी गौड़ ब्राह्मण थे। आपका जन्म सं० १८८८ वि०(सन् १८३१ ई०) में ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्दशी (शुक्रवार) को हुआ था।[3] आपके पितामह का नाम पुष्करराम जोशी और पिता का नाम काशीराम जोशी था।[4] काशीरामजी महाराज महेश्वरबख्श सिंह (सन् १८४१-८१ ई०) के निजी शिवालय के पुजारी थे। आप अपने पिता के कनिष्ठ पुत्र थे। आपके अग्रज ब्रजकिशोर जी 'पद्मपराग' के रचयिता

---

१ 'भाषा' (वही), पृ० ७७४-७५।

२. आपका विस्तृत जीवन-परिचय आपके जीवन काल में ही कलकत्ता से प्रकाशित 'देवनागर' (मासिक, पूर्णा, ५० ६ खण्ड सं० १९६७ वि०, वर्ष १ अंक ७ में, प्रो० मनवर मिश्र ने लिखा था। —देखिए, वही, पृ० २१०-१५। श्रीशिवनन्दनप्रसाद गुप्त ने भी आपका संक्षिप्त परिचय 'गृहस्थ' में प्रकाशित कराया था। देखिए, 'गृहस्थ' (वही भाग १६, अंक २१ गुरुवार, १० जून सन् १९१२ ई०), पृ० १६४-६५।

३ 'देवनागर' (वही), पृ० २१२।

४ आपके पूर्व-पुरुष जयपुर से आ कर बसे थे अथवा ग्राम के निवासी थे। उसी कारण से 'भमर'

के पुजारी के रूप में नियुक्त थे।[१] आप की दो बहनें भी थीं—सुशीलादेवी[२] और ललिता देवी।[३] आपके एकमात्र पुत्र मथुराप्रसादजी[४] ज्योतिष के प्रकांड विद्वान् थे।

आपने अपने बाल्यकाल से ही वेदों का अध्ययन आरम्भ किया। वेदों के अध्ययन के पश्चात् आप व्याकरण, कोश, काव्य, छंद, अलंकार आदि का अध्ययन करते रहे। आपका आरम्भिक अध्ययन आपके पिता काशीराम के निर्देशन में हुआ। आगे चलकर व्याकरणादि के अध्ययन में प० वंशीधरजी आपके सहायक हुए। आपको हिन्दी में कविता करने की परिपाटी मगध के प्रसिद्ध कवि गोविन्ददेवजी[५] ने सिखलाई। उन्हीं से आपने नागराज-कृत 'प्राकृत पिंगल' का अध्ययन किया।

आप संस्कृत, प्राकृत और ब्रजभाषा के मूर्द्धन्य विद्वान् थे। आपका प्राकृत ज्ञान तो इतना विशाल था कि अनेक छात्र दूर-दूर से आपसे पढ़ने आया करते थे। आपके छात्रों

रहे' कहलाते थे। आपके प्रपितामह पं० विजयरामजी थे जो एक ज्योतिषी के रूप में विख्यात थे। जयपुर के प्रसिद्ध राजा जयसिंह ने इन्हें प्रचुर वृत्ति देकर अपना पुरोहित नियुक्त किया था। पं० विजयरामजी के तीन पुत्र हुए —पं० सुखदेवराम, पं पुष्करराम, और पं० विष्णुदेवरामजी। कहते हैं पुष्कररामजी जो आपके पितामह थे अपने पुत्र काशीरामजी को लेकर अपनी जन्मभूमि से जगदीश-धाम (पुरी) की यात्रा के लिए पैदल ही निकल पड़े। जब वे जगन्नाथजी के दर्शन कर डुमरांव होते हुए लौट रहे थे तब भोजपुराधीश महाराजा महेश्वरबख्श सिंह (सन् १८०१-०२ ई०) से उनकी भेंट हो गई। पुष्कररामजी रामायण के अनन्य भक्त थे। एकतारा लेकर बड़े प्रेम से अत्यन्त मधुर भजन गाते थे। महाराज उनके इसी गुण पर मुग्ध हो गये और उन्हें भूमि, भवन, वाटिका मंदिर आदि अनेक प्रकार के जीविका-साधन देकर अपनी राजधानी (डुमराँव) में रख लिया। आपने अपना वंशोद्भव परिचय इस प्रकार दिया है—

> [illegible] के सुजोग [illegible] आदि गौड़ वेद यजु शाखा माध्यन्दिनि सुचि मानिये।
> [illegible] सर्व राजत प्रवर तीन, [illegible] है सुवन देव देव ही सुमानिये।
> शुभ [illegible] [illegible] आश्रित की भूमिका में पूजन प्रमाणिये।
> [illegible] घरनी है [illegible] की [illegible] हमारो [illegible] वर्णनिये॥

—देखिए, 'भक्तचरित-कल्पद्रु' (वही) पृ० ४८ ७३, तथा ७४, और 'देवसागर' (वही), पृ० ५११-१२।

१ इनके दो पुत्र हुए—रामकिशोर भट्ट और कृष्णकिशोर भट्ट। इनमें प्रथम जो कवि भी थे, विवाहित होकर कुछ ही दिनों के पश्चात् स्वर्गवासी हो गये। द्वितीय का देहांत बचपन में ही हो गया।—सं०

२ ये पं० श्यामलालदत्तजी से ब्याही गई थीं जो मुर्शिदाबाद की रानी स्वर्णमयी के दरबार में ज्योतिषी थे।—सं०

३ इनका विवाह काशी के भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के गुरु पं० [illegible]लालजी के, जो नामी [illegible] के छिनरत्न कवि थे, द्वितीय पुत्र जगन्नाथप्रसाद उपाध्याय के साथ हुआ था।—सं०

४ इन्होंने ज्योतिष के अनेक ग्रंथ लिखे थे जिनमें [illegible] प्रसिद्ध है। कहते हैं अपने एक ग्रंथ में इन्होंने सौ वर्षों के मासों का काल तथा पुरुषोत्तम मासों का साल-संवत् सौ वर्ष पहले ही लिख दिया है। ये श्री जयचन्द्र मिश्र 'दिनकर' के पिता पं० रामेश्वर मिश्रजी के घनिष्ठ मित्र थे।—सं

५ इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य।

में प्रमुख थे—पं० अम्बिकादत्त व्यास[1], भवानकवि[2], ठगमिश्र[3], रामकिशोर भट्ट[4], प्रो० अक्षयवट मिश्र[5] आदि।

आप सचमुच एक महापुरुष थे। महापुरुषों में जो भी गुण अनिवार्य होते हैं, वे सभी आपमें वर्तमान थे। आपका चित्त सदा देवाराधन, देशभक्ति, समाज-सुधार, दीन रक्षा तथा परोपकार में लगा रहता था। उदार भी आप एक ही थे। शरणागत-वत्सलता तो आपमें पूर्णरूपेण वर्तमान थी। विचार-स्वातंत्र्य आपका एक प्रमुख गुण था। इस अंश में आप बड़े निर्भीक थे। जिन महाराजाओं के आश्रित और प्रतिपालित थे, उनसे भी उचित कहने में आप तनिक भी संकोच का अनुभव नहीं करते थे। प्रायः जीवन-भर आप डुमराँव-दरबार में ही रहे। केवल एक बार जब अपने पूर्वपुरुषों की जन्मभूमि (बलहू-जयपुर) की यात्रा के सिलसिले में निकले, तब कुछ दिनों के लिए अयोध्या-नरेश महाराज प्रतापनारायण सिंह के आग्रह पर उनके यहाँ ठहरे थे। उन्होंने भी आपका आशातीत सत्कार किया था।

आप डुमराँव-नरेश महाराज सर राधाप्रसाद सिंह (सन् १८८१-९४ ई०) के आश्रित थे। पहले आपकी नियुक्ति बिहारीजी (राधाकृष्ण-मंदिर) के पूर्व-भाग स्थित शिवालय के पुजारी के रूप में हुई थी। आगे चलकर आप दरबारी कवि और पंडित के रूप में भी नियुक्त हुए। आपकी कविता मधुर ही सरस एवं सुन्दर होती थी। इसी कारण महाराज ने आपको पुरस्कृत भी किया था।[6] समस्यापूर्ति करने में भी आप बड़े सिद्धहस्त थे। कहते हैं,

---

१ इनके पिता पं० दुर्गादत्त जी से इनके अभेद मैत्री होने के कारण आप इनके शिक्षक होते थे।

२ इनका परिचय इस पुस्तक के अगले अंश (१९वीं शती उत्तरार्द्ध) में द्रष्टव्य है।

३ इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य।

४ ये आपके भगिना रामकिशोरजी के ज्येष्ठ पुत्र और कवि भी थे, पर युवावस्था में ही उनका देहान्त हो गया।—सं०

५ इन्होंने अपनी 'आत्मकथा' में स्वयं ही लिखा है—"और लोगों की देखादेखी हिन्दी-भाषा सीखने की मेरी अभिलाषा हुई। तब महाराज के दरबारी कवि पं० रामचरणराम ओझाजी (शिवराम कवि) से मुग्धबोध लिखना (संस्कृत-ग्रंथ) अमरकोश, भाषाभूषण, रामायण-रचित पाठशालिका पढ़ी। कुछ-कुछ रचना की शक्ति भी इन्होंने सिखलाई।"—'आत्मचरित भाग्' (पटी) पृ ४८। "मुझे भी भाषा लिखने का जो कुछ ज्ञान है, वह उन्हीं के चरण-कमलों की पवित्र कृपा की महानुकम्पा का फल है।"
— 'देवनागर' (पटी), पृ०२१२।

६ एक बार आपने एक कविता पर पुरस्कार प्राप्त किया था, जिसकी पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

आनन है आन की सौभागता है निलय,
सुखमा के आकर उमंग मन मीन के।
वैर के निवास औ निवास संतरेखन के,
गुन के भंडार जो सुधीन चित चीन के॥
ओमन के धाम सिंगार हरिधिमान है,
भगवान नजर है प्रभाव रति-पति के।
आय के महाराज महाराज सुत संगम है,
संगम के साथ सुशोभित समाज के॥

—'आत्मचरित-भाग्' (पटी), पृ १०।

डुमराँव-राजधानी में आपके द्वारा हिन्दी-कविता का पर्याप्त प्रचार हुआ। आपने निम्न लिखित ग्रंथों की रचना की थी, इनमें से अधिकांश आपके जीवन-काल में ही प्रकाशित हो चुके थे—(१) रसिक-रंजन-रामायण[1], (२) रसिकोल्लास भागवत[2], (३) श्रृंगाररत्नाकर[3], (४) चित्रभास्कर[4], (५) कृष्णलीलामृतवर्षिनि[5], (६) अमृतकालिका[6], (७) गंगामृततरंगिणी (८) बल्लभ-बुधबोध, (९) बल्लभ विनोद, (१०) बल्लभोल्लास, (११) जैपुर-जलूस, (१२) बज्रकली और (१३) भाषाबुधबोध[7]।

आप सं० १९५८ वि० (सन् १९०१ ई०) में परलोक सिधारे।

उदाहरण

(१)

कालिंदी के कूलनि कदंबन की डारन में
डार्यो है सुरंग झूलो रेसम के डोरे में।
कहै 'विप्रवल्लभ' यों सावन सुहावन में
आय गई आली छोटी बूँदन-झकोरे में॥
लै लै मकरंदन को सुमन सुगंधन को
बहै पुरवाई सुखदाई कुंज कोरे में।
हँसि-हँसि आली ह्वाँ झुलावैं मोद फँसि फँसि
स्यामा-स्याम झूलैं तहाँ हेम के हिंडोरे मे॥[8]

---

१ इसमें कवि की अपनी कविताओं के साथ अन्य कवियों की कविताएँ भी इस प्रकार संगृहीत हैं कि अलग-अलग कहीं से नहीं सूझता। ऐसा जान पड़ता है कि सभी कवियों ने सम्मिलित रूप से इसकी रचना की है। —सं०।

२. इसकी शैली भी 'रसिक-रंजन-रामायण' की तरह ही है।

३. इसमें नायिका के शरीर के सभी अंगों का वर्णन दोहा-छंद में किया गया है।

४ इसमें श्रीरामचन्द्र की चित्रावली से रत्नादि का वर्णन दोहा चौपाई और कुंडलिया छंदों में किया गया है।

५ इसमें अनुप्रासादि-छंदों में श्रीकृष्णलीला वर्णित है।

६ इसमें पंचदेव, राम, गंगा और श्रीकृष्ण की स्तुतियाँ हैं।

७. शिवनन्दनसहाय द्वारा उक्त ग्रंथों के अतिरिक्त आपके और भी ग्रंथों की चर्चा की है। उनके नाम इस प्रकार हैं—(१) अभिज्ञानशाकुन्तल का हिन्दी-अनुवाद, (२) नीतिविलास और (३) गंगा लहरी।
—देखिए, 'भूषण' (भूमि), पृ० ११२।

८. 'समस्यापूर्ति' (भुवनेश्वर सन् १८८७ ई०) पृ० १७।

(२)

उदधि मथैया कालीनाग का नथैया प्रभु,
द्रुपदसुता को वर चीर बढ़ैया है।
ब्रज उबरैया कर छिगुनी धरैया गिरि,
इन्द्र को झरैया मद बल को सुभैया है।
मुरली ररैया मोर मुकुट लसैया सीस,
पाप को हरैया, धर्मधुर को धरैया है।
नन्द को कन्हैया नन्दरानी को पिवैया दूध,
विस्व को भरैया 'विप्रबल्लभ' सहैया है ॥[1]

(३)

सोवत अटा पै इक नागरि नवेली अति,
रूप सिलउलमा ते उत्तम सुर्ख रह्यो।
उघरे उरोजन पै आस सो प्रकास पेखिवे,
भ्रमित ससी को भ्रम बल्लभ सो मिटै रह्यो।
बदन मयंक अकलंक लखि गोखन तें,
भ्रमरण तें कूद्यो अरी मेरे मन ठैं रह्यो।
कठिन कुचोपरि थकि दूर तें गिर्‌यो यातें,
देखि यह चंद तातें टूक-टूक ह्वै रह्यो ॥[2]

(४)

कहाँ अरज्जुन भीम युधिष्ठिर जीवित हैं इनते सुपदीजे।
साह अकब्बर विक्रम औ बलि बावन पावन की सुध कीजै ॥
'बल्लभ' खान महान जहान सबै मिलि या विनती सुन लीजै।
मीरसि के बिरवा कवि हैं इनका कबहूँ कुछिसान न दीजै ॥[3]

---

१ 'मानसचंद्रिका-रूप' (वही), पृ० ८७।
२. वही पृ ८८-८९।
३ 'शृंगारसार' (वही), पृ० २४६।

(५)

सुन्दर स्याम सुमेघ सो गात सुबिज्जु सो पीत पितांबर छाजै ।
सीस लसै धनुइन्द्र किरीट, गरे बक पाँति-सो माल सुभ्राजै ॥
बाजत किंकिनि नूपुर की धुनि ज्यों घन मंद सुमंदहि गाजै ।
'वल्लभ' के दृग में यह वल्लभ पावस सो नँद नन्द बिराजै ॥[1]



हरनाथप्रसाद खत्री

आपका जन्म सन् १८५१ ई० में, पटना जिले के बिहारशरीफ नामक नगर (मुहल्ला नारायनगर) के एक खत्री-परिवार में, हुआ था ।[2]

आपके पिता का नाम बाबू पुष्कलाल था । आपकी प्रारम्भिक शिक्षा बिहार शरीफ में ही हुई । पटना के नार्मल-ट्रेनिंग स्कूल से पास होने के बाद क्रमशः छपरा, हाजीपुर, रोसड़ा तथा दरभंगा के मिडिल स्कूलों में कार्य करते हुए सन् १८८० ई० में आप मधुबनी के एक मिडिल स्कूल में हिन्दी-अध्यापक के पद पर आये और जीवन-पर्यन्त उसी पर कार्य करते रहे ।

आपमें शैशव से ही विद्याभिरुचि थी । किन्तु साहित्य-रचना की सच्ची प्रेरणा आपको मधुबनी आने पर ही मिली और तभी से जीवन भर आप निरन्तर लिखते रहे । हिन्दी के अतिरिक्त उर्दू, फारसी, बँगला और अँगरेजी भाषा का भी आपको अच्छा ज्ञान था ।

आप एक बड़े ही लोकप्रिय और सदाशय शिक्षक थे तथा अनुशासन के क्षेत्र में आदर्श माने जाते थे । धार्मिक प्रवृत्ति के होने के कारण बड़े ही विनम्र तथा मृदुभाषी भी थे । आपके दो पुत्र हुए—लक्ष्मीनाथ प्रसाद और शक्तिनाथ प्रसाद ।

---

१ 'वेंकटेश्वर' (पत्री), पृ० [illegible] ।

२ आपके ज्येष्ठ पौत्र श्री [illegible] (रामकृष्ण कॉलेज मधुबनी दरभंगा) और वहीं कॉलेज के श्री [illegible] से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर। कुछ लेखक आपको मधुबनी (दरभंगा) का ही निवासी मानते हैं जो [illegible] है। —देखिए, '[illegible]' (पत्री), पृ० [illegible] ।

हिन्दी में आपने अनेक पुस्तकें लिखी थीं, जिनमें अधिकांश बालोपयोगी ही हैं। उनमें प्रमुख हैं—(१) व्याकरण-वाटिका,[१] (२) गुरुभक्ति-दर्पण,[२] (३) बाल-विनोद,[३] (४) कन्या-दर्पण,[४] (५) मानव विनोद,[५] तथा (६) वर्ण-बोध[६]।

आपका निधन सन् १९१० ई० में, २१ जुलाई, शनिवार, को ८ बजे प्रातःकाल हुआ।

उदाहरण

(१)

घट समुद्र थाह ना पड़े, उठे लहर अपार।
गुरु नाविक समरथ बिना, कौन उतारे पार॥
मुझ औगुन है तुमसे गुन, तुम्ह गुन औगुन मुझम्ह।
जो मैं बिसरूँ तुमसको, तुम मत बिसरो मुझम्ह॥[७]

(२)

पितुगृह सिखवो चाहिये, शिल्पऽरु विद्या ज्ञान।
करिके पाक अनेक विधि, कन्या पावहु मान॥[८]

---

१ कुल २० पृष्ठों की इस पुस्तक में हिन्दी-व्याकरण की सभी आवश्यक बातों का समावेश है। सन् १९१९ ई० में बिहार और उड़ीसा के शिक्षा-विभाग द्वारा हाई-स्कूलों के लिए यह स्वीकृत हुई थी। तब से बीस-पचीस वर्षों तक स्कूलों में इसका खूब प्रचार रहा। सन् १९०५ ई० के लगभग बैकुण्ठ-प्रिंटिंग-वर्क्स (मधुबनी) से सर्वप्रथम इसका प्रकाशन हुआ था। इसका तीसरा संस्करण सन् १९१५ ई० में हुआ।—सं०।

२. केवल १८ पृष्ठों की इस पुस्तिका के पूर्वार्द्ध में 'गुरु-माहात्म्य' है जिसमें कबीर, तुलसी आदि संत-कवियों के गुरु-महिमा सम्बन्धी दोहे हैं। इसका उत्तरार्द्ध 'शिष्य-विनय' है, जिसमें गुरु-वन्दना विषयक आपके स्वरचित सवैया, कवित्त, कुण्डलियाँ, मनहर कवित्त और दोहे हैं। इसका प्रकाशन सर्वप्रथम सन् १८९२ ई० में खड्गविलास प्रेस (पटना) से हुआ था।—सं०।

३ केवल ३२ पृष्ठों की इस छोटी-सी पुस्तिका की रचना आपने अबोध बालकों को सुबोध बनाने के लिए की है। इसमें कुल चार अध्याय हैं। इन अध्यायों के बाद सात छोटे-छोटे पाठ हैं, जिनमें छोटे बच्चों को हेल-मेल, शिष्टता, अनुशासन, स्वच्छता आदि के उपदेश रोचक शैली में दिये गये हैं। इसका प्रकाशन सन् १९०० ई० के लगभग बैकुण्ठ-प्रिंटिंग-वर्क्स (मधुबनी) से हुआ था। इसका दूसरा संस्करण सन् १९१२ ई० में हुआ।—सं०।

४ केवल ३० पृष्ठों की इस पुस्तिका की रचना कन्याओं के हितार्थ की गई है। इसमें चार अध्याय हैं। इसका तीसरा संस्करण सन् १९११ ई० में हुआ था।

५. केवल ७६ पृष्ठों की इस पुस्तक में भी चार ही अध्याय हैं, जिनमें जन्म के बाद से मृत्यु-पर्यन्त तक की एक लम्बी रोचक कथा है। इसका प्रकाशन सर्वप्रथम सन् १८८४ ई० में 'बिहार-बन्धु प्रेस' (पटना) से हुआ था। इसे ही आप की सर्वप्रथम प्रकाशित कृति होने का गौरव है।—सं०।

६ यह पुस्तक भी 'कन्या-दर्पण' की तरह अक्षरारम्भ करनेवाले बालकों के लिए उपयोगी है।

७. श्रीशिवप्रसाद सहाय (दरी) से प्राप्त ('गुरुभक्ति-दर्पण' से)।

८ उन्हीं से प्राप्त ('कन्या-दर्पण' से)।

(३)

हे लड़के और लड़कियो ! तुम्हें दो बातों का नित अभ्यास रखना चाहिये, एक विद्या पढ़ना, दूसरा परिश्रम करना, क्योंकि नित विद्या पढ़ने से ज्ञान और बुद्धि बढ़ती है और मेहनत करने से देह निरोग और बलवान रहती है।[1]

(४)

मनुष्य को उचित है कि अगर भाई बन्धुओं में झगड़ा हो तो उस आपस में ही मिटा लें न कि नालिश करके दोनो घर बिगाड़े ।[2]

✽

गणेशानन्द शर्मा

आप सुरार (गया) के निवासी शाकद्वीपीय ब्राह्मण थे।[3] आपके पिता का नाम रामप्रसाद शर्मा था। सं० १८८० वि० (सन् १८२३ ई०) में आपका जन्म और सं० १९४० वि० (सन् १८८३ ई०) में माघकृष्ण द्वादशी को देहावसान हुआ था। आपका रचनाकाल सं० १९१२ वि० (सन् १८५५ ई०) माना गया है। आप संस्कृत और हिन्दी के कवि थे। आपकी दो पुस्तकें हैं—(१) ऋतुवर्णन और (२) नायिका-नायक-लक्षण। स्फुट रचनाएँ भी हैं। आपकी रचनाओं का कोई उदाहरण नहीं मिला।

✽

रामकुमार सिंह[4]

आपकी रचनाओं में आपका उपनाम 'कुमार' मिलता है।

आप शाहाबाद जिले की सूर्यपुरा रियासत के अधीश्वर और उसी जिले के डुमराँव-राज्य के दीवान थे।[5]

---

१ श्रीशिवनारायण सहाय (गया) से प्राप्त ('बाल-विनोद' से)।

२ उन्हीं से प्राप्त ('कन्या-दर्पण' से)।

३ 'गया के लेखक और कवि' (गया) पृ० ३१।

४ आपका प्रस्तुत परिचय श्रीभवप्रीता कुँवर (सूर्यपुरा शाहाबाद) द्वारा लिखित परिचय के आधार पर तैयार किया गया है।—देखिए, 'गंगा' (पटना, वर्ष २० अंक १०, अक्टूबर) सन् १९५० ई०), पृ० ४४-४६।

५ "सूर्यपुरा डुमराँव-राज्य की दीवानी का सम्बन्ध बहुत दिनों से आपके पूर्वजों में चला आता था, इसीसे आपके और आपके पूर्वजों के नाम के पहले 'दीवान' की उपाधि बराबर लिखी जाती थी।"—'श्रीराजराजेश्वरी-वंशावली' (राजा राजराजेश्वरी प्रसाद सिंह 'प्यारे' प्रथम सं० सं० १९९४ वि०) पृ० ६।

आपका जन्म शाहाबाद जिले के 'सूर्यपुरा' नामक प्रसिद्ध ग्राम में, सं० १८६० वि० (सन् १८११ ई०) में हुआ था।[1] आपके माता पिता तथा अग्रज का देहान्त आपकी बाल्यावस्था में ही हो गया। आपको असहाय एवं अकेला जानकर आपके शत्रुओं ने आपके प्राण भी लेने के अनेक प्रयास किये, किन्तु असफल रहे।[2] आपके एकमात्र पुत्र राजा राजराजेश्वरीप्रसाद सिंह ('प्यारे' कवि)[3] ब्रजभाषा के परमोत्कृष्ट कवि हुए। हिन्दी के वर्तमान यशस्वी कथाकार राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह[4] आपके ही पौत्र हैं।

आप बहुत ही गंभीर प्रकृति के एक विचारशील और धर्मनिष्ठ पुरुष थे। साथ ही बड़े विद्यानुरागी और शिव-पार्वती के अनन्य उपासक थे। प्राचीन काव्य एवं कवियों के प्रति आपके हृदय में अधिक आदर का भाव था। शान्त-रस की तथा भक्तिपरक रचनाएँ आपको विशेष प्रिय थीं। आप स्वयं भी शान्त-रस एवं भक्ति-पद के एक बड़े ही भावुक कवि थे। आपकी पुस्तकाकार कोई कृति नहीं मिलती, केवल स्फुट रचनाएँ ही मिलती हैं।

सं० १६१८ वि० (सन् १८८१ ई०) की चैत्र शुक्ल द्वादशी को अड़तालीस वर्ष की आयु में आप पक्षाघात से आक्रान्त हो अकस्मात् परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

जुगलछवि हो निरखत थाके नैन।

वृन्दावन रमनीय सरद-निसि कोमल मलय समीर॥
मधुकर-निकर कराकुल मधुकुल कुसुमित बकुल गँभीर।
माधवि-मालति-माल निकुंजन कोकिल कल बहु रंग॥
विहरत जलद दामिनि-दुति जुग कर कर मिलि लपटि सोहात।
मर्कत-मनि-तरु मनहुँ लपटि रहि हेम-बेलि बिलसात॥

---

१ 'कौमुदी' (भाग) पृ० २४।

२. आपने अपनी इस स्थिति का उल्लेख अपनी इन पंक्तियों में किया है—

'मातु पिता अरु बन्धु सखी सुरधाम गये मोहि बालहि त्यागी।
जानि अधीन अनाथ मोही रिपु-वृन्द भये मग में अनुरागी।
सो दल नासि बेताबि 'कुमार' के मीच लगाय किये बड़भागी।
भाग भयो करुना तब मातु की वालिका बालक की सुधि लागी।'

—श्रीराजराजेश्वरी-प्रभावली (भाग), पृ० २१२।

३ इनका परिचय इसी पुस्तकमाला में यथास्थान द्रष्टव्य।

इनके पुत्र श्रीउदयराज सिंह भी हिन्दी के एक सफल कहानी-लेखक तथा उपन्यासकार हैं।

नील जलज किसलय अरुनांकुस जुग भुज सरस सुरङ्ग।
पिमल अलोल मनोन्य सरस्मित जुग लोचन जुग भृंग॥
व्यापित ससि-द्युति कवि भ्रुम-रञ्जन जुगपद जुगल कुर्लक।
मनहुँ निरखि रवि छिन वहु वपु धरि मिलत निसंक मयंक॥
यह सोभा राधा-माधव की नूतन रहस विलास।
अति अभिराम 'कुमार' जुगल ससि बसि हिय करहु प्रकास॥[1]

(२)

जयति गिरिकिसोरि मातु भवनिधि की तरनी॥
चन्द्रवदनि चन्द्रभाल सहस चन्द्र वास भाल।
चन्द्रकला-सी रसाल त्रिविध ताप-हरनी॥
षन्मुख मुखपञ्च चार अतुलित महिमा विचार।
चकित थकित भ्रमित सहससीस नमित धरनी॥
आदि-मध्य-अन्त-रहित वरनत गति वेद थकित।
मूलप्रकृति ज्योति-रूप देव-दनुज-सरनी॥
षन्मुख-हेरम्ब-अम्ब दारिद-दुख-कुल-कदम्ब।
मेरी अवलम्ब अम्ब शंकर-प्रिय-घरनी॥
हौं 'कुमार' अति अबोध नेकहुँ नहिं पद-प्रबोध।
केवल पद-आस मातु सुख-प्रमोद-करनी॥[2]

(३)

तन में मन में इन नैनन में कमला सुभ मूरति आइ बसे।
कहिये सुनिये गुनिये में वही पद-पंकज की महिमा दरसे।
वर माँगत हौं कर जोरि यही विनसे दिल से मति और नसे।
सरसे बरसे रसना गुन का पद को सिर से कर से परसे॥[3]

---

१ श्रीराधावैखरी-ग्रन्थावली (वही) पृ० २१५।
२ वही पृ० ५१२।
३ वही पृ० २११।

(४)

हरि ते न छुटो हर ते न मिटो विधि ते न घटो दुख दारुन भारी।
बहु धाम धमयो हिय हारि गिर्‌यो छुधितातुर द्वार तेरे हरि-प्यारी।
लघु बालक द्वार पुकार करै करुणा-रस-सागर मातु बिचारी।
पय अमृत-पान ते पालिये मातु 'कुमार' हि गोद लगाय निहारी ॥[1]

(५)

सेइ उमा-पद-पंकज को जग जीवन को सुख लाहु लहो रे।
जो विधि बिस्नु महेसहि पावत सो पद को रज सीस धरो रे।
जोग न जाप न ज्ञान कछू करुना रस के बस आस गहो रे।
भूल विभूतिनि ब्रह्मस्वरूपिनि रूप-सुधारस पाइ जियो रे ॥[2]

❁

रामचन्द्र लाल[3]

आपका उपनाम 'गुनाकार' था, जो आपकी रचनाओं में मिलता है।

आप शाहाबाद जिले के 'डुमराँव' नामक नगर के निवासी थे।[4] आपका जन्म सन् १८१४ ई० के लगभग में हुआ था।[3] आपके पिता का नाम माधवपति लाल और पितामह का मुंशी रामसहाय लाल था। आप सरल स्वभाव के एक बड़े ही कार्यदक्ष पुरुष थे। आप हिन्दी के अतिरिक्त फारसी के भी एक अच्छे विद्वान् थे। आपने अंग्रेजी का भी अध्ययन किया था। हिन्दी में पुस्तकाकार प्रकाशित आपकी कोई रचना नहीं है। कुछ स्फुट रचनाएँ ही उपलब्ध हैं।[5] आपका निधन सन् १९०१ ई० के लगभग में हुआ था।

१ 'श्रीरामचन्द्रजी-भजनावली' (वही) पृ० २११।

२. वही।

३ आपका परिचय बाबू शिवनन्दन सहाय (वही) द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर तैयार किया गया है।

४ आपके पूर्वज गाजीपुर (उत्तरप्रदेश) के हल्दी-ग्राम में वास करते थे। वहाँ उत्पात भी ... के कारण सन् १८५७ ई० के सैनिक विद्रोह के समय आपके पिता सपरिवार डुमराँव (शाहाबाद) चले आये। ये बड़े ही धर्मपरायण पुरुष थे और शताधिक आयु भोगकर स्वर्गवासी हुए। कहते हैं, अन्तिम समय तक उनकी शारीरिक शक्ति का ह्रास नहीं हुआ था।—बाबू शिवनन्दन सहाय द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर।

५ आपके बनाये सौ से अधिक भजन आपके पौत्र श्रीरामजी को प्राप्त हुए हैं, जिन्हें वे प्रकाशित करनेवाले हैं।

६ बाबू शिवनन्दन सहाय (वही) द्वारा प्रेषित।

उदाहरण

(१)

जग में सिव सम नहि कोउ कृपाल । ढरि जात सभक पर लखि बेहाल ॥
रीझत सम्भू दिए धतुर भाँग । होवत प्रसन्न बजाए गाल ॥
कर जोरत अघ हरत निमिष माँह । जन रच्छक शंकर भुआल ॥
हर भए दयाल दुख गए पताल । करि दिए निहाल त्रिनेत्र भाल ॥
'गुनहगार' तजि संसय अपार । बमभोला भजु सर्वकाल ॥[1]

(२)

मूढ़ मन करत कठिन कठिनाई ।
यद्यपि सहत कष्ट अति दारुन तदपि न दुष्ट लजाई ।
कोटि उपाय करौं करुनानिधि छूटत न हिय जड़ताई ॥
अब लगि नेह निगाह छोह कर हास न नाथ सहाई ।
जात न विषय बासना मन कर अधिक-अधिक गरुआई ॥
दीपक माँहि पतंग परै जिमि देह-दसा बिसराई ।
तिहि विधि काम-दीप के ऊपर परत है यह बरिआई ॥
'गुनहगार' त्रिपुरारि चरन भजु-सजु चित की विकलाई ।
सिवसंकर जब कृपा करहिंगे सकल तोर बनि जाई ॥[2]

(३)

हे हरि लो सुधि बेगि हमारी ।
गोहरावत गए बीति बहुत दिन काहे मोहि बिसारी ॥
कर जोरे पर प्रनहु पलक महि हरत कष्ट अघ भारी ।
जानि पतित मो हमहि बिसारो और पतित किन तारी ॥
अगुन मोर छमिए करुनानिधि आरत दीन बिचारी ।
'गुनहगार' यह दास चरण के है बस सरन तिहारो ॥[3]

---

१. बाबू शिवप्रसाद भट्टाचार्य (काशी) द्वारा प्रेषित।
२. उन्हीं से प्राप्त
३. वही।

बैजनाथ द्विवेदी[1]

आपका जन्म सन् १८६८ ई० (सं० १९२४ वि०) के जनवरी अथवा फरवरी मास में टेकारी (गया) के बिहारीगंज मुहल्ले में हुआ था।[2]

आपके पिता का नाम पं० दिनेश द्विवेदी[3] तथा पितामह का पं० कृष्ण द्विवेदी[4] था। आप जब कुल छह वर्ष के थे, तभी आपके पिता की मृत्यु हो गई। अतः, आपका लालन पालन आपके पिता के शिष्य पं० गदाधर शुक्ल ने किया, जो आपके फुफेरे बहनोई थे। आगे चलकर आपने उन्हीं से रस, रीति, पिंगल आदि का अध्ययन किया।

आपको अपने पिता की तरह पूर्ण रूप से टेकारी-दरबार का राज्याश्रय नहीं प्राप्त था, किन्तु टेकारी-राज के एक राजा मोदनारायण सिंह की विधवा रानी सरफराजकुमारि की आज्ञा से लिखे 'यथा-यथाक्षर-भाव-प्रकाश' नामक आपके एक ग्रन्थ की सूचना मिली है, जो अप्राप्य है। वस्तुतः, आपको बकसंडा (गया) के धनी जमींदार बाबू सीताराम[5] का आश्रय प्राप्त था। आप कभी-कभी देव (गया) और मकसूदपुर (गया) के राजाओं के यहाँ भी आते-जाते थे, पर उन दोनों से सम्बद्ध आपका कोई ग्रन्थ उपलब्ध नहीं होता।

आप 'हिन्दी की परवर्ती रीति-धारा के कवि थे', ऐसा कहा जाता है।[6] आपने निम्नांकित दस ग्रन्थ रचे थे—(१) श्रीसीतारामाभरण-मंजरी[7], (२) नख सिख[8],

१ आपका प्रस्तुत परिचय श्री जगन्नाथ मिश्र (गया कॉलेज, गया) लिखित 'कवि बैजनाथ द्विवेदी' शीर्षक लेख के आधार पर तैयार किया गया है। श्री मिश्र को प्रस्तुत कवि से सम्बद्ध सामग्री श्री [illegible] लाल लिखित 'दिनेश कवि और बैजनाथ कवि का जीवन-परिचय' (हस्तलिखित ग्रंथ) से प्राप्त हुई है। —देखिए, 'उषारत्न' (त्रैमासिक वर्ष १ अंक २, जनवरी, सन् १९६१ ई० तथा वर्ष २, अंक ३ मई, सन् १९६१ ई०) पृ० [illegible] तथा पृ० ६६-[illegible]।

२ वही पृ० ७६।

३. इनका वास्तविक नाम पं० शिवदीन द्विवेदी था। इनका परिचय प्रस्तुत इतिहास के प्रथम खंड में प्रकाशित है।

४ इनके पूर्वज सूरत[illegible] के निवासी थे। ये टेकारी की उत्तरा में टेकारी (गया) आकर बस गये थे।

—देखिए 'साहित्य' (त्रैमासिक, वर्ष ११ अंक ४ जनवरी सन् १९६१ ई०) पृ० २८।

५ इनके पूर्वज टेकारी-राज में दीवान थे। इन्हीं बकसंडा नामक गाँव सुपुर्द किया था। बाबू [illegible] बिहारी लाल ने अपनी आत्म-पुस्तक में इनके विषय में जो लिखा है, वह इस प्रकार है—"The author s grand father B Sita Ram, resident of Mouza Baksanda was a big Zamindar of Gaya district, having properties in the districts of Patna and Monghyr also

—देखिए 'उषारत्न' (वही वर्ष २ अंक १ जनवरी, सन् १९६१ ई०), पृ० ५१।

६ 'उषारत्न' (वही, वर्ष १ अंक २ जनवरी सन् १९६१ ई०) पृ० ७६।

७. यह छह रत्नों में विभक्त एक अलंकार ग्रन्थ है जिसमें कवि केशव की परम्परा का अवलम्बन किया गया है। इसकी रचना आपने सं० १९४१ वि० में अपने आश्रयदाता बाबू सीताराम की आज्ञा से की थी।

८. इसका वर्ण्य विषय नायक-नायिका का नख-शिख है। इसकी रचना बैशाख शुक्ल, (बुधवार) सं० १९५५ वि० को हुई थी।

(३) रामरहस्य[1], (४) रस-निचोप भवम्[2], (५) काम विलास[3], (६) उद्दीपन-शृंगार मंजरी[4], (७) अनुभव-उल्लास[5] (८) चित्रामरण, (९) पंचसेवता-वंदन-मालीसा[6] तथा (१०) भूषणचंद्रिका।

उदाहरण

चन्द्र चाँदनी चमक की, चूर-चूर ह्वै जात।
राम अगुलिन नप अमा, अब पूरन दरसात॥
बीति गयो दिन माफ अब, तजहु मानिनी रोप।
अस्मर कर तरवार धरि, तोरत मानो कोप॥[7]

✿

नर्मदेश्वर प्रसाद सिंह[8]

आपका उपनाम 'ईश'[9] था।

आपका जन्म इतिहास-प्रसिद्ध बाबू कुँवरसिंह के राजवंश में उन्हीं की राजधानी जगदीशपुर (शाहाबाद) में, सं० १८८६ वि० (सन् १८२९ ई०) की आश्विन-पूर्णिमा को, अश्विनी नक्षत्र के प्रथम चरण (अनुक्रमणोदय) में हुआ था।[10]

---

१ यह दो विलासों में विभक्त एक रस-ग्रन्थ है। इसमें विषय राम-चरित से सम्बद्ध है।

२ यह तीन मयूखों में विभक्त एक रीति-ग्रन्थ है जिसमें काव्य-दोषों की चर्चा की गई है। इसके विषय प्रतिपादन में भी केशव की परम्परा अपनाई गई है। इसकी रचना सं० १९११ वि० की श्रावण शुक्ला पञ्चमी (बुधवार) को हुई थी।

३ पाँच अध्यायों में विभक्त इस ग्रन्थ में नायिका-भेद से सम्बद्ध विषयों की चर्चा है। इसकी रचना सं० १९२४ वि० में हुई थी। इसकी एक हस्तलिखित प्रति गया के सम्मूलाल पुस्तकालय में है।
—देखिए, अध्याय ११।

४. यह एक उद्दीपन-विभाव से सम्बन्धित रीति-ग्रन्थ है जिसमें रसेतर उद्दीपनों पर विचार नहीं किया गया है। इसकी रचना सं० १९२४ वि० की ज्येष्ठ शुक्ला दशमी (सोमवार) को हुई थी।

५. तीन अंकों में विभक्त इस ग्रन्थ में अनुभाव, व्यभिचारीभाव तथा शृंगाररस का विवेचन हुआ है। इसकी रचना सं० १९१४ वि० की आश्विन कृष्ण षष्ठी को हुई थी।

६. यह आपकी अन्य रचनाओं से भिन्न एक भक्ति-सम्बन्धी रचना है। इसकी रचना आपने अपने आश्रयदाता के ज्येष्ठ पुत्र गुरुचरणलाल की प्रेरणा से की थी।—सं०

७. 'रत्नाकर' (वही) पृ० ८८-८९।

८. आपका परिचय श्रीरामदीन शर्मा 'सिंघल' (प्रधान मन्त्री नागरी-प्रचारिणी सभा, आरा) लिखित आपकी जीवनी के आधार पर तैयार किया गया है।
—देखिए, 'साहित्य' वही वर्ष ५, अंक १ अप्रैल सन् १९५२ ई०) पृ० ६ ८०।

९. इस नाम के एक और कवि १९वीं शती में हो गये हैं, जो मिथिला-निवासी और महाराज नरेन्द्र सिंह (सन् १७४४-६१ ई०) के दरबारी कवि थे। उनकी एक पुरस्कार-रचना 'नरेन्द्र-विजय' नाम से मिलती है।—देखिए, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही) पृ० १०३-४।

१० वही। बाबू कुँवरसिंह से आपको पुरस्कार-स्वरूप तलवार एवं दुशाला प्राप्त हुआ था। दोनों वस्तुएँ आपके वंशजों के पास आज भी वर्तमान हैं।—सं०

आपके पितामह का नाम बाबू तेजबहादुर सिंह, पिता का नाम बाबू तुलसी प्रसाद सिंह[1] और माता का नाम श्रीमती धनवासकुँवरि[2] था। आप अपने पिता के द्वितीय पुत्र थे। आपके अग्रज का नाम रामेश्वरप्रसाद सिंह था। आपका विवाह सारन जिले के 'पहारि' नामक ग्राम में श्रीमती धमराजकुँवरि से हुआ था। आपके तीन पुत्र[3] और दो कन्याएँ थीं। जगदीशपुर के पास ही दलीपपुर में आपका गढ़ है।

आप बचपन से बड़े होनहार और कुशाग्रबुद्धि थे। अमरकोश, सारस्वतचन्द्रिका, सिद्धान्तकौमुदी आदि कंठस्थ करने के बाद आपने संस्कृत के काव्यों, पुराणों और धर्मशास्त्रों का अध्ययन किया। साथ-ही-साथ अरबी फारसी और हिन्दी की शिक्षा का क्रम भी चलता रहा। इसके बाद आपने पिंगल, रस, अलंकार आदि शास्त्रों के अनुशीलन का भी अभ्यास किया। विद्याध्ययन के अतिरिक्त आपने अस्त्र-शस्त्र-संचालन और घुड़सवारी में भी पर्याप्त दक्षता प्राप्त कर ली।

जब आप नवयुवक थे, तभी सन् १८५७ ई० के सैनिक विद्रोह का आरम्भ हो गया। विद्रोह के पश्चात् आपने अँगरेजी भाषा एवं साहित्य का भी अध्ययन किया। आप एक विद्याव्यसनी रईस[4] और एक कुशल चित्रकार भी थे। आपका बनाया हुआ शेर बब्बर का चित्र अबतक आपके वंशधरों के पास है।

प्राचीन ग्रंथों के संग्रह की ओर आपकी विशेष रुचि थी; इसी कारण आपका संग्रहालय बहुत ही महत्त्वपूर्ण था। डुमराँव (शाहाबाद) के पण्डित नकछेदी तिवारी को आपने अपने संग्रहालय से कई प्राचीन अप्रकाशित ग्रंथों की पाण्डुलिपियाँ प्रकाशनार्थ दी थीं।[5]

आप हिन्दी के एक कुशल कवि थे। सिपाही विद्रोह के बहुत दिनों बाद देश में पूर्ण शान्ति स्थापित होने पर आप काव्य-रचना करने लगे। यों तो आप किशोरावस्था से भी काव्य-रचना किया करते थे, पर उन दिनों की परिपाटी के अनुसार छन्दःशास्त्र

---

१ ये जगदीशपुर (शाहाबाद) के प्रसिद्ध राजा सेवकप्रसाद के पुत्र रामप्रसाद से पीढ़ियों पहले से हुए थे। बड़े व्युत्पत्तिशील विद्वान् थे। संस्कृत, हिन्दी, उर्दू और फारसी भाषाओं पर आपका अच्छा अधिकार था।—सं०

२ ये हथियाँ-बरौंध ग्राम (सासाराम, शाहाबाद) के एक प्रतिष्ठित जमींदार की कन्या थीं।

३ इनके ज्येष्ठ पुत्र बाबू शिवनारायणलाल सिंह के प्रथम पुत्र श्री दुर्गाशंकरप्रसाद सिंह ने आपसे ही संस्कृत साहित्याध्ययन किया है।—सं०

४ मैंने आपका दरबार देखा था। उस समय दरबार में साहित्यानुरागी विद्वानों और गुणियों तथा कलाकारों का जमघट दर्शनीय था। मैं अपने बड़े भाई श्री ऑनरेबल श्री अम्बिकाप्रसाद के गुरु पं० .... के साथ अपनी किशोरावस्था में कई बार आपके यहाँ गया था। प्रतिदिन आपके दरबार में दिन भर साहित्य-चर्चा हुआ करती थी। समस्या-पूर्तियाँ भी होती थीं। शतरंज का खेल, संगीत, वाद्य, आतिथ्य, साहित्य प्रसंग, अलंकार-ग्रंथों, हिन्दी-व्याकरण का पाठ, काव्यशास्त्र-विवेचन आदि वहाँ प्रायः हुआ करते थे।—सं०

५ सुप्रसिद्ध कवि के 'काव्य-रत्नाकर' और 'शिव-शतक' नामक प्रसिद्ध काव्य-ग्रंथों को तिवारीजी ने आपसे ही लेकर भारतजीवन प्रेस (काशी) से छपवाया था। भूमिका में उन्होंने यह स्वीकार भी किया है।—सं०

का अध्ययन-मनन कर लेने के बाद ही काव्य-सृष्टि करने की परम्परा थी। अतः, आपके वास्तविक प्रौढ़ रचना-काल का श्रीगणेश सं० १९१२ वि० (सन् १८५५ ई०) से ही हुआ। इसी वर्ष की वसन्तपंचमी (सोमवार) को आपका 'शिवाशिवशतक'[1] नामक काव्य की रचना समाप्त हुई थी और इसके एक वर्ष बाद 'शृंगारदर्पण'[2] की। इन रचनाओं के अतिरिक्त आपकी अन्य दो रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं—'धर्मप्रदर्शनी'[3] और 'पंचरत्न'।[4] इन पुस्तकाकार रचनाओं के साथ आपकी बहुत-सी स्फुट शृंगार रसात्मक रचनाएँ भी, तत्कालीन समस्यापूर्त्ति-सम्बन्धी पत्रिकाओं में उपलब्ध होती हैं। आपकी कुछ भोजपुरी-रचनाएँ भी पुराने कागजों में मिली हैं। आपके काव्य गुरु मुंशी ठाकुरप्रसाद 'जगदीशपुरी' थे। सं० १९७ वि० (सन् १९१५ ई०) की फाल्गुन शुक्ल सप्तमी को लगभग ७६ वर्ष की आयु में आपका देहान्त हुआ था।[5]

उदाहरण

(१)

सरद घटा के संग चपला छटा हैं
कैंधों घनसार माँह कैंधों केसर लकीर है।
कैंधो सत्ययुग माँह द्वापर को सींव सोहैं
कैंधो हास्य संग ही किरिन रसवीर है।

---

१ इस पुस्तक में शिव-पार्वती-स्तुति-सम्बन्धी एक सौ कवित्त और सवैये हैं। यह भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की 'कवि-वचन-सुधा' नामक पत्रिका (काशी) में सं० १९१२ वि० में 'रीझराज-मन-रंजिनी' नाम से सर्वप्रथम प्रकाशित हुई थी। फिर, डुमराँव (शाहाबाद) के पं० नकछेदी तिवारी 'अजान कवि' ने इसे 'शिवाशिवशतक' नाम से सन् १८९८ ई० में काशी के भारतजीवन प्रेस से प्रकाशित किया।—सं०

२ इसमें सभी छन्दों में नख-शिख वर्णन है। इसे शाहपुर निवासी पं० धर्मदत्त पाठक ने, जो आपके घनिष्ठ स्वजातियों में थे, सन् १८७६ ई० में शाहपुर के ... प्रेस से छपवाकर निकाला था।

३ लगभग १० पृष्ठों का यह एक आदर्श नीति-ग्रंथ है। यह भारत-सम्राट् सप्तम एडवर्ड को समर्पित है। इसमें लिखे आपके मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, धार्मिक और साहित्यिक निबन्ध बड़े अनूठे हैं। इसी ग्रंथ से आपकी स्वाभाविक सरलता, सहनशीलता तथा औचित्य-भाव के विशेष अध्ययन का परिचय प्राप्त होता है। सं० १९ १ वि० (सन् १९ ई०) में पहले-पहल यह पुस्तक बम्बई के श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस से छपकर प्रकाशित हुई थी; किन्तु इसकी रचना इससे पहले ही [redacted] चुकी थी, जब हिन्दी में सुशिक्षित निबन्धों की बड़ी कमी थी। इसके अंत के बत्तीस पृष्ठों में आपकी भक्ति वैराग्यपूर्ण कविताएँ भी संगृहीत हैं। —सं०

४ इस ग्रन्थ की रचना आपने अपने जीवन के अंतिम दिनों में की थी इसी कारण इसका प्रकाशन नहीं हो सका। इसके पाँच तरंग हैं—प्रथम तरंग में देवस्तुति, द्वितीय में रासविलास-वर्णन, तृतीय में समस्या-पूर्तियाँ, चतुर्थ में ऋतु-वर्णन और पंचम में भक्ति-वैराग्यपूर्ण भजन हैं। प्रथम तरंग में 'श्रीबिहारी मनोहर' शीर्षक के अन्दर जो कवित्त हैं, वे बाबू रामरतन सिंह (सुखसागर कवि) की 'चित्तविनोदिनी' नामक पुस्तक में भी सं० १९५० वि० (सन् १८ ई०) में भारतजीवन प्रेस (काशी) से प्रकाशित हुई थी—संगृहीत होकर छप चुके हैं।—सं०

५ कुछ विद्वानों के अनुसार आपका निधन सं० १९७१ वि० (सन् १९१५ ई०) की फाल्गुन शुक्ल सप्तमी को हुआ था।—देखिए, 'माधुरी' (वर्ष ५, खंड २, संख्या ५, ६ जुलाई, सन् १९२७ ई०,) पृ० ७७४।

मलय सों मिली है कैधौं चम्पक की लतिका
यों ईस्वर प्रसाद शिवा शिवकी न भीर है।
देवगुरुदिति कला मणि पै परी है कैधौं
रजत महा सों लगी कंचन-जंजीर है॥[1]

(२)

कैधौं लोक-लोक में कपूर धूरि पूरि रही
कैधौं ए चमेलिन की अवली बरसति है।
कैधौं सची-हास को प्रकास दस दिसि फैलो
कैधौं यह छीरधि की छवि दरसति है।
ईस्वरप्रसाद हिममयी सब देखि परै
कैधौं चन्द्र-किरिन-समूह सरसति है।
कैधौं अमीरस सो सिच्यो है पंचभूत
कैधौं गिरिजा विहारी प्यारी कीरति लसति है॥[2]

(३)

भारस में रस नीरस में पर के बस में सुबसै रहते में।
रोस में औ अफसोस में जोस में होस महोस समय लहते में।
आस निरास भवास प्रवास में हास विलास हिये चहते में।
बासर रैन बितीत हों मेरे सदाशिव 'ईश' शिवा कहते में॥[3]

(४)

तुम पावनि का करमो हौं अपावन ईश्वरी तू हम दीन खरो।
तुम तो जगतारनि हो जग में हम सोक भरो तुम सोक-हरो।
सिसु 'ईस' प्रसाद हौ अम्बिका तू अधमाधिप हौं तुम दाया धरो।
अब और कछू कहते न बनै सरनागत हौं रवे सोई करो॥[4]

---

१ 'शिवकीर्ति शतक' से, —देखिए, कविता (मैनाटांड, वर्ष १, अंक १ अप्रैल, सन् १९२१ ई०) पृ० १८।
२ वही।
३ वही।
४ वही।

(५)

जग उपजैया मन मोद सिरजैया
सद्बुद्धि प्रगटैया तिहुँ ताप ते रितैया तू ।
दारिद दरैया कर्म-रेख को टरैया
मुनि-मानस रमैया पापी पावन करैया तू ।
ध्यान के धरैया हिम कंज विकसैया
प्रभा-पुञ्ज पसरैया तम-तोम को नसैया तू ।
ए री जग मैया कौन दूसरो सहैया
परी भौंर लाज-नैया याको एक ही खेवैया तू ॥[1]

(६)

जनु निय तनु नापन हित मनसिज बीर ।
हास्य सिंगार रसग्रहि किये जंजीर ॥ (सर संयुत वेणी)
वेनी पीठ सहित यो सुन्दरि वाम ।
ज्यों पुखराज-सिला पै साँपिनि स्याम ॥ (पीठ संयुत वेणी)
परि चिकनी पटिया पै मन बिछलाय ।
अलक छोर गहि लटकै नट सौं आय ॥ (माँग की पाटी)
असन सेत कारे रज सत तम ऐन ।
उतपति पालन लय के करता नैन ॥ (नेत्र-वर्णन)
चख चंचल बिच पुतरि सोहति स्याम ।
मनहुँ मीन वाहन पै राजत काम ॥ (पुतली-वर्णन)
रच्यो काम करिगरवा बरहि कपोल ।
बसि गइ तासु पुतरिया मनहुँ अडोल ॥ (कपोल-तिलक)
यह सुखासिमा गोरी गालनि नाहिं ।
पिय अनुराग झलक है दरपन माहिं ॥ (कपोल की लाली)
नहिं नागरि गर महियाँ हीरा हार ।
करत प्रदच्छिन ससि को नखत कतार ॥[2] (हीरा-हार-वर्णन)

---

१ 'रसिकविनोद'—(स० [illegible] प्रसाद सिंह प्रथम सं० सन् (१८६१ ई०) कवित्त २२ पृ० ७।

२ शृंगार-दर्पण (वही प्रथम सं० सन् (१८७६ ई०), पृ० ६,४,६, १२ और १६।

(७)

इसि तुम्हारे अंग में ब्रह्मांडन के सोम।
ऐसे बिलसत हैं लसत ज्यों सरीर में रोम॥
अपने में देखत नहीं ढूँढ़त अलख बजार।
बिलसत बालक गोद में ढूँढ़ो नगर मंझार॥
करौ अनेकन जोग जप तप मख पूजन दान।
यह जुलमा रीझत नहीं बिन आपा बलिदान॥
जो जानत सो कहत नहि, कहत सो जानत नाहि।
वेद चरित हू नेति कह, और कहै को ताहि॥[1]

(८)

१ मैं बहुत दिन तक रोया, फिर हँसानेका दावा वही करता है जिसने रुलाया। २ प्रेमियों की जुबानें आसमान पर और दुनिया-दारों के कान जमीन पर हैं, उनके प्रेम की बातों को ये कैसे सुन सकते हैं। ३ यह दुनिया तभी तक है जबतक परमेस्सर की प्रभा प्रेमियों के दिल में जगह नहीं करती जब वह प्रकाशित होता है तब रोशनी के साथ अँधेरा कैसे रह सकता है। ४ जबतक हम अपने दुश्मन को घर से नहीं निकालते दोस्त मेरा घर में नहीं आता है। ५ जब आराम चाहोगे तकलीफ सामने खड़ी है जब तकलीफ सहोगे आराम से सामना है। ६ मैं बहुत दूर था, मेरे साथियों ने मुझसे दूर होकर मुझको उसके समीप कर दिया। ७ वही मैं हूँ कि पहले दोस्तों में भी दुश्मनी का असर पाता था। अब दुश्मनों में भी दोस्ती को देखता हूँ। ८ सन्तोष से पराई चीज भी अपना हो जाता है और लालच से अपनी हाथ की भी चली जाती है दूसरों के हाथ में। ९ अपथ्य खाना और दवा हकीम से माँगते रहना मूर्खता है ऐसे पापकर्म करना और क्षमा माँगना ईश्वर से। १० हाथी का सिर पर धूल डालना स्थूल शरीर के मिट्टी में मिलने का उपदेश है। ११ ज्यों ज्यों सूर्य सीधा सिर पर आ जाता है अपनी छाया घटते-घटते अपने बदन में गायब हो जाती है ऐसे ही परमेस्सर के सामने हो जाने पर दुनिया की दशा है।[2]

---

१ 'धर्मसरोवरी' (डा॰ धर्मेन्द्रब्रह्मचारी सिंह सम्पादित, पृ० (१९६२ वि०) पृ० १८२,१८७ तथा १९४।
२ वही, पृ० १६६,१६९ १७० १७२, १७५ तथा १७७।

जयप्रकाश लाल

आप सारन-ज़िले के अपहर नामक ग्राम के निवासी और डुमराँव (शाहाबाद) के महाराजा राधाप्रसाद सिंह के दीवान थे।[1] आपका जन्म सन् १८४० ई० में आरा नगर में हुआ था।[2] कहते हैं, डुमराँव-राज में आपके जैसा प्रभावशाली, प्रतापी, दानी, गुणग्राहक तथा प्रबन्ध-कुशल दीवान कभी कोई नहीं हुआ।[3] आपको सरकार से 'रायबहादुर' और 'सी० आइ० ई०' की उपाधियाँ मिली थीं। आप बिहार-बंगाल-कौंसिल के माननीय सदस्य भी थे। लखनऊ में जो अखिलभारतीय प्रथम कायस्थ-महासम्मेलन हुआ था, उसके सभापति आप ही हुए थे। बर्मा प्रदेश में आपके समय में ही डुमराँव-राज की ओर से बहुत-सी भूमि खरीदी गई थी, जिसकी आबादी का प्रबन्ध आपने किया था। आपके एक अनुज शिवप्रकाश लाल[4] ने अनेक ग्रन्थों की रचना की थी। आप एक धर्मनिष्ठ व्यक्ति थे। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से आपकी घनिष्ठ मैत्री थी। हिन्दी में 'जगोपकारक'[5] नामक धर्म-नियमक आपकी एक पुस्तक सन् १८७२ ई० में प्रकाशित हुई थी। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले। आप सन् १८९७ ई० में परलोक सिधारे।



भगवान प्रसाद[6]

आप 'श्रीसीतारामशरण भगवान प्रसाद' के नाम से प्रसिद्ध थे। इससे भी अधिक आपकी प्रसिद्धि थी 'रूपकला' जी के नाम से। आपकी रचनाएँ प्रायः इसी उपनाम से मिलती हैं।

आप निवासी तो थे सारन ज़िले के मुबारकपुर नामक ग्राम के, किन्तु आपका जन्म सं० १८९७ वि० (सन् १८४० ई०) में, भाद्र कृष्ण नवमी को, इलाहाबाद के आलमगंज मुहल्ले में, हुआ था।[7] आलमगंज की नील-कोठी में आपके पितामह श्रीदेवकृष्ण जी मीरमुंशी थे। आपकी माता का नाम था श्रीमती शिवमती देवी और

१ 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, तृतीय भाग, द्वितीय सं० सं० १९८५ वि०), पृ० ११९८।
२ 'भारत' (मासिक, अंक १, जनवरी सन् १९३५ ई०) पृ० १२।
३ 'कायस्थचरित-चम्पू' (वही) पृ० ११-१२।
४ इनका परिचय इसी पुस्तक के परिशिष्ट में यथास्थान द्रष्टव्य। मिश्रबन्धुओं ने इनको आपका लघुभ्राता लिखा है। —देखिए, 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही) पृ० ११९८।
५ इसका प्रकाशन सूर्यप्रसाद नामक किसी व्यक्ति ने पटना से किया था। —देखिए 'हिन्दी-पुस्तक-साहित्य' (माताप्रसाद गुप्त, प्रथम सं० सन् १९४५ ई०) पृ० ४१२।
६ आपका प्रस्तुत परिचय मुख्य रूप से 'श्रीसीतारामशरण भगवान प्रसादजी की जीवनी' (वही) तथा 'हरिऔध-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (पृ० २१८-२१) के आधार पर तैयार किया गया है।
७ श्रीसीतारामशरण भगवान प्रसाद की जीवनी (वही), पृ० १४। कुछ लेखकों ने आपका जन्मकाल सं० १८९७ वि० श्रावण कृष्ण नवमी भी बताया है। —देखिए, 'सरस्वती' (मासिक, भाग १२, संख्या १, जनवरी सन् १९११ ई०) पृ० ४८८।

पिता का मुंशी तपस्वी राम[1], जो एक बड़े विद्यानुरागी और रामोपासक सद्गृहस्थ संत थे। लगभग पाँच वर्ष की अवस्था में प्रयाग में ही त्रिवेणी-संगम पर मुण्डन-संस्कार के साथ आपका विद्यारम्भ भी हुआ और उसी समय आपका नाम भगवान प्रसाद रखा गया।[2] किन्तु, पढ़ने की कोई अच्छी व्यवस्था न हो सकी। लगभग सात वर्ष की अवस्था से ही आप अपने पितामह के साथ साधुओं के सत्संग में जाने लगे। विशेषतः वे आपको अपने साथ गजनपुर ग्राम में बाबा श्रीरामप्रसादजी के पास कीर्त्तन और सत्संग में ले जाया करते थे। उसी समय आपके हृदय में भगवद्भक्ति का बीज अंकुरित हुआ।[3] आठ वर्ष की अवस्था में आप अपने माता पिता के साथ मुबारकपुर (सारन) चले आये। यहीं आपकी शिक्षा का समुचित प्रबन्ध हुआ। पहले दो-तीन वर्षों तक तो आपने घर पर ही मोहनपुर (सारन) निवासी मौलवी अशरफ़ अली[4] से फ़ारसी की शिक्षा प्राप्त की। इसके पश्चात् आप ग्यारह वर्ष की अवस्था में मुबारकपुर के मिडिल वर्नाक्युलर-स्कूल में भरती हुए। यहाँ आपने मौलवी जहाँगीरबख्श शाहपुरी से फ़ारसी-उर्दू और बाबू विनायक प्रसाद से हिन्दी की शिक्षा पाई। इसी समय के लगभग, सन् १८५८ ई० में, मुबारकपुर[5] के मुंशी ठाकुरप्रसादजी की कन्या से आपका विवाह हुआ। किन्तु, आपके कोई संतति नहीं हुई।

मुबारकपुर में ही पं० महावीर पाण्डेय और मुंशी शिवचरण भगत नाम के दो बड़े धार्मिक तथा सदाचारी रामानन्दी वैष्णव रहते थे, जिनसे आपको धार्मिक शिक्षाएँ मिलती रहीं। सन् १८५८ ई० में कार्त्तिक-पूर्णिमा को गोवना-सेमरिया के मेले में आपने परसा (सारन) ग्राम निवासी स्वामी रामचरणदासजी[6] से विधिपूर्वक धार्मिक दीक्षा ग्रहण की। आगे चलकर सन् १८८०–८१ ई० में बड़हराय (मुंगेर) के श्रीरघुनाथाधिकारीजी ने गुरहट्टा (भागलपुर) के प्रसिद्ध संत श्रीरामचरणदास की 'हंसकला'[7] से आपका परिचय कराया। उक्त संत-महात्माओं के अतिरिक्त आपके धार्मिक जीवन पर आपके चाचा तुलसीरामजी[8] का भी बहुत अधिक प्रभाव पड़ा था।

---

१ इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य है।

२ आपका विद्यारम्भ पं० श्रीरामदीनजी और श्री मुबारक अली साहब ने कराया था। इन दोनों की गणना प्रयाग के प्रसिद्ध पंडितों और मुल्लाओं में होती थी। —सं०

३ "घेरा ही खेल में आप अपने ग्राम के श्रीरामचरण साधु से दीक्षा लेनेवाली एक छोटी-सी प्रतिमा ले आकर प्रति दिन उसकी पूजा करने लगे और इस काम में आपके माता-पिता ने उन्हें सहयोग दिया।'—'संकीर्त्तन-संदेश' (भाग १ पुष्प ७-८, दिसम्बर सन् १९६२ ई०) पृ० १।

४ कहते हैं, मौलवी साहब फ़ारसी के एक अच्छे ज्ञाता, चिकित्सा-शास्त्र में बड़े ही निपुण और आपके खानदानी उस्ताद थे।

५ 'संकीर्त्तन-सन्देश' (वही पृ० ५) में लिखा है कि सन् १८७० ई० में आपका विवाह दिघवारा (छपरा) के समीप रेपुरा-ग्राम के निवासी श्रीठाकुरप्रसाद की कन्या से हुआ था।

६ साम्प्रदायिक प्रथा के अनुसार इन्होंने ही आपका नाम 'श्रीसीतारामशरण' रखा था।

७ इन्होंने आपका नाम 'रूपकला' रखा, जो आपकी रचनाओं में सर्वत्र मिलता है।

८ इनका साधु-नाम 'रामसखाशरण' था। ये अयोध्या के रामघाट पर विरक्त होकर निवास करते थे। इन्होंने ही आपको एक हस्तलिखित रामायण की पोथी देकर नित्य पाठ करने का अभ्यास करा दिया था। —सं०

सन् १८५९ ई० में आप मिडिल परीक्षा में, चार वर्षों के लिए चार रुपये मासिक की छात्रवृत्ति लेकर उत्तीर्ण और छपरा जिला-स्कूल में भरती हुए। स्कूल में आपकी गणना सच्चरित्र, शान्त और गंभीर लड़कों में होती थी। सन् १८६३ ई० में जब आप एंट्रेंस-क्लास में आये, तब आपने एक पुस्तिका (तन मन की स्वच्छता) लिखकर तत्कालीन स्कूल-इन्सपेक्टर डॉ० फैलन को समर्पित की, जिससे प्रसन्न होकर उन्होंने आपको १०) मासिक वेतन पर सन् १८६५ ई० में १४ अगस्त को स्कूलों के सब इन्सपेक्टर के पद पर नियुक्त कर लिया। उस समय आपकी अवस्था तेईस वर्ष की थी। कार्यदक्षता के कारण आपकी तरक्की लगातार होती गई। सन् १८६७ ई० में आप डिपुटी-इन्सपेक्टर होकर पूर्णिया गये और वहाँ से सन् १८६९ ई० में आप मुंगेर आये, जहाँ लगातार बारह वर्षों तक रहे। सन् १८८४ ई० तक आप तीन सौ रुपये मासिक वेतन की श्रेणी और राजपत्रित पदाधिकारियों में आ गये। सन् १८८८ ई० से आप लगातार पटना में रहे। इसके एक साल पहले ही आपके पिता का देहान्त हो गया था। पटना में रहते समय आप बाबा भीखमदास की ठाकुरबाड़ी (बाकरगंज) का ही भोग लगाया हुआ अन्न (महाप्रसाद) पाया करते थे।

सन् १८९० ई० में वैशाखी पूर्णिमा को आपकी सहधर्मिणी का स्वर्गवास अपने मायके में हुआ था। पटना से ही, सन् १८९१ ई० की ११वीं अक्टूबर को, एक सौ छियालीस रुपये दो आने की मासिक पेन्शन पर, आपने सरकारी सेवा से अवसर-ग्रहण किया।[1] पूर्व निश्चयानुसार, सेवाकार्य से मुक्त होते ही, उसी वर्ष के नवम्बर मास में, आपने अयोध्या-वास के लिए पटना छोड़ दिया। सन् १८९१ ई० में ही ५ नवम्बर (रविवार) को आप, काशी में श्रीविश्वनाथजी के दर्शन करते हुए, पहले-पहल अयोध्या-वास करने पहुँचे थे।

अयोध्या पहुँचते ही आपने प्रमोद-वन कुटिया से अँचला, लँगोट, कमण्डलु इत्यादि प्राप्त करके विधि-पूर्वक गार्हस्थ्याश्रम-त्याग किया। इस समय तक आपकी केवल माता ही जीवित थीं, जिनके लिए आप नियमित रूप से प्रतिमास ५१) भेजा करते थे।

अयोध्या में आप पहले हनुमत्-निवास में रहे। पीछे जब बाबू बलदेवनारायण सिंह ने प्रमोद-वन में आपके नाम पर 'रूपकला-कुंज' नामक एक सुरम्य भवन बनवा दिया तब वही आपका स्थायी निवास हो गया। वहाँ नित्य आपका प्रवचन हुआ करता था। अयोध्या में जानकी-नवमी के उत्सव को आपने ही प्रचलित किया था। आपके चरण रामरत्न-रंग में रँगे होते थे।

रामायण, गीता, भक्तमाल आदि धर्मग्रंथों का अध्ययन, संत-महात्माओं और सज्जनों की संगति और विशेषतः एकान्तवास आपको बहुत ही प्रिय था। धर्म के मामले में भी आप बड़े ही उदार थे। मस्जिदों और गिरजों के प्रति भी आपकी वही श्रद्धा थी, जो मन्दिरों के प्रति।

---

१ 'संक्षिप्त-सन्देश' (वही पृ० ७) के अनुसार आपने एक ईश्वरीय चमत्कारपूर्ण अलौकिक घटना के कारण अपने पद से त्यागपत्र दे दिया था, अवसर-ग्रहण नहीं किया था।

आपने किसी को अपना शिष्य नहीं बनाया। सभी को मित्र-तुल्य ही मानते रहे। अयोध्या में आपके प्रेमियों की संख्या दिन-दूनी रात-चौगुनी बढ़ती गई।[1] आपके प्रेमी आपके सम्बन्ध में अनेकानेक चामत्कारिक घटनाओं की चर्चा किया करते हैं।[2]

आपने सन् १९१२ ई० में ही हरिनाम-यश-संकीर्तन-सम्मेलन नामक एक अखिल भारतीय आध्यात्मिक संस्था की स्थापना की थी, जिसके अधिवेशन आज भी प्रत्येक वर्ष भारत के विभिन्न भागों में होते हैं।

पालकी पर चलते समय आपके कहार भी 'भज सीताराम जय सीताराम' कहते चलते थे और हजामत बनाने के समय हजाम भी 'सीताराम सीताराम' बोलते हुए ही अपना काम करता था। आप नित्य नियमपूर्वक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र-कृत एक सवैया बड़े अनुराग से पढ़ा करते थे।[3]

भोजन में बादाम का शर्बत और लघु आपको सबसे अधिक रुचिकर लगता था। वस्त्र में पसन्द था मौटिया और नलकसार।

आप सन् १९१२ ई० में दिनांक ४ जनवरी को तथा तीन बजे रात्रि में साकेतवासी हुए।[4] कहते हैं आपको अपनी मृत्यु तिथि की सूचना पहले से ही थी, जिसका संकेत आपने अपने कतिपय भक्तों को कर दिया था।[5] अपनी परमधाम-यात्रा की बेला में आप श्रीरामपूजा को महाराज 'दिव्यकला' को अपना उत्तराधिकारी बना गये।[6]

---

१ आपके जीवनी-लेखकों ने आपके प्रेमियों की एक लम्बी सूची प्रकाशित की है।—देखिए, 'श्रीसीतारामशरण भगवान प्रसाद की जीवनी' (वही) पृ० ९१—१२२ तथा श्रीरूपकला-परिजनपुर (सं० एतद्वीयन शरण अवध से सन् १९५६ ई०) पृ० १७७-१८६।

२ इस प्रकार की अलौकिक घटनाओं के लिए—देखिए, 'श्रीसीतारामशरण भगवान प्रसादजी की जीवनी (वही) तथा 'श्रीरूपकला-परिजनपुर' (वही)।

३ कवि हमेरी सुधि भोरही सुधि श्रीतिम की छवि आय दिखावै।
पावस-सी भरे प्यासे नयन दन चाखिस रस-सुधा नित प्यावै॥
त्यागि पीत बनेक की दामिनी-सी अरुणा करिके सदा नचावै।
त्यों तुम आयके बासंर में मन मेह की मेह लिया बरसावै॥
—'श्रीरूपकला के संस्मरण' (भुवनेश्वर प्रसाद गुप्तक, प्रथम सं० सन् १९५० ई०)

४ श्रीरूपकला एक झाँकी' (पृ० ११) के अनुसार ३ जनवरी (रविवार, एकादशी) की रात्रि में ३ बजे एक अल्प-ज्वर के बाद आप परम धाम सिधारे। मृत्यु के समय अन्तिम पद में आपने तीन बार यही दोहराया—"मनवर्ष यरतूजार बल दम पावक शतानन पातु हरन आवार गहरि राम शर मान भर।"

५ मरमार, सन् १९११ ई० के अन्तिम सप्ताह में आपने अपना के अपने कृपापात्रों के पास अन्तिम पत्र में लिखा था— 'बापू नाम भारतेन्दु हरन वीर बल तुम सो कृपाल छोड़ि छोड़ि पर रहे सदा अनुकूल।"

६ देखिए— श्रीरूपकलाप्रकाश' (श्रीगुरुपीठपूजन प्रथम सं०, सं० १९८४ वि०), श्रीरूपकलाजी—एक झाँकी (अयोध्या वासुदेवालय, प्रथम सं० सं० १९८२ वि०) 'Shree Rupkala and His life and teachings (A. B N Sinha First Edn. 1935) and Bhagwan Rupkala and His Mission (A B.N Sinha Second Edn. 1960)

रामानन्दी सम्प्रदाय के एक सिद्ध वैष्णव महात्मा होने के अतिरिक्त आप हिन्दी के एक कुशल लेखक तथा कवि भी थे। आपकी गणना बिहार में सर्वप्रथम हिन्दी प्रचार करनेवाले चार सज्जनों में होती है।[1] आपने हिन्दी में निम्नलिखित पुस्तकों की रचना की थी—(१) तन-मन की स्वच्छता[2], (२) शरीर-पालन[3] (३) भागवत गुटका[4], (४) श्रीपोथाजी की कथा[5], (५) श्रीभगवद्गुणनामामृत[6] (६) भक्तमाल की टीका,[7] (७) श्रीसीतारामस्मानसपूजा[8] (मानसा-अष्टयाम), (८) भगवन्नाम-कीर्तन,[9] (९) श्रीसीतारामीय प्रथम पुस्तक,[10] तथा (१०) मीराबाई[11]। आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ भोजपुरी में भी मिलती हैं।

---

१ बिहार में सर्वप्रथम हिन्दी-प्रचार का श्रेय चार सज्जनों को है—'बाबू शिवप्रसाद, रामदीन सिंह, रूपकलाजी और बैजनाथ भट्ट।' —'श्रीरूपकला : एक झाँकी' (भूमि) पृ० १०।

२. इसी पुस्तिका को समर्पित करने के परिणामस्वरूप तत्कालीन स्कूल-इन्सपेक्टर डॉ० फैलन ने आपको नौकरी दी थी। उन्हीं की आज्ञा से आपने 'तहारते जाहिर ओ बातिन' नाम से इसका उर्दू अनुवाद भी किया था। —सं०

३. यह एक बँगला-पुस्तक का अनुवाद है। आपने पीछे से [illegible] के नाम से इसका उर्दू अनुवाद भी प्रकाशित किया था। बिहार के मिडिल स्कूलों के पाठ्यक्रम में भी यह रही। —सं०

४ इसके पूर्वार्द्ध में भगवन्नामकीर्तन और उत्तरार्द्ध में भक्तों के नाम की लिखी हुई गाथाओं का उल्लेख है।

५. इसकी रचना बिलकुल नये ढंग की है। इसमें भगवान् को ही पोथा बनाकर सारी बातें कही गई हैं। पोथाजी के सम्बन्ध में जितने कवित्त उपलब्ध हैं, वे सब इसमें सम्मिलित हैं। —सं०

६ यह एक प्रकार से भगवद्गीता के बारहवें अध्याय की टीका है। इसमें गीता के श्लोकों के आधार पर पदविन्यास की भी विशद व्याख्या की गई है।

७. इसमें पहले नाभाजी के छप्पय देकर उसके नीचे प्रियादासजी के कवित्त दिये गये हैं। उसके नीचे सरल हिन्दी में उसकी व्याख्या की गई है। स्थान-स्थान पर अन्यान्य ग्रन्थों के अवतरणों से भी कथा की पुष्टि की गई है। इसे गया के वकील बाबू अवधेशनारायण सिंह ने प्रकाशित किया था। फिर, यह लखनऊ के तेजकुमार प्रेस (नवलकिशोर प्रेस की एक शाखा) से प्रकाशित हुई। —सं०

८. इसमें युगलसरकार श्रीसीतारामजी की आठों पहर की मानस-पूजा-विधि है।

९ इसमें नित्य पाठ करने योग्य श्लोक संगृहीत हैं।

१० इसमें अनेक ग्रन्थों से विभिन्न कोटि के धार्मिक श्लोक तथा हिन्दी-पद संगृहीत हैं।

११ यह राजस्थान की प्रसिद्ध कवयित्री 'मीराबाई' की जीवनी है। इन पुस्तकों के अतिरिक्त आपकी कुछ पुस्तकें उर्दू में भी प्रकाशित हुई थीं।

उदाहरण

(१)

सुधि न लीन्हि पिय बिरहिनि हिय की।
सखि! माहि कत दिन तरसत बीते, सुधि न लीन्हि पिय बिरहिनि हिय की ॥
आह धुआँ मुख हिय बिरहागी, ठाढ़ि जरौं जैसी बाती दिय की।
अधिक दाह चित चातक कोकिल, बिरह अनल जिमि आहुति घिय की ॥
सब उर व्यापक अन्तरयामी, जानत हैं पिय रुचि तिय जिय की।
साँचहु सपनेहु कब लगि देखिहौं, मधुर मनोहर छबि सिय पिय की ॥
छमानिधान बिलोकिहैं निज दिसि, करिहहिं खोज न मोरे किय की।
कृपानिधान दया-सुख-सागर, मनिहैं सखि! बिनती लघु तिय की ॥
'रूपकला' बिनवति हनुमत हा, चन्द्रकला अरु गिरिधर-पिय की।
एको उपाय न सूझत आली! मोहि आशा केवल श्रीसिय की ॥[1]

(२)

नेह नेह सब कोउ कहै, नेह करौ मति कोइ।
मिले दुखी बिछुरे दुखी, नेही सुखी न होइ ॥
नेह स्वर्ग से उतर्‌यो, भू पर कीन्हों गौन।
गली गली ढूँढ़त फिरै, बिन सिर को घर कौन ॥
बिरह अला जा उर बसो, लखो रसीली प्रीति।
चहत न मरहम घाव पर, यह प्रेमिन की रीति ॥
प्रेम कठिन संसार मे, नहिं कीजै जगदीस।
जो कीजै तो दीजिए, तन मन धन अरु सीस ॥
धनि वृन्दावन धाम है, धनि वृन्दावन नाम।
धनि वृन्दावन-रसिकजन, धनि श्रीस्यामा स्याम ॥
आली! होली सुखद तेहि, जो श्रीसिय पद पास।
'रूपकला' फगुनहट लहि, भुरवति रहति उदास ॥[2]

---

१ श्रीभक्तमाल (श्रीरूपकला-कृत भक्तिसुधास्वाद-तिलक, तृतीय सं० सन् १९५१ ई०) पृ० १२२।
२ वही, पृ० ७६।

(३)

साजि लेलो भूषन सँवारि लेली बसन से हाथ लेलो री ।
कनक थार भारसी से हाथ लेली री ॥
ओढ़ो पहिरी सुन्दरी सहेली सखी सहचरी ओही पीछे री ।
से विराजे श्रीकिशोरीजी ताही पीछे री ॥
मिथिला जुवति गन गावेली मुदित मन साथ लेली री ।
ए सामग्री गौरी पूजन से साथ लेली री ।
हरियर फुलवरिया ललिता गिरजा-घरिया सखिन बीचे री ।
से बिराजे श्रीकिशोरी जी सखिन बीचे री ॥
सियाजी के पूजा से प्रसन्न भइली गौरीजी असीस देली री ।
से सुफल मनकामना आसीस देली री ॥
'रूपकला' गावेली श्रीस्वामिनी बुझावेली बिनु जोगे-जापे री ।
ए प्रीतमप्रेम पावेली बिनु जोगे-जापे री ॥[1]

(४)

जय चकोर जानकि मुख चन्दा । मिथिला युवतिवृन्द मन फन्दा ॥
मोहि सब भाँति तुम्हार भरोसू । समझौं पिय गुण अरु निज दोसू ॥
जोरि पाणि वर माँगौं एहू । जन्म जन्म सियराम सनेहू ॥
जेहि विधि पिय प्रसन्न मन होई । करुणासागर कीजिय सोई ॥
पिय सनेह चितवन की प्यासी । रूपकला श्रीसिय की दासी ॥
मुख मयंक की माधुरी, मधुर वचन मुसुकान ।
चितवनि जनमनहारिणी, जयति जानकीजान ॥[2]

---

१ श्रीमधुरी के कवि और काव्य (श्रीभुवनेश्वरीप्रसाद सिंह प्रथम सं० सन् १९५८ ई०) पृ० ११३-१४।
२. श्रीसीतारामीय भजन गुच्छ' (प्रथम सं०, सं० १९६८ वि०, सन् १९११ ई०), पृ० ४४ ४५।

(५)

चाहे कोई कैसे ही बड़े भक्तिमान हों, रात दिन हरिगुण गाया करते हों, संसार के पापों को हरते भी हों, भगवन्नाम जपा करते भी हों, उनका हृदय सद्गुणों तथा भगवद्रूपध्यान से भरा भी हो, ज्ञानमान भी हों, (तनु कम्प और हिय पुलक भी हों), श्रीहरि तथा सन्तों के सम्मान में भी रुचि हो, और उसी में सुख मानते भी हों, रीति से नाम जपते भी हों, सांसारिक प्रपञ्च से बचे भी हों, प्रेम को ही सब का सार जानते हों, ललाट में तिलक और उर में माला भी सुशोभित हो, यह सब ठीक है सब कुछ हो, तथापि भक्ति की आराधना कठिन ही है, ओह! कोई किस प्रकार से आराधना कर सकता है? भक्ति की विलक्षण सूक्ष्म गति समझ में नहीं आती, मन कांप उठता है, हृदय चूर-चूर हो जाता है। सारांश यह कि "श्रीभक्तमालजी" को पढ़े समझे और मनन किये बिना, श्रीभक्ति महारानी की आराधना और उनके स्वरूप का जानना अतीव दूर तथा असम्भव है।[१]

(६)

भगवत् के जितने अवतार हैं, वे सबही सुख के समुद्र हैं, जिनका वार-पार (ओरछोर) कौन पा सकता है, प्रत्येक की लीला का विस्तार-पसार, जीवों के ही उद्धार के निमित्त है। जिस भक्त का जिस अवतार के रूप नाम लीला धाम में मन लगे, और उसमें वह रँगे पगे, उसके हृदय में वही भाव ऐसा जाग उठता है (प्रकाशमान होता है) कि कहाँ तक उसकी प्रशंसा की जाय, उसका अन्त नहीं। सबही अवतार नित्य हैं, सबही ध्यान करने से चित्त को प्रकाशकारक; और सबही ऐसे सुखद हैं कि जैसे दरिद्री को धन का मिलना सुख देता है। हाँ, इतना बात तो अवश्य है कि यदि सारांश तत्त्व का ज्ञान होवे, तब सुख की प्राप्ति होती है॥ जिस प्रकार से 'टेढ़ापन' रूपी दोष भी बालों (केशों) के सम्बन्ध में सुखद गुण ही होता है, वैसे ही मीन वाराह आदि तिर्यक् शरीर भी भगवत् की प्रभुता के सम्बन्ध से अति सुखदायी ही हैं।[२]

१. श्रीभक्तमाल (सटी) पृ ३६ १०।
२. वही पृ ४६ १०।

(७)

(क) प्र०—वैष्णव के क्या लक्षण हैं ?

उ०—"वैष्णव वही है जो अपने निज दुःख के प्रति उतना कठिन हो जैसे आम की गुठली, और पराये दुःख के लिए जिसका हृदय इतना कोमल एवं सुमधुर हो जैसा आम का गूदा और रस। वैष्णव वही है जो घास की तरह नम्र हो और किसी के पाँव तले कुचले जाने पर भी हरा भरा लहलहाता हो रहे। मन, बुद्धि, इन्द्रिय जिसकी परसेवावृत्ति में लगी रहे। किसी का भूलकर भी अनिष्ट न करना। आलस्यहीन होकर अपने कर्त्तव्य को नियमपूर्वक करते रहना। विलासिता को अपने पास फटकने न देना। सदा सावधान रहना। सात्विक भाव से, आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का ग्रहण न करना। किसी की निन्दा न करनी और न कानों से सुननी।'[1]

(ख) प्र०—परमात्मा को देखना क्यों कठिन है ?

उ०—जो सूँघने की वस्तु है उसे सूँघकर ही आप जान सकते हैं। जो खाने की वस्तु है उसका स्वाद खाकर ही जान सकते हैं। गाना सुना ही जा सकता है। स्वाद जिह्वा ही द्वारा जाना जा सकता है। इसी प्रकार परमात्मा को देखने के लिए किसी विशेष नेत्र की आवश्यकता है।[2]

(८)

(क) ज्ञान, योग, भक्ति वास्तव में कोई अलग वस्तु नहीं हैं। जैसे अनेक प्रकार का व्यंजन तैयार किया जाता है, मुख में उसका स्वाद भी अलग अलग मिलता है, पर पेट में जाकर सब एकट्ठा होकर शरीर के

---

१ 'सत्संग-संग्रह' (वही) पृ० ११-१४।
२ 'श्रीभक्तप्रकाश' (वही), पृ० ४०।

रोम-रोम को परिपुष्ट करते हैं उसी प्रकार वैज्ञानिक दृष्टि से ये तीन मार्ग निश्चित किये गये हैं, पर वास्तव में सब मिल ही कर अपना कार्य करते हैं। इन तीनों को अलग करना उन पर वाद-विवाद तथा माथापच्ची करना केवल भूल है।[1]

(ख) भाव, महाभाव, तब प्रेम। व्यक्तिगत विचार रहते भी ईश्वरप्रेम का संचार होना, उसमें मग्न होना, उसके लिए व्याकुल होना 'भाव' कहा जाता है। महाभाव उसे कहते हैं जिसमें देहबुद्धि का लेशमात्र न हो, अपने आप की सुधि ही न रह जाय, अपने प्रेमदेव में ही लीन रहे। प्रेम को कैसे बताया जावे। प्रेमी तथा प्रेमदेव में कोई अन्तर ही नहीं। जैसे जल का कण जल में मिल जाय।[1]

(ग) प्रेम का दूसरा पहलू है विरह। प्रेम विरह एक दूसरे के साथ इस तरह ओतप्रोत हैं कि उन्हें बिलगाया नहीं जा सकता। अग्नि और उसकी दाहक शक्ति जैसे ही प्रेम और उसका विरह। यदि प्रेम विरह की आग इस हृदय में नहीं उठती तो प्रेम का मोल ही नष्ट हो जाता। विरह का अर्थ है अपने प्रेम के लिए पूर्ण अनुराग तथा अन्य वस्तुओं से प्रचुर वैराग्य। विरह तो प्रेम की कसौटी है।[1]

(घ) भगवान मनुष्य को रोग-शोक में डालकर नाम-स्मरण-चिन्तन का सुअवसर दिया करते हैं।[1]

(च) जिसे आत्मसमर्पण नहीं आता वह निर्भीक नहीं हो सकता।[1]

(छ) भगवान जिससे प्रसन्न हों वही कर्म है और जिससे हरि में भक्तिभाव हो वही विद्या है।[1]



१ 'कल्याण-संस्मरण (वही) (क) पृ० ११०, (ख) १२० (ग) १६१ (घ) ७८, (च) १२०, (छ) पृ० १०१ (ज) पृ० २०१।

रामबिहारी सहाय

आपका उपनाम 'बिहारी' था, जो आपकी रचनाओं में मिलता है।

आप सारन जिले के नवाजीप नामक ग्राम के निवासी थे। आपका जन्म छपरा शहर के 'साहबगंज' मुहल्ले में, एक श्रीवास्तव-कायस्थ-कुल में, सन् १८४० ई० में हुआ था।[1]

आपके पिता का नाम मुंशी मनियारसिंह था। आप अपने पिता के परम प्रिय ज्येष्ठ पुत्र थे। आपके परिवार की गणना प्रसिद्ध धार्मिक परिवारों में होती थी। आप स्वयं भगवती दुर्गा के उपासक थे। कहते हैं कि एक बार निरपराध आप नौकरी से हटा दिये गये, जिससे खिन्न होकर आपने बड़ा सुन्दर 'दुर्गास्तोत्र' बनाया, और जगदम्बा की आराधना में तत्पर हो गये। परिणामस्वरूप, आपकी शीघ्र ही पुनः नौकरी पर बहाली हो गई।

स्वभाव से आप बड़े ही मिलनसार और सरल हृदय थे। आपके कोई सन्तान नहीं थी। भोजपुरी भाषा के 'बटोहिया' गीत के सुप्रसिद्ध कवि बाबू रघुवीर नारायणजी[2] आपके भतीजे थे, जिन्हें आपका पर्याप्त स्नेह प्राप्त था। आप बहुत दिनों तक मुजफ्फरपुर की दीवानी अदालत में पैमाइशी अमीन थे। उर्दू, फारसी के अतिरिक्त आप हिन्दी में भी सुन्दर कविता करते थे। हिन्दी में आपकी कोई पुस्तकाकार रचना नहीं प्राप्त होती, स्फुट काव्य-रचनाएँ ही मिलती हैं। आपने 'रामचरितमानस' की चौपाइयों (अर्द्धालियों) पर अनेक कवित्त-सवैये आदि रचे हैं। आपके रचे गंगास्तोत्र, दुर्गास्तोत्र, निर्गुण-पद, चुहचुहिया और भजन भी उपलब्ध हैं।

उदाहरण

(१)

दिन-रात जहाँ हरि कीरति ह्वै हरिनाम के टेर सदा मनमानी।
'बिहारी' भने सबसे सम भाव कुभाव न काहू से है जहाँ जानी।
ग्यानी सबै गुनवन्त सबै सिलवन्त सबै सब ही जग जानी।
गुनखानी समाज सु सज्जन के परनाम करौं मैं सप्रेम सुबानी॥[3]

(२)

मोह अँधियारी रैन जहाँ न कबहूँ होत
बिपति बिहान के निसान नहिं राज है।
भनत 'बिहारी' घोर सम्पट सभार उल्लू
निस्चर असुर के न जहाँ कछु काज है।

---

१ श्रीअमरेन्द्रदेव नारायण (दहियावाँ, छपरा) से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर।

२ इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य है।

३ श्रीधरदेव वर्मा (हिन्दीसेविर, रसूलपुर, सारन) द्वारा प्राप्त एक जीर्ण-शीर्ण पाण्डुलिपि से जो बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित है।

ग्यान-भारतण्ड उवै दिवस प्रकास भास
रामनाम रामजस यही साजबाज है।
वेदपाठी सास्त्र के पढ़ैया पउरानिक है
सोई मुदमंगलमय संत को समाज है ॥[1]

(३)

साजे ससखाने में विरचित सुरंग सेज,
आभा बिकास दीप दिनकर ते दोगुनो।
फहरें गुलाब के फुहारे चहुँ ओरन ते,
फैले सुचि गन्ध चोआ चन्दन ते चौगुनो।
कहै 'बिहारी' कवि तुलै ना छपाकर छबि
छाये हैं कलंक जाके रोम रोम औगुनो।
सोभा है अपार रूप राधिका बखानै कौन,
गिरिजा ते गिरा ते रूप रम्भा ते सौगुनो ॥[2]

(४)

ठरके बराह-दन्त भरके दिगदन्तो रद,
पचकी गति कूर्मों की कमठ पीठ दरके।
चरके सुमेरु मेरु थरके दिग बेमन के,
फरके फनीस तेज ठरके नाग नग के।
कहत 'बिहारी' कवि खरके भूप वेसन के,
आसन सिंहासन पाकसासन के सरके।
करके सरासन माग भरके गजेन्द्र धार,
सरके सान सूरों के हुरके थैल हूर के ॥[3]

(५)

ओढ़े मृगछाला कर डमरु है बिसाला
सोहे ससि भाला उर भूषण वर व्याला हैं।

---

१ श्रीयादवेन्द्र शर्मा (वही) द्वारा प्राप्त उनकी जीर्ण-शीर्ण पाण्डुलिपि से।
२ बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के षष्ठ अधिवेशन (मुजफ्फरपुर) के सभापति राजा कीर्त्यानन्द सिंह बहादुर के अभिभाषण से। —देखिए, 'बिहार की साहित्यिक प्रगति' (वही) पृ० १६०।
३ वही।

करत विष नेवाला साथ भैरव विकराला
पीवत भंग-प्याला अरु रहत मतवाला हैं।
भूत-प्रेत के रसाला नाच नाचत बैताला
कहत 'विहारी' सब देवन में आला हैं।
देवन प्रतिपाला रिद्धिसिद्धि देने वाला
अतिसय किरपाला सो असह बैसवाला हैं ॥[१]

(६)

संतन सों भाव नीको, दाव नीको दुर्जन सों
बन्धु सों बनाव नीको, चाव नीको राम को।
गीता को ज्ञान नीको, स्रवन पुरान नीको
दीनन को दान नीको, गौठन को दाम को।
सेवा पितु-मातु नीको, लायक सो नात नीको
कहता 'विहारी' बात, नीको परिनाम को।
गंगा-जल-पान नीको, गुरुजन का मान नीको
सुमिरन सदा ही नीको, राधा के नाम को ॥[२]



रामलोचन मिश्र[१]

आप का उपनाम 'भक्तभूषण' था।

आपका जन्म सं० १९२८ वि० (सन् १८७१ ई०) में, चैत्र शुक्ल ५ (शनिवार) को, सारन-जिले के मनियापुर-थाने के ममरखी ग्राम में हुआ था।[४] आपके पिता का नाम था पं० रोहिणी मिश्र। आपकी ख्याति एक प्रत्युत्पन्नमति रामायणी के रूप में थी। आप एक अनन्य रामभक्त और आशुकवि थे। हिन्दी में आपकी निम्नांकित कृतियाँ प्रकाशित हुई थीं—

(१) श्री सत्यनारायण-कथा का हिन्दी-पद्यात्मक अनुवाद, (२) मधुश्रा-व्रत-कथा का हिन्दी-पद्यात्मक अनुवाद, (३) चर्पट-मंजरी (मोह-मुद्गर) का हिन्दी-पद्यात्मक अनुवाद, (४) रामायण महत्त्व, (५) रामनाम-महिमा, (६) प्रश्न-संगीतावली, (७) पुष्पयज्ञ-वमन,

१ श्रीब्रजेन्द्रदेव नारायण (बेरी) द्वारा प्राप्त।
२. वही।
३. प्रस्तुत परिचय आपके कनिष्ठ पुत्र पं० श्रीवर्द्धनाथ शास्त्री (राजवैद्य श्रीपारसरमणीवनमहल, सदर बाजार, दानापुर कैंट, पटना) द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर तैयार किया गया है।
४ वही।

(८) राम-भक्ति भजनावली, (९) मिथिला-गीत, (१०) गंगा-सरयू-महिमा, (११) समस्या पूर्त्ति, (१२) पत्र-पद्यावली, (१३) आत्मजीवनी, (१४) स्फुट कवितावली, (१५) हनुमत्प्रार्थना, (१६) प्रासंगिक कवितावली, (१७) मिथिला-सम्प्रदायक-वर्णन, (१८) शाकद्वीपीयद्विज-वचन।

आपका देहान्त सं० १९७० वि० (सन् १९१३ ई०) में, माघ शुक्ल ११ बृहस्पतिवार को, ७२ वर्ष की आयु में, हुआ था।

उदाहरण

(१)

राम नाम कहा करो पाप से डरा करो तू
भरा करो कान में सदा ही राम नाम को।
घर में रहो वा गिरि-कन्दरा बसो तू जाय
बिना राम नाम सुख धाम कौन काम को।
नाम को प्रभाव चारो जुग में प्रचंड जान
कलि में प्रधान राम नाम सब-काम को।
कहे रामलोचन दुखमोचन राम नाम ही है
तासे राम नाम में बितावो आठो याम को॥[1]

(२)

पिता यदि दीजै तो श्री दशरथ महाराज ऐसो
बन्धु यदि दीजै तो श्रीराम चारो भैया सो।
माता यदि दीजै तो श्रीकौसल्या सुमित्रा जी सो
भार्या जो दीजै तो अरुन्धती सुकन्या सो।
पुत्र यदि दीजै तो सुपुत्र श्रीश्रवण ऐसो
मित्र यदि दीजै तो सुदामा जी कन्हैया सो।
कहे रामलोचन जौने ही योनि जन्म दीजै
रामभक्ति दीजै अरु प्रीति रघुरैया सो॥[2]

---

१ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित 'श्रीरामनाम-चरित्र' की प्रतिलिपि से।

२ वही।

(३)

भजु मन राम-सिया सुखरासी।
रामचन्द्र रघुनन्दन रघुवर राघव अवध-निवासी॥
रघुकुल तिलक सिया के स्वामी काटतु हैं जम-फाँसी।
मनमोहन मधुसूदन माधव मन्मथ मथुरा-वासी।
माखनचोर मुकुन्द मुरारी अरिमर्दन अविनासी।
चारो युग चतुरानन कर्त्ता चारि लाख चौरासी।
चारि पदारथ करतल ताके आकर माया दासी।
पावत मुक्ति सुनावत शंकर मरत जीव जो कासी।
रामलोचन एक अधम सरन महँ रासु दुसह दुखनासी॥[1]

(४)

अवगुन जौं प्रभु हेरो हमारो।
तौ नहिं कल्प कोटि करुनानिधि यहि जन को निस्तारो॥
वेद पुरान कहत करुनाकर धर-धर अधम उधारो।
पाप करत निसि वासर बीतत अव लौं हिय नहिं हारो।
भटकत फिरत न सूझत मारग लै निज सिर अघ भारो।
जनमत मरत दुसह दुख पावत तुम बिनु कौन उबारो।
गिद्ध न हौं गनिकादि अजामिल सब पतितन ते न्यारो।
नाम पतितपावन तव शंकर कागभुसुंडि उचारो।
रामलोचन पर करहु कृपा अब जाउँ कहाँ तजि चरन तिहारो॥[2]



अक्षयकुमार[3]

आपका जन्म सं० १९०० वि० (सन् १८४३ ई०) के माघ मास में, मुजफ्फरपुर जिले के 'बाथी' नामक प्रसिद्ध स्थान में हुआ था।[4]

---

१ परिषद् के प्राचीन-हस्तलिखित-पोथी-विभाग में सुरक्षित 'श्रीरामनामावली' की प्रतिलिपि से।
२. वही।
३. प्रस्तुत परिचय मुख्य रूप से श्रीरघुनाथप्रसाद 'विकल' (मिरजापुरी, पटना) से प्राप्त सूचना के आधार पर तैयार किया गया है।
४ 'मैथिल देश सीतामढ़ी जनम भये एक ग्राम। बाथी नाम प्रसिद्ध है जहाँ जन्म को धाम॥'
—'रसिकविलास रामायण' (अक्षयकुमार प्रथम सं०, सन् १९१९ ई०) पृ० १।

आपके पिता का नाम श्रीनन्दलाल सिंह और पितामह का श्रीमहताब सिंह था। आपके दो पुत्र हुए—श्रीकामताप्रसाद और श्रीविन्ध्याप्रसाद। इनमें द्वितीय आज भी जीवित हैं। प्राचीन पद्धति से शिक्षित होने के कारण आप हिन्दी के अतिरिक्त फारसी और उर्दू के भी एक अच्छे ज्ञाता थे। आरम्भ में बहुत दिनों तक आपने हाजीपुर की मुन्सिफी अदालत में वकालत की। इसके बाद अपने चचेरे भाई की 'रियासत'[1] में मैनेजर नियुक्त हुए।

आपके यहाँ फारसी-उर्दू के अतिरिक्त हिन्दी-संस्कृत-पुस्तकों का भी बड़ा विशाल संग्रह था। वस्तुतः, इसी संग्रह के कारण आप साहित्य के अध्ययन और पुस्तक-लेखन में प्रवृत्त हुए। आप एक धार्मिक प्रकृति के व्यक्ति थे। साहित्य-क्षेत्र में प्रवेश के प्रारम्भिक दिनों में ही आपने श्रीराम के बाल-चरित पर कुछ स्फुट कविताओं की रचना की थी। उसी के प्रसार-स्वरूप आपने आगे चलकर अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'रसिकविलास रामायण' की रचना अपने ज्येष्ठ भ्राता के आज्ञानुसार की, जो प्रकाशित भी हुआ।[2] आपने 'वर्णबोध' नाम से एक छंदोबद्ध हिन्दी-व्याकरण की भी रचना की थी, जो दुर्भाग्यवश अभी तक अप्रकाशित ही है। आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ मिलती हैं।[3]

आप सन् १९०१ ई० में २ मार्च को परलोकवासी हुए।

उदाहरण

(१)

राघो जी अनुज-सहित कौसिक मुनि संग में
मैथिल-पति नग्र निकट जैसे हि पधारे हैं,
शोर भयो शहर में अद्भुत छवि छटा देखि
देखन हित वृन्द वृन्द आइ के जुहारे हैं।
गिरत काहु भुकत काहु सरसरात पांव धरत
देह को न खबर जानि परत मतवारे हैं,
निरखत विदेह को ब्रह्मज्ञान विसरि गये
डूबे मन पेमनिधि मिलत ना किनारे हैं ॥[4]

---

१ इस 'रियासत' के मालिक थे बिहार-विश्वविद्यालय के भूतपूर्व वाइसचांसलर और केन्द्रीय संसद्-सदस्य रायबहादुर श्यामनन्दन सहाय के पूर्वज। —सं०

२ इस ग्रन्थ का प्रथम संस्करण खड्गविलास प्रेस (बाँकीपुर) से छपकर सन् १९०१ ई० में आपके ज्येष्ठपुत्र तथा सायंस कॉलेज (पटना) के भूतपूर्व प्राचार्य श्री कामताप्रसाद द्वारा प्रकाशित हुआ था। सन् १९३१ ई० में इसका दूसरा संस्करण प्रकाशित हुआ। —सं०

३ आपकी रचनाओं की सुरक्षा के लिए आपके पौत्र श्रीमुरलीधरप्रसाद (राँची-विश्वविद्यालय, राँची) तथा पौत्री श्रीमती मल्लिका (कलकत्ता पटना) प्रयत्नशील हैं। —सं०

४ 'रसिकविलास रामायण (बाल) पृ० ४१।

(२)

कामिनी को सैन आज जुर्यो है विदेह नगर
चितवन को तीर चढ़े भृकुटी कमानों पर,
सास-फूल आदि वहु भूषण सँवारे सिर
सारी जरतारी लहरा रहो निशानों पर।
चाहती है वार करन देखति सब दाव-घात
खैंचति कमान ताकि ताकि श्रेष्ठ बानो पर,
जैसेही रघुवीर को छूटी एक नैन बान
घायल-सो घुमो गिरि अपने ठेकानो पर।[1]

(३)

जनक-नन्दनि विलोकि रघुवर घनश्याम-रूप
नैनन में लाय प्रेम-विवस पलक डार ली,
प्यारे के रूप को विलोके नहिं और कोउ
और रूप देखूं नहिं याही व्रत धार ली।
बीती वहु काल सङ्ग सखियाँ सशक भई
बोली उठि हाहा यह करत काह लाडली
किन्ही काहु टोना कि डिठौना काहु डारि दिन्हि
सुनि सङ्कोच लाज विवस नैन तब उघार ली॥[2]

(४)

कह्‌ केवट क्यों अनरीत करो हमको उतराइ में जो कुछ देहो।
कहुँ लेत हैं नाई से नाई कछू मोहि जाति के पाँतिनि ते निकसैहो॥
भवसिंधु अगाध कि घाट तुम्हे यही घात कि जौं उतराई चुकैहो।
जब जाब तुम्हारे घाट प्रभु तब तो हमरे मुंह में मसि लैहो॥

१ "रसिकविलास रामायण" (वही) पृ ४२।
२. वही पृ० ६।
३. वही, पृ १५।

(२)

हरषे हनुमंत सुनत बानी । अलेस की सम्मति मन आनी ।।
धरि रूप विशाल भये ठाढ़े । प्रजलित तन तेज प्रभा बाढ़े ।।
कहि बसहु इहाँ दुख सहि तबलौं । सीता-सुधि मैं लाऊँ जबलौं ।।
जय जानकि जीवन कहि धाये । गिरि गहन सिखर पर चढ़ि आये ।।[1]



शिवप्रकाश लाल

आप सारन जिले के 'अपहर'-ग्राम के निवासी थे।[2] आपका जन्म सं० १९०० वि० (सन् १८४३ ई०) में हुआ था।[3] आप डुमराँव-राज के प्रतापी दीवान जयप्रकाश लाल के अनुज[4] और एक बड़े ही धार्मिक प्रकृति के व्यक्ति थे। आपके द्वारा रचित निम्नांकित हिन्दी-पुस्तकों का पता चलता है—

(१) मानसतरंग-संपुट, (२) भजन-रसामृतार्णव, (३) विनयपत्रिका टीका, (४) गीतावली टीका, (५) रामगीता टीका और (६) हरिहाय-लहरी।[5] आपकी रचना का कोई उदाहरण नहीं मिला।



हरिनाथ पाठक

आपका जन्म गया जिले के 'पाठकबिगहा' नामक ग्राम में, सं० १९०० वि० (सन् १८४३ ई०) में, मार्गशीर्ष कृष्ण-प्रतिपदा (सोमवार) को, हुआ था।[6]

---

१ वही पृ ६७।

२ 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही तृतीय भाग) पृ ११६८।

३. डॉ० ग्रियर्सन ने आपका जन्म-काल सन् १८८४ ई० बतलाया है। —देखिए, डॉ० ग्रियर्सन-कृत 'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (सं० किशोरीलाल गुप्त, प्रथम सं०, सन् १९५७ ई०), पृ २७७।

४ 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही) पृ० ११६८।

५ मिश्रबन्धुओं ने आपकी रचनाओं में भ्रमवश डुमराँव के महाराज शिवप्रसाद सिंह की कई रचनाओं को सम्मिलित कर दिया है। ऐसा भ्रम और भी कई स्थानों में दीख पड़ता है। —देखिए, वही।

६ आपके पूर्वज आज से लगभग दो सौ वर्ष पूर्व मुसलमानी शासन-काल में, अत्याचार-पीड़ित हो, अपनी वंशानुगत जन्मभूमि गाजीपुर (उत्तरप्रदेश) छोड़ गया-जिले में आ बसे। गया में आने पर उनकी मुलाकात टेकारी के राजा से हुई, जिन्होंने उनकी विद्वत्ता से प्रसन्न होकर जहानाबाद सब-डिवीजन के 'विशर' ग्राम (गया) के निकट 'भदवा' ग्राम (गया) में १ १ बीघे जमीन दे दी। आगे चलकर उन्हें देवघरा-राज्य (गया) से भी कुछ जागीर प्राप्त हुई। उसी जागीर में 'मुनमुन' नदी के तीर पर सर्वप्रथम उन्होंने अपना निवास-स्थान बनाया, जिसका नाम रखा 'पंचानीगा'। कुछ दिनों बाद जब वह स्थान मुनमुन नदी के गर्भ में चला गया, तब मुनमुन से और भी दूर हटकर उन्होंने 'पाठकबिगहा' ग्राम बसाया। —श्री रघुनाथ पाठक (जिला स्कूल मुजफ्फरपुर) द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर।

आपके पिता का नाम था पं० शिवराम पाठक। आप पाँच भाई थे। पाँचों में आप तीसरे थे।[1] तेरह वर्ष की अवस्था में 'बेलविगहा' ग्राम के पं० शोभानाथ पाठक की कन्या से आपका पाणिग्रहण-संस्कार हुआ था। किन्तु, आप अल्पकाल में ही विधुर हो गये। तब से ईश्वर भक्ति की साधना में ही आपके दिन बीते। आपका बचपन बहुत ही कष्ट में व्यतीत हुआ। पिता की आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण आपने गया जिले के मकसूदपुर नामक ग्राम में, अपने गुरु के यहाँ रहकर प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त की। कुछ दिनों तक विद्याध्ययन के लिए आपको कटक (उड़ीसा) भी जाना पड़ा था।

शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् आपका सम्पूर्ण जीवन एक प्रकार से, टेकारी-राज्य (गया) में ही व्यतीत हुआ। एक दानवीर के रूप में आपकी अच्छी ख्याति थी। गरीबों की सेवा करना आपका प्रधान कर्त्तव्य था। आप बराबर साहिबगंज (गया) के राधाकृष्ण मंदिर में रहकर कृष्ण-भक्ति के पद बनाया करते थे। कहते हैं, रात में आपको भगवान् कृष्ण के दर्शन भी होते थे।

आप ज्योतिष, दर्शन एवं व्याकरण के धुरंधर विद्वान् थे। हिन्दी और संस्कृत-भाषाओं पर आपका अद्भुत अधिकार था। आपके अक्षर बड़े सुन्दर होते थे। संस्कृत में आपने अनेक पुस्तकों की रचना की थी। हिन्दी में आपने श्रीवाल्मीकीय रामायण और श्रीमद्भागवत के जो पद्यानुवाद किये थे, वे 'ललित रामायण' एवं 'ललित भागवत' के नाम से प्रकाशित हुए थे।[2] पुस्तकाकार आपकी तीसरी हिन्दी रचना है—'लक्ष्मनारायण विनोद'। इनके अतिरिक्त, आपने हिन्दी में विशेषकर मगही भाषा में, अनेक स्फुट पदों की रचना की थी, जिनका अब पता नहीं चलता। सं० १९६१ वि० (सन् १९०४ ई०) में आश्विन शुक्ल षष्ठी (गुरुवार) को, कुंभलग्न में आप गोलोकवासी हुए।[3] आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।



बालगोविन्द मिश्र

ज्योतिष-गणना के अनुसार आपका नाम 'कमलेश' पड़ा था। साहित्यकारों के बीच आप इसी नाम से प्रसिद्ध भी थे। आपकी रचनाएँ 'कमलापति', 'बालगोविन्द' और 'गोविन्द' नामों से भी मिलती हैं।

---

१ सभी भाइयों के नाम क्रमानुसार से इस प्रकार हैं—शिवनाथ भवनाथ, हरिनाथ देवनाथ और लक्ष्मीनाथ।

२. ये दोनों पुस्तकें कामेश्वरलाल कुशवाहा चौक, पटनासिटी, के यहाँ से प्रकाशित हुई थीं, पर अब दुर्लभ हैं।
—श्रीनरेन्द्रनारायण सिंह (अंदरपुरा बैरगनिया, मुजफ्फरपुर) द्वारा प्राप्त सूचना के अनुसार।

३. कहते हैं अपनी मृत्यु के पूर्व आपने एक पद बनाकर रख दिया था जिसमें आपकी मृत्यु की तिथि एवं लग्न का उल्लेख था। वह पद भी न मिला।—सं०

आपका जन्म गया जिले के जहानाबाद सब डिवीजन में, अरवल थाने के अन्तर्गत चिलबरा नामक ग्राम में, सं० १६०१ वि० (सन् १८४४ ई०) की चैत्र-शुक्ल प्रतिपदा को हुआ था।[1]

आप शाकद्वीपीय ब्राह्मण थे। आपके पिता का नाम पं० रामबख्श मिश्र और पितामह का नाम पं० कस्तूरीराम मिश्र था। आपका कुल विद्वत्ता एवं सदाचार के लिए अत्यन्त प्रसिद्ध था।[2] आपने अपना विद्यारम्भ अपने पिता से किया। आप उन्हीं से लगातार ग्यारह वर्षों तक वेद, व्याकरण, ज्योतिष और काव्य-साहित्य पढ़ते रहे। इसके पश्चात् काशी जाकर आपने वहाँ के प्रसिद्ध पंडित श्रीबालशास्त्री से व्याकरण एवं धर्मशास्त्र का अध्ययन किया। फिर, आगे चलकर सुविख्यात विद्वान् श्रीगंगाधर शास्त्री के पिता श्रीनृसिंहदत्त शास्त्री से भी काशी में ही आपने साहित्यशास्त्र की शिक्षा प्राप्त की। इन्हीं दिनों आप भारतेन्दुजी के सहपाठी भी रहे। उनसे आपकी गहरी मित्रता थी।[3]

आपने अपने जीवन के बाईसवें वर्ष में अपनी पढ़ाई छोड़ दी। उसके बाद आप काशिराज के यहाँ, रामनगर-दरबार में पाँच वर्षों तक रहे। तत्पश्चात् लगभग तीन वर्षों तक विजयनगरम् के महाराज के संस्कृत विद्यालय (काशी) में आप साहित्य-अध्यापक थे। सं० १९३१ वि० से सं० १९५० वि० (सन् १८७४ से १८९३ ई०) तक आप तीर्थाटन और देशी रजवाड़ों की राजधानियों में भ्रमण करते रहे। सं० १९५१ वि० (सन् १८९४ ई०) में आप श्रीमान् महाराज लक्ष्मीश्वरसिंह के दरबार में मिथिला चले आये, और सन् १८९७ ई० (सं० १९५४ वि०) तक रहे। मिथिलेश के दरबार से लौटकर आप स्थायी रूप से अपने जिले में ही रहने लगे। वहाँ टिकारी के राज-हाइस्कूल में हिन्दी का अध्यापन-कार्य करते रहे। इसी समय बंगाल की संस्कृत-परीक्षा में उत्तीर्ण होकर आपने 'काव्य निधि' की उपाधि प्राप्त की।

आपके चार पुत्र हुए, जिनमें दो (श्रीप्रभाकर मिश्र और श्रीरामचन्द्र मिश्र) का देहान्त सं० १९५९ वि० (सन् १९०२ ई०) में हो गया।[4] शेष दो पुत्र (श्रीनित्यानन्द मिश्र और

१ 'बिहार' (मासिक, सं० १ [illegible] ० वि०, जनवरी सन् १९०४ ई० वर्ष १ अंक १०) पृ० १०७।

२. आपके पिता पितामह एवं बड़े चाचा पं० शिवदत्त मिश्र मन्त्र-विद्या और फलित-ज्योतिष के प्रभूत विद्वान् थे। वे शोध दान में ताड़ों का लेकर पंचांग निर्माण करते थे, जिसे देहात के ब्राह्मण लिखकर ले जाते थे। तालपत्रों पर बनाये हुए पंचांग आजतक उनके वर्तमान वंशजों के पास हैं। उन्हें देखकर उन विद्वानों की विद्या, अध्यवसायशीलता और लगन का परिचय मिल जाता है। आपके पितामह 'निर्णय-सिन्धु' प्रणेता पं० कमलाकर भट्ट के शिष्य थे। आपके बड़े चाचा ने काशी के सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री रामनिरंजन स्वामी से शिक्षा पाई थी। वे बिहारी-राज के प्रधान राज-पंडित और वेद, धर्मशास्त्र तथा ज्योतिष के पारंगत विद्वान् थे। हिन्दी, संस्कृत और फारसी में उनकी रची हुई कविताएँ अच्छी हैं। अपने समय के वे धुरंधर पंडित थे। —सं०

३ इसके प्रमाण में आज भी भारतेन्दुजी के लिखे अनगिनत पत्रादि पर आपके वंशजों के पास वर्तमान हैं। उन पत्रों के देखने से यह भी पता चलता है कि भारतेन्दुजी संस्कृत के पत्र पर भी लिखते थे। वे सब दुर्लभ हैं एवं दुर्लभ हैं। —सं०

४ आपके ये दोनों पुत्र भी उच्चकोटि के विद्वान् थे।

श्रीरघुनाथ मिश्र आदि हैं। इनमें प्रथम से कुछ मतभेद हो जाने के कारण अपने जीवन के अंतिम दिनों में आप पड़ोस के ही 'बाबाटोला' नामक ग्राम में चले गये।[1]

आपका देहान्त सत्तर वर्ष की आयु में, सं० १९९२ वि० (सन् १९३५ ई०) की अगहन-सुदी एकादशी को हुआ।

आप संस्कृत, पाली[2], हिन्दी, अरबी, फारसी, बँगला, मराठी, गुजराती, तमिल, तेलुगु आदि कई प्रमुख भाषाओं के पंडित, संस्कृत-हिन्दी के कुशल कवि और एक सफल सम्पादक भी थे। आपने गजल, विहाग, दादरा, कजली आदि गीतों की रचना संस्कृत में बड़े ललित ढंग से की है। आपकी अधिकांश हिन्दी-रचनाएँ 'बिहार-बंधु', 'पाटलिपुत्र', 'साहित्य सरोवर', 'प्रियंवदा' 'साहित्य चंद्रिका' आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती थीं। अंतिम तीनों का तो आपने सम्पादन भी किया था।[3] आपकी काव्य-रचना से महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह तथा महामना पं० मदनमोहन मालवीय[4] अत्यधिक प्रभावित थे। पुस्तकाकार आपकी कोई हिन्दी रचना नहीं मिली।

उदाहरण

(१)

चारि पदारथ देन के हेत सुचारु सुधार भुजा धरती हौ।
जो तुव भक्त ते बैर करै छिन में तेहि प्रानन को हरती हौ॥
क्यों 'कमलेश' दया करिके दुख दारिद दीनन को दरती हौ।
भारत बैन पुकारत हौं जगदम्ब विलम्ब कहा करती हौ॥[5]

---

१ आपके एकमात्र पौत्र पं० श्रीनारायण मिश्र (साहित्य-व्याकरणाचार्य, पालितीर्थ, [illegible]) ने संवत् २०११ वि० (सन् १९५४ ई०) में आपके 'कमलेशविलासः' नामक संस्कृत काव्य-ग्रन्थ को प्रकाशित किया था। तेरह सौ और [illegible] पृष्ठों का यह मुद्रित ग्रन्थ काव्य-मर्मज्ञों के लिए दर्शनीय है। इसमें भारतेन्दुजी की एक चिट्ठी का चित्र और उन्हीं के रचे संस्कृत के दो पद्य भी प्रकाशित हैं। कमलेशजी की जीवनी भी है। श्रीनारायण मिश्र ने तीस पृष्ठों में अपने 'सम्पादकीय विवेचन' में आपके जीवन और काव्य की विशेषताओं पर हिन्दी में बड़े सुन्दर ढंग से प्रकाश डाला है। इसीमें आपकी पाँच संस्कृत-रचनाओं के सचित्र प्रकाशन की सूचना भी है। उक्त संस्कृत-रचनाओं में एक 'कवित्त-कुसुमांजलि' है, जिसमें आपकी ब्रजभाषा-कविताएँ भी हैं।—सं०

२ पालि-भाषा के तो आप पूर्ण मर्मज्ञ थे। कहते हैं कि त्रिपिटक से उक्त भाषा पर भी कुछ लिखा है; यह कमलेशजी के सौजन्य का ही परिणाम है।—सं०

३ इन दिनों (नव-सम्पादन-काल में) आप पटना नगर के भीखनापुर मुहल्ले में सपरिवार रहते थे।

४ सं० १९७५ [illegible] में इन्होंने आपकी कविताओं से प्रभावित होकर 'श्रीमद्वाल्मीकिरामायण' की एक प्रति आपको पुरस्कार-स्वरूप दी थी।—सं०

५. 'सम्मेलन-पत्रिका' (त्रैमासिक, सं० १९८३ वि० भाग १४, अंक २) पृ० ५२।

(२)

तेरे तात-मात उत बोलि ना पठाये मोहि,
निज मन ते ये नाहिं आवनो सकतु हैं।
द्विज 'कमलेस' इतै गुरुजन मेरे सबै
हाय कतहू त उतै नाहीं पठवतु हैं॥
तुव मव रंग रूप यौवन रसीले बोल
सुमिरि-सुमिरि प्रान जीवन धरतु हैं।
एरी प्रान प्यारी! तेरो विरह-पयोनिधि में,
लाज को जहाज आज बूड़न चहतु हैं॥[1]

(३)

आई करि गौन पंच दिवस रहा पी भौन,
तुरत बिदाई दे जुदाई दुख दैन भौ।
कहि ना सकत कछू लाज गुरु लागन तें
सुखद सुमौन सो कलेस ही को ऐन भौ॥
द्विज 'कमलेस' नेकु चैन दिन-रैन हू न,
गत सुख-सैन भो विनिद्र मृग-नैन भौ।
ती की सुधि रसिक वियोगी उपरोगी भयो,
ललित लला को भीम भोगी मनो मैन भौ॥[2]

(४)

ए अलि, अकेली चारु चम्पक की बारी बीच,
ओढ़ि पट पौढ़ि मैं रही री परजंक मैं।
मंद मंद आय सित नन्द-सूनु औचक ही,
मैन-मदमाते मोहि लीना गहि अंक मैं।
कहत बनैन, पै छिपावती न तोसों कछु,
राच्यो रति-रंग 'कमलेस' निरसंक मैं।
बसिगो हमारो उर अन्तर सु वाके थ्यास,
गसिगो कलंक वाज्हू मो मन-मयंक मैं।[3]

---

१ श्रीगौरीशंकरदत्त मिश्र (भाई) द्वारा प्राप्त।
२. उन्हीं से प्राप्त।
३ वही।

(५)

मन्द मन्द बूँद बरसावैं सरसावैं पीर
उमड़ि घुमड़ि घूमि घेरि आसमानै री।
बिज्जु छिटकावैं चारु चोट चमकावैं तैसो
बिरह जगावैं पिकी-कूक-काम गानै री।
हां तें कढ़ि आनै करि आहल पयानै बानै
बेधै 'कमलेस' बीर बैरी पंच बानै री
अरज न मानै नेकु हरज न वाको अरु
गरज न जानै मेघ गरज न जानै री॥[1]

(६)

मोरैं आजु आये कित सु-निसु बिताये नाथ
बिनु गुन मंजु मोती-माल कित पाये हैं।
पीक-पंक-चिह्ननि लसाये अलसाये नैन
उर्ज अरुनाये अबै इंदु अति भाये हैं।
कवि 'कमलेस' भाल जावक लगाये लाल
कालिमा सुकज्जल की अधरनि छाये हैं।
सुख सरसाये औ बिनोद बरसाये आजु
मेरो मन भाये बर बानक बनाये हैं॥[2]

(७)

सहज सुबालकों के संग सुख पावैं स्याम
गोधन चरावैं गुहरावैं नाम टेरि टेरि।
आवैं ढिग जे ते नित्य बिबुध बिरोधी तिन्हैं
पकरि पछारि मारैं भूमि रन गेरि-गेरि।
सारदा सुरेस संभु गिरिजा गनेस आदि
गावैं 'कमलेस' जासु गुन-गन फेरि फेरि।
कुंज-बन जावैं, बर बाँसुरी बजावैं राग
रागिनी सुनावैं औ रिझावैं हँसि हेरि हेरि॥[3]

✿

१ श्रीमहेन्द्रचन्द्र मिश्र (बड़ी) द्वारा प्राप्त।
२ उन्हीं के द्वारा प्राप्त।
३. वही।

रामफल राय

आपका जन्म सं० १६०१ वि० (सन् १८४४ ई०) की विजयादशमी को, सारन जिले के 'दाउदपुर'-ग्राम के भूमिहार जाति के एक परिवार में हुआ था।[1] आपके पिता का नाम था भगुनाथ राय, जो बहुनाथ राम के नाम से भी प्रसिद्ध थे।[2]

आप दुर्गा के उपासक थे। कहते हैं, मृत्यु के कुछ काल पूर्व आपका मस्तिष्क विकृत हो गया था।[3]

आपकी गणना हिन्दी के सुकवियों में होती है। आपके काव्य-गुरु थे सारन-जिले (बरौली-थाना) के ऐंठनेनिया-ग्राम निवासी चन्द्रस्वरी कवि।[4] सारन तथा उसके आसपास के भाट लोग आज भी अधिकतर आपकी रची कविताएँ सुनाते हैं। आपके कई छंदों की भाषा पद्माकर की तरह छबी-सँवरी है। अनुप्रास-योजना में भी आप सिद्धहस्त थे। हिन्दी में पुस्तकाकार आपकी दो ही रचनाएँ मिलती हैं—(१) विविध विनोद[5] और (२) पावस-पचीसी।[6]

आपकी मृत्यु लगभग ४५ वर्ष की आयु में सं० १६४५ वि० (सन् १८८८ ई०) के आसपास हुई।

उदाहरण

(१)

लता लागे तरु में तमालन मे पात लागे
सोनो-सोनी छटा छिति पर दरसै लगी।
बोलि-बोलि केकी भेकी द्वन्द्व हैं मचावें सोर
धावा धुरवा के चहुँ ओर दरसै लगी॥
नाहक रिसानी मैं अजानी रितु पावस में
'रामफल' प्यारे बिना पीर सरसै लगी।
दोऊ पद बंदि के गोविन्द गुहराता आज
बुंद-धारि आरिद बुलन्द बरसै लगी॥[7]

---

१ श्रीगणेश कवि (दौलतपुर-मरैया, सारन) द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर। यह ग्राम छपरा-नगर से प्रायः १४ मील पश्चिम सरयू नदी के बायें तट पर स्थित है।

२ श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह (एकौना, शाहाबाद) ने इनका नाम 'भीखराय' बतलाया है।

३ कहा जाता है कि एक दिन स्वप्न में माँ दुर्गा ने आपके कानों में निम्नांकित पंक्ति कही—'या रस की केफ पिअत पड़े कबहुँ न सूर।' तभी से आपका मस्तिष्क विक्षिप्त हो गया। यदि यह बात सही हो, तो यही आपकी अंतिम रचना थी। इसकी पुष्टि मरैया (सारन)-निवासी रामकृष्ण मिश्र नामक किसी व्यक्ति ने इस रूप में की थी—'की लाखा बिसात का गई हार मधुर।' —सं०

४ श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह (वही) के कथनानुसार ये आपके मामा थे। इनका परिचय इसी पुस्तक में अन्यत्र प्रकाशित है।

५ यह पुस्तक अभी तक अप्रकाशित है। इसमें दुर्गास्तव और दुर्गा-स्तुति की कविताएँ संगृहीत हैं।

६ यह पुस्तक भी अप्रकाशित ही है। इसमें वर्षा ऋतु और इसी भावनाविधियों पर कविता बनाये गए हैं।

७ श्रीगणेश कवि (वही) द्वारा प्राप्त।

अँगरेजी-राज के कर्मचारियों के बीच आपकी अच्छी प्रतिष्ठा थी। सन् १८५७ ई० के गदर के बाद राजभक्त होने के कारण आपने दरबारी की प्रतिष्ठा प्राप्त की और महारानी विक्टोरिया की पहली जुबली[1] के दरबार (बाँकीपुर, पटना) में निमंत्रित किये गये। बंगाल प्रान्त के तत्कालीन गवर्नर ने सन् १८७१ ई० में (२७ नवम्बर को) आपको ऑनरेरी मजिस्ट्रेट के पद पर नियुक्त किया था। इसी प्रकार सन् १८७५ ई० में आप रोड-सेस-कमिटी के भी सदस्य बनाये गये।

आपका जीवन बहुत ही सात्त्विक और धार्मिक था तथा आप कट्टर सनातनी थे। विवाह की फजूलखर्ची, तिलक-दहेज की कुप्रथा, बाल विवाह, विधवा विवाह, समुद्र-यात्रा आदि के आप बड़े विरोधी थे, किन्तु छुआछूत, जात-पाँत खान पान आदि में बहुत विचारवान् थे। अपने जीवन के अंतिम दिनों में आप स्वयंपाकी भी हो गये थे और अपनी जमीन्दारी का कुल भार अपने ज्येष्ठ पुत्र ताराप्रसाद को सौंपकर पुनः काशीवास करने चले गये। काशी में ही, ७१ वर्ष की आयु में, सं० १९७१ वि० (सन् १८१४ ई०) में पौष-कृष्ण १० को, १० बजे रात्रि में, पंचगंगा घाट पर आप कैलाशवासी हुए।

आप एक बहुत बड़े विद्याव्यसनी थे। वेद-वेदांग, दर्शन, पुराण, साहित्य आदि प्रायः सभी विषयों का आप सानुराग अनुशीलन करते थे। संस्कृत और फारसी के तो आप मननशील विद्वान् थे ही, आपका विशेष प्रेम हिन्दी पर ही था और उसी की सेवा में आपने अपना समय व्यतीत किया। आपकी रचनाएँ समय-समय पर 'हरिश्चन्द्र-चन्द्रिका' में छपा करती थीं। आपके द्वारा रचित १३ गद्य पद्यमयी पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं, जो अब दुर्लभ हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं—(१) प्रबोधचन्द्रोदय (नाटक), (२) रत्नावली नाटिका,[2] (३) संगीत-हरिश्चन्द्र,[3] (४) संगीत-लता,[4] (५) संगीत-सुधा,[5] (६) नीतिदृष्टान्त रामायण,[6] (७) नीति-दृष्टान्तमाला,[7] (८) वाक्बोध,[8] (९) कजली कल्पाम (१०) आर्यमत मार्तण्ड (११) सिद्धान्त-दर्पण,[9] (१२) वाराणसी-आदर्श[1] तथा (१३) विद्यासुन्दर नाटक। खेद है कि आपकी रचनाओं के अच्छे उदाहरण नहीं मिले।

---

१ यह जुबली १ जनवरी सन् १८७७ ई० को मनाई गई थी।

२. यह एक गीत-रूपक है।

३. यह भी एक गीत-रूपक ही है। इसमें आपका जीवन-परिचय प्रकाशित है। परिषद् के प्राचीन ग्रन्थ-शोध-विभाग में यह सुरक्षित है।

४ यह एक शृंगार-रसात्मक-काव्य है।

५ यह एक भक्ति-रसात्मक-काव्य है।

६ इसमें रामायण पर रचित नीतिमय दोहे संगृहीत हैं।

७ इसमें भी नीति के दोहे ही संगृहीत हैं।

८. यह बहुत दिनों तक बिहार में पाठ्य-पुस्तक थी।

९ यह एक प्रहसन है। यह अप्रकाशित ही रह गया। इसी में बाल-विवाह विधवा-विवाह और सामाजिक कुरीतियों पर अर्द्ध-विचार है।

१ इसमें काशी के तीर्थों की सूची है।

उदाहरण

(१)

नहिं आये कंत हमारा रे सखिया।
जब लगि अली कलि बिकसत नाहीं
तब लगि पंथ निहारा रे सखिया
निसि-दिन बिरह-अगिन तन जारे
नैन भये जलधारा रे सखिया
स्रवत नैन-जल ब्रज-बिरहिन के,
भरि गये नदिया नारा रे सखिया।[1]

(२)

बालेपन से हौं रह्यौं, काशी माँहि स्वतन्त्र।
याके प्रति महिमा भयो, मो प्रति अद्भुत मंत्र॥
हुते ससुर मम योग्यवर, श्री काशी परसाद।
गुन-निधान विद्या बिसद, यामें नहिं किछु बाद॥
तिनके हौं आधीन ह्वै, सुनि बहु बचन विवेक।
आर्य-धर्म-अभ्यास लहि, प्रगट्यो विषय अनेक॥
श्रद्धा बाढ़ी धर्म में, इष्ट देव प्रति चाव।
आदि भूमिका ह्वै गई, सुभट्यो प्रकृत सुभाव॥[2]



उमानाथ मिश्र

आप समकुरा-ग्राम (तारनपुर, पुनपुन, पटना) के निवासी सरयूपारीण ब्राह्मण थे।[3] आपके पिता का नाम था पं० दीनदयाल मिश्र। आपका जन्म आषाढ़ शुक्ल पंचमी को सन् १८८४ ई० में हुआ था। गाँव की पाठशाला और गुरु के घर में आपने संस्कृत की

१ श्रीचंपाप्रसादजी (आरा) द्वारा प्राप्त।
२ उन्हीं से प्राप्त।
३ श्रीयदुनाथ मिश्र (तारनपुर, पुनपुन, पटना) द्वारा प्राप्त परिचय के आधार पर।

(२)

गूँथत है बेनी ढरि-ढरि आत बार-बार
आनन पैं मुकुता सटकि सरसैं लगैं।
बाईं आँख फरकि सरकि जात नीबी कुच
कंचुकी दरकि कै उरोज सरसैं लगैं॥
गाय-गाय चातक जनावे कान्ह-आगमन
सगुन सुहावन अनन्द दरसैं लगैं।
मूँदि मार्तण्ड को घुमड़ि करि घेरि घेरि
बुंद वारि वारिद बुलन्द बरसैं लगैं॥[1]

(३)

सुरसरि जटान है छटान सों विराजमान
गोरे गात पंचमुख चक्षु त्रय लाले को।
धारे कंठ गरल प्रभा सो कहै 'रामफल',
मानों जल बिन्दु कंज अम्बु हू जमाले को॥
फुफके भुजंग अंग अम्बिका अरधंग माहिं
जारे है अनंग उपवीत गर डाले को।
चारो फल देनहार कृपानिधि है उदार
भजु रे मन बार-बार चन्द्रमाल वाले को॥[2]

(४)

गज चर्म को दुकूल सोहै कर में त्रिसूल
जपें हिय मंत्र मूल ओढ़े व्याघ्र छाले को।
भृंगी टेरि गावे औ मसान छार लावे
सबै रागन का गावे रीझे धुनि सुनि गाले को॥
भैरोगन वीरभद्र भयो संगी सैन साजि
त्रिपुर सँहारि चढ़ि वृषभ वृद्ध छाले को।
चारो फल देनहार कृपानिधि है उदार
भजु रे मन बार-बार चन्द्रभाल वाले को॥[3]

---

१ श्रीधरदेव 'ब्रजेश' (वही) द्वारा प्राप्त।
२. श्री दुर्गेश्वर प्रसाद सिंह (वही) द्वारा प्राप्त।
३. उन्हीं से प्राप्त।

(४)

पीत पटा छाजत छटा नील निचोल अमोल।
तकि-तकि छवि छकि-छकि दुहुँनि झूलत रंग हिंडोल ॥
ज्यों-ज्यों बरसत मेह सखि त्यों-त्यों सरसत नेह।
परसत प्यारी के पिया प्यारी पिय को देह ॥[1]

(५)

पीत बसन प्यारे पहिरि, प्यारी हरित दुकूल।
रंग हिंडोलै रचि दियो, जानि समै मुद-मूल ॥
झूलत झुलावत सखि-सखा, गावत राग मलार।
केलि भवन बन-कुंज मे, दम्पति करत विहार ॥[2]

✿

व्रजविहारी लाल

आप शाहाबाद जिले के मदुकपुर-ग्राम के निवासी थे।[3] आपका जन्म उक्त ग्राम में ही, सं० १९०१ वि० (सन् १८४४ ई०) में, अगहन सुदी ६ को, हुआ था।

आपके पिता का नाम था पं० गुरुप्रसाद पाण्डेय। आपके पूर्वज पहले मौजा रानीपुर परगना अमोढ़ा, जिला गोरखपुर के निवासी थे।[4]

आपकी शिक्षा फारसी और उर्दू से आरम्भ हुई थी। आपका विवाह बचपन में ही हो गया। विवाह के पश्चात् आप अपने श्वशुर बा० काशीप्रसादजी[5] के साथ काशी में ही रहने लगे। उन्हीं की प्रेरणा से आप संस्कृत और हिन्दी के अध्ययन की ओर प्रवृत्त हुए। एक प्रकार से वे ही आपके काव्य-गुरु थे। काशी में रहते समय आपका परिचय हिन्दी-उन्नायक भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रजी से हुआ। उन्होंने साहित्य रचना की दिशा में आपको बड़ा प्रोत्साहन दिया। सं० १९१७ वि० (सन् १८६० ई०) में, अपने पिता की मृत्यु हो जाने के पश्चात्, आपको पुनः मदुकपुर वापस आकर परिवार का भार सँभालना पड़ा।

---

१ [illegible] द्वारा प्राप्त।
२. श्रीपुरुषोत्तम 'विशारद' ([illegible]) द्वारा प्राप्त।
३ श्रीरामानन्द ([illegible], काशी) द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर।
४ ये लोग [illegible] श्रीवास्तव दूबे-ब्राह्मण थे। मुसलमानी शासन-काल में इस वंश की बड़ी प्रतिष्ठा थी। ये लोग अमोढ़ा और उसके आसपास के भू-भाग के मालिक थे। [illegible] के कारण [illegible] से शाहाबाद-जिले में गंगा-तट पर मदुकपुर नामक ग्राम बसाकर रहने लगे।—सं०
५ ये भी एक अच्छे विद्वान् और कवि थे। काशी में मिसिलख्वाँ थे।

उदाहरण

(१)

मधुप अधीर छिन धीर न गहत नेक
बावरो सो चपल सुवास-रस पावै ना ।
सुमन सरोज जूही मालती का दूर करि
सेमर सो आसा भूरि पूरि कहूँ लागै ना ॥
कौने-कौन ठौर 'ठग' कादर कपूत फँस्यो
कछु इनकार आत विषम-राग रागै ना ।
चरन-सरोज विन्ध्यवासिनी निहारे छोड़ि
मधुप हमारा मन और कहूँ भागै ना ॥[1]

(२)

जेते जगतीतल में प्रकट चराचर हैं
जिन्हें निज जानि नेह अँखियाँ दरस तू ।
कहे 'ठग' स्वेत जस छायो लोक-लोकन में
जीवन के मूल याते सबमें सरस तू ।
जाचक निहाल करी पौरे-पौरे जाय-जाय
नेह भरे नैनन सों प्रीतिहू परस तू ।
करों करजोरे जगदम्ब या अरज तोसे
निज-पद-भक्तन पै भक्ति ही बरस तू ॥[2]

(३)

ननदी औ जेठानी करैं घर बैर कमोरिन मैं रंग बोरियो ना ।
इत भाई हूँ सास की प्यारी भई हम पाव परैं झकझोरियो ना ।
रस रंग सुढंग करो हित सों 'ठग' नेह तें तो मुख मोरियो ना ।[3]
यह मानिये मोरी निहोर भला तुम लाल गुलाल सों बोरियो ना ॥[4]

---

१ 'मातृचरित्र-चम्पू' (वही), पृ० १० ।

२ वही ।

३ इस पंक्ति में अन्यत्र भी यत्र तत्र इस प्रकार मिलता है— 'नेह करे मुख मोरियो ना' —देखिए, 'पुष्प' (वही) पृ० २ ।

४ 'मातृचरित्र-चम्पू' (वही) पृ० ६२ तथा 'पुष्प' (वही) पृ० ५-७ ।

(४)

'ठग' पापी प्रपूत कलंकी तऊ पर कंटक से झकझोरियो ना।
नित ही पट सत्रु जो मेरे अहैं तिनको निज फंद सों छारियो ना।
मम सारी कुबानिन को सुनिकै मम हाय हिये विष घोरियो ना।
जगदम्ब भरोसो यहा तुमरो भव वारिधि में हमें बोरियो ना॥[1]

*

बनवारीलाल मिश्र

आप भागलपुर के शाहजंगी मुहल्ले के निवासी कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे।[2] आपका जन्म सं० १९०२ वि० (सन् १८४५ ई०) में हुआ था। आप हिन्दी और देश के अनन्य भक्त थे। मृत्यु शय्या पर पड़े-पड़े भी हिन्दी की पुस्तकें सुनते और देश की दशा पूछते रहते थे। भगवद्गीता, उपनिषदें और तुलसी-रामायण आपकी प्रिय पुस्तकें थीं। साहित्यकारों का सम्मान करने में भी आप अद्वितीय थे। आपने कई सभाएँ खुलवाई थीं। कहते हैं कि आप एक असाधारण साहसी पुरुष थे। जब आप कुल १८ वर्षों के थे, तभी आपने केवल लाठी से एक बाघ को मार डाला था। आपके पाँच पुत्र थे, जिनमें पं० शिवकुमार मिश्र हिन्दी के द्विवेदी-युगीन कवि हैं, जो भागलपुर में आज भी वकालत करते हैं। आपके एक मित्र *भगलू तिवारी*[3] थे, जो सिकारी ग्राम (गया) में निवास करते थे। उन्होंने ही आपको हिन्दी में काव्य-रचना की ओर प्रवृत्त किया। आपकी काव्य-रचनाएँ खड़ीबोली और ब्रजभाषा दोनों में ही मिलती हैं। आपकी पुस्तकाकार रचनाओं के नाम हैं—(१) *ज्ञानविनोद (ज्ञानवाटिका)*, (२) *नाटक, प्रहसन आदि*।

आप सं० १९७४ वि० (सन् १९१७ ई०) को कार्त्तिक सुदी गोपाष्टमी को परलोक सिधारे।[4]

---

१ 'पद्योरत्ना' (मासिक वर्ष ३, भाग २), पृ० ७२-७४ में प्रकाशित श्री जगन्नाथ मिश्र के लेख से। —देखिए, 'पुस्तक' (वही) भी, पृ० ७।
२ 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, चतुर्थ भाग, प्रथम सं० सं० १९९१ वि०) पृ० २०४।
३ भागलपुर-निवासी पं० शिवकुमार मिश्र जी के कथनानुसार आपने अपनी सारी रचना उन्हीं के नाम पर ही की थी। वे कुछ कविता करना भी जानते थे। लेकिन 'श्रीकमला' (मासिक) में लिखा है कि "[illegible]"—देखिए, 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही) पृ० २०४ तथा 'श्रीकमला' (मासिक, दिसम्बर, सन् १९१७ ई०, भाग २, अंक (२), पृ० ४२०।
४ 'श्रीकमला' (वही) पृ० ९५। मिश्रबन्धुओं ने आपका निधन-काल सं० १९७२ वि० (सन् १९१५ ई०) बताया है। —देखिए, 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही), पृ० २०५।

शिक्षा प्राप्त की थी। लेखक के अतिरिक्त आप सफल गणितज्ञ भी थे। आपकी रचनाएँ हैं—(१) गणित-बत्तीसी (२) गणित-शतीसी (३) रेखागणित (४) गणितसार (५) रससार (निबन्ध) और (६) खेती-बारी।[1] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



ठग मिश्र[2]

आप डुमरांव (शाहाबाद) के निवासी शाकद्वीपीय ब्राह्मण थे।[3] आपका जन्म सं० १९०२ वि० (सन् १८४५ ई०) में हुआ था।[4] आपके पिता का नाम था पं० जानकी मिश्र[5] और पितामह का पं० गंगाधर मिश्र।[6] आपके एक अनुज भी थे, जिनका नाम था पं० संग्रहू मिश्र। आपके पुत्र पं० विश्वनाथ मिश्र[7] अभी हाल तक जीवित थे।

आपने यज्ञोपवीत-संस्कार के पश्चात् आपने भाखपुरेवा के पुरोहित पं० ईश्वरदत्त मिश्र से प्रक्रिया व्याकरण (सारस्वतचन्द्रिका) तथा काव्य का अध्ययन किया। इसके बाद आपने जगदीशपुर (जगदीशपुर, शाहाबाद) के म० म० पं० रघुनन्दन त्रिपाठी, विद्यासागर से 'चन्द्रालोकालंकार' और पं० राधावल्लभ चौबसी ('विमलवल्लभ' कवि) से पिंगल तथा ब्रजभाषा के अनेक ग्रंथों का अध्ययन किया। साहित्य का अध्ययन समाप्त कर आप संगीत की ओर प्रवृत्त हुए। इस विद्या में आपके गुरु हुए संगीताचार्य बच्चू मल्लिक। इनके निर्देशन में संगीत शास्त्र का अध्ययन कर आपने सितार और मृदंग बजाने का भी अभ्यास किया।

---

१ ये सभी रचनाएँ पुस्तकाकार में खड्गविलास प्रेस (बाँकीपुर, पटना) से प्रकाशित हुई थीं। 'हिन्दी पुस्तक-साहित्य' (वही) पृ० १८० में उल्लिखित 'रमानाथ मिश्र' आप ही ज्ञात होते हैं, जिनकी 'खेतीबारी' नामक पुस्तक सन् १८८२ ई० में खड्गविलास प्रेस से ही प्रकाशित हुई थी।—सं०

२. आपका यह संक्षिप्त परिचय श्रीनिकुंजनाथ सिंह 'नाथ' तथा श्रीहरदयालमस्तार गुप्त ने भी लिखकर प्रकाशित कराया था।—देखिए, 'माधुरी' (मासिक, वर्ष ६ खंड १, संख्या २ सितम्बर, सन् १९२७ ई०) पृ० २९८ तथा 'पूरब' (साप्ताहिक, वर्ष १५, अंक १५, गुरुवार, सितम्बर, सन् १९३९ ई०), पृ० ५-७।

३. 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, तृतीय भाग) क्रम सं० २२१२ पृ० १२६०।

४ मिश्रबन्धुओं ने आपका जन्म-काल सं० १९०३ वि० (सन् १८४६ ई०) बतलाया है। —देखिए, वही।

५. ये डुमरांव के महाराज महेश्वरबख्श सिंह के दरबारी पंडित थे।

६ ये प्रो० रामधर मिश्र के प्रपितामह थे। इनकी विशेष ख्याति इनकी सुन्दर हस्तलिपि के कारण भी थी। इनके इसी गुण से मुग्ध होकर महाराज जयप्रकाश सिंह ने इन्हें अपने आश्रय में रखा था। इनके दो पुत्र थे—बड़े पं० शंकर मिश्र और छोटे पं० जानकी मिश्र—देखिए, 'ज्ञानचरित-चम्पू' (वही), पृ० १८ ३६।

७. ये व्याकरण तथा ज्योतिष के अच्छे ज्ञाता थे।

आप पहले महाराज रामप्रसाद सिंह के आश्रय में रहकर 'राजकुमारजी' की पूजा करते थे। कहते हैं, उक्त महाराजा के दरबार में आपका बड़ा सम्मान था। किन्तु, कुछ ही दिनों के बाद आप पराधीनता का बंधन तोड़कर देशाटन के लिए निकल पड़े। इस यात्रा-क्रम में आप सबसे पहले दरभंगा पहुँचे। उस समय महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह लाट साहब से खिताब पाने के उपलक्ष्य में अपने दरबार में आनन्दोत्सव मना रहे थे। उस दरबार में उपस्थित होकर आपने अपने आशुकवित्व-गुण का परिचय दिया,[1] जिससे महाराज बहुत ही प्रसन्न हुए और उन्होंने आपको प्रचुर पुरस्कार प्रदान किया। दरभंगा से आप गया जिले के मकसूदपुर के दरबार में पहुँचे। वहाँ के राजा ने आपको एक समस्या दी, जिसकी पूर्ति आपने बड़े ही अच्छे ढंग से की। इस पर राजा ने आपका सम्मान किया। इसी प्रकार अनेक वर्षों तक आप विभिन्न राज्य-दरबारों में भ्रमण करते और पुरस्कार प्राप्त करते रहे। देश-भ्रमण से जो घर लौटे, तो फिर कहीं निकले नहीं। एक सच्चे कर्मकांडी ब्राह्मण की तरह आपका सारा दिन पूजा-पाठ में ही व्यतीत होता था। आप प्रतिदिन त्रिकाल-संध्या-तर्पण और प्रति अमावस्या को पिंडदान करते थे। अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक आप जगदम्बा की पूजा-भक्ति में ही मग्न रहे। दुर्गासप्तशती का पाठ आपका नित्य का नियम था। वासन्ती एवं शारदीय नवरात्रों में विन्ध्यवासिनी भगवती की आराधना के लिए आप प्रत्येक वर्ष विन्ध्याचल धाम जाया करते थे। मकर-संक्रान्ति में प्रयाग भी आप नियमित रूप से जाते थे।

आप फारसी और उर्दू के भी ज्ञाता थे। हिन्दी और संस्कृत के तो आप एक अच्छे पंडित थे ही। प्राचीन कवियों की हजारों कविताएँ आपको कंठस्थ थीं। आप स्वयं भी ब्रजभाषा में बड़ी ही सरस, सुमधुर और रोचक कविताएँ किया करते थे। आप सं० १९५१ वि० (सन् १८९४ ई०) में परलोकगामी हुए।

---

१ उस दरबार में आपने जो पंक्तियाँ कही थीं, वे इस प्रकार हैं—

(क) महाराज आये जब लोक के समाज-युत
केते किते कितै किते जाको मन भायो है।
दियो है खिताब लाट साहब जू जाको ति
एकत्र समाज 'राम' सुख ते सुनायो है।
सीता के समान तीके पुर की पधारे जबै,
[illegible]
आनंद बधाई बाजै लक्ष्मीश्वरसिंहपुर,
मानों रामचन्द्र और भवन सुहायो है।

—'आत्मचरित-चम्पू' (वही) पृ० १२।

(ख) सर्वगुण सुभाषी आर दसी कार्तिकयुक्त सुभाव सुलच्छन।
जाके सुभाव के संग सों सुख पीन है नित्य है दिव्यलच्छन।
जाके करे सुख बाहु करे 'राम' नित्य हरै दुःख-पुंज भाजन।
तिन सुभाव सब कारैत है नीति सौं राज करौ [illegible] पालन॥

—वही पृ० १२-१३।

उदाहरण

काया बीच में आकर बैठा देखत सकल तमाशा है,
देखो यह है अजब खिलाड़ी समझ में नहीं आता है।
पंच पचीसि संग मन डोले तिहूँ लोक भरमाता है,
जहँ-जहँ मनुआ खेल करत है, तहँ-तहँ खेल खिलाता है।
चित माया दोउ नाच नचावत कुल परिवार बनाता है
असे रहत चहुँ ओर से मन को ता बिच आप न आता है।
है वह सदा सबन से न्यारा छाया कर दरसाता है,
मन थिर करके देखहु 'भगलू' आपै आप लखाता है।[1]

❁

गुरुसहाय लाल

आप गया जिले के 'नाविरा' ग्राम निवासी कायस्थ थे।[2] आपके पिता का नाम मुंशी सूरजनारायण लाल था।

आपका जन्म सं० १९०१ वि० (फसली सन् १२५१) में ११ आषाढ़ (१० जून सन् १८४४ ई०) को हुआ था[3]। बचपन से ही आप बड़े शान्त स्वभाव के थे। पाँच-चार वर्ष की उम्र तक आप की प्रकृति एवं प्रवृत्ति विलक्षण रही। किसी ने खिला दिया, तो खा लिया; न माँगते, न हठ करते। भेद का मन आपको छू नहीं गया था। शैशव से ही आपके मन का झुकाव भगवद्भक्ति की ओर था। वाक् सिद्धि का चमत्कार भी आपमें झलकता था। सात-आठ वर्ष की अवस्था में आपने हिन्दी पढ़ना और नागरी लिखना सीखा। उस समय आप अपने पिता के साथ 'नवादा' (गया) में रहते थे, जहाँ के

१ 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, चतुर्थ भाग) पृ० १५।
२ 'कल्पतरु' (मासिक, भाद्रपद, कलकत्ता सन् १९३८ ई०) पृ० ११७।
३. (क) श्रीकेसरीप्रसाद वर्मा 'सत्य' (मुहल्ला... गया ४) द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर। 'कल्पतरु' (वही), (पृष्ठ ११७-१८) में आपका परिचय 'भारत के प्राचीन ...' शीर्षक लेख में छपा है। वह अंक, कलकत्ता, सन् १९३८ ई० (सं० १९९५ वि०) में प्रकाशित हुआ था। उस लेख के लेखक महात्मा ...जी ने लिखा है कि कोई चालीस वर्ष हुए, लगभग ... वर्ष की आयु प्राप्त कर आपने यह नश्वर शरीर छोड़ा। इस हिसाब से आपका जन्मकाल सन् १८२८ ई० निश्चित होता है।—सं०
(ख) 'कल्पतरु' के लेखानुसार आपका जन्म पटना-जिले के 'नाविरा' ग्राम में हुआ था। श्री...जी आपका जन्मस्थान पटना-जिले का 'कोइरा' नामक ग्राम (बिहार के सिवान) बताते हैं।—देखिए 'कल्पतरु' (वही) पृ० ११७ तथा 'बिहार की साहित्यिक प्रगति' (वही), पृ० २११।

मुख्तार थे। यहीं आपने अपने बहनोई मुंशीलालजी से फ़ारसी पढ़ी और 'हरे कृष्णाय गोविन्दाय वासुदेवाय नमोनमः' के जप का पाठ अभ्यस्त किया।

बारह वर्ष की अवस्था में आपकी इच्छा के विरुद्ध आपका विवाह मखदुमपुर निवासी मुंशी मुरलीप्रसाद की पुत्री से हुआ। पर जब चार वर्षों के बाद द्विरागमन हुआ, तब आपका मन सांसारिक माया प्रपंच से विरक्त-सा रहने लगा और आप साधु-संतों की खोज में व्यस्त रहने लगे। आप जिले के 'बराबर' पहाड़ पर भी महात्माओं के दर्शन और सत्संग के लिए जाया करते थे।

एकाएक फ़ारसी की पढ़ाई से भी आपका मन उचट गया। आपकी मनःस्थिति देख-समझकर आपके मुख्तार पिता ने आपको अपना 'सहिद' (सहायक-लेखक) बना लिया। नवादा में ही आपने मौलवी काज़ी सालकयमा खाँ से अरबी पढ़ी। फिर मुंशी रामचरण लाल से पढ़ने लगे। अपने गाँव (नादिरा) में भी मखदुमपुर-सेतहारा (बाढ़, पटना) के मौलवी शुजाअत अली से आपने अरबी का ज्ञान प्राप्त किया। इस तरह विद्याव्यसन से अनुराग बढ़ा, तो अपने पिता से विरक्त और काव्य तथा पं० मतिरामजी से 'सारस्वत व्याकरण' पढ़ने लगे। पं० ठाकुरदत्तजी से आपने श्रीमद्भगवद्गीता पढ़ी। विद्यानुराग-वृद्धि के इसी क्रम में आपने पुनः छः महीनों तक शेखोप्रिया (बिहारशरीफ) के एक नामी आलिम और कामिल फ़कीर मौलवी बशीर उद्दीन से फ़ारसी भी पढ़ी थी। किन्तु आपके मन में वैराग्य का जो उदय हो चुका था, उसका प्रकाश दिन दिन बढ़ता गया। बाबा शोभनदास 'रामजी' नामक एक सिद्ध सन्त के सत्संग से प्रभावित होकर उन्हें अपना गुरु बना लिया। आपका झुकाव क्रमशः सन्त-समाज के सत्संग की ओर होता गया, इसीलिए जीवन निर्वाह के निमित्त कई स्थानों में रहने पर भी कहीं आपका मन टिका नहीं।

आपने कानपुर के महात्मा विश्वम्भरदासजी से नागाम्नाय की दीक्षा प्राप्त की और फिर बाबा गोपकृष्ण भारती को अपना गुरु बनाया। लगभग दस वर्षों तक आप योग साधना में ही लगे रहे। सं० १९६२ वि० में चैत्र-कृष्णपंचमी (२४ मार्च, सन् १९०५ ई०) को ५८ वर्ष, ८ मास और २४ दिन की आयु में आप परम धाम सिधारे।[1]

आपकी लिखी निम्नांकित पुस्तकें प्रकाशित हैं—(१) सज्जन विलास[2] (एक सौ अड़सठ दोहों में सत्संग भक्ति-योग-सम्बन्धी विचार और भजन), (२) निर्वाणशतकम्[3] (एक सौ छत्तीस दोहों में चुने हुए एक सौ सत्यासों की सूक्तियाँ), (३) श्रीगुरुमन विज्ञान[4] (गद्य में अष्टांगयोग, प्राणायाम, खेचरी, षट्कर्म, समाधि आदि का वर्णन),

१ 'कल्याण' के लेखानुसार आप सन् १८६८ ई० में, लगभग सत्तर वर्ष की आयु में साकेतवासी हुए। —देखिए, वही पृ० ६२८।
२ सं० १९९१ वि० (सन् १९३४ ई०) में प्रकाशित।
३ फ़सली सन् १३४२ के भाद्र मास (११ अगस्त, सन् १९३५ ई०) में प्रकाशित।
४ सं० १९९२ वि० में प्रकाशित।

(४) श्रीतत्त्वचिन्तामणि (श्रीमद्भगवद्गीता के 'ऊर्ध्वमूलमधःशाख' श्लोक पर सोलह पृष्ठों की टीका), (५) तत्त्वतरंगिणी (गद्य में लिखित पाँच तरंगों में सृष्टि कला, विभूति, कैवल्य आदि का कथन), (६) अनुभव प्रभाकर (गद्य में लिखित नव प्रकरण), (७) सन्त-मन उन्मनी[1] (रामचरितमानस के बालकाण्ड की टीका), (८) पातंजल योगदर्शन[2] (केवल पाँच सूत्रों का भाष्य) (९) श्रीसद्गुरुग्रन्थराज (दो खंड—एक में पचीस छन्द और दूसरे में इक्कीस), (१०) मानस अभिराम[3] (रामचरितमानस की सड़सठ शुभ प्रयोग विधियाँ—सं० १९६९ वि० में मुद्रित) और (११) परतर अभिधानम् (श्रुति-स्मृति के प्रमाणों के साथ योगादि के गूढ़ रहस्यों का वर्णन)।[4]

उदाहरण

तत्त्वों की दशा स्वांस में स्वर न गये ब्रह्माण्ड में।
निःतत्त्व पद पाया नहीं स्वर्गोदय सधा तो क्या हुआ॥
कोई नासिका हिय त्रिकुटी ब्रह्माण्ड हू जा जा धुसें।
कुछ भी मरम अनबूझ ना अनुभव हुआ तो क्या हुआ॥
अनहद मे सुरती जा लगी आनन्द में जीती पगी।
निज राम की धुन को गम नहीं बाजा बजा तो क्या हुआ॥
पढ़-पढ़ के नाना ग्रन्थ को बूती अहं ब्रह्मास्मि।
अनुभव न तुरीयातीत का बकबक हुआ तो क्या हुआ॥
हिन्दू बने कोउ मुसलमान और पंडित बने कोउ मौलवी।
पाया नहीं पिरतम कभी मजहब मिला तो क्या हुआ॥
पूज्यो जो नाना देवता औ व्रत तीरथ भी किया।
सतगुरु सरन पाया नहीं रच पच मुआ तो क्या हुआ॥[5]



१ बहुनैयक प्रेस (खंजीपुर, पटना) से प्रकाशित।
२ सन् १९०५ ई० में प्रकाशित।
३ सन् १९०९ ई० में प्रकाशित और सन् १९१२ ई० (सं० १९६९ वि०) में मुद्रित।—द्रष्टव्य, 'पटना के लेखक और कवि' (वही) पृ० ५१।
४ इनकी एक पुस्तक फारसी में भी प्रकाशित है— 'सिर्रे अकबरी' जिसमें ६८ शेर हैं। 'गुरुसरन' के नाम से लिखे इनके ४९ भजन भी हैं जो अभी भी अप्रकाशित हैं। —सं०
५ श्रीशिवपूजनसहाय वर्मा 'तप्त' (वही) से प्राप्त।

चतुर्भुज मिश्र[1]

आप गया जिले के कुमरिया-नामक स्थान के निवासी थे। आपका जन्म सं० १९०२ वि० (सन् १८४५ ई०) में, श्रीरामनवमी को, हुआ था।[2]

आपके पिता का नाम था पं० मधुराम मिश्र और पितामह का पं० देवराज मिश्र। आपके एक सहोदर ज्येष्ठ भ्राता भी थे, जो नूनूराम के नाम से विख्यात थे।[3] संस्कृत और हिन्दी की प्रारम्भिक शिक्षा आपको अपने पिता से ही प्राप्त हुई थी। तत्पश्चात् आप लगभग तीन वर्षों तक स्कूल में पढ़े। स्कूली जीवन समाप्त करने के बाद आप कई वर्षों तक गया ट्रेनिंग-स्कूल और हजारीबाग हाई स्कूल के संस्कृत शिक्षक रहे। वहीं से आपने अवसर-ग्रहण भी किया। लगभग पचीस वर्ष की उम्र से ही आप साहित्य-सेवा की ओर प्रवृत्त हुए। गया और हजारीबाग में रहकर आपने प्राचीन काव्य-ग्रंथों का जमकर अध्ययन किया, जिसके परिणामस्वरूप आपने हिन्दी में अनेक ग्रंथों की रचना कर डाली। आप भक्ति-साहित्य के कवि थे। भक्तों के बीच आपकी रचनाओं को आज भी सम्मान प्राप्त है। आपके द्वारा रचित ग्रंथों के नाम इस प्रकार हैं—(१) आल्हा-रामायण, (२) गयाकाशी रामायण, (३) गयाकाशी भागवत, (४) सरोज-रामायण, (५) श्रद्धा आनन्द-कल्लोलिनी, (६) दुर्बोध-सूर्योदय (उपन्यास), (७) मनोहर रामायण, (८) दुर्बोध-चन्द्रोदय (स्वामी दयानन्द सरस्वती के मत का खण्डन) (९) गीता-सार और (१०) विरह-पचीसी। इनमें आपकी प्रथम रचना सर्वाधिक प्रसिद्ध है।[4]

आप सं० १९७५ वि० (सन् १९१८ ई०) में हजारीबाग जिले के 'बोरो' नामक ग्राम में, ७२ वर्ष की आयु में परलोक सिधारे।

उदाहरण

(१)

समय का पायकर मनहुआ, तुरत घर से पधारा है।
मिली पुनि राधिका आकर, जहाँ यमुना किनारा है॥
नहीं कोइ तीसरा महँवाँ, मिले दोउ यार हैं जहँवाँ।
विहरत छोर पै तरुवर, मानो कोटा किनारा है॥

---

१ इस नाम के एक और कवि इसी शती में हो गये हैं जो मिथिला के निवासी थे। उन्होंने मैथिली में कुछ काव्य-रचनाओं के अतिरिक्त मनमोहिनी नामक एक ग्रन्थ का प्रणयन भी किया था। कुछ लोग इनका रचना-काल (१९वीं शती मानते हैं। —देखिए, हिन्दी-साहित्य और बिहार (खंड) पृ० १६४।

२ "तुम नाम लिखि पुनि चतुर्भुज मिश्र संवत् ...।
रामनवमी तिथी, जन्म लीन करतार॥"
—देखिए, 'गयाकाशी भागवत' (पं० चतुर्भुज मिश्र प्रकाशित सन् १९१४ ई० दशम स्कन्ध), पृ० १४४।

३ "चतुर्भुज पितास्तस्य देवराजः पितामहः।
नूनूरामेति विख्यातो ज्येष्ठभ्राता सहोदरः॥
—(वही) पृ० २०४।

४ इसका प्रकाशन वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस (बम्बई) से हुआ था। आपके अन्य ग्रन्थ भी प्रकाशित हैं।

महकते डार पै चिड़ियाँ, मिले इस वास एक विरियाँ।
लगे पुनि गुंजन भौंरा, कुहूँक कोकिल क न्यारा है॥
मिलो ज्यों आँख से आँखे, अधर रस चूमकर चाखें।
चमाचम सीस प बेंदी, उगो जनु सुकतारा है॥
दई गल बाँह कान्हा न, मुकाई सीस राधा न।
लचक गइ अंग प्यारा के, दिया कन्हैया सहारा है॥
अंधारी छा गई रातें, भये त्यो काम स तातें।
मयन के रंग मे राते, भयो चन्दा उजारा है॥
सुनो भुजचार की बातें, भये रस रंग में राते।
चले पुनि गीत को गान, वही यमुना किनारा है॥'

(२)

सीता को सोच भारी, रोने लगी वेचारा।
भूने मुझे खरारी, सुध ना लिया हमारी॥
अब प्रान ही को खोवें, मिलने की आस धोवें।
भर नींद नाथ सोवे, हम बाट कबलो जोवें॥
त्रिजटा ने देख पाई, सपना तुरत सुनाई।
पहरा तुरत उठाई, बैठी किनार जाई॥
हनुमान ने विचारा, कैसे करूँ सहारा।
परतीत हो हमारा, त्यों मुद्रिका किनारा॥
अंगुठी तुरंत डारा, मानो गिरा अगारा।
सीता कर विचारा, टूटा सरग से तारा॥
मन में विचार आई, अंगुठी तुरत उठाई।
यहँ राम नाम पाई, कैसे यहाँ पै आई॥
बनवास का कहानी, हनुमान ने बखानी।
यह बात मैंन जानी, तूही है राम राना॥'

*

१ 'पंथचारी भागवत (वही राम खण्ड) पृ २१।
२. 'मनोहर रामायण (६ चतुर्भुज मिश्र, प्रथम सं सन् १८१४ ई०) पृ २७।

सन् १८७१ ई० में आप काशी से फिर मिथिला चले आये। मिथिला में आने पर आपकी नियुक्ति, मिथिला-नरेश महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह (सन् १८८०-९८ ई०) के दरबार में, राजपंडित के रूप में, हो गई। अपने जीवन के अंतकाल तक आप उक्त दरबार में ही रहे। उक्त दरबार में रहकर आपने संस्कृत में अनेक ग्रंथों का प्रणयन किया। मैथिली में आपके द्वारा रचित ३ नाटक मिलते हैं—(१) उषा-हरण,[1] (२) माधवानन्द[2] और (३) राधाकृष्ण मिलन-लीला। ये सभी नाटक मिथिला के कीर्तनिया-नाटकों की परम्परा में आते हैं। इन्हीं नाटकों के कारण आपका स्थान उक्त परम्परा में अति उच्च माना जाता है। आपके नाटकों में 'उषा-हरण' और 'राधाकृष्ण मिलन-लीला' अत्यधिक लोकप्रिय सिद्ध हुए। 'राधाकृष्ण मिलन-लीला' ब्रज के रासधारियों द्वारा ब्रजभाषा में भी अनूदित होकर कई बार अभिनीत हुआ। उक्त नाटकों के मैथिली-गीतों के अतिरिक्त मैथिली में आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ भी प्राप्त होती हैं। डॉ० ग्रियर्सन ने आपको प्रथम कोटि का मैथिल कवि बतलाया है। आपका निधन, ५१ वर्ष की आयु में, सन् १८९८ ई० में हुआ।[3]

उदाहरण

(१)

अविरल झमझर गरजत घन रस बरिसत रे।
दादुर सङ्कुल रमसल दामिनि चमकत रे॥
तड़ित चमकत जलद गरजत करत दादुर सोर ओ।
तिमिर सङ्कुल करत आकुल निशिथ माडव घोर ओ॥
अवतरु देवकि नन्दन जन सुख चन्दन रे।
सुर नर मुनि चित नन्दन कन्स निकन्दन रे॥
उगल उडुकुल कमल निकर सकल जन सुख कन्द ओ।
मन्द नयन चकोर सम्भव पुरन सारद चन्द ओ॥

---

१ आपने इसकी रचना महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह के शासन में की थी। इसका प्रकाशन श्री [illegible] झा के सम्पादन में 'हर्षनाथ काव्य-ग्रंथावली' के अन्तर्गत हुआ है।—सं०

२. डॉ० ग्रियर्सन-कृत 'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही) पृ० २००।

३ नाटक इसके दो संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। प्रथम संस्करण पं० [illegible] झा के सम्पादन में यूनियन प्रेस (दरभंगा) से और द्वितीय पं० [illegible] झा और डॉ० [illegible] झा के सम्पादन में [illegible] प्रेस (इलाहाबाद) से 'हर्षनाथ काव्य ग्रंथावली' के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ है। इसकी अनेक हस्तलिखित प्राचीन पोथियाँ भी प्राप्त होती हैं।—सं०

अमल कमल दल गञ्जन लोचन खञ्जन रे।
त्रिभुवन आपद भञ्जन जग अनुरञ्जन रे ॥
जगत रञ्जन विपद भञ्जन मदन गञ्जित चान ओ।
नवल जलधर रुचिर तनु बर विजित त्रिगमद मान ओ ॥
मनि मानिक मुकुता कत कञ्चन अभरन रे।
जत छल नन्द भवन धन पाओल गुनि जन रे ॥
तुरग, गज, रथ, कनक, मानिक, रतन, मुकुता माथ ओ।
पावि नट भट गनक घटपट भेल सकल सनाथ ओ ॥
सुर गन सहित पुरन्दर करि सुभ डम्बर रे।
देखल जदुकुल सुन्दर आएल अम्बर रे ॥
बरिस सुर गन कुसुम परसन मुदित पुलकित अङ्ग रे।
देव दुन्दुभि बजत अम्बर होत मङ्गल रङ्ग ओ ॥
नारि छिनाओन वगरिनि कत धन पाओल रे।
हरखित गोपवधू जन सोहर गाओल रे ॥
हरखि गावहिं नगर नागरि हरहिं सुर नर ग्यान ओ।
सुनत खग छिग रहत निश्चल छुटत मुनि जन ध्यान ओ ॥
हरखनाथ मन मन दय हरि परसन भय रे।
करथु नृपति लक्ष्मीस्वर धन जन उपचय रे ॥
हरखनाथ सनाथ करि जदुनाथ त्रिभुवन धाम ओ।
पुरथु मिथिला नगर नायक सफल अभिमत काम ओ ॥[1]

(२)

खञ्जित-विनिन्द सुन्दर वेस। गज गामिनि परवेश ॥
अलक-कलित आनन अभिराम। जनि घन-वलित विमल हिम-धाम ॥
अधर ललित नासा अति सोभ। कीर बइसल जनि बिम्बक लोभ ॥
निरखि जुगल कुच पकज-काँति। चलति रोमावलि मधुकर पाँति ॥

1 Journal of the Asiatic Society of Bengal (vol. 53 Part I Special No 1884), P 92-93

मविकम नूपुर किंकिणि राव। मदन विजय जनि सामग गाव ॥
हर्षनाथ कवि मन दय गाव। नृप लक्ष्मीश्वर सिंह बुझ भाव ॥[१]

(३)

समय बसन्त पिआ परदेस। असह सहब कत बिरह कलेस।
सुमरि-सुमरि पहु न रहय धीर। मदन-दहन तहँ दगध सरीर ॥
मधुर गुञ्जित कुसुमित कुञ्ज। लाग नयन जनि पावक पुंज ॥
शीतल पंकज चम्पक-माल। हृन्य दहय जनि विषधर आल ॥
श्रवन-दहन कोकिल कल गान। चान-किरन तन अनल समान ॥
हर्षनाथ कवि मन दय गाव। नृप लक्ष्मीश्वर सिंह बुझ भाव ॥[२]

(४)

सखि सखि ! ललित समय लखु भोर।
नागर नागरि रहनि रङ्ग कए शयन करए सिय कोर।
धीवर भङ्ग मिश्रङ्क-सरनि चढ़ि शशिकर-जाल पसार।
उडु गण-मीन वझाय चलल जनि गगन पयोनिधि पार ॥
रविकर-कलित तिमिर-पट-मोचन प्रकट अरुण तनुभास।
लाजें पुरुब दिस भुनल कुमुदवश लखि कमलिनि कर हास ॥
मलय-पवन-कम्पित तनु कमलिनि कोप-अरुण कय अङ्ग।
उपगत मधुप करय निरादर कुमुदिनि सङ्ग पिसङ्ग ॥[३]
पति वञ्चित रति युवति विकल-मति करति सौति अभिशाप।
पति-गञ्जन सहि विविध वचन कहि करय दोष अपलाप ॥
गुञ्जय मधुप विहङ्गम कूजय शयन कुशल जनि भाख।
'हर्षनाथ' कवि वचन-सुधारस विरल रसिक जन चाख ॥[४]



१ An Introduction to Maithili Language of North Bihar containing Grammar Chrestomathy and Vocabulary (G A Grierson, Extra Number of J.A.S B of 1882, Part II) P 116.

२. वही।

३ इसी पद्य से मिलता-जुलता 'चन्द्रालोक' का यह प्रसिद्ध श्लोक है—

[illegible]।
[illegible] ॥
—देखिए 'चन्द्रालोक' ([illegible], प्रथम भाग प्रथम सं., सं. १९९८ वि०, पृ. १४।

४. मैथिली-लोक-पदावली' (वही) भा० सं० ११, पृ. ५१-५४।

संसारनाथ पाठक[1]

आप 'बाबा रामायणदास' के नाम से प्रसिद्ध थे।

आपका जन्म सं० १९०७ वि० (सन् १८५० ई०) के अगहन मास के शुक्लपक्ष में हुआ था।[2] आप शाहाबाद जिले के 'बड़का डुमरा' नामक ग्राम निवासी भारद्वाज गोत्रीय सरयूपारीण ब्राह्मण थे।[3] आपके पिता का नाम पं० काशीनाथ पाठक[4] और पितामह का पं० देवराज पाठक था।[5] आप सात भाई थे, जिनमें आप सबसे छोटे थे।

आप जब कुल दो वर्षों के थे, तभी आपके पिता का देहान्त हो गया। अतः, आपके पालन-पोषण का भार आपकी माता पर आ पड़ा। आपकी माता ने कुल सात पैसे में आपके लिए 'खालिकबारी' नामक एक फारसी की पुस्तक खरीद दी, जिसके सहारे आपने शीघ्र ही फारसी पढ़ना लिखना सीख लिया। कुछ ही दिनों में उर्दू के सिवा संस्कृत और हिन्दी में भी आपने अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। वास्तव में आप बहुत ही तीक्ष्ण बुद्धि के व्यक्ति थे। आपकी स्मरण शक्ति भी बहुत तीव्र थी।

प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त कर लेने के पश्चात् आपने एक नौकरी पकड़ ली। किन्तु, उसे शीघ्र ही छोड़कर आप चारों धाम की यात्रा करने निकल पड़े। तीर्थयात्रा से लौटने पर लगभग पच्चीस वर्ष की अवस्था में, अर्थात् सं० १९३२ वि० (सन् १८७५ ई०) में, आप पुनः एक सरकारी नौकरी पर चले आये। इस नौकरी के सिलसिले में, सं० १९३४ वि० (सन् १८७७ ई०) से सं० १९५४ वि० (सन् १८९७ ई०) तक, आपने बिहार के कई महत्त्वपूर्ण स्थानों का भ्रमण किया। इस समय तक आपका विवाह हो चुका था। जब आप आरा में थे, तब एक दिन अपने भतीजे की पत्नी की एक छोटी-सी बात पर[6] आपको अपने घर से विरक्ति हो गई। अतः, निश्चित समय के पूर्व ही, अर्थात् सं० १९५५ वि०

---

१ आपका प्रस्तुत परिचय हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ साहित्य-सेवी एवं ओजस्वी वक्ता लाला सिंह 'कविकिंकर' (दलसिंहपुर-मरौना, सारन) द्वारा लिखित आपकी जीवनी के आधार पर तैयार किया गया है।—देखिए, 'सुधा' (मासिक वर्ष ३ खण्ड २ संख्या ६ जुलाई सन् १९३० ई०) पृ० ६८७-९१।

२ वही, पृ० ६८७। आरा-निवासी श्रीराजकुमारजी आपका जन्म सं० १९०२ वि० (सन् १८४५ ई०) के अगहन मास के शुक्लपक्ष में हुआ बतलाते हैं।—'परिषद्' में उनके द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर।

३ आपके पूर्व-पुरुष पहले बलिया-जिले के 'मुरारपट्टी' नामक ग्राम में वास करते थे। लगभग दस-बारह पुश्त पहले वे वहाँ से 'बड़का-डुमरा' चले आये।—देखिए, 'सुधा' (वही) पृ० ६८७ तथा 'भोजपुरी के कवि और काव्य' (वही) पृ० २१२।

४ ये बड़े ही धार्मिक पुरुष थे और आरा की फौजदारी कचहरी में मुख्तार थे।

५ ये भी एक बड़े धार्मिक व्यक्ति थे। जिस समय रेल का नाम न था, उस समय इन्होंने पैदल ही भारत के सारे तीर्थ-स्थानों के दर्शन किये थे।

६ —देखिए, 'सुधा' (वही), पृ० ६८८।

(सन् १८८८ ई०) में अपनी नौकरी से त्यागपत्र[1] देकर आप घर से निकल पड़े
कहते हैं, जब आप जगन्नाथपुरी जा रहे थे, तब बालेश्वर में बहुत बीमार हो गये किन्
श्रीहनुमान्जी की कृपा से शीघ्र ही स्वस्थ हो गये।

आप बड़े सरलहृदय निःस्वार्थ, परोपकारी और धर्मनिष्ठ व्यक्ति थे। भक्ति के क्षे
में आपको अविरल सिद्धि प्राप्त थी क्योंकि श्रीसीतारामशरण भगवानप्रसाद 'रूपकला
और श्रीरामाजी जैसे चोटी के संतभक्त[2] भी आपका चरणस्पर्श किया करते थे। संसार से
आपको इतनी विरक्ति हो गई थी कि जब आपके एकमात्र पुत्र के मृत हो जाने पर परिवा
के लोग फूट-फूटकर रो रहे थे, तब आप खँजरी बजाकर भजन गा रहे थे। यों थे तो आ
वैष्णव, किन्तु आपका विश्वास था कि अपने धर्म के अनुकूल काम करनेवाला चाहे किस
भी मत या सम्प्रदाय का क्यों न हो, सबमान्य है। आप हिन्दू और मुसलमान दोनों क
अपने-अपने धर्म के अनुकूल आचरण करने का उपदेश देते थे। इसी कारण, आपका म
कुछ-कुछ कबीर से मिलता जुलता है।[3]

आपने हिन्दी में साहित्यिक रचनाएँ भी की थीं। साहित्य में निश्चय ह
आपकी अच्छी पैठ थी, क्योंकि शीतलपुर-बरेजा (सारन) के लब्धकीर्ति साहित्यसे
श्रीदामोदरसहाय सिंह 'कविकिंकर' आपको ही अपना साहित्यिक गुरु मानते थे। आपक
रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं—(१) महामारी निवारण-स्तोत्र,[4] (२) कलिफनामा,[5]
(३) दोहावली, (४) कविता-कुंज, (५) भजनावली, (६) शब्दगीतावली, (७) शत शिक्षा

---

१ नौकरी से त्यागपत्र देते हुए आपने निम्नांकित पंक्तियाँ कही थीं—

"अब जिन आवहु नौकरी कचहरिया।
'क' से काम 'च' से चल किया 'ह' से हरि नहिं भावे नजरिया
'री' से रिस निस आपन देखत नहिं धर्म है औरो नजरिया।
लिखि लखी लखाईं न पातक तन भरे लख लाख के गँठरिया
दास रामचरण हरि नहिं तेरी अब भजौंगे राम सांवरिया।"

—'सुधा' (वही) पृ० १८६

२ इन दोनों संत भक्तों में से प्रथम का परिचय इसी पुस्तक में अन्यत्र देखिए। द्वितीय का परिच
अगले बत्तीसवें-खण्ड में रहेगा। —सं०

३ ग्राम भी सेमपुर (छपरा-मुजफ्फरपुर सड़क) में आपकी स्मृति में निर्मित एक ठाकुरबाड़ा और ए
शिवालय वर्तमान है। वहाँ एक रामायण विद्या-मंदिर भी है जो 'संगतवाला की मठिया'
नाम से प्रसिद्ध है। —सं०

४ इसका प्रकाशन सन् १६०२ ई० में छपरा से हुआ था।

५ इसका प्रकाशन भी सन् १६०४ ई० में दो बार छपरा से ही हुआ था।

विचार,[1] (८) आत्माराम की नासिका,[2] (९) भक्ति विनोद, (१०) संकीर्तन माहात्म्य, (११) तिलक-माला-महिमा[3] तथा (१२) विचार-पत्रिका ।[4]

आपका निधन सं० १९६८ वि० (सन् १९४२ ई०) में, फाल्गुन-शुक्ल षष्ठी, शनिवार (२१ फरवरी) को, संध्या-समय, ६१ वर्ष की आयु में हुआ था ।

उदाहरण

(१)

हरि-हीरा हरदम हिय धारो ।
सोवत-जागत चलत फिरत निसि-बासर हरि-नाम उचारो ।
हरि-हीरा श्रुति नारद-सारद सेस-महेस गनेस पुकारो ।
मारुत-पूत दूत श्रीहरि के जलधि नाँघि गढ़ लंकहि जारो ।
जन प्रह्लाद स्वादि हरि-हीरा अचल धाम अजहूँ बैठारो ।
वारन-कारन देर न लायो मन-रथ चढ़ि हरि तुरत उबारो ।
लक्षा-गृह रक्षा करि लीन्हीं तनिक ताप नहिं लागु बयारो ।
द्रुपदसुता-हित वसन-वेष धरि सकल सभा मुख कारो छारो ।
कौन कहे हरि-नाम-महातम नेति-नेति कहि वेदन हारो ।
सतयुग-त्रेता-द्वापर-कलियुग उभय लोक जन-सोक निवारो ।
और युगन कछु और भरोसो कलि केवल हरि-नाम सँभारो ।
दास रमायन नाम-सुधा तजि भटकि मरत कत खोजत हारो ॥[5]

(२)

मैं हरि पापिन कर सरदार ।
सुरपुर नरपुर नाग तिहूँपुर छापि गई असवार ।
भावत छींक नीक बातनि सुनि अवगुन केर अगार ।
छापा तिलक माल गर डार्यो विषय-विहंगम जार ।

---

१ यह एक गद्य-रचना है ।
२ यह एक गीति-नाट्य है ।
३ संख्या १ से ११ तक की पुस्तकें सन् १९११ ई० में 'रामायण-ग्रंथावली' में प्रकाशित हुई थीं पर वे उपलब्ध न हो सकीं ।
४ श्री मातेश्वर सहाय सिंह 'कविकिंकर' जी (गाजी)ने इसे आपका "अमूल्य ग्रंथ" बतलाया है जो अभी तक अप्रकाशित ही है ।
५ 'सुधा' (पदी) ६ ५४८-९ ।

सुन्यो अजामिल ब्राह्मन पापी सो मुई कहूँ फार ।
नर्क निगोड़ मोहि मुख मागे सुनतहिँ नाम हमार ।
हमसे तुमसे दाँव पड़ो है को जीतो को हार ।
दास रमायन को जीतहुगे तौ जानौं खेलवार ॥[1]

(३)

साग औ सत्तू मिले सबरी तनि सिंधु के तीन परे रगरी ।
भोजन-पान को हो पथरी अरु ओढ़न को कमरी-कथरी ।
आसन को कुस को सथरी अरु वासन चहौं सरजू-कगरी ।
दास रमायन माँगत है तुलसी कर माल हिय में हरी ॥[2]

(४)

टेक विवेक विभूति को, जानत चातक हंस ।
कै जानै आइ संतजन, अरु सब व्यर्थ प्रशंस ॥
रुपया कबहुँ न लीजिए, रुपया रूप बिगार ।
चाह बढ़ावत जगत में, मान बिडारनहार ॥
कनक कामिनी का तजै, संत जानिए सोय ।
दास रमायन पीजिए, तेहि चरनन को धोय ॥
धन के भागी चारि जन, धरम अगिन नृप चोर ।
प्रथम भाग नहीं देहुगे, तब तीनों सद छोर ॥[3]

(५)

दुनिया सावूद सराय मे कर्मचन्द बढ़ई ने अष्टधातु का पचरंगा मकान कायागढ़ नामी बनाया है जिसकी दीवारें

१ 'सुधा' (वही) पृ ५८ ।
२ वही।
३ वही पृ ५८–६१ ।

तीनकोन हैं। इस चौदह मंजिला इमारत मे महाराजा आत्माराम उर्फ जीवआत्मसिंह बागी सरकार रहते हैं जिनकी रानियाँ महरानी सुमति वो कुमति कुमरी वो दीवान लाला मनुलाल साहब मैनजर हैं। बाबू हरषू सिंह और विषादू सिंह दरबान पहरेदार हैं महारानी लोगो की कनाजक (लौंडी) सुबुधिया और कुबुधिया हमेशा वास्ते फरमा-बरदारी के हाजिर रहती हैं। चुनान्चे महाराज साहब के दिल बहलाने को छ शख्स बबहदे समाजी, जो दर परदे नामागिरामी ठकैत हैं। अपनी-अपनी नटिनी साथ लिये नाच वो तान मे मशगूल हैं। वो महाराज मौसूफ के आगे शुभ अशुभ नामी दो बोतलें धरीं हैं जो आठ किस्म की जड़ियों के अर्क से चुआये गये शर्बत से भरी हैं। इसस कुछ नशादार हो गये हैं। वो गान तान नाच साथ नशेबाजी ऐश अशरत के जारी हैं। इधर से उनके पीछे भेष बदलकर बाबू काहू सिंह कोतवाल बमूजिब एजाजत जनाब यमराज साहब बहादुर अफसर कलांनी हाकिम मजाज अपने दोनों हाथों में स्याह वो सफेद रंग के मुरछल लिये हुए हयात रूपी सफेद मच्छड़ को उड़ा रहे हैं जो इन मच्छड़ों से हजार गुना छोटा बारीक है और जो इस मकान की चौदहवीं छत पर बैठा है। जरा नामी बाघिन सामने चिक्कार कर रही है। वो रोग नामा गोला हर तरफ घहरा रहा है। तो भी हजरत अपनी ऐशबाजी से बेदार नहीं होते। उम्मीद है कि यह दरबार महाराजा बागी साहब का तभी तक है जब तक कि एकझटका इन मुरछलो का उस मच्छड़ को नहीं लगता। मसल मशहूर है कि बन का गीदड़ जायगा किधर।[1]

✿

1 यह मर्यादा लक्ष्मी' के सम्पादक श्री श्रीरामेश्वरप्रसाद सिंह 'अधिविकार' (बरी) से प्राप्त हुआ था। सम्पादक महोदय ने इसे 'विचार रत्न' शीर्षक से पाठकों के मनोरंजनार्थ 'लक्ष्मी' में प्रकाशित भी किया था।—देखिए, 'लक्ष्मी' (मासिक, भाग १४ संख्या १ जुलाई, सन् १९१९ ई०), पृ २०।

सुन्यो अजामिल ब्राह्मन पापी सो सुई कहुँ फार।
नर्क निगोड मोहि मुख भागे सुनतहिँ नाम हमार।
हमसे तुमसे दाँव पड़ो है को जीतो को हार।
दास रमायन को जीतहुगे तौ जानौं सेसवार ॥[1]

(३)

साग औ सत्तू मिले लतरी तनि सिंधु के लौन परे रगरी।
भोजन-पात्र को हो पथरी अरु ओढ़न को कमरी-कथरी।
डासन को कुस को सथरी अरु बासन पर्हों सरजू-कगरी।
दास रमायन माँगत है तुलसी कर मास हिय मे हरी ॥[2]

(४)

टेक विवेक विभूति को, जानत चातक हंस।
कै जानै कोइ संतजन, अरु सब व्यर्थ प्रशंस ॥
रुपया कबहुँ न लीजिए, रुपया रूप विगार।
चाह बढ़ावत जगत में, मान बिडारनहार ॥
कनक कामिनी को तजै, संत जानिए सोय।
दास रमायन पीजिए, तेहि चरनन को धोय ॥
धन के भागी चारि जन, धरम अगिन नृप चोर।
प्रथम भाग नहीं देहुगे, तब तीनों लइ छोर ॥[3]

(५)

दुनिया सायूब सराय में कर्मचन्द बढ़ई ने अष्टधातु का पचरंगा मकान कायागढ़ नामी बनाया है जिसकी दीवारें

१ सुधा (वही) पृ ५६०।
२ वही।
३ वही, पृ ५६०-६१।

तीनकोन हैं। इस चौदह मंजिला इमारत में महाराजा आत्माराम उर्फ जीवलालसिंह बागी सरकार रहते हैं जिनकी रानियाँ महारानी सुमति या कुमति कुमरी वो दीवान लाला मनुलाल साहब मैनेजर हैं। बाबू हरषू सिंह और विषादू सिंह दरवान पहरेदार हैं महारानी लोगों की कनीजक (लौंडी) सुबुधिया और कुबुधिया हमेशा खास परमा-बरदारी के हाज़िर रहती हैं। चुनांचे महाराज साहब के दिल बहलाने को छः अव्वल दर्जे के समाजी, जो हर फन्न नामागिरामी हकीम हैं। अपनी-अपनी नटिनी साथ लिये नाच और गान में मशगूल हैं। और महाराज मौसूफ के आगे शुभ अशुभ नामी दो बादल धरे हैं जो आठ किस्म की जड़ियों के अर्क से धुलाये गये शर्बत में भरा है। इससे कुछ नशादार हो गये हैं। और गाना बजाना नाच साथ नशेबाजी एक अशरत के जारी हैं। इधर से उधर पाँचों भेष बदलकर बाबू काल सिंह कोतवाल बमूजिब एजाज़न जनाब यमराज साहब बहादुर अस्सर कज़ानी हाकिम मजाज अपने दोनों हाथों में स्याह और सफेद रंग के मुखम्मस लिये हुए दिनरात स्याह सफेद कबूतर को उड़ा रहे हैं जो इन कबूतरों से हजार गुना छोटा बाज़ है और जो इस मकान की चौदहवीं छत पर बैठा है। जरा नाना वादित्र आसमान [illegible] कर रही है। यह राग नाना गाना हर तरफ पहरा रहा है। [illegible] से बेदार नहीं होते। उम्मीद है कि यह [illegible] महाराजा बागी साहब का [illegible] है जब तक कि [illegible] नहीं लगता। [illegible] है कि [illegible] जायगा [illegible]।'

*

1 [illegible] (१९[illegible]), पृ० ७०।

यज्ञदत्त त्रिपाठी

आपका उपनाम 'यज्ञ' था। आपकी रचनाओं में कहीं-कहीं 'जगमोहन' नाम भी मिलता है।

आप सारन जिले के 'बछुआ' नामक ग्राम के निवासी एक कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। आपका जन्म सं॰ १९०७ वि॰ (सन् १८५० ई॰) में हुआ था।[1]

आप देखने में बड़े ही सुन्दर थे। आपके शरीर की गठन निराली थी। मृदुभाषी भी आप एक ही थे। गुणज्ञ होने के अतिरिक्त आप सभा-चतुर भी थे। संगीत से आपका विशेष प्रेम था। सितार बजाने में ऐसे प्रवीण थे कि अच्छे-अच्छे सितारियों को परास्त कर डालते थे। मझौली-नरेश राजा खड्गबहादुरमल्ल[2] (लाल कवि) तथा भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजी से आपकी हार्दिक मित्रता थी।

हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत एवं फारसी में भी आपकी अच्छी योग्यता थी। आप शिव के बड़े भक्त थे। वे ही आपके इष्टदेव थे और उन्हीं की भक्ति में रचित आपकी अधिकांश रचनाएँ हैं। पुस्तकाकार आपकी एक ही रचना 'यज्ञलहरी'[3] मिली है। आप सन् १९१४ ई॰ के आसपास परलोक सिधारे।

उदाहरण

(१)

एकटक हेरत न फेरत पलक नैन
मुदित चकोर जिमि चन्द्र छवि ध्याये ते।
नटत मयूर जैसे मन में आनन्द भर्यो
देखि-देखि गगन सघन घन छाये ते।
जैसे गजराज सुख-सिन्धु में मगन होत
भावत न आने रेनु रेवा तन लाये ते।
तैसे 'यज्ञ' जन मन-मधुप प्रमोद भरयो
सम्भु-पद-पदुम-पराग-पुंज पाये ते॥[4]

---

१ पं॰ बालमुकुन्द पाठक 'कुमुद'-लिखित परिचय के आधार पर।—देखिए, 'चाँद' (मासिक, वर्ष ४ संख्या ४ वैशाख सं॰ १९८३ (वि॰) पृ॰ १४ १५।

२ बाबू रामदीन सिंह ने इन्हीं के नाम पर खड्गविलास प्रेस खोला था। पहले-पहल इसमें बाबू साहब की भेंट पत्थर (छापाखाना) में हुई थी जब वे अपने मामा महाराज राधाप्रसाद सिंह (डुमराँव-नरेश) से मिलकर काशी जा रहे थे। वे ब्रजभाषा के अच्छे कवि और हिन्दी के नाटककार थे। रसिककुसुमकुसुम नाटक, सदाशिव, भारत-ललना नाटक आदि इनकी अनेक पुस्तकें खड्गविलास प्रेस से प्रकाशित हुई थीं। बाबू साहब से इनकी प्रगाढ़ मित्रता थी। खड्गविलास प्रेस से आजीवन इनका अविच्छिन्न सम्बन्ध बना रहा।—देखिए, 'हरिऔध अभिनन्दन-ग्रन्थ' (वही) पृ॰ ५११।

३ इसमें शिव की स्तुति पदावली और सवैया छन्दों में की गई है।

४ 'चाँद' (वही) पृ॰ १८-१९।

(२)

अमल अकास त्यों प्रकास चाँदनी की नीकी
जहाँ-तहाँ देखो दल बादल बिलायगो
त्योंही रेनु-रहित अपङ्क अवनी पै कोऊ
कासन को कुसुम विकासन बढायगो।
सिथिल सिखण्डिनि को मढली गह्यो है मौन
मञ्जुल मरालगन जोई गीत गायगो।
दसहूँ दिसा में अरु बासर-निसा में
'जगमोहन' हमारे जान सरद समायगो ॥[१]

(३)

चपक चमेलिन पै चाँदनी पै चन्दन पै
चूतन पै चारु चञ्चरीक चरचंत है।
छायक छपाकर पै छैल छोनि छारन पै
छाजित छतानन पै छबि छलकन्त है।
'यश' जलपात पै जहाँ पै जगमग जोति
जुरय-जोखितानन पै जोबन जगंत है।
लाँबी-लाँबी लट पै लुगाइन पै लालन पै
ललित लता पै लेत लहर बसंत है ॥[२]

(४)

कहँ प्रेम भरे अरवरा मुख ते श्रुति
प्रेम ही की धुनि धारते हैं।
दृग ते लखैं प्रेम ही को दुति को
पग प्रेम ही में मग धारते हैं।
कवि 'यश' जू प्रेमी मिलैं जितही
तित प्रेम की पूँजी पसारते हैं।
धनि वै प्रिय प्रेम-भरे हिय सों
नित प्रेम ही प्रेम पुकारते हैं ॥[३]

---

१ पत्री (पत्री) पृ० १४ १५।
२, ३ वही।

(५)

एरे मन मेरो मैं तोसों कहौं हेरो होय
शंकर को चेरो मानि काटत भव-फन्दे रे।
मग है अँधेरो यहाँ कोई नाहिं तेरो
घोर विपै भागि घेरो सब छाड छल छन्दे रे।
कहै जन 'यश' यहाँ सुख को बसेरो नाहिं
हेरि जनि भूलै नेक गिरदा मख रँदे रे।
एरे मतिमन्दे होय भव ते निरद्वन्दे एक
आनँद के कन्दे भालचन्दे क्यों न बन्दे रे॥[1]



१ वही (पटी), पृ० १४ १५।

द्वितीय अध्याय

[वे साहित्यकार, जिनका जन्म-काल अनुमित है।]

अजितदास

आप आरा (शाहाबाद) निवासी कविवर वृन्दावनजी 'जैन'[1] के पुत्र थे।[2] आरा निवासी मुन्नीलालजी की सुपुत्री से विवाह होने पर आप अपने जन्म-ग्राम से आकर ससुराल (आरा) में ही बस गये। विशेषतः आपको ही पढ़ाने के लिए आपके पिता ने 'छन्दशतक'[3] नामक ग्रन्थ रचा था।[4] आपके पिता 'श्रीरामचरितमानस' की शैली में एक जैन-रामायण भी लिखना चाहते थे, पर लिख न सके। उनके मरने के बाद उनकी आज्ञा से आपने ही उसे ७१ सर्गों तक लिखा। पर असमय काल-कवलित हो जाने के कारण आप भी उसे पूरा न कर सके।[5] इसके अतिरिक्त आपकी अन्य रचनाएँ नहीं मिलतीं। आपकी रचनाओं के उदाहरण भी हमें नहीं मिले।

*

कमलाधर मिश्र

आप रत्नमाला (बगहा, चम्पारन) के निवासी थे।[6] आपके पिता का नाम पं० लक्ष्मीधर मिश्र[7] था। प्रसिद्ध विद्वान्, वैयाकरण और साहित्यसेवी पं० चन्द्रशेखरधर

---

१ इनके परिचय के लिए 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (प्रथम खण्ड पृ० १९४-९२) द्रष्टव्य। इनका मृत्यु-काल सन् १८४८ ई० (सं० १९०५ वि०) के लगभग है। इसी आधार पर यह अनुमान होता है कि आपका जन्म सन् १८२१ ई० (सं० १८७७-७८ वि०) के आसपास हुआ होगा।—सं०

२ साप्ताहिक 'रामराज्य' (आरा, 'जगत-रामायणांक'-[illegible]), पृ० २। मिश्रबन्धुओं ने आपका निवास-स्थान 'बीवपुर' बतलाया है, जो ठीक नहीं ज्ञात होता।—देखिए, 'मिश्रबन्धु-विनोद' (तीसरा तृतीय-भाग) पृ० १०७८।

३ मिश्रबन्धुओं के मतानुसार "छन्दशतक में १०० उत्तम छन्द आदि का कवि ने कहे हैं और प्रत्येक छन्द का नाम उसी छन्द में आ दिया है। यह ग्रन्थ बहुत विलक्षण है। —'मिश्रबन्धु-विनोद' (मिश्रबन्धु, द्वितीय सं० सं० १९८४ वि० द्वितीय भाग) पृ० ८८८।

४ "अजितदास निज सुवन के पठन हेत अभिराम।
श्रीजिनवर सुखदाय को रच्यौ छन्द वर छन्द॥" —'छन्दशतक' की प्रशस्ति।

५ आपके कनिष्ठ पुत्र हरिदासजी ने भी इसे पूर्ण करने का प्रयास किया। किन्तु, दुर्भाग्यवश वे भी वैसा न कर सके। इसकी भी पाण्डुलिपि आरा में हरिदासजी के घर में थी। हरिदासजी के अतिरिक्त आपके दो पुत्रों के नाम थे—मुरलीदास और पुरुषोत्तमदास।—सं०

६ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० ८०-८१।

७ वे भी एक प्रकाण्ड विद्वान् हुए। बेतिया दरबार तथा आसपास के राज्य में शास्त्रार्थ के लिए ससम्मान आमंत्रित होते थे। युद्ध कला में भी वे पूर्ण दक्ष थे। रामनगर-राज्य (चम्पारन) की ओर से प्रथम के समय मीरकासिम के साथ और नेपाल पर चढ़ाई किए हुए अँगरेजी सेना के साथ बड़ी बहादुरी से लड़े थे।
—श्रीमहेन्द्र पाठक 'विशारद' ([illegible], चम्पारन) से प्राप्त दिनांक १२ अगस्त, सन् १९६१ ई० की सूचना के आधार पर।

मिश्र[1] आपके ही पुत्र थे। आप साहित्य, संगीत एवं पाणिनीय व्याकरण के प्रकांड, पण्डित थे। हिन्दी में आपकी कुछ स्फुट काव्य रचनाएँ मिलती हैं। आपकी मृत्यु सं० १९५१ वि० (सन् १८९४ ई०) में हुई थी।[2]

उदाहरण

जहाँ एक ओर चंडी बाहु विक्रम उदंडी।
यहाँ एक ओर दस दानवान उमड़ान।
तहाँ मची घमसान प्रलय काल के समान।
जब चढ़ी भौंह तान झूम झारी कीरपान।[3]

❁

करनश्याम

आप मिथिला निवासी और महाराज छत्रसिंह (सन् १८०८-१९ ई०) के समकालीन थे।[4] कहते हैं, आप पद रचना भी उन्हीं के लिए करते थे। आपने अनेक महेशवाणियों की रचना की थी, जिसमें हर-गौरी के जीवन का अद्भुत वर्णन है। आपके पदों से मिथिला की संस्कृति पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। आपके रचे अनेक सोहर और रास-पद भी लोकप्रचलित हैं।

उदाहरण

पसुपति परम प्रेमाकुल, सजनी गे, नन्दी वदन निहारि।
हाँसू हेज लेल कर, सजनी गे, धाय लए चलल पुर मारि।।
हर गिरिजा संग लागल, सजनी गे, घेरि सुमुखि भेल ठाढ़ि।।
जेहेन उगल नव जलधर, सजनी गे, सुरति याम गेलि बाढ़ि।।
राजकुमारि मठुकि सिर झूकल, सजनी गे, मड़कि देल महि डारि।।
शिव मन बाढ़ल क्रोध अति, सजनी गे, मारल चाह सुतारि।।
हरिभर सुन चुनि काटल, सजनी गे, बाढ़ल युद्ध दिस भार।।
स्खलि गौरि हर थौसल, सजनी गे, कौतुक कयल विचार।।[5]

❁

१ [illegible]
२. इसी आधार पर आपका जन्म-काल सन् १८२०-४ ई० तक अनुमित होता है —सं०
३. 'कल्याण की सर्वरक्षा-भावना' (वही) पृ० १८।
४ 'मैथिली-साहित्यक इतिहास' (वही) पृ० २८४। महाराज छत्रसिंह के दरबार में रहते समय आपकी उम्र अनुमानतः ४०-५० वर्षों से कम न रही होगी। इसी आधार पर यह अनुमान है कि आपका जन्म-काल सन् १८ [illegible] ई० के आसपास होगा। —सं०
५ 'मैथिली-साहित्यक इतिहास' (वही) पृ० २८४।

कान्हजी सहाय

आपका उपनाम 'कन्हैया' था। कुछ लोग आपको 'कान्हजी' भी कहा करते थे।

आप शाहाबाद जिले के 'चमार' नामक ग्राम[1] के निवासी थे।[2] बहुत दिनों तक आप सरकारी अफीम विभाग के एक उच्च-पदाधिकारी थे।[3] संगीत-कला के आप एक अच्छे ज्ञाता थे। आपकी प्रसिद्धि एक कृष्ण भक्त कवि के रूप में भी थी। श्रावणी झूलन और श्रीकृष्णजन्माष्टमी के उत्सव आप खूब धूमधाम से मनाते थे। आपके द्वारा रचित एक पुस्तक 'कन्हाईजी की बधाई' का पता चला है।[4] आपने कुछ स्फुट भजन भी बनाये थे।

उदाहरण

(१)

अति अलबेली नारि सलोनी, सुन्दरी ऐसी भई न होनी।
मुख पर लटकि रही सिर चोटी, चन्द पर रही नागिनी लोटी।
रहे नासा लखि कीर लजाई, चन्दकर मन्द करै मुसुकाई।
खींचि देइ मदन-अनुप-सी भौंहैं, बान तिरछी चितवन मनसौंहैं।
भुजन पर करिकर डारिए वारि, कुचन पर कर श्रीफल बलिहारि।
दुरैं मृगनायक कटि सों वन में, हरैं मदमत्त गयन्द गवन में।[5]

(२)

झूले सँवलिया लाल लली सँग झूले हो।
निरखि कोटि रति मार जुगल छवि भूले हो ॥
प्रफुलित विपिन-प्रमोद सरयु-जल उमड़े हो।
झीनी बूँद परत फुहार घटा घनि घुमड़े हो ॥

---

१ यह ग्राम आरा शहर से कोई आठ मील पश्चिम में स्थित है।

२ श्रीसत्यदेव दुबे (चमार, शाहाबाद) का कहना है कि आप सूर्यपुरा (शाहाबाद) के राजा राजराजेश्वरी प्रसाद सिंह की मृत्यु के समय तक सूर्यपुरा आते थे तब लगभग ८० वर्ष के थे। राजासाहब की मृत्यु सन् १९०१ ई० में हुई थी। इसी आधार पर अनुमान किया जाता है कि आपका जन्म सन् १८२१ ई० के लगभग हुआ होगा।—सत्यदेव दुबे (वही) का [illegible] का पत्र।

३ स्वर्गीय श्रीचतुर्वेद नारायणजी (चमार, शाहाबाद) जो आपके पौत्रिका-दामाद हैं, के कथनानुसार आप अफीम-महकमे के गुमाश्ता थे। यह ओहदा वकीलों डिप्टीओं के बराबर ऊँचा था। —सं०

४ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रन्थशोध-विभाग में आपकी रचनाओं के हस्तलेख सुरक्षित हैं।

५ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रंथशोध-विभाग में सुरक्षित हस्तलेख से।

बोलत सुक पिक चातक दादुर मोरे हो।
भौंरन को गुञ्जार सुनत चित चोरे हो॥
कोउ सखि पेंग झुलावति मोद न थोरे हो।
कोउ मिलि गावति गीत सुप्रेम झकोरे हो॥
गावत गुणमलार समय रस पागे हो।
नाचत 'कान्ह प्रसाद' उमँगि अनुरागे हो॥'[1]

(३)

सोहावनी स्याम रँग की घटा।
कहति परस्पर अवध वधू नई मिलि-मिलि चढ़ि-चढ़ि अटा॥
दमकि-दमकि रहि स्याम घटा महँ चंचल दामिनि पटा।
झूलत पर जनु राम-रंग महँ जानकी छवि की छटा॥
जहँ-तहँ नटनि मयूरन की मृदु चातक पिक की रटा।
मचक पेंग किंकिनि-रव पर जनु लहरत अंचल पटा॥
'कान्ह प्रसाद' अवध बसि फिर का मावत एहि सब भटा।
आजु नयन भरि निरखि लेहु सुख दुर्लभ यह संघटा॥'[2]

(४)

झमकि झुलावो रे हिंडोरे, दृग-तारे दोऊ किसोरे।
कैसी घेरि घटा घन आई, झामे बूँदन की झरि लाई।
पवन झकोर बहे पुरवाई, सरयू लेति हिलोरे॥
बन प्रमोद कुसुमित केहि भाँतो, नभ उड़ि लहर लेति बक पाँतो।
चंचल चपला दुरि-दुरि जाती, बोलत दादुर मोर॥
झिल्लिन की झनकार सोहावन, पिय चातक रव अति मनभावन।
हिय अति देख समाँ भरे सावन, उठत उमंग मरोरे॥
बंट तर डारि हिंडारा नीको, सब अरमान निकारिय जी को।
मूल झुलाइ पिया प्यारी को, जिन है यह चित चोरे॥'

---

१ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रंथशोध-विभाग में सुरक्षित हस्तलेख से।
२, ३. वही।

(५)

बाजहिं बहुविधि रंग-रंग के बाजने
गावहिं कोकिल बैन सुमंगल साजन
साजहिं सुमंगल पूर बहुबासिनि सोहिलो मिलि गावहीं
बहु रतन भूषण बसन कंचन नन्दराय लुटावहीं
हमहूँ सखि सुधि पाइ सही सुधि भोर तें
एक कही अस बात आइ नृप पौर तें
नृप पौर ते एक कहेउ अब जुग जाम बीति जामिनी
एक स्यामसुन्दर सुघर सुत जाया महर की भामिनी
जौं सुधि है यह साँच सखी हमहूँ चलें
साजि सोहिलो भेंट महरि सँग जा मिलें
मिलि महरि सो धनि धन्य कहि-कहि सोहिलो मिलि गाइए
पुर नागरिन मिलि गाइ अनँद-बधाव अति सुख पाइए ॥[1]



कान्हारामदास

आप मिथिला निवासी कर्ण कायस्थ थे।[2] आपके पिता का नाम था हलधरदासजी, जो 'सुदामाचरित' के रचयिता हिन्दी-कवि हलधरदास से भिन्न व्यक्ति थे। आपने 'गौरीस्वयंवर' नामक एक नाटक की रचना, मिथिला के कीर्तनिया-नाटकों की परम्परा में, सं० १८९९ वि० (सन् १८४२ ई०) में, की थी।[3] गौरी शिव-परिणय पर लिखित इस नाटक की गणना उस परम्परा के सुन्दर नाटकों में होती है।

उदाहरण

कहिअ नाथ मुनि बात हमें नहि बूझल।
ई कहि हेमल-पियारि पिआ-पद गहल।
घर-वर-कुल-परिवार बिमल जौं पाबिअ।
गौरि-जोग वर होए बिवाह कराबिअ ॥

१ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रंथशोध-विभाग में सुरक्षित हस्तलेख से।
२. 'History of Maithili Literature (J Mishra, Vol. I, 1949) P 195.
३. आपका रचना-काल सन् १८४२ ई० है, अतः आपका जन्म सन् १८००-१८०५ ई० के लगभग हुआ होगा, ऐसा अनुमान है। —सं०

गौरि रहति कुमारि से वह सहब।
भूत कुबेस भिखारि हमें हमे नहिं करब॥
प्रान पिआरि दुलारि उमा पहु जानिअ।
वेहन करिअ वर जेहि देखि सुख मानिअ॥
सोच बिसारि पिआरि एम सुमरु मन।
से करि होए कल्यान 'कान्हाराम' भन॥[1]



कामदमणि[2]

आपका जन्म गया जिले के एक ब्राह्मण-परिवार में हुआ था।[3] आरम्भिक अध्ययन के पश्चात् आपने कुछ समय तक गार्हस्थ्य-जीवन व्यतीत किया, जिससे आपको एक पुत्री हुई। उसके पश्चात् आप सपरिवार अयोध्या चले गये और सख्य भाव का 'सम्बन्ध लेकर' रामसखेजी की तपोभूमि 'मृगराघव-कुंज' के समीप रासकुंज में रहने लगे और आजीवन वहीं रहे। वहाँ आपका अधिकांश समय साहित्यानुशीलन और धर्मोपदेश में ही व्यतीत होता था। नवसख्य भाव के भक्त होते हुए भी आपने अन्य भक्ति-रसों का मनोयोगपूर्वक अध्ययन किया था। हिन्दी के भक्ति-साहित्य में आपकी गहरी पैठ थी।[4]

आप संस्कृत और हिन्दी दोनों में रचनाएँ करते थे। हिन्दी में आपकी दो महत्त्वपूर्ण रचनाएँ मिलती हैं—(१) 'पंचमाधिकारी के स्वपद रस' और—(२) 'केशव कहि न जाय का कहिये'।[5] आप सं० १९७५ वि० (सन् १९१८ ई०) में परलोकवासी हुए।[6]

१ 'History of Maithili literature' (वही) P 195

२. आपका प्रस्तुत परिचय 'रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय' नामक ग्रंथ के आधार पर तैयार किया गया है। —देखिए, वही, पृ ४११।

३. वही।

४ कहते हैं आपसे मिथिला से प्रस्थित होकर बघेलखण्ड और बुन्देलखण्ड के [redacted] राजाओं ने आपसे दीक्षा ली थी।

५ इस ग्रंथ में गोस्वामी तुलसीदासजी की 'विनय-पत्रिका' के एक अंतिम पद की व्याख्या की गई है।

६ सन् १९१८ ई० में आपका शरीरपात कम-से-कम अस्सी वर्ष की आयु में हुआ होगा; क्योंकि संत-महात्मा प्रायः दीर्घायु होकर देह-त्याग करते हैं। इस हिसाब से आपका जन्म अनुमानतः सन् १८३८ ई० में होना चाहिए। —सं

उदाहरण

(१)

स्वस्ति सखा श्री सहित श्री, जानकी-जीवन धाम।
पहुँचै पाती लसित यह, कनक-भवन आवास॥
कामद नर्मसखा लिखित, काया-सहर-निवास।
तन को मन भावत नहीं, वढ़त विरह की स्वास॥
गुण गावत आँसू बहत, भयो सिथिल तन बीर।
वन-प्रमोद की सुरति करि, श्री सरयू को नीर॥
मैं चाहा तुमसों मिल्यो, कोटि कल्प सत जाय।
तुम चाहो छिन मे मिलो, दुसह विपत्ति विहाय॥[१]

(२)

मदन कवन करि सहर को, लूटि लियो करि कोप।
लोभ विनास्यो ध्यान को, क्रोध विनास्यो बोध॥
ज्ञान विरागादिक सबै, भागे लै लै प्रान।
नर्मसखा सब जीव यह, कैसे बचै सुजान॥
याते बेगि बुलाय कै, रखिये अपने पास।
नर्मसखा निज जानि कै, दास कीजिए खास॥
विपुल विनोद विहार हित, उपवन सखिन समेत।
सुमन सपल निरखत कबहुँ, लखिहौं मोद निकेत॥
मधुर बचन पीयूष पिय, सुनिहौं चित्त लगाय।
पढ़ै सदा दिलदार दिल, हिय ते भिन्न न जाय॥[२]

(३)

हौं दिलदार यार कब पैहौं।
जाके बिन छन कल न परत है ताके बिना कैसे जनम गवैहौं।
मन्द-मन्द लखि मधुर मनोहर द्वै भुज पकरि अङ्क भर लैहौं।
'कामदमणि' यह सोच रनि दिन कैसे कै आनन्द माँहि समैहौं॥[३]

१ 'रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय' (वही) पृ. २५४।
२ ३. वही।

कालिकाप्रसाद

आप सारन जिले के 'रिमहर' नामक स्थान के निवासी थे।[1]

आपने हिन्दी में 'सिया-स्वयंवर' नामक एक पुस्तक लिखी थी, जिसका लिपि-काल सं० १९५२ वि० (सन् १८९५ ई०) है।[2] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।

✿

कालीचरण

आप भोजपुर (शाहाबाद) के राजकुमार रामेश्वर सिंह के दरबारी कवि थे।[3] आपने उक्त राजकुमार की ब्रजयात्रा के विवरण-स्वरूप, सं० १९०२ वि० (सन् १८४५ ई०) में, 'वृन्दावन-प्रकाश' नामक एक ग्रंथ की रचना हिन्दी में की थी।[4] आपकी रचना का कोई उदाहरण नहीं मिला।

✿

कालीचरण दुबे

आप चम्पारन निवासी[5] और बेतिया के महाराज-बहादुर आनन्दकिशोर सिंह (सन् १८१६-३८ ई०) तथा नवलकिशोर सिंह (सन् १८३८-५५ ई०) के दरबारी कवि थे।[6] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।

✿

---

१. 'हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षिप्त-विवरण' (श्यामसुन्दरदास, प्रथम सं०, सं० १९८० वि० परिशिष्ट १) पृ० ९।

२. आपकी रचना के लिपि-काल से अनुमान होता है कि आप सन् १८३० ई० के लगभग जन्मे होंगे।—सं०

३. 'हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षिप्त-विवरण' (वही) पृ० ९९ तथा १६०।

४. इस रचना की जो हस्तलिखित-प्रति मिली है, उसमें उसका लिपि-काल सं० १९०५ वि० लिखा है। पर सं० १९०२ वि० में रची और सं० १९०५ में लिपि की गई, तो उस समय (सन् १८४८ ई० में) आप लगभग ३०-४० वर्ष के रहे होंगे। अतः, आपका जन्म-काल सन् १८०८ अथवा १८१८ ई० अनुमित है। —सं०

५. पं० गणेश चौबे (बँगरी, चम्पारन) द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर।

६. आपके आश्रयदाता दोनों बेतिया-नरेशों का राज्य-काल अथवा स्थिति-काल सन् १८१६-५५ ई० तक है। इसी अवधि के बीच में आपका स्थिति-काल अनुमित है और इसी आधार पर अनुमानतः आपका जन्म-काल सन् १८०५ ई० के आसपास समझा जा सकता है। —सं०

कुंजनदास[1]

आप पटना निवासी थे।[2] 'सुदामा विनोद' नामक आपकी एक हिन्दी-रचना सन् १९०२ ई० में प्रकाशित हुई थी।[3] किन्तु, उसके उदाहरण नहीं मिले।

❁

केदारनाथ उपाध्याय

आप चम्पारन निवासी थे।[4] आपने हिन्दी में 'श्रीमद्भागवत', 'कृष्णचरित्र', 'रामाश्वमेध-रामायण', 'नृसिंह-चरित्र' आदि धार्मिक-ग्रन्थों की रचना की थी। आप सन् १८५० ई० में विद्यमान थे।[5] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।

❁

गणपत सिंह

आप पटना जिले के निवासी थे। पटना के नॉर्मल स्कूल में आप बहुत दिनों तक शिक्षक रहे। हिन्दी में 'भूगोल-वर्णन' के नाम से आपकी एक पुस्तक दो भागों में, खड्गविलास प्रेस (बाँकीपुर) से, प्रकाशित हुई थी।[6]

उदाहरण

पटना जिसे अजीमाबाद भी कहते हैं, गंगा के दहने कनारे पर १५५९६३८ आदमियों की बस्ती है। यहाँ पटनदेवी का एक मन्दिर है हरीमन्दिर सिक्खों के तीर्थ की जगह है। शहर से तीन कोस पर बाँकीपुर में गोलघर, पटना कालेज, नार्मल स्कूल, मेडिकल कालेज,

---

१ इस नाम के एक और कवि १७वीं शती में हो गये हैं। उनका वास्तविक नाम लखीरी कुंजबिहारीलाल था और वे शाहाबाद के निवासी थे। उन्होंने 'शिलपुराणसार' नामक एक शास्त्रीय ग्रंथ की रचना की थी। उनके विस्तृत परिचय के लिए देखिए, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही, प्रथम खण्ड), पृ० १०६।

२ 'हिन्दी-पुस्तक-साहित्य' (वही), पृ० ४०४ और ५१५।

३ सन् १९०२ ई० में रचना छपी तो लिखी पहले ही गई होगी और रचना-काल में आपकी अवस्था पचास साल की रही होगी। इस तरह अनुमान है कि आपका जन्म सन् १८५० ई० से पहले ही हुआ होगा।—सं०

४ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ० ६३।

५ जब आप सन् १८५० ई० में विद्यमान थे, तब आपका जन्म अनुमानतः सन् १८०१ से १८१० ई० के बीच हुआ होगा। —सं०

६ इसका प्रथम संस्करण सन् १८७४ ई० में प्रकाशित हुआ था। प्रथम संस्करण के प्रकाशन-काल में आपकी उम्र अनुमानतः पचीस वर्ष की रही होगी। इसी आधार पर आपका जन्म-काल सन् १८४९ ई० के आसपास संभव जान पड़ता है। इस पुस्तक के बारह संस्करण हुए थे। बारहवाँ संस्करण सन् १८९१ ई० में प्रकाशित हुआ था। —सं०

कचहरी और शाह अर्जानी की दर्गाह है। सन् १७६३ ई० में मीर-कासिम ने २०० अंग्रेजों को यहाँ कतल किया था। गंगा के कनारे दानापुर में फौज की छावनी है। बाढ़ एक कसबा है यहाँ चमेली का तेल बहुत उमदा बनता है। विहार से ८ कोस पर राजगिर जरासन्ध की पुरानी राजधानी है यहाँ लोन में बड़ा मेला लगता है।[1]

*

गुरुप्रसाद सिंह[2]

आप गिद्धौर (मुँगेर)-राजवंश के थे[3]। आपकी प्रसिद्धि विशेषतः हिन्दी के लेखक और कवि के रूप में थी। आपने हिन्दी में तीन पुस्तकों की रचना की थी—(१) राजनीति-रत्नमाला, (२) भारत-संगीत और (३) गुरुकुला[4]।

---

१ 'भूगोल-दर्पण' (प्रकाशक [illegible] प्रथम सं० सन् १८७४ ई०, भाग १) पृ० ९१।

२. बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित ग्रंथ-अनुसंधान-विभाग द्वारा प्रकाशित 'प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण' (डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री प्रथम सं० सन् १९५९ ई० तीसरा खण्ड पृ० [illegible]) में 'गुरुप्रसाद' नाम के एक और साहित्यकार की चर्चा मिलती है, जिन्होंने 'रत्नसागर' नामक ग्रंथ की रचना की थी। उक्त विवरण में उनका स्थिति-काल अनुमानतः सं० १८५८ वि० (सन् १८०१ ई०) बतलाया गया है। 'रत्नसागर' के रचयिता 'गुरुप्रसाद' की और दो रचनाएँ 'कविकिशोर' और 'वैद्यकसार' [illegible] बतलाया गया है। वे कहाँ के निवासी थे, यह पता नहीं चल सकता। [illegible] सं० १८७५ वि० (सन् १८१८ ई०) [illegible] हो गये हैं, जिन्होंने '[illegible]-स्तुति-माला' नामक ग्रंथ की रचना की थी। [illegible] की बतलाना कठिन है। —सं

३ पं० [illegible] चतुर्वेदी सन् १९११ ई० में सोनपुर (सारन) में बिहार-हिन्दीसाहित्य-सम्मेलन के प्रथमाधिवेशन के सभापति हुए थे। उन्होंने अपने [illegible] गिद्धौर महाराज के पूज्य पितृव्य स्वर्गीय बाबू गुरुप्रसाद सिंह' लिखा था। उस समय महाराज रावणेश्वर सिंहजी गिद्धौर-नरेश थे। [illegible] सन् १९११ ई० में [illegible] बाबू गुरुप्रसाद सिंह [illegible] कहा जाता है कि आपका देहान्त सन् १९११ ई० में ही [illegible] के साथ स्वर्गीय [illegible] की आयु में हुआ था। किन्तु, चतुर्वेदीजी के भाषण में सन् १९११ ई० में ही आपके नाम के साथ स्वर्गीय शब्द प्रयुक्त हो चुका है [illegible] समय के आसपास स्वर्गीय हुए होंगे। यदि श्रीचतुर्वेदीजी का कथन प्रामाणिक माना जाय (मानने योग्य है भी क्योंकि चतुर्वेदीजी गिद्धौर के पास के ही रहनेवाले थे।) और [illegible] में आपकी मृत्यु [illegible] वर्ष की आयु में हुई हो तो आपका जन्म-काल सन् १८२४ ई० के आसपास होना चाहिए। बाबू शिवनन्दन सहाय ने भी [illegible] अपने भाषण में कहा है—"१८७२-७३ में काशी में कवितासमाज और कविमंडल स्थापित हुए। उस समय गिद्धौर से श्रीमन्महाराज [illegible] गुरुप्रसादसिंहजी [illegible] श्रीगोविन्दनारायणसिंहजी तथा म[illegible] रामेश्वरप्रसादसिंहजी म[illegible] की पूर्ति किया करते थे।" —सं

४ यह पुस्तक आपके पुत्रवधू[illegible] का संग्रह है।

उदाहरण

गंगाजी को विषमता लखि मो मन हरखात।
स्नातक पठवति स्वर्ग को आपु निम्न गति जात॥
आप निम्न गति जाति ताहि गिरिशिखर पठावे।
आप मकर-आरूढ़ ताहि दै वृषभ चढ़ावे॥
आप सलिल तनु धारि ताहि दै दिव्य जु अंगा।
जगत-ईस करि ताहि सीस चढ़ि बिहरति गंगा॥[1]



गुरुबक्स लाल

आप मकसंडा (गया) के निवासी कायस्थ थे।[2] आपके पिता का नाम था सीतारामजी। आपका रचना-काल सं० १९२१ वि० (सन् १८६४ ई०) माना गया है।[3] आपकी हिन्दी-रचना 'कुण्डलिया-रामायण' अधूरी ही रह गई। उदाहरण नहीं मिला।



गुलाबचन्द्र लाल

आपका उपनाम 'प्रेम कवि' था। आप छपरा निवासी थे। हिन्दी, भोजपुरी[3] और अँगरेजी के प्रसिद्ध कवि रघुवीर नारायणजी[4] के आप शिक्षक थे। आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।



---

१. पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी (मही) के सौजन्य से।
२. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० ४९, ६२।
३. आपके रचना-काल के आधार पर ही आपका अनुमित जन्म-काल सन् १८३०-३५ ई० प्रतीत होता है।—सं०
४. इनका जन्म सन् १८८४ ई० में हुआ था। इनके बाल्यपन में आपने इन्हें पढ़ाया होगा। उस समय आपकी अवस्था तीस-चालीस के मध्य की रही होगी। इससे अनुमान होता है कि आपका जन्म-काल सन् १८५१ ई० के आसपास होगा।—सं०

गोपी महाराज

आप पूर्णिया जिले के बनैली-नरेश श्रीमान् राजा लीलानन्द सिंह के आश्रित दरबारी कवि थे।[1] अपनी रचना की उत्कृष्टता के कारण आपने पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त की थी। आपकी काव्य-रचना पर प्रसन्न होकर राजा लीलानन्द सिंह[2] ने आपको दान स्वरूप एक हाथी दिया था।[3] आपकी रचना का कोई उदाहरण नहीं मिला।

✿

गोपीश्वर सिंह

आपका उपनाम 'गोपीश' था। आपकी रचनाओं में आपका यही नाम मिलता है।

आप दरभंगा के महाराज रुद्रसिंह (सन् १८४२-५० ई०) के कनिष्ठ (चतुर्थ) पुत्र थे।[4] आपके ही सबसे बड़े भाई महाराज महेश्वरसिंह (सन् १८५०-६० ई०) थे, जिनके दोनों राजकुमार महाराज लक्ष्मीश्वरसिंह (सन् १८८०-९८ ई०) और महाराज रमेश्वर सिंह (सन् १८९८-१९२९ ई०) मिथिला के परम प्रसिद्ध नरेश हुए।[5] आपकी गणना ब्रजभाषा तथा मैथिली के प्रतिष्ठित कवियों में होती थी। 'गोपीश्वर विनोद' के नाम से आपका एक प्रकाशित काव्य-संग्रह हिन्दी में मिला है।

उदाहरण

(१)

झूलत आज श्यामा-श्याम।
देखु वृन्दा-विपिन महँ हीयडोर मुदित ललाम॥
साजि भूषण-वसन झुलवति मन्दगति व्रज-बाम।
राग गुरुमलार गावति लेति बहु विध ग्राम॥

---

१ भागलपुर-दर्पण (पं० महावीरप्रसाद मिश्र, प्रथम भाग, प्रथम संस्करण, सन् १९११ ई०), पृ० ११६।

२ इन्हें सन् १८५१ ई० में 'राजा-बहादुर' की उपाधि मिली थी। सन् १८८१ ई० में ये स्वर्गवासी हुए थे। इसी आधार पर अनुमान होता है कि आपका जन्म सन् १८२०-२ ई० के आसपास हुआ होगा —देखिए 'गंगा' (श्री भागलपुर, सं० १९८७ वि०, नवम्बर सन् १९३१ ई०) पृ० ४६।

३ आपके समकालीन श्यामसुन्दर कवि भी उसी राज-दरबार में थे। जब आपको उनसे पहले हाथी मिला, तब उन्होंने ये पंक्तियाँ कहीं—

चारो दंड-मार्तण्ड-मणि कर मगरव मोहि काम।
गोपी हाथी पै चढ़ें पैदल सुन्दर स्याम॥

इसपर प्रसन्न होकर राजा-बहादुर ने उन्हें भी हाथी देकर सम्मानित किया। — भागलपुर-दर्पण (वही) पृ० ११६।

४ मैथिली-लोक-रत्नावली (वही) पृ० ८१।

५ इसी आधार पर आपका जन्म-काल सन् १८३०-३ ई० के आसपास अनुमित होता है। —सं०

वहत मारुत मन्द शीतल सुरभि लै अभिराम ।
जलद-वृन्द रसाल बरसत निरखि उमगत काम ॥
देखन सुभग शोभा अमर तिय आइ तजि निज धाम ।
गोपीश अम्बुज नैन लखि छबि लेत नहिं बिसराम ॥[1]

(२)

रघुवर द्रवत दास पर ऐसे ।
बरसि जगत आनन्द बढ़ावत ऋतु पावस घन जैसे ।
निज-रिपु-अनुज समाज-राज तजि आयो शरन विचारी ।
तिहि रघुनाथ तिलक लङ्का दै कियो बंधु सम चारी ॥
आरत हरि सुग्रीव सभै मन अरन-शरन तकि आयो ।
ह्वै निशङ्क रघुवर-प्रताप-बल अचल विमल सुख पायो ॥
देखु निखाद गिद्ध बाली-सुत गहे जे चरन खरारी ।
गोपि-ईश तिहि दियो परम पद अरु निज पद अधिकारी ॥[2]

(३)

विनती सुनहु श्रीरघुराज ।
त्यागि अब सब शरन आयउँ गुनि गरीब-निवाज ॥
हौं कुटिल अघ-खानि कुकरम कीन्ह जनमि दराज ।
बुड़त यह भवसिंधु मोहिं उबारि लीजै आज ॥
पर-वधू पर-द्रोह-रसिकन माँह कीन्ह समाज ।
आज लौं लखु नाहिं मो सो भयो कछु सत काज ॥
सुमिरि निज विरुदावली अब सकल सुर-सिरताज ।
बेगि श्रीगोपीश की प्रभु अबहुँ राखहु लाज ॥[3]

१ 'गोपीश्वर-विनोद' (गोपीश्वर सिंह [illegible] सं. सन् [illegible] ई.), पृ. १।
२. वही, पृ. १११।११४।
३. वही पृ. १११।

(४)

आजु भेल सखि दिन भर, मण्डप बिच देखिहुर बर ॥
हेमँत गौरि कर गहि लेल, शङ्कर पाणि उपर देल ॥
शङ्ख हेम जल फल दए, देल दान परसन भए ॥
तखनुक हर्ष एकुन सन, न भेल न होएत कहु सन ॥
गोपि-ईश भन कविवर, गौरि बिआहल शङ्कर ॥[१]

(५)

आएल हेमँत नगर हर, देखए चललि पुरनारि।
देखि मन सबहुक भूर भेल, मिलि मिलि अपि पढ़ए गारि ॥
प्रथम भूतगन अनुचर, बूढ़ वृषभ असवार।
भूषन नाग विविध तन, सिर मन्दाकिनि-धार ॥
तीनि नयन लस अद्भुत, रजत-सिखर सम अङ्ग।
भाल बाल ससि राजित, असन आक विष भङ्ग ॥
बिहुँसि बिहुँसि सभ नागरि, चललि देखि बरिआत।
परिचय पुछए बरक सभ, कहए माय कत तात ॥
कहथि मनाइनि सखि सँ, सुनि-सुनि बरक स्वभाव।
कओन पहुन बर आनल, अब मोहि किछु नहिं भाव ॥
गोपि-ईश कह इह बर, त्रिभुवन-पालक जानि।
समुचित मिलल गौरिवर, करु उछाह हिम रानि ॥[२]

१. श्री वैद्यनाथ झा (दरभंगा) से प्राप्त।
२. वही।

गोविन्ददत्त

आप मगध के निवासी थे।[१] संस्कृत तथा प्राकृत के आप प्रकाण्ड विद्वान् थे। साहित्य पर भी आपका असाधारण अधिकार था। डुमराँव के प्रसिद्ध कवि 'द्विजवल्लभ' (राधावल्लभ चौबे)[२] को आपने ही नागराज का 'प्राकृत पिङ्गल' पढ़ाया था। आपने उन्हें हिन्दी-कविता करने की परिपाटी भी सिखलाई थी। आप स्वयं भी हिन्दी के एक सिद्धहस्त कवि थे। आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।



चतुर्भुज सहाय

आप सारन जिले के 'मुहम्मदनगर' नामक ग्राम के निवासी[३] और छतरपुर-राज के दीवान थे। आपकी पुस्तकाकार किसी रचना का उल्लेख नहीं मिलता। केवल स्फुट रचनाओं के सम्बन्ध में ही सूचना मिलती है। मिश्रबन्धुओं ने आपका रचना-काल सं० १८८८ वि० (सन् १८३१ ई०) बतलाया है।[४] आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।



चन्द्र शर्मा

आप मिथिला निवासी थे। आपकी लिखी एक पुस्तक (उपाहरण)[५] दुर्गाचन्द्र घोष के माध्यम से, दरभंगा से प्रकाशित हुई थी। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



---

१ 'वैश्योपकारक' (वही, पुस्तक ३०, अंक [illegible], सं० १९६४ वि०) पृ० २६२।

२ इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य है। इनका जन्म सन् १८११ ई० में हुआ था। 'प्राकृतपिङ्गल' पढ़ते समय इनकी अवस्था १५, २० वर्ष की रही होगी। पढ़ाते समय आपकी अवस्था भी चालीस-पचास वर्ष के लगभग होगी। इस तरह अनुमान होता है कि आपका जन्म सन् १७७१ ई० के बीच हुआ होगा।—सं०

३ 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही द्वितीय भाग) पृ० ७४०।

४ वही। आपके रचना-काल के आधार पर आपका जन्म सन् १८०१ ई० के आसपास अनुमित होता है।—सं०

५ 'हिन्दी-पुस्तक-साहित्य' (वही) पृ० ५४। आपकी यह रचना सन् १८७० ई० में प्रकाशित हुई थी। अनुमान है कि उस समय आपकी अवस्था कम से कम ५० वर्ष की रही होगी। इस तरह आपका जन्मकाल सन् १८२० ई० के आसपास माना जा सकता है।—सं०

चन्द्रेश्वरी राय

आप सारन जिले के 'पैंगबनियाँ' नामक ग्राम (डा० बरौली) के निवासी थे।[1] आपके पिता श्रीबालकिसुन राय (श्रीबालकृष्ण राय) कवि ओंकारराय[2] के घराने के थे और सारन जिले के ही 'पचार' नामक ग्राम (परगना मांझि) में रहते थे। वे (आपके पिता) ओंकारराय के समय में ही उक्त ग्राम छोड़कर 'पैंगबनियाँ' में आ गये थे। वे और उनके पूर्वज 'कविता' और 'भजनों' की काव्य-रचना करते थे। अतः, आपकी काव्य-रचना की प्रतिभा वंश-परम्परागत थी। आपके पुत्र का नाम था महेन्द्र राय और भतीजे का मिट्ठू राम। ये दोनों भी कवि थे। आपके एक शिष्य और साले ताजपुर (कुअँरिया, सारन)-निवासी रामफल राय[3] भी एक कवि हो गये हैं।

सं० १९६१ वि० (सन् १९०४ ई०) तक आपके जीवित रहने का पता चलता है।[4] बाल्यकाल से ही आपमें कविता रचने की प्रतिभा थी। रीतिकालीन काव्यग्रंथों के अध्ययन में आपका विशेष अनुराग था। आप बड़े स्वाभिमानी और स्पष्टवादी कवि थे। आपकी कई रचनाओं में भोजपुरी का पुट भी है। आपकी स्फुट रचनाएँ बहुत-सी हैं। इसके अतिरिक्त आपने 'स्वयंवर' नामक एक काव्य-ग्रंथ भी लिखा था। कुछ सज्जन आपके और भी ग्रंथों का पता बतलाते हैं।[5]

---

१ श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह (बड़ी) द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर।

२. इनका परिचय इस पुस्तक के प्रथम खंड में द्रष्टव्य।

३. इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य।

४ पैगसनी (सारन) के गान्धी-स्मारक-विद्यापीठ के सहकारी प्रधानाध्यापक श्रीरामेश्वरप्रसाद सक्सेना ने १९ अप्रैल सन् १९५९ ई० के अपने पत्र में लिखा है कि आपको मरे लगभग पचास वर्ष हो गये। इससे अनुमान होता है कि आप सन् १९०९ ई० के लगभग मरे होंगे। उपर्युक्त सज्जन के लेखानुसार ही आपकी मृत्यु सत्तर-अस्सी वर्ष की आयु में हुई थी। इस आधार पर आपका जन्म-काल सन् १८३० ई० के लगभग अनुमित होता है। उक्त पत्र से ही पता चलता है कि आपके पुत्र महेन्द्र राय का जन्म सं० १९४९ वि० (सन् १८९२ ई०) में और देहान्त सं० २००० वि० (सन् १९४३ ई०) में हुआ था। आपके भाई सिन्देसरी राय के वंशजों के अतिरिक्त अब आपका कोई वंशधर नहीं है। —सं०

५. आपकी रचनाओं के विषय में पूर्वोक्त पत्र-प्रेषक ने लिखा है कि रतनपुर (सारन)-निवासी किसी व्यक्ति ने आपकी रचनाओं में कुछ हेर-फेर करके उन्हें अपने नाम से प्रकाशित करा लिया है। ऐसी रचनाओं में 'सत्यभामा' उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त 'भक्तप्रकाश' नामक आपके एक काव्य-ग्रंथ का भी पता चला है, पर वह भी अनुपलब्ध है। श्रीपाण्डेय कपिल (बड़ी) के लेखानुसार आपकी बहुत-सी रचनाएँ आपके भाई सिन्देसरी राय के वंशजों के पास पोथियों में पड़ी हुई हैं, जिन्हें वे लोग सुरक्षित रखते हैं। वे लोग उन्हें देना नहीं चाहते। —सं०

उदाहरण

(१)

करत न यज्ञ कूप बावली तड़ाग भूप
सन्मुख न होने द्वार साधु संत मैला मे।
पंडित प्रवीन जो पुरान ले सुनावे ताहि
देत ना छदाम होत सामिल न खेला मे॥
चन्द्रेस्वरी कहै कैयो युक्ति सों रुपैया खैंचि
जोरि-जारि धरत सन्दूक और थैला मे।
गैसा पर पाछे पछतात मधुमच्छिका-से
ताजे मन मैला है अनूप धन थैला में॥[1]

(२)

झाँकती झरोखे लागि जानकी अटारी बैठि
सखियाँ सलोनी चारु चन्द सों लगति हैं।
तामैं उमा इन्दिरा सरस्वती सुरिन्द सुर
प्रमदा समेप वै प्रमोद म पगति हैं।
चन्द्रेस्वरी कहै ब्याह उत्सव प्रभाव देखि
मंगल सुगाय दै असीस उमगति हैं।
जानत न कोऊ राम जानकी लखन जान
प्रेम के परिच्छा दै तमासे सों ठगति हैं।[2]

(३)

बँगला बहार जामें सासा चित्रकारी लसे
झाड़ू फनूस देखि सोभा साम लहिहै।
चन्दन नवार अरु खूँदन बयार लागे
ग्राम अम्र-स्थानन मे पंखा पवन ढरिहै।

---

१ श्रीदुर्गाशंकर प्रसाद सिंह (वही) से प्राप्त।
२. वही।

चन्द्रेश्वरी राय

आप सारन जिले के 'पैंसवेनियाँ' नामक ग्राम (डा० दरौली) के निवासी थे।[1] आपके पिता श्रीबालकिसुन राय (श्रीबालकृष्ण राय) कवि तोफाराम[2] के भगिने थे और सारन जिले के ही 'पताई' नामक ग्राम (परगना माँझी) में रहते थे। वे (आपके पिता) तोफाराम के समय में ही उक्त ग्राम छोड़कर 'पैंसवेनियाँ' में आ बसे थे। वे और उनके पूर्वज 'सविता' और 'भवानी' भी काव्य-रचना करते थे। अतः, आपकी काव्य-रचना की प्रतिभा वंश-परम्परागत थी। आपके पुत्र का नाम था महेन्द्र राय और भतीजे का मिट्ठू राय। ये दोनों भी कवि थे। आपके एक शिष्य और साला शामपुर (कुलावरिया, सारन)-निवासी रामफल राय[3] भी एक कवि हो गये हैं।

सं० १९६८ वि० (सन् १९११ ई०) तक आपके जीवित रहने का पता चलता है।[4] बाल्यकाल से ही आपमें कविता रचने की प्रतिभा थी। रीतिकालीन काव्यग्रंथों के अध्ययन में आपका विशेष अनुराग था। आप बड़े स्वाभिमानी और स्पष्टवादी कवि थे। आपकी कई रचनाओं में भोजपुरी का पुट भी है। आपकी स्फुट रचनाएँ बहुत-सी हैं। इसके अतिरिक्त आपने 'स्वयंवर' नामक एक काव्य-ग्रंथ भी लिखा था। कुछ सज्जन आपके और भी ग्रंथों का पता बतलाते हैं।[5]

---

१ श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह (वही) द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर।

२. इनका परिचय इस पुस्तक के प्रथम खंड में द्रष्टव्य।

३. इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य।

४ पैसवाँ (सारन) के पाण्डेय-स्मारक-पुस्तकालय के सहकारी प्रधानाध्यापक श्रीरामशंकर प्रसाद ने ११ अप्रैल सन् १९६१ ई० के अपने पत्र में लिखा है कि आपको मरे लगभग पचास वर्ष हो गये। इससे अनुमान होता है कि आप सन् १९११ ई० के लगभग मरे होंगे। उपर्युक्त सज्जन के लेखानुसार ही आपकी मृत्यु साठ-सत्तर वर्ष की अवस्था में हुई थी। इस हिसाब से आपका जन्म-काल सन् १८४० ई० के लगभग अनुमित होता है। उक्त पत्र से ही पता चलता है कि आपके पुत्र महेन्द्र राय का जन्म सं० १९३९ वि० (सन् १८८२ ई०) में और देहान्त सं० २००७ वि० (सन् १९५० ई०) में हुआ था। आपके भाई मिन्देश्वरी राय के वंशजों के अतिरिक्त अब आपका कोई वंशधर नहीं है। —सं०

५. आपकी रचनाओं के विषय में पूर्वोक्त पत्र-प्रेषक ने लिखा है कि बसन्तपुर (सारन)-निवासी किसी व्यक्ति ने आपकी रचनाओं में कुछ हेरफेर करके उन्हें अपने नाम से प्रकाशित करा लिया है। ऐसी रचनाओं में 'रामायण' उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त 'लवकुशकाण्ड' नामक आपके एक काव्य-ग्रंथ का भी पता चला है पर वह भी अनुपलब्ध है। श्रीपाण्डेय जी (वही) के लेखानुसार 'आपकी बहुत-सी रचनाएँ आपके भाई मिन्देश्वरी राय के परिवारवालों के पास पोथियों में पड़ी हुई हैं जो फटे-चिटे कागजों पर धूमिल पड़ती जा रही हैं। वे लोग उन्हें देना नहीं चाहते।' —सं०

उदाहरण

(१)

करत न मख कूप बावली तड़ाग भूप
सम्मुख न ह्वैके द्वार साधु संत थैला में।
पंडित प्रवीन जो पुरान ले सुनावें ताहि
देत ना छदाम होत सामिल न खैला में॥
चन्द्रसखी कहै कैयो युक्ति सों रुपैया खचि
जोरि-जोरि धरत सन्दूक और थैला में।
पैसा पर पाछे पछतात मधुमक्षिका-से
बाजे मन मैला है अनूप धन मैला में॥[1]

(२)

झाँकती झरोखे लागि जानकी अटारी बैठि
सखियाँ सलोनी चारु चन्द सी लगति हैं।
तामैं उमा इन्दिरा सरस्वती सुरिन्द सुर
प्रमदा समेत है प्रमोद में पगति हैं।
चन्द्रसखी कहै ब्याह उत्सव प्रभाव देखि
मंगल सुगान दै असीस उमगति हैं।
जानत न काऊ राम जानकी लखन जान
प्रेम के परिच्छा दै उमाह सो ठगति हैं।[2]

(३)

मँगला महार जाम सीसा पिचकारी लसं
झाड़हू फनूस देखि सोभा सोम लहिहैं।
चन्दन नवार मध बूँदन मझार लागे
स्याम स्याम-आनन में पञ्जा पवन हरिहैं।

---

१ श्रीदुर्गाशंकर प्रसाद सिंह (बक्सर) के पास।
२. वही।

चन्देस्वरी कहूँ तामे इतर फुहारन की
सुमन को सज्जा पर सरोज गात सहिहै ॥
होत जो न याम तीन माहुर पलक तीन
क्वार के करेरी घाम राम कैसे सहिहै ।[1]

(४)

धुंध करि दादुर दरेरा देत दौर दौर
दर-दर दरारन दबीज दरसै लगे ।
पुहुमि पताल पंथ पर्वतनि पौढ़ि पानी,
सर सरितानि बापी कूप सरसै लगे ॥
चन्देस्वरी चातक पपीहा मोर झिल्लीगन
चहूँ घोर टेरें पौन पुञ्ज परसै लगे ।
नींद नहिं आवत गुविंद पति प्यारे बिनु
घुर वारि बारिद बुलन्द बरसै लगे ॥[2]

(५)

चरन-सरन जन गहत सहत घन, कहत सकल जग अचल अनद-मद ।
असम नयन बर बसन चरम-गज, कर धन सर यह दहन मदन मद ॥
वसह बरध पर लसत चढ़त तन, सरद रयन कर धवल करम रद ।
जहर लहर मह गरक रहत मन, उमगत हर हर कहत अनद मद ॥[3]



१. श्री दुर्गाशंकर प्रसाद सिंह (वही) द्वारा प्रेषित ।
२. श्रीकमलेश्वर वर्मा (वही) द्वारा प्राप्त ।
३. वही ।

छक्कनलाल

आप गया निवासी अम्बष्ठ कायस्थ और मिर्जापुर (उत्तर प्रदेश) के प्रसिद्ध रामायणी श्रीरामगुलाम द्विवेदी के परमप्रिय शिष्य थे।[1] आप बहुत दिनों तक अपने गुरु के साथ मिर्जापुर में रहे भी थे। मिर्जापुर से काशी आने के बाद आपने महाजनी के 'ककरिया' नामक कुल में (जिसमें भक्त-प्रवर बाबू हरिश्चन्द्र भी हुए), नौकरी कर ली।

आपकी स्मरण शक्ति बड़ी ही तीव्र थी। कहते हैं, जबतक आप कथा में उपस्थित नहीं होते थे तबतक आपके गुरु श्रीरामगुलाम द्विवेदी कथा का आरम्भ ही नहीं करते थे। द्विवेदी जी के इस पक्षपात पर अन्य श्रोता कभी-कभी असन्तुष्ट भी हो जाया करते थे।[2] वस्तुतः वे आपको ही कथा सुनने का एकमात्र अधिकारी मानते थे क्योंकि आपकी धारणा शक्ति अत्यन्त प्रखर थी।

कुछ ही दिनों में आप भी एक बड़े नामी रामायणी के रूप में प्रसिद्ध हो गये। मानस-सम्बन्धी आपके पाण्डित्य की प्रसिद्धि थोड़े ही दिनों में चारों ओर फैल गई। उक्त पाण्डित्य के कारण आपका प्रवेश काशी-नरेश के दरबार में भी हो गया। तत्कालीन काशी-नरेश ने आपके पाण्डित्य से प्रभावित होकर आपके लिए वृत्ति बाँध दी थी। अपनी 'मानस' विषयक विद्वत्ता के कारण आप महाराज श्री बाबा हरिहरप्रसाद जी, काष्ठजिह्वस्वामी, देवतीर्थजी महाराज, श्रीजानकी वंदन पाठक जी आदि के भी कृपापात्र हुए। द्विवेदीजी तो आपको पुत्रवत् मानते थे।[3]

---

१ 'कल्याण' (वर्ष मानसांक पृ० ११४) में महात्मा श्रीअंजनीनन्दनशरण-लिखित 'मानस के प्राचीन टीकाकार' शीर्षक लेख के आधार पर कुछ लोग आपके मिर्जापुर निवासी होने का अनुमान करते हैं। किन्तु अम्बष्ठ कायस्थ होने के कारण आपका गया-निवासी होना ही ठीक जान पड़ता है। संभव है आपने गुरु श्रीरामगुलाम द्विवेदी के भक्ति-सेवार्थ आपने अपने जीवन के अधिक दिन मिर्जापुर में ही बिताये हों, और इस रूप में गया से आपका सम्बन्ध दूर-सा गया हो। स्वर्गवासी ... रामायणी ... गया-जिले के अम्बष्ठ कायस्थ ही थे और उनका भी यही निश्चित मत था।—सं०

२ कहा जाता है कि श्रोताओं की इस असावधानता को दूर करने के लिए द्विवेदी जी ने कुछ दिनों तक कथा बन्द कर दी। कुछ दिनों के अन्तर के बाद पुनः प्रारम्भ करने पर उन्होंने उपस्थित श्रोताओं से पूर्वकथा-सूत्र के सम्बन्ध में अनेक प्रश्न किये, किन्तु किसी ने सन्तोषप्रद उत्तर नहीं दिया। अन्त में जब आप आये तब आपसे भी वे ही प्रश्न पूछे गये। उत्तर में आपने तिथि तिथि प्रसंग यथाक्रम सब कुछ ठीक-ठीक बतला दिया। इसी पर द्विवेदीजी ने श्रोताओं के बीच घोषित किया कि आपके समान कथा सुनने का अधिकारी वस्तुतः कोई नहीं है। कहते हैं उसी दिन से मानस-प्रेमियों में आप परम आदर के पात्र बन गये।—सं०

३ पंडित रामगुलाम द्विवेदी का कविता-काल मिश्रबन्धुओं ने सं० १९०१ वि० (सन् १८४४ ई०) माना है। उस समय द्विवेदी जी सम्भवतः पचास वर्ष के होंगे। उसी समय के आसपास आप (छक्कनलाल) भी उनके पास रहे होंगे और आपकी अवस्था उस समय चालीस वर्ष से कम न होगी। इससे अनुमान होता है कि सन् १८०४ ई० के आसपास आपका जन्म हुआ होगा। जिस समय काशी के रामायणी पं० रामकुमारजी आपसे रामचरितमानस पढ़ रहे थे उस समय आपकी अवस्था ६५ वर्ष की लिखी मिलती है। पं० रामकुमारजी ने श्रीरूपकलाजी के अनुरोध से अयोध्या में भी मानस-कथा कही थी। महात्मा रूपकलाजी सन् १८९३ ई० से १९३२ ई० (साकेतवास काल) तक अवध-धाम में रहे थे और इन्हीं चालीस वर्षों के अन्दर पं० रामकुमार जी ने कभी कथा कही होगी क्योंकि कथा कहने में सिद्ध होने के बाद ही वे सन्त-समाज में गये होंगे। सिद्ध कथावाचक की आयु पचास वर्ष से कम न होगी। यदि 'मानस' के अध्ययन के समय पंडितजी ३२ वर्ष के होंगे तो आपका ६५ वर्ष का बुढ़ापा देखते हुए यह अनुमान करना अनुचित नहीं है कि आपका जन्म अठारहवीं शती की पहली या अधिक-से-अधिक दूसरी दशाब्दी में हुआ होगा।—सं०

आप हिन्दी और संस्कृत के प्रकांड विद्वान् थे। आपकी विद्वत्ता एवं कुशाग्रबुद्धि का परिचय देते हुए काशी के प्रसिद्ध ज्योतिषी महामहोपाध्याय श्रीसमोध्यानाथ जी कहा करते थे कि एक बार एक विद्यार्थी ने आपसे रामायण पढ़नी चाही। जिस समय उस विद्यार्थी ने आपसे अपनी यह इच्छा प्रकट की उस समय वह 'सारस्वत' पढ़कर 'चन्द्रिका' पढ़ रहा था। तब आपने उसे चन्द्रिका ही पढ़ाते हुए उसी में अर्थसहित सारी मानस रामायण पढ़ा दी।[1]

काशी के प्रसिद्ध रामायणी पं० श्रीरामकुमार जी को आपसे ही भावार्थ-सहित 'मानस' पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उस समय आपकी अवस्था ६५ वर्ष की थी। महात्मा श्रीअंजनीनन्दनशरण जी ने लिखा है कि 'पं० रामकुमारजी अपनी कथा में आदर-पूर्वक आपका नाम लिया करते थे और कहा करते थे कि वे (आप) 'मानस' के बड़े अगाध मर्मज्ञ थे—जब-तब यही कहते थे कि अब बुढ़ापे में तुमको क्या पढ़ाऊँ, क्यों तमाशा दिखाये देता हूँ ... ...।'[2]

काशी के विक्टोरिया प्रेस ने आपकी रामचरितमानस की पोथी का एक गुटका छापकर प्रकाशित किया था। आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।

*

छोटक पाठक

आप चम्पारन जिले के निवासी और बेतिया (चम्पारन) के महाराज राजेन्द्र किशोर सिंह (सन् १८५५-९३ ई०) के दरबारी कवि थे।[3] आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।

*

जगदम्बालाल बख्शी

आप इचाक (हजारीबाग)-निवासी अम्बष्ठ कायस्थ थे।[4] आपकी दो काव्य रचनाएँ मिलती हैं—(१) नवरसआगर[5] और (२) प्रनय शिकारोमी[6]। प्रथम में ८८ पद्य हैं और द्वितीय में १११ कवित्त। ग्रन्थ के अन्त में भी ७ स्फुट कवित्त हैं।

---

१ —देखिए, 'कल्याण' (वही) पृ० ६२४।
२ वही।
३ बिहार-प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के द्वितीयाधिवेशन (बेतिया) के स्वागताध्यक्ष सेठ रामकृष्ण जी के भाषण से। साथ ही देखिए—'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ० ९६. महाराज राजेन्द्रकिशोर काव्य एवं संगीत-कला के बड़े पारखी थे। उनकी कविता उनकी दानशीलता के कारण भी थी। उन्होंने काशीनिवासी महाराज ईश्वरी प्रसाद नारायण सिंह के दरबारी कवि 'सरदार' को दान देकर कई बार सम्मानित किया था। एक बार कवि ... को भी उनके एक कवित्त पर २० हजार रुपये देकर सम्मान किया था। कहते हैं भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के दुर्दिन में भी उन्होंने उनको (भारतेन्दु जी को) सहायता दी थी और राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द को मुक्तिदान दिया था। (सरस्वती, सन् १९११ ई० पृ० ४९)। इनका राज्यारोहण-काल सन् १८५५ ई० है। दरबार में रहते समय आपकी अवस्था कम-से-कम चालीस वर्ष की रही होगी। अतः अनुमान है कि आपका जन्म सन् १८१५ ई० के लगभग हुआ होगा —सं०
४ श्रीमहेश्वरानन्द सरस्वती द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर।
५ इसका प्रकाशन लक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस (कल्याण, बम्बई) से हुआ था
६ इसकी रचना सं० १९०७ वि० (सन् १८५० ई०) में अलवरराज्य के ... कुमार की प्रसन्नता हेतु हुई थी। इसी आधार पर आपका जन्मकाल सन् १८०० ई० के आसपास अनुमित है।—सं०

उदाहरण

(१)

श्री गनराज कृपा सुख साज गरीब-नेवाज नमो पदकंजा।
दास मनोरथ पूरन तूरन कूरन कोविद कारक पंजा॥
सोधन को धन बाजि गजादिक गो-धन-धान्य सुदायक संजा।
विघ्न विनासि विनासु दुखार्तिहि दारिद दूरि परे कुरु भंजा॥[1]

(२)

शंकर कुलारविन्द शोभानन ज्यों करिन्द
वन्दित सुरेन्द्र पद कविन्द गन गावैं।
विघ्न हूँ विनाय जात दारिद दुराय जात
कोटि कामदा सुहात सेवक मन भावें॥
कासो गुन पारावार रावरो बखानो जाय
गौरिजू के नन्दन चन्द मौलि छवि छावें।
सोधन उर प्रेम की तरंग बाढ़ि बारि
सेननाथ इष्ट देव जू से बिनती गुहरावे॥[2]

(३)

बानी महरानी मति दीजिए सुदानि देवि
विरद को कहानि तोहि बेदहू बखानी हैं।
विधि की हो तनुजा तूं प्रभुनारायन जी को
पटरानी राजधानी बैकुंठ बसानी हैं।
दासता सुबुद्धि मातु हौंसभा जो होत आत
गावो गुनगाथ जा के मुक्ति की निसानी है।
बासर सिरानो यहु ताते अकुलानी चित
देहु बरदानि मोहिं बन्दौं जोरि पानी हैं।[3]

❋

१. 'सर्वसुखसागर' का प्रथम सवैया।
२. 'समर सिम्लोकी' का प्रथम पद—गणेश-वन्दना।
३. उक्त ग्रंथ का ही द्वितीय पद—सरस्वती-वन्दना।

जगदेवनारायण सिंह

आप गया जिले के निवासी थे। आपके आश्रयदाता उसी जिले के टिकारी नरेश महाराजा रामकृष्ण सिंहजी थे।[1] आपके द्वारा महाराजा के सम्मान में रची कुछ हिन्दी कविताएँ उपलब्ध होती हैं। आपकी प्रसिद्धि एक आशुकवि के रूप में भी थी।[2] आपकी कोई पुस्तकाकार रचना नहीं मिली। केवल स्फुट रचनाओं के कुछ उदाहरण ही प्राप्त हो सके।

उदाहरण

(१)

बैठि कुसासन पै सासन करि इन्द्रिन को
धारे कंजासन नहीं त्रास जमराज को।
धनुवाण चन्द्रिका सुमुद्रिका सिखाय अंग
उर्द्धपुण्ड्र चन्द्रबिन्दु भो वै सुभ साज को॥
सरयू औ गङ्गा जल पान करि बार-बार
ध्यान करि सीता-राम रास के समाज को।
ब्रह्म-मयङ्गी के बीच ब्रह्मवेला पाय गये
ब्रह्म-रंध्र ह्वै के लोक ब्रह्म-रघुराज को॥[3]

---

१ 'बिहार-दर्पण' (वही) पृ० १४०-४१। महाराजा रामकृष्ण सिंह की मृत्यु सं० १९१२ वि० (सन् १८५५ ई०) में ५२ वर्ष की आयु में हुई थी। उनकी मृत्यु के समय आप यहाँ उपस्थित थे। राजाश्रित और राज-सम्मानित होने के कारण उस समय आपकी अवस्था कम से कम चालीस वर्ष की रही होगी। अतः आपका जन्म अनुमानतः सन् १८१०-१५ ई० के आसपास हुआ होगा।—ले०

२ वही, पृ० १४१। महाराजा की मृत्यु के तुरत बाद आपने निम्नलिखित कुछ दोहे बनाये, जिनसे आपके आशु-कवि होने का प्रमाण मिलता है—

नव लोक निधि [illegible] संवत कार्तिक मास।
सोमवार तिथि चार में कृष्ण पाख शुभ काल॥
गये लोक साकेत में करि समाधि [illegible]।
[illegible] को त्याग करि राम-निरत [illegible]॥
महाराज-पदवी सहित रामकृष्ण सिंह नाम।
[illegible] को [illegible] गये [illegible] के धाम॥ —वही।

३ वही।

(९)

राज सीय मुद्रा दिये लच्छन विचच्छन को
बच्छन समेत गाय कच्छन भराय कै।
भच्छन के हेत दिये अन्नदान दीनन को
खीनन को खेत दिये दछिना मिलाय कै।
हेम-सिंह-आसन पै आसन कराय दिये
शालग्राम दानवाक्य वैदिक बनाय कै।
सीता-राम प्रीत दिये ग्राम द्विज पंडित को
पूजे पदकंज हरिभक्त हिय लाय कै॥[1]



जगन्नाथ तिवारी

आप चम्पारन जिले के निवासी और बेतिया (चम्पारन) के महाराज राजेन्द्र-किशोर सिंह (सन् १८५५-८३ ई०) के दरबारी कवि थे।[2] आपकी कविताओं के उदाहरण उपलब्ध नहीं हुए।



टिम्बल ओझा

आप पटना जिले के निवासी थे। कोई कोई आपको गया जिले का निवासी भी बतलाते हैं। पटना जिले की प्रसिद्ध नदी 'पुनपुन' की महिमा दरसाते हुए सन् १८८८ ई० में आपने एक छोटी-सी पुस्तक 'पुनपुन माहात्म्य' लिखी थी।[3]

उदाहरण

(१)

पुनि पुनि करत पवित्र सदाई। पुनपुन नाम कहत श्रुति गाई॥
जो पुनपुन के तट पै जाओ। प्रथम तासु रज सीस लगाओ॥
पुनि जल सौं सिर ऊपर राखो। तब जल पैठि राम मुख भाखो॥
जा यह नियम न पालो भाई। होइहि कष्ट सुनो चित लाई॥

---

१ 'बिहार-दर्पण' (वही), पृ० १४५।

२ बिहार-प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के द्वितीय अधिवेशन (बेतिया) के स्वागताध्यक्ष [illegible] के मानव थे। महाराज राजेन्द्रकिशोर सिंह का सिंहासनारोहण सन् १८५५ ई० में हुआ था। इनके दरबार में रहते समय आपकी अवस्था कम-से-कम चालीस वर्ष की रही होगी। अतः आपका जन्म-काल सन् १८१५ ई० के आसपास अनुमित है।—सं०

३. इनके महात्म्य-काल से अनुमान होता है कि आपका जन्म सन् १८३५ ई० के लगभग हुआ होगा।—सं०

प्रथम रोग उत्पति फल लीजै। तेहिते विविध भाँति सन छीजै॥
जो शरीर में उपजै रोगा। तीनहिं होई सक कोई भोगा॥
भोग अकारण अनमहु जाई। ताते नियम पालिये भाई॥[1]

(२)

कोकट देस पुनीत नदी महँ जो जन आन हिये महँ धार।
पितरन श्रास लगाय हिये महँ कोटिन भाँति असीस उचारे।
देव रहो जस पितृ सुपुत्र तू नरकन से कुल केर उबारे।
जाय गया महँ पिण्डहु पारि के सौंपहु पुत्र हो नाम तिहारे॥[2]

❀

ठाकुर[3]

आप छपरा-नगर के साहेबगंज-मुहल्ले के निवासी मधेसिया (मधेशिया) कान्दू (मड़भूँजा) थे।[4] आपके पिता का नाम गोपीनाथ साह था, जो हलवाई का काम करते थे। आप भी स्वजातीय धन्धे में बड़े निपुण थे। मिठाइयाँ, मुरब्बे, अचार आदि बढ़िया बनाते थे। किसी को चीजों का एक ही दाम कहते और उतना ही लेते थे। आप बड़े परोपकारी और यशस्वी वैद्य भी थे। चिकित्सा निःशुल्क करते थे। औषध बनाने में जो ठीक खर्च होता था, वही रोगी से लेते थे। आप एक अच्छे मसखरे और कुश्ती के शौकीन थे। कुश्ती आपने हनुमान सिंह नामक व्यक्ति से सीखी थी।

आपके पिता ने ही पहले-पहल आपको हिन्दी पढ़ाई। आगे चलकर आपने कुछ संस्कृत भी सीख ली। उन दिनों छपरा के धर्मनाथ महादेव के मन्दिर में मालवा देश के निवासी श्रीरामचन्द्र नामक एक पण्डित पुराण-कथा कहा करते थे। आपने उनसे भी कुछ शिक्षा प्राप्त की थी। आप बराबर गुणियों, पंडितों और कवियों की संगति में रहा करते थे। प्रसिद्ध हिन्दी कवि 'पजनेस' का भी सत्संग आपको प्राप्त हुआ था। पजनेस का जन्म-काल सं० १८७२ वि० (सन् १८१५ ई०) और कविता-काल सं० १९०० वि० (सन् १८४३ ई०) माना गया है।[5] इसी समय के लगभग आपका भी रचना-काल रहा होगा। कहा जाता है कि पजनेस के छोटे भाई 'सुधनेस' अपने जीवन के अंतिम दिनों में बहुत दिनों तक छपरा-नगर में रहकर यहीं

---

१ 'पुस्तक-माहात्म्य' (विनय कोश, प्रकाशित सन् १८८२ ई०) पृ० २०।
२ वही।
३ यह परिचय (स्व०) बाबू शिवनन्दन सहाय द्वारा प्रेषित सूचनाओं के आधार पर तैयार किया गया है।
४ 'बिहार-दर्पण' (वही) पृ० १८१।
५ 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, तृतीय भाग), पृ० १०१८।

दिवंगत हुए थे। संभव है, इन्हीं के संसर्ग से पजनेस के साथ आपका भी सम्पर्क हुआ हो। कवि-समागम के प्रभाव से आपने पिंगल का भी अध्ययन किया। कहते हैं, आपके एक मित्र लाला हरनाथ सहाय[1] ने आपकी सहायता से ही 'काशीखण्ड' नामक एक हिन्दी-पुस्तक की रचना की थी।

सं० १९२९ वि० में, लगभग ६९ वर्ष की आयु में माघ-शुक्ल ९ को, भीषण ज्वर से, आपका शरीरपात हुआ।[2]

आपके द्वारा रचित किसी भी पुस्तक का पता नहीं चलता। केवल स्फुट रचनाएँ ही मिलती हैं। डा० रामदीन सिंहजी ने लिखा है कि 'छपरा के इलाके में ऐसा कोई न ठहरेगा, जो ठाकुर कवि की बनाई चीजें (कवित्त, भजन आदि) न जानता हो या इनकी भलाई के कामों से इनकी याद न करता हो।'[3]

उदाहरण

(१)

हरि मोहि सेवरी-सेवक कीजै।
पादोदक प्रह्लाद दैत्य को निषचर नफर करीजै।
गनिका अनुग अजामिल अनुचर गीध गुलाम गनीजै।
दास करो रविदास कबिर को सुपच पंगति लीजै।
ठाकुर ठौर ठाढ़ होइबे को सदन-सदन मोहि दीजै।[4]

(२)

कलि के खल खेलत होरी।
होत प्रात अबनी भरि तारी, घर-घर लरी चुओ री।
पोखत लाट ससात परसपर, भूता-लात भयो री।
दया होइ वमन करो री॥ कलि०
बहुत जतन से भक्ष्या लायो, नभचर प्रान हरो री।
भेड पछारि मैं भाग लगायस, जलचर भच्छ करो री।
दया महि मार्ग खोरी॥ कलि०

---

१ इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य।

२. इसी आधार पर आपका जन्म-काल सं० १८६० वि० (सन् १८०३ ई०) के आसपास अनुमित होता है।—सं

३. 'बिहार-दर्पण' (वही) पृ० १४६।

४ वही पृ० १६४।

ठौर-ठौर में अमनी नाचत, वा संग भोग करो री।
वाजी नर-पदत्रान हार गल, खर पर हरषि चढ़ो री।
मुँह मसि-तेल भभोरी ॥ कलि०
रहित उछाह् हेरात रंग से, थोड़ गुलाल परो री।
ठाकुर जम जब प्रान निकसिहैं, देहि नरक म बोरी।
प्रथम है गिनती मोरी ॥[1] कलि०

✽

देवदत्त मिश्र

आप पटना के निवासी थे। हिन्दी में आपके द्वारा रचित एक नाटक 'भाग्य विवाह दृश्य' का पता चला है।[2] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।

✽

नान्हक

आप सारन जिले के निवासी राव भाट थे। आपने बहुत-सी स्फुट कविताओं की रचना की थी, जिनपर भोजपुरी भाषा का अधिक प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।[3]

उदाहरण

हाथिन के साजे बने समाजे कोटिन राजे पगु • हारे।
दल बादल छाये जनक बुलाये नृप सब आये मति हारे।
दुल्सह जब आये दरसन पाये 'नान्हक' पक्ष सुमन बरषे।
दिग्गज अकुलाने कमठ सकाने जनक जुड़ाने दल देपे ॥[4]

---

१ "रैतार रत्नेश (वही) पृ० १०६ ८४।
२ इनका प्रकाशन सन् १८८८ ई० में बाँकीपुर (पटना) के खड्गविलास प्रेस से हुआ था।—देखिए, हिन्दी पुस्तक-साहित्य (वही) पृ० ४८०। इनका प्रकाशन-काल में यदि कम-से-कम ४० वर्ष के पूर्व रखें। अतः आपका जन्म-काल सन् १८४८ ई० के आसपास हो सकता है।—सं०
३ अनुमानतः आपका स्थिति-काल सं० १८४१ वि० (सन् १७८४-८५ ई०) के आसपास है। अतः, जन्म-काल सन् १७६०-६५ ई० के बीच का कभी-कभी होगा।—श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह (वही) से प्राप्त परिचय-तालिका के आधार पर।—सं०
४ वही।

नारायण

आप पटना निवासी थे। आपने हिन्दी में काव्य रचना की थी। हिन्दी में आपका 'अष्टयाम' नामक एक काव्य-ग्रंथ प्रकाशित भी हुआ था।[१] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



नारायणदत्त उपाध्याय

आप चम्पारन जिले के निवासी और बतिया (चम्पारन) के महाराज आनन्दकिशोर सिंह (सन् १८१५-३८ ई०) और नवलकिशोर सिंह (सन् १८३८-५५ ई०) के दरबारी कवि थे।[२] आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।



परमानन्ददास

आप शाहाबाद जिले के 'कोरी' ग्राम निवासी एक कायस्थ कुलोत्पन्न कबीर-पंथी संत थे।[३] आप जीविकोपार्जन के लिए जौनपुर (उत्तर प्रदेश) में नौकरी करते थे। वहाँ से घर आने के लिए आपको अवकाश कम मिलता था। अतः, प्रतिमास अपनी पत्नी के पास छन्दोबद्ध पत्र प्रेषित किया करते थे।[४]

आपकी दो पुस्तकाकार रचनाएँ हस्तलेख के रूप में मिलती हैं—(१) बारहमासा[५]

---

१ इसका प्रकाशन सन् १८८७ ई० में खड्गविलास प्रेस (पटना) से हुआ था—देखिए 'हिन्दी-पुस्तक साहित्य (वही) पृ० ३६५। यदि रचना प्रकाशन-काल में आप ४० वर्ष के रहे होंगे तो आपका जन्म अनुमानतः सन् १८४७ ई० में हुआ होगा।—सं०

२ बेतिया-नरेश महाराज आनन्दकिशोर सिंह सन् १८१५ ई० में गद्दी पर बैठे थे और नवलकिशोर सिंह सन् १८५५ ई० में स्वर्गीय हुए थे। अतः, आपका स्थिति-काल इसी अवधि के अन्तर्गत अनुमित है।—सं०

३. तृतीय बिहार-प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (सीतामढ़ी) के सभापति श्रीशिवनन्दन सहाय के भाषण से।

४ श्रीराजेन्द्र प्रसाद (कोरी, शाहाबाद) के दिनांक २४-४-२८ के पत्र से।

५. इस पुस्तक की एक हस्तलिखित प्रति बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के 'पोथी संग्रह' में सुरक्षित है। इसकी एक प्राचीन हस्तलिखित प्रति श्रीजगदीश्वर प्रसाद (अमनापट्टी, मोतीहारी) के पास भी है। इन्होंने उसी प्रति के आधार पर उन्होंने आरा के भोजपुरी पत्रिका 'भोजपुर' (वर्ष १, अंक १४-१५, १६ मई, सन् १९५१ ई० पृ० १६-१७) में श्रीपरमानन्दजी के 'विरहमाला' शीर्षक एक लेख प्रकाशित कराया है जिसमें इन्होंने आपका स्थिति-काल १७वीं शती बतलाया है। किन्तु कवि ने स्वयं ही 'बारहमासा' का रचना-काल सन् १२५५ ई० और 'कबीरमानुप्रकाश' का सं० १९१५ वि० (सन् १८५८ ई०) बतलाया है। 'बारहमासा' के काल-सूचक दोहे में जो संवत् शब्द है वह सन् या साल का बोधक है। आपने सन् १८५२ ई० में अपनी पहली रचना (बारहमासा) लिखी थी। उस समय आप कम-से-कम ३०-३५ वर्ष के रहे होंगे। अतः आपका जन्म-काल सन् १८१७-१८ ई० के लगभग होगा।—सं०

ठौर-ठौर में जमनी मावत, वा सँग भोग करो री।
सासी नर-पदनाम-हार गल, सर पर हरषि चढ़ो री।
मुँह मसि-तेल पमोरी ॥ कलि०
रहित उछाह डेरात रंग से, चोढ़ गुलाल परो री।
ठाकुर जम जब प्रान निकसिहैं, देहि नरक में बोरी।
प्रथम है गिनती मोरी ॥[1] कलि०

*

देवदत्त मिश्र

आप पटना के निवासी थे। हिन्दी में आपके द्वारा रचित एक नाटक 'बाल विवाह खण्ड' का पता चला है।[2] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।

*

नान्हक

आप सारन जिले के निवासी राम भाट थे। आपने बहुत-सी स्फुट कविताओं की रचना की थी, जिनपर भोजपुरी भाषा का अधिक प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।[3]

उदाहरण

हाथिन के साजे बन समाजे कोटिन रावे पग्गु • ठारे।
दल बादल छाये जनक बुलाये नृप सब आये मनि हारे।
दुल्लह जब आये दरसन पाये 'नान्हक' पकत सुमन बरसे।
दिग्गज अकुलाने कमठ सकाने जनक जुड़ाने बस देपे ॥[4]

---

१ 'बिहार-दर्पण' (वही) पृ० १५३–८६।
२ इसका प्रकाशन सन् १८८८ ई० में बाँकीपुर (पटना) के खड्गविलास प्रेस से हुआ था।—देखिए, हिन्दी पुस्तक-साहित्य (वही), पृ० ४८। रचना-प्रकाशन-काल में आप कम-से-कम ४० वर्ष के रहे होंगे। अतः आपका जन्म-काल सन् १८४८ ई० के आसपास हो सकता है।—सं०
३ अनुमानतः आपका लिपि-काल सं० १८८१ ४५ मि (सन् १८२४-२८ ई०) के आसपास है। अतः जन्म-काल सन् १८०४-५ ई० के बीच या आगे-पीछे होगा।—श्रीपुरुषोत्तमप्रसाद सिंह (वही) से प्राप्त परिचय-सामग्री के आधार पर।—सं०
४ वही।

नारायण

आप पटना निवासी थे। आपने हिन्दी में काव्य-रचना की थी। हिन्दी में आपका '[illegible]' नामक एक काव्य-ग्रंथ प्रकाशित भी हुआ था।[1] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।

✿

नारायणदत्त उपाध्याय

आप [illegible] जिले के निवासी और बेतिया (चम्पारन) के महाराज आनन्दकिशोर सिंह (सन् १८१६ [illegible] ई०) और नवलकिशोर सिंह (सन् [illegible] ई०) के दरबारी कवि थे।[2] आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।

✿

परमानन्ददास

आप शाहाबाद जिले के '[illegible]' ग्राम निवासी एक कायस्थ-कुलोत्पन्न [illegible] थे।[3] आप [illegible] के [illegible] (सन् [illegible]) में [illegible] थे। वहीं [illegible] आपका [illegible] था। [illegible] के पास [illegible] किया [illegible] है।[4]

आपकी [illegible] (सन् [illegible]) [illegible]

१ [illegible]

२ [illegible]

३ [illegible]

४ [illegible]

५ [illegible]

और (२) कबीर-भानु-प्रकाश ।[1] कहते हैं, प्रथम पुस्तक में आपके उपयुक्त अन्योक्ति पद ही संगृहीत हैं। इसमें साल के बारह महीनों में विरही और विरहिणी की मनोदशा का बड़ा ही रोचक और साहित्यिक वर्णन है। दूसरी पुस्तक एक प्रकार से कबीर साहब के विचारों का लघु संग्रह है। इसके अतिरिक्त इसमें आपके मौलिक विचार भी हैं और अन्य धर्मों की परिचयात्मक आलोचना भी। साथ ही, स्थान-स्थान पर कबीर, तुलसीदास आदि सन्तों और योगवाशिष्ठ, वेदान्त-न्याय-दर्शनादि की उक्तियों को साक्षी-रूप में रखकर अपने मन्तव्य को पुष्टि भी प्रदान की है। आपकी रचनाएँ भोजपुरी भाषा में भी मिलती हैं।

उदाहरण

(१)

सत नाम भजी वर सन्त सती दिन अन्त भये भगवान पयाना ।
जग नैन महा सुख दैन दुरे धीरे धीर धरो पद पंकज ध्याना ।
दृढ़ इन्द्रिन दौन त मौन गहो थिर आसन हो अनुसासन माना ।
यहि संधि सचेत सतोगुन त सत धारहि ये सत रूप समाना ।।[2]

---

१ इसकी एक हस्तलिखित प्रति बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के शोध-संग्रह में सुरक्षित है। इसके अन्त में आपने लिखा है—

सम्वत उनीस सौ पैंतीसा । [illegible] तिथि दीसा ॥
मंगल वार [illegible] । ता दिन ग्रंथ समापति कीन्हा ॥
मधि पंजाब देश के माही । शहर फिरोजपुर तहँ आही ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥

इससे पता चलता है कि आपके गुरु कोई पंजाबी सन्त थे। आपने सं० १९३५ वि० (सन् १८७८ ई०) में यह ग्रंथ रचा था। पंजाब में आप कुछ समय रहे भी होंगे। आपकी भाषा में 'तुसाँ' 'तिसदियाँ' 'असाँ' 'साड़े' आदि शब्द प्रयोग पंजाबी भाषा से प्रभावित प्रतीत होते हैं। किन्तु, आप बिहार के ही निवासी थे। आपने स्वयं लिखा है—

हिन्दुस्तान के सूबे में सूबे बिहार है। ता में [illegible] सुभग [illegible] है ॥
[illegible] के [illegible] में मेरो धाम है। [illegible] हमारा नाम है ॥

—'लोकमत' (साप्ताहिक, वर्ष १, अंक १४, १९ मई, सन् १९११ ई०), पृ० ११।

२. बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित ग्रन्थ शोध-विभाग में सुरक्षित 'कबीर भानु-प्रकाश' की प्रति से।

(२)

छतियन वजर-केवार जँजीरा दे गये।
सूनो सेज भयावन भारी रात है।
निसि दिन ही पछतात बिरह से जात है।
का से कहौं यह दरद मैं अपने प्रीत की।
आगि लगो वोहि देस चलन वोहि रीत की।
सब सखियन के पीव बिदेस से आइयाँ।
मेरो बलम्ह अमीत बिदेसे छाइयाँ॥[1]

(३)

सावन मास सोहावन जल थल महि भरे।
कन्त कुमंत बिदेस न जानो बस रहे॥
घन गरजत घन बरसत दमकत दामिनी।
डरपत भवन भयावन सूनी यामिनी॥
कबहिं झटाके छूट घटा के रोक से।
कबहिं झकोरत मेघ पवन के झोंक स॥
गगन धधकत मेघ कड़कत छातियाँ।
बिरह भरी रस बैन सुनावत बातियाँ॥
बोलत दादुर मोर बिरह की बोलियाँ।
विरहिन के हिय माँह लगे जस गोलियाँ॥[2]

(४)

आये पूस के मास तर थर यास है।
विरहिन को यह मास गले का फाँस है॥
रात बढ़ो मोहि नींद न आवत नैन में।
सिसिर समै को रास न कुछ चित चैन में॥
करवट करवट फेरत कर है अलग फटे।
मेरो छोह पिया के तन मन सो घटे॥

---

१ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रन्थ शोध-विभाग में सुरक्षित बारहमासा से।
२. वही।

कोउ न साथी संग सखियाँ सहेलियाँ ।
जाको बूझ बुझावों बिरह पहेलियाँ ॥
एक दीपक है साथ सो बात न बासही ।
सुसुकि सुसुकि झर नैन गिरत तन झोसहीं ॥[1]

(५)

दौरि गहे पद कन्त जी भरि गये लोचन नीर ।
हा चकोर मुख चन्द्र जस कागज की तसवीर ॥
ऐसा समय असाढ़ को पाव बिदेसे छाय ।
निरखि घटा घन को छटा पिउ बिन मन कदराय ॥[2]



फतूरी लाल

आपका नाम 'फतूरलाल' भी मिलता है।

मिश्रबन्धुओं ने आपका निवास-स्थान मिथिला बतलाया है।[3] उन्हीं के मतानुसार आपने 'कवित्त अकाली'[4] नामक एक ग्रन्थ की रचना की थी। मैथिली में रचित आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ भी मिलती हैं।

उदाहरण

(१)

जेठ मास अमावस, सजनि गे, सभ धनि मंगल गाव ।
भूषण बसन जतन करु, सजनि गे, रचि-रचि अंग लगाव ॥
काजर-रेख सिंदुर भेल, सजनि गे, पहिरथि सुबुधि सयाना ।
हरखित बससी अक्षयवट, सजनि ग, गबितहि मंगल दाना ॥

---

१ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रंथ शोध-विभाग में सुरक्षित बारहमासा से।

२, 'सौरभ-चार' (वही) पृ० ११ १० ।

३ मिश्रबन्धु-विनोद (वही, तृतीय भाग) पृ० ११११ तथा डॉ० ग्रियर्सन कृत 'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही), पृष्ठ ११३ ।

४ डॉ० ग्रियर्सन के मतानुसार सन् १८०४ ई० में आप वर्तमान थे और मैथिली में लिखित सन् १८०१-०२ ई० के अकाल का वर्णन करनेवाली 'कवित्त-अकाली' नामक आपका कम-लिखित ग्रंथ के रचयिता थे। —देखिए 'Journal of the Asiatic Society of Bengal' (Extra No 1881), P 24 और डॉ० ग्रियर्सन कृत 'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही) पृ० ११३। —ग्रन्थ रचना-काल (सन् १८०१-०२ ई०) में आपकी अवस्था लगभग ४० वर्ष की रही होगी। अतः, आपका जन्म-काल सन् १७६० ई० के आसपास होने का अनुमान है।—सं०

घर-घर नारि हँकारस, सजनि गे, आदर सौं सभ गेली।
आइ थिक वर साइत, सजनि गे, तें आकुलि सभ भेली॥
घुरुमि घुरुमि जल ढारस, सजनि गे, बाँटल अछत सुपारी।
फतुरलाल देल आशिष, सजनि गे, जीवधु दुलह दुलारी॥[1]

(२)

चहु दिसि घेरु घन करिया॥हे ऊधो॥ ध्रु०॥
झहरि-झहरि बुँद पड़य पलँग पर,
भिजत कुसुम-रँग सरिया॥हे ऊधो॥
पथ भेल पिच्छड़ प्रितम भेल चंचल,
कोन बिधि धूँदरि धर्यया॥हे ऊधो॥
पावस कठिन कैल चुवत भवन मोर,
हरि बिन सुन अँटरिया॥हे ऊधो॥
हरि गेल मधुपुर हमरहु तेजि गेल,
लोचन नीर जल-भरिया॥हे ऊधो॥
कहथि फतुरलाल सुनिय मोहन जी,
दोगुन भिजय मोर सरिया॥हे ऊधो॥[2]

❁

बदरीनाथ

आप पटना निवासी और पटना-कॉलेजियट-स्कूल के शिक्षक थे।[3] सन् १८८० ई० में आपके सम्पादकत्व में पटना से 'विद्या विनोद'[4] नामक हिन्दी मासिक पत्र निकला था। किन्तु, दो वर्षों के बाद यह बन्द भी हो गया। आप हिन्दी में लेखादि भी लिखा करते थे। आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।

---

१ 'मिथिला गीत-संग्रह' (तीन का प्रथम भाग) पृ० ११।

२ वही (द्वितीय भाग), पृ० ६।

३ 'पुस्तक-भण्डार जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही) के 'बिहार की हिन्दी पत्र-पत्रिकाएँ' शीर्षक लेख से।

४ बाँकीपुर की पत्र 'विद्याविनोद' के सम्पादक बाबू साहब प्रसाद सिंह के सहोदर भाई बाबू चण्डीप्रसाद सिंह थे। 'विनोद' के लेख बहुत उपयोगी होते थे। इसमें क्रमशः पुस्तकें भी छपा करती थीं। श्रीसीतारामशरण भगवानप्रसाद रूपकलाजी-विरचित 'सीताजी की कथा' सर्वप्रथम इसीमें मुद्रित हुई थी।—'हरिऔध अभिनन्दन-ग्रन्थ' (वही) पृ० ६१८। इस उल्लेख से विदित होता है कि आप 'विद्याविनोद' के आरम्भिक वर्ष में कुछ दिन इसके सम्पादक थे। सन् १८८० ई० में पत्र-सम्पादक रहते समय आप कम-से-कम चालीस वर्ष के रहे होंगे। इसी आधार से आपका जन्म-काल सन् १८४० ई० अनुमित है।—सं०

बबुजन झा

आप मिथिला के पिलखवाड़ नामक गाँव के निवासी थे।[1] आपके पिता का नाम महामहोपाध्याय दीनबन्धु (निनन) उपाध्याय[2] था। आप अपने समय के एक भारत प्रसिद्ध विद्वान् थे। दर्शन आदि शास्त्रों में आपकी अच्छी पैठ थी। विद्यादान के अतिरिक्त ४०-५० विद्यार्थियों के भोजन-वस्त्र की व्यवस्था भी आप स्वयं ही करते थे। नवानी-ग्राम (दरभंगा)-निवासी सुप्रसिद्ध नैयायिक पंडित बच्चा झा[3] भी आपके ही शिष्य थे। आपने इन्हें न्याय-दर्शन की शिक्षा दी थी। आप ज्योतिषशास्त्र के विद्वान् पं० भानुनाथ (भाना) झा[4] के सगे भाई[5] थे।

उदाहरण

नागर भटकि रहल परदेश। तरुण वयस कत सेपय कलेश ॥
मैल वसन तन भसम लेपि लेल। तन दूबरि आभरन तजि देल ॥
खन-खन झाँखथि रहथि मन मारि। कोन दोषे तजि गेल मदन मुरारि ॥
भन 'बबुजन' कवि सुनिय व्रजनारि। धैरज धय रहु मिलत मुरारि ॥[6]



बहादुरदास

आप संभवतः 'डुमराँव' (शाहाबाद) के निवासी थे। हिन्दी में आपकी एक प्रकाशित पुस्तक 'निर्द्वन्द्व रामायण' का पता चला है।[7] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



---

१ 'बालक' (मासिक, वर्ष १४, अंक २ फरवरी सन् १९४८ ई०) पृ० ८७।

२. 'पुस्तक-भण्डार रजत-जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ४००।

३. इनका परिचय आगे यथास्थान में द्रष्टव्य।

४ इनका परिचय इसी पुस्तक के प्रथम खण्ड में द्रष्टव्य।

५. 'पुस्तक भण्डार रजत-जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही) पृ० ९०। पं० भानुनाथ (भाना) का जन्म सन् १८२१ ई० में हुआ था। इसी आधार पर आपका जन्म-काल भी इसके आस-पास अर्थात् सन् १८२० ई० से सन् १८३० ई० के बीच अनुमित है।—सं०

६ 'मिथिला-गीत-संग्रह' (वही, प्रथम भाग) पृ० ६ १० २६ तथा ४४।

७. इसका प्रकाशन सन् १८८५ ई० में डुमराँव के ही शिवदास नामक किसी व्यक्ति ने किया था। — हिन्दी-पुस्तक-साहित्य (वही) पृ० ५२०। यदि आप अपनी रचना के प्रकाशन-काल से ४० वर्ष के भी होते तो आपका जन्म-काल अनुमानतः सन् १८४५ ई० में पड़ता है।—सं०

बिहारी सिंह

आप सारन जिले के निवासी थे।[1] आपकी तीन हिन्दी पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं— (१) बिहारी नखशिख-भूषण[2], (२) मालती मंजरी[3] और (३) सती-रमण।[3] रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।

*

बुलूराम

आप छोटानागपुर प्रदेश (बिहार-राज्य) के निवासी थे। इतिहास प्रसिद्ध सिपाही-विद्रोह (सन् १८५७ ई०) के अमर शहीद पाण्डेय गणपत राय के आप पुरोहित थे।[4] जब विद्रोह में पाण्डेय गणपत राय शहीद हो गये, तब दिनांक २१-२२ अप्रैल (सन् १८५८ ई०) को आप उनकी लाश लाने राँची गये थे। आपने हिन्दी में काव्य-रचनाएँ भी की थीं।[5] पर आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।

*

बोधिदास

आप संभवतः पटना जिले के निवासी थे। हिन्दी में आपके द्वारा लिखित एक धार्मिक पुस्तक का पता चला है—'भक्त-विवेक' जो, सन् १८७६ ई० में प्रकाशित हुई थी।[6] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।

*

---

१ —'हिन्दी-पुस्तक-साहित्य' (वही) पृ० २२१।

२ यह कविता-पुस्तक सन् १८८६ ई० में खड्गविलास प्रेस पटना से निकली थी।

३ इन कविता-पुस्तकों के प्रकाशक कोई सारन-जिला-निवासी जयनन्दकुमार नामक व्यक्ति थे। अनुमान है कि सन् १८८१-८२ ई० में पुस्तकों के प्रकाशन के समय आप ४० वर्ष के रहे होंगे। अतः, आपका जन्म-काल सन् १८४१ ई० के लगभग रहा होगा।—सं०

४ हिन्दी के पुराने कलाकार श्रीराधाकृष्णजी (राँची) ने अपने दिनांक ४-२-६१ के पत्र में लिखा है कि 'किसी पुराने कागज में केवल इतना ही लिखा था कि "आप पाण्डेय गणपति राय के पुरोहित और कवि भी थे।"

५ आदिवासी (साप्ताहिक, वर्ष १४ अंक २० २६ जनवरी, सन् १९६१ ई०) पृ० १६। अनुमान है कि जिस समय आप गणपत राय की लाश लाने के लिए राँची गये होंगे, उस समय आपकी अवस्था चालीस वर्ष से कम न होगी। अतः, इस हिसाब से आपका जन्म-काल सन् १८१८ ई० के लगभग ठहरता है।—सं०

६ इस पुस्तक के प्रकाशक पटना-निवासी कोई महादेव शर्मा थे।—देखिए, हिन्दी-पुस्तक-साहित्य (वही,) पृ० २२७। अनुमानतः आपका जन्म-काल सन् १८५१ ई० के आसपास रहा होगा।—सं०

भगवान प्रसाद वर्मा

आप हजारीबाग जिले के 'इचाक' नामक स्थान के निवासी थे।[१] आपकी गणना हिन्दी के एक प्रसिद्ध लेखक के रूप में होती थी। आपने चालीस से अधिक पुस्तकों का प्रणयन किया था, जिनमें अधिकांश नष्ट हो गईं। सन् १९१६ ई० के पूर्व तक आपकी जो हिन्दी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी थीं, उनके नाम इस प्रकार हैं—

(१) गोपाल बाल-लीला-सार (रचना काल सं० १९३५ वि०, सन् १८७८ ई०) (२) करुणाक्रन्दन-शतक (श्रीराधिकामहारानी प्रति, सं० १९६५ वि०, सन् १९०८ ई०) (३) श्रीनारद-कृत भक्ति-सूत्र भाषा, (४) श्रवण माहात्म्य और हरिकृत माहात्म्य (सं० १९५० वि०, सन् १८९३ ई०), (५) सप्तश्लोकी गीता, (६) स्फुट गीतावली या कवितावली, (७) वंशावली, (८) श्रीमद्भगवद्गीता-माहात्म्य तथा (९) भक्त निवेदन।[२] आपकी रचना के उदाहरण नहीं प्राप्त हुए।

＊

भजनदेव स्वामी

आप 'पयाहारी बाबा' के नाम से प्रख्यात थे। पीछे 'नीमवाँ बाबा' के नाम से प्रसिद्ध हुए।

आपका जन्म गया जिले के अरवल थाने में, 'खैरा' नामक ग्राम में, हुआ था।[३] आपके पिता का नाम था मधुपति सिंह। आपका बचपन अपने मामा के यहाँ, शाहाबाद जिले के सिकरहटा-कलाँ नामक ग्राम में व्यतीत हुआ। जब आप वहीं थे तभी आपने उस ग्राम से पाँच मील दक्षिण, ठोरा-नदी के बाँयें तट पर, बिहटा-ग्राम के मठाधीश श्रीमधुस्वामी से दीक्षा ली।[४]

कहते हैं, आप सिकरहटा-कलाँ से रात्रि-काल में नित्य अपने गुरु के यहाँ जाते और फिर दूसरे दिन प्रातः काल लौट आते थे। यह क्रम बारह वर्षों तक लगातार चला। इस अवधि में आपने अपने गुरु से योग-साधना की भी शिक्षा ली।[५] जब आपको इसपर भी संतोष नहीं हुआ, तब आप बिहटा-मठ में अपने गुरुदेव के साथ ही रहने लगे। आपने

१ श्रीसूर्य नारायण भंडारी, (इचाक, हजारीबाग) द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर।

२ ये सारी पुस्तकें 'खेमराज श्रीकृष्णदास' (बम्बई) द्वारा प्रकाशित हुई थीं। पर अब दुष्प्राप्य हैं। यदि आपके रचना-काल (सन् १८७८ ई०) में आपकी अवस्था २० वर्ष की भी मानी जाय, तो आपका जन्म-काल सन् १८५८ ई० हो सकता है। निस्संदेह आपका जन्म उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में ही हुआ होगा। अनुमानतः यह समय सन् १८५८ ई० के आसपास होनी चाहिए।—सं०

३ परिषद् में प्रेषित एक अज्ञात-व्यक्ति की सूचना के आधार पर। [प्रेषक महाशय का नाम (हस्ताक्षर) स्पष्ट पढ़ा नहीं जाता]

४ श्रीरामेश्वरराम (संस्कृत विद्यालय, शाहाबाद) द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर।

५ उन दिनों आपका आहार केवल दूध था, जिसके कारण आप 'पयाहारी बाबा' कहलाये।

गुरुदेव के समीप रहकर आपने बारह वर्षों तक कठिन साधना की।[१] इसके पश्चात् अपने जीवन का शेषांश आपने बिहटा से उत्तर-पूर्व-कोण पर स्थित शोणभद्र-नद के बायें तट पर 'धर्मपुर' नामक ग्राम में बिताया। यहाँ आपकी बहुत ख्याति हुई। यहाँ आपके गुरु भी चले आये। गुरु शिष्य अंतिम दिनों में साथ ही रहे। आप सं० १८७२ वि० (सन् १८१५ ई०) के चैत मास में परमधाम सिधारे।[२] आपकी चार हिन्दी पुस्तकों का पता चला है—(१) गुरु मन-गुरु, (२) भीखेन ज्ञान, (३) ब्रह्मस्वरूप-रूपक और (४) ज्ञानसरोदा। इनमें प्रथम दोनों पद्यमय रचनाएँ प्रकाशित हैं[३] और अंतिम दोनों अप्रकाशित।[४] प्रथम का विषय 'ब्रह्मविद्या विहार' तथा द्वितीय 'शारीरिक ज्ञान विराग पथ प्रदर्शक' है।

उदाहरण

(१)

सत गुरु बिना कोई ना हमारा।
हित-नाता सब कुल-परिवारा, मतलब के साथी संसारा।
यहि तन त्यागि जतन कियो कोटिहु, सोउ धोखा दियो बीच बजारा।
पाँच जना मिलि लूट मचायो, अबकी बार गुरु करहु सहारा।
स्वामी जगु अरज सुनि लेहु मोरा, 'भजनदेव' को सरन पुकारा॥[५]

(२)

राम रटन रट लागो मेरो भाई।
झूठ बकवाद में जन्म बिताये, नहीं आई कछु हाथ कमाई।
जाहि घड़ी तू राम-भजन करु, सो करे तेरो संग सहाई॥

---

१ साधना की इस अवधि में आप केवल नीम के पत्ते चबाकर अपना जीवन-यापन करते थे। इसी कारण 'नीमवाँ बाबा' कहलाये।

२ आज भी आपकी और आपके गुरु की समाधि पर दो भव्य मंदिर विद्यमान हैं। लोक-सापेक्ष सन्त-महात्मा होने के कारण शरीरान्त के समय सन् १८१५ ई० में आपकी आयु कम-से-कम ७०-७५ वर्ष की रही होगी जिसके आधार पर अनुमान होता है कि आपका जन्म सन् १७४० ई० के लगभग हुआ होगा।—सं०

३. इनमें प्रथम का प्रकाशन दानापुर (पटना) के बी० एन० बाकसिंग साहब के प्रेस से सन् १८१२ ई० में और द्वितीय का बाँकीपुर के खड्गविलास प्रेस से बाबू रामरणप्रसाद सिंह के द्वारा सन् १८८८ ई० में हुआ था।

४ इन दोनों पुस्तकों की हस्तलिखित प्रतियाँ धर्मपुर मठ के महंत के पास सुरक्षित हैं।

५ श्रीराजेश्वर राम (भट्टी) द्वारा प्राप्त।

माया के मास देखि जनि भूलो, यह सब मास साहु के भाई।
जा दिन प्रान गवन जग किन्हा, संगहु के तन जात बिलाई॥
जौन कर्म करा यहि जग में, सोई तेरो संग करे सहाई।
प्रान निकलि जब बाहर आए, बिना सतनाम के भटकत जाई॥
सूरत शब्द सत ठहराओ, सब मन आपन पाई।
स्वामी जगु कहे 'भजनदेव' सुनो, नाहिं त कर्म काल हो जाई॥'



भवानीचरण मुखोपाध्याय

आप छपरा नगर में, कटरा मुहल्ले के पास की 'कालीबाड़ी' के निवासी थे। आपके पूर्वज आज से लगभग ढाई सौ वर्ष पूर्व (सोलहवीं सदी में) बंगाल से छपरा चले आये थे। 'दारोगा दफ्तर', 'विजय', 'बाँसुरी' तथा 'हिन्दूपंच' के प्रसिद्ध सम्पादक स्व० कार्त्तिकेयचरण मुखोपाध्याय आपके ही भतीजे थे। आपने सन् १८८८ ई० में, छपरा से पं० अम्बिकादत्त व्यास के सम्पादकत्व में 'सारन-सरोज' नामक एक हिन्दी मासिक पत्र निकाला था।[2] उसी में आपके लिखे हिन्दी-लेख भी छपते थे। आप एक गद्य-लेखक थे। आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।



भागवत नारायन सिंह[3]

आप 'भागवत' नाम से प्रसिद्ध थे।

आपका जन्म[4] पटना जिले के रुपस ग्राम में हुआ था। आपके पिता बाबू निरपीद सिंह मिसौदिया-क्षत्रिय-वंश के प्रसिद्ध पुरुष बाबू दीनदयाल सिंह के वंशज थे।

पाँच से बीस वर्ष की अवस्था तक आपने अपने जन्म-स्थान और काशी तथा अयोध्या में रहकर हिन्दी और संस्कृत की शिक्षा प्राप्त की। इसके साथ-साथ आपने तुलसीकृत रामायण का भी अध्ययन किया। अपने इसी अध्ययन के आधार पर आगे चलकर आप रामायण के अद्वितीय ज्ञाता कहलाये। आपकी गणना एक प्रसिद्ध राम-भक्त के रूप

---

१ श्रीराधेश्याम (वकील) द्वारा प्राप्त।

२. कहते हैं कि 'सारन-सरोज' को आपने अपनी वृद्धावस्था में निकाला था। अतः आपका जन्म-काल सन् १८२८ ई० के आसपास अनुमित है।—सं०

३ आपका परिचय रुपछ (पटना) निवासी श्रीरामनारायण सिंह द्वारा प्रेषित सूचनाओं के आधार पर तैयार किया गया है।

४ सूचना-प्रेषक के मतानुसार आपका जन्म अनुमानतः सन् १८४६ ई० के लगभग हुआ था।—सं०

में भी होती थी। आपने सं० १९८० वि० (सन् १९२१ ई०) में ओंकारखण्डी-स्थान (रूपस) में एक श्रीरामायण-सत्संग की स्थापना की थी, जिसमें आज भी प्रत्येक रविवार को दो घण्टे तक रामायण-पाठ, हरि-कथा, धार्मिक प्रवचन आदि होते हैं। रूपस के इलाके में आज उक्त सत्संग की दर्जनों शाखाएँ चल रही हैं। आप एक अच्छे पहलवान भी थे। आपके एकमात्र पुत्र श्रीपरमानन्द सिंह काव्यप्रेमी भी बड़े होनहार जन्मजात कवि थे, किन्तु दुर्भाग्यवश वे युवावस्था में ही आपको असहाय छोड़ गये। अपने जीवन के अन्तकाल तक राम-नाम का जप करते हुए, लगभग ६० वर्ष की आयु में, सन् १९३१ ई० में, आप चल बसे।

आपने हिन्दी में कई पुस्तकों की रचना की थी, जिनमें प्रमुख के नाम इस प्रकार हैं—(१) रामगीता-संवाद, (२) वरणावली-दोहा, (३) प्रश्नोत्तर-दोहा, और (४) श्रीरामनामामृत-दोहा। इनके अतिरिक्त आपकी स्फुट रचनाएँ भी उपलब्ध होती हैं। उक्त सारी रचनाएँ अभी तक अप्रकाशित ही हैं। आपका रचना काल सन् १८८१ ई० से सन् १९२५ ई० तक है।

उदाहरण

(१)

बने हैं प्रचारी कोई धर्म-धुरधारी ध्रुव,
कोई उपकारी बड़े कोई निर्विकारी हैं।
कोई बड़े पंडित विराग से न खंडित,
भवदपिंडित भवनि में उदंडित विचारी हैं।
कोई षट्शास्त्र पढ़े वाद औ विवाद करें,
कोई कुल काव्य गढ़े क्षमा मढ़े भारी हैं।
छके नाहिं सीके पीके प्रेम रस पीके नीके,
कहा किये जीके जीके फीके सुखकारी हैं।[1]

(२)

राम-सुयश सुठि गाइए, सतन सों करु प्रीति।
छल-बल सबको छाड़िए, यहि सज्जन की रीति॥
पढ़िए सब सद्ग्रंथ को, चतुराई का वास।
भजिय सदा रघुनाथ को, हित करि मानहु सास॥[2]

१ श्रीरामबरन सिंह (वर्मा) द्वारा ही प्राप्त।
२ वहीं से प्राप्त।

(३)

जो जन रामायन को करत रनि दिन पाठ।
धूप-दीप-नैवेद्य विधि पूजत हैं यहि ठाट॥
पूजत हैं यहि ठाट करत हैं जे नरनारी।
तेहि के दुख टरि लेत सदा सुख देत खरारी॥
कहत सत्य भगवत करि करु रामायन-पाठ।
पाप-ताप-संताप सब भागत हैं दस बाट॥[1]

(४)

चारि वेद को सार है रामायण सुख मूल।
बाँचत ही आनन्द मन कटत घोर त्रैशूल॥
कटत घोर त्रैशूल हरत सब पातक भारी।
भक्ति होत उपरम्र सदा श्रीअवध-विहारी।
लोक और परलोक में सदा होत विश्राम॥
रामायन नित नेम से करु भगवन्तहि गान॥[2]



मधुसूदन रामानुज दास

आप भागलपुर जिले में कोशी के तट पर स्थित 'मधुआ-बाजार' नामक स्थान के वासी थे।[3] नाम और रचना के अनुसार आप एक भगवद्भक्त ज्ञात होते हैं। आपके द्वारा रचित 'भगवद् धर्म-दीपिका' नामक एक पुस्तक यूनियन प्रेस (दरभंगा) से, सन् १८८१ ई० प्रकाशित हुई थी। रचना के उदाहरण नहीं मिले।



श्रीरामलाल सिंह (बड़ी) द्वारा प्राप्त।

वहीं से प्राप्त।

यह ४४ पृष्ठों और छः अध्यायों पूर्ण की पुस्तक थी। इसके नाम से अनुमान होता है कि आपने [illegible] रचना अपनी वृद्धावस्था में की होगी। इसके प्रकाशन-काल से प्रकट होता है कि सन् १८८ [illegible] के इधर-उधर आपका जन्म-काल होगा।—सं०

महावीर चौबे

आप चम्पारन के निवासी और बेतिया (चम्पारन) के महाराज राजेन्द्रकिशोर सिंह (सन् १८५५-८३ ई०) के दरबारी कवि थे।[1] आपने हिन्दी में कुछ स्फुट-काव्य की रचना की थी। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।

❁

महेशदास

आप पटना निवासी, जाति के कहार और वैष्णव धर्म (वल्लभ-सम्प्रदाय) के उपासक थे।[2] आपने सं० १९१५ वि० (सन् १८५८ ई०) में 'एकादशी माहात्म्य' नामक एक पुस्तक[3] की रचना हिन्दी में की थी। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।

❁

मुकुटलाल मिश्र[4]

आपका उपनाम 'रंग' था।

आप पटना सिटी के कुशोरीगंज मुहल्ले के निवासी थे। बाल्यावस्था से ही साहित्य, संगीत और व्यायाम के प्रति आपकी विशेष अभिरुचि थी। संगीत में तो आपकी पैठ इतनी गहरी थी कि कुछ ही समय में आप अपने समकालीन शास्त्रीय संगीतज्ञों में अग्रतिम हो गये। संगीत के शास्त्रीय पक्ष का ज्ञान आपका जितना व्यापक था, व्यावहारिक क्षेत्र में उसे आपने उतना ही मधुर रूप प्रदान किया था। स्वनिर्मित काव्य-रचनाओं को जब आप राग-रागिनियों में बाँधकर गाने लगते थे, तब श्रोता मंत्रमुग्ध-से हो जाते थे। संगीत की शिक्षा का आपका ढंग भी अनूठा ही था। कहते हैं, इस दिशा में आपने अपनी एक विशेष पद्धति ही स्थापित की थी। वाद्यों में सारंगी आपको विशेष प्रिय थी, जिसका अभ्यास आप नियमित-रूप से किया करते थे।

---

१ द्वितीय बिहार प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (बेतिया) के स्वागताध्यक्ष सेठ राधाकृष्ण के भाषण से। महाराज राजेन्द्रकिशोर सिंह का राज्य-काल सन् १८५५ ई० से आरम्भ हुआ था। उस समय आपकी अवस्था कम-से-कम चालीस की होगी। इसी आधार पर अनुमान है कि आपका जन्म सन् १८१५ ई० के लगभग हुआ होगा।—सं०

२ 'हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण' (पहला प्रथम भाग परिशिष्ट क) पृ० १।

३ आपकी पुस्तक सन् १८५८ ई० में रची गई थी। उस समय आप चालीस पार कर चुके होंगे। अतः, आपका जन्म-काल सन् १८१८ ई० से पूर्व ही होगा।—सं०

४ आपका परिचय मुख्यरूप से पटना-सिटी के प्रमुख संगीतज्ञ और संगीत प्रचारिणी-सभा (पटना-सिटी) के मंत्री श्रीलक्ष्मणलाल वर्मा के द्वारा प्रेषित विवरणों के आधार पर तैयार किया गया है। उनके मतानुसार आपका जन्म सन् १८३२ ई० के आस-पास हुआ था।—सं०

आपका जीवन सादगी, सरलता एवं पवित्रता का अन्यतम उदाहरण था। जबतक शक्ति रही, आपने अपना भोजन, जो अत्यन्त सात्त्विक होता था, अपने ही हाथों तैयार किया। बाजार का कोई पक्व अन्न आपको कभी प्राप्त न हुआ। जीवन-भर आप आत्म विज्ञापन और आत्मश्लाघा से दूर रहकर एकांत साधक की भाँति साहित्य-संगीत की उपासना में तल्लीन रहे।

आपने अपनी उपार्जित सारी सम्पत्ति गो-सेवा में लगा दी। गो-सेवा का व्यसन आपको बाल्यकाल से ही था। आपने अपने यहाँ बहुत-सी गायें पाल रखी थीं। उनके दूध से कभी आपने अर्थोपार्जन नहीं किया। उसे दोनों बेला पास-पड़ोस के लोगों में निःशुल्क वितरित कर दिया करते थे। आपका शिष्य-वर्ग जहाँ एक ओर आपके पास बैठकर निःशुल्क संगीत शिक्षा प्राप्त करता था, वहाँ दूसरी ओर निःशुल्क गो-दुग्ध-पान कर स्वास्थ्य-लाभ भी करता था।

आप एक बड़े ही निष्ठावान व्यक्ति थे। अर्थ का अभाव आपको जीवन भर रहा, किन्तु इस अभाव को आपने अपने तक ही सीमित रखा। अपनी सहायता के लिए दूसरों के आगे हाथ पसारना को आप मनुष्यत्व का अपमान मानते थे। आपमें अपने पैरों पर खड़े होने की प्रवृत्ति थी, जो अन्तकाल तक बनी रही।

आपने आजन्म कठिन ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया। प्रेम और करुणा आपके रग-रग में व्याप्त थी, जो मनुष्य ही नहीं, पशु-पक्षियों के प्रति भी अनायास प्रकट हो जाती थी। कहते हैं, यदि मार्ग में आप किसी रोगी या आहत पशु-पक्षी को निस्सहाय अवस्था में पाते थे, तो उसे आश्रम पर उठा लाते थे और तबतक उसकी सेवा में लगे रहते थे जबतक वह पूर्ण स्वस्थ नहीं हो जाता था। अन्य पारावतों, गिलहरियों और दूसरे जीवधारियों को चारा देना आपका नित्य-कर्म था।

साहित्य के क्षेत्र में आपने पं० अम्बिका दत्त व्यास को अपना गुरु बनाया था। हिन्दी में आपकी एक ही पुस्तकाकार रचना उपलब्ध होती है—'दुर्गा विजय'[1]। कहते हैं, 'गणिका-साधु-संवाद'[2] के नाम से आपने एक और पुस्तक भी रची थी। यह भी पता चला है कि आपने कवित्त-सवैयों में 'बिहारी-सतसई' की एक टीका[3] भी लिखी थी। आपकी बहुत-सी स्फुट काव्य-रचनाएँ और समस्यापूर्तियाँ 'पटना-कवि-समाज,' 'समस्यापूर्ति' आदि तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई थीं। आपकी रचनाएँ ब्रजभाषा में

---

१ इसमें आपने मार्कण्डेय-पुराणान्तर्गत श्री दुर्गासप्तशती का ब्रजभाषा में दोहे-चौपाइयों में, अनुवाद किया है। दोहे-चौपाइयों का क्रम वैसा ही है जैसा 'रामचरितमानस' में और उसी प्रकार बीच-बीच में सोरठा और हरिगीतिका का भी प्रयोग है। इस पुस्तक को सन् १८[illegible] ई० में बाँकीपुर (पटना) के विहारबन्धु-यंत्रालय में छपवाकर आपने ही प्रकाशित किया था। —सं०

२ आपके शिष्यों का मत है कि इस पुस्तक का आधार संस्कृत का 'रम्भा-शुक-संवाद' है और इसमें केवल नर्तकी-शब्द ही प्रयुक्त है।

३ श्रीदुर्गाविजय के अन्त में आपने स्वयं [illegible] भूमिका दी है और [illegible] पर [illegible] दोहों की [illegible] टीका भी साथ ही दे दी है। [illegible] के दोहों के यहाँ एक [illegible] के रूप में प्रस्तुत है।

होती थीं। अपने जीवन के अंतिम दिनों में आप खड़ीबोली की ओर भी उन्मुख हुए थे। आपने अपनी इहलोक लीला, सं० १९०३ वि० (सन् १८४६ ई०) में ज्येष्ठशुक्ल एकादशी को समाप्त की।

उदाहरण

(१)

मंदिर मयंक-मुख नखत सु फाके परै
ही के मुकुतान हार नीके सीत थाए री।
पौनहू निरस बस दच्छिन चलन लागे
सीतल समीर-तीर पीर अधिकाए री।
छीन छवि दीपक मलान लखु 'रंग' कवि
चारो दिसि चंचल गुलाब चटकाए री।
छाई नभलाली रति औरे कहुँ पाली हाय
चाली निसि काली बनमाली नहि आए री।[1]

(२)

केहरि कीर कपोल मल मति मत्त गयन्दन सो उमगी रहै।
खंजन मत्स्य कुरंग तहाँ छवि कुन्दकली जुरि जोति जगी रहै॥
श्रीफल बिम्ब सुधा घनु नागिन वस्तु अनेकन 'रंग' रँगी रहै।
सो जिय चाहै सो लीजो लला चनु घाट पै रूपकी हाट लगी रहै॥[2]

(३)

चाह ते चमक चारु चूनरी चटक धारि
चंचल चखन चोखे चोर चित कोर मे।
सहस सिंगार सजि सोरहो सलोनी नारि
ससि ते सरस सोभ सौगुन अँजोर मे।

---

१ श्री नवनीतलाल चतुर्वेदी (मथुरा) से प्राप्त। इस कवित्त की रचना आपने बिहारी के निम्नांकित दोहे के आधार पर की थी—

मन बाली चाली निसा चटकाली धुनि कीन।
रति पाली आली अनत आये बनमाली न॥

२ 'समस्यापूर्ति' (भाग जनवरी सन् १८९८ ई०) पृ० २। यह एक समस्यापूर्ति है जिसकी समस्या है—'चाह पै रूप की हाट लगी रहै'।

राजति रुचिर रूप-राशि मे रमा-सी
'रंग' झूमति झुकति उमकति झकझोरे में।
हुमकन सहे हूर हेम की लता-सी लासी
हेरति हँसति हाय हीरक-हिंडोरे मे॥[1]

(४)

सुघर सलोनो सुभ्र कीरति कमनीय जाकी
जानत अजान जासु महिमा अगाधा को।
ध्यावत सप्रेम पद पावत परम धाम
गावत मुनीस गुन करत अराधा को।
जाकी तन झाईं नक आवत ही स्याम-तन
हरित हलोरें होत पूरित मन साधा को।
सक्ति सिरताज काज पूरन प्रद चार फल
'रंग' सोई राधा हरु मेरी भव-बाधा को॥[2]

(५)

छीन लगे है कहा यो तुमैं कटि कैसो निसङ्ग महा गरुवा है।
बादि कै केस चल्यो छिति चूमन भौंह चढ़ि है अकास अथाहे।
आनन ओप तू देखु बिचारो के कानन को दृग नासिका चाहे।
पूछूँ मैं तोसा सखा दिना ढ़क ते मो हिय हेरि हँसे हरि काहे॥[3]

(६)

साजि कै कवच तन स्यामता गगन गाढ़े
चन्द्रिका चपल चन्द्रहास चमकायो है।
कलियाँ कुमुद कुल कमल गुरुज गोल
खंजन जमात जोर सैन संग लायो है।

---

१ समस्यापूर्ति (वही जुलाई सन् १९०७ ई०), पृ० ८। यह भी एक समस्यापूर्ति है। समस्या है—हीरक हिंडोरे मे।

२ वही। इस कवित्त की रचना बिहारी के निम्नांकित दोहे के आधार पर हुई है—

मेरी भवबाधा हरौ राधा नागरि सोय।
जा तन की झाँई परे स्याम हरित दुति होय॥

३ वही (जुलाई सन् १९०७ ई०), पृ० १।

त्रिविध समीर धीर धावन चले हैं 'रंग'
विकसित कास को पताक दरसायो है।
बरखा विगत भयो सिंहिन विदारिबे को
सरद अदर्द वीर रूप धरि आयो है॥[1]

(७)

डोलै तू अकेली कहा घोर कूल कुंजन के
स्रवत सरीर स्रम-स्वेदन सकार हैं।
बेनी बिथुरि बार बहुक्यो कपोलन पै
गर गुन-माल बिनु गौहर गुँथार हैं।
नैनन लखि जानी मोहि बैनन भुराव कहा
'रंग' रस साने अरसाने असलार हैं।
थिरता पगन आये आलस अजब अली
भृगु के लता की चिता उर मे निहारे हैं॥[2]

(८)

झमकि हरि झूलत रंग हिंडोरे।
मनिमय जटित खंभ कंचन को सुरँग पाट लग डोरे॥
तैसो मुकुट सुभग सिर राजै मृगमद रुचिर सु खोरे।
अलकैं कुटिल बंक जुग भौंहैं नैन चारु चित चोरे॥
पावस उमगि घिरि घन आयो तड़ित तड़प चहुँ ओरे।
बहन समीर त्रिविध पिक सुक गन रटत रहत नित मोरे॥
झोकन झुकत दुरत प्रकटत पुनि सघन कुञ्ज की कोरे।
मनु बिधु पढत जलद-पट निसरत सोभा अधिक लहो रे॥
घेरि रहीं चहुँ दिसि ते सखियन उपमा देत 'रंग' मुख मोरे।
मदन एक रति सप कोटि अरि निरखि-निरखि तृन तोरे॥[3]

✿

१ 'समस्यापूर्ति' (वही जुलाई सन् १८९७ ई०) पृ० ३।
२. वही (दिसम्बर, सन् १८९७ ई०), पृ० ३।
३ श्रीमन्नाथ मंदिर (वही) द्वारा प्राप्त।

मुनीन्द्र

आप मिथिला के बिसौली नामक स्थान के निवासी थे। पीछे उत्तर-प्रदेश में जाकर बस गये।[१] सन् १८५७ ई० के गदर के समय आप जीवित थे।[२] आपके पिता का नाम कवीन्द्र[३] और पितामह का हरीन्द्र था। आप कुछ दिनों तक हिन्दी-साहित्य सेवी पण्डित युगलकिशोर शुक्ल के पितामह पं० तोताराम शुक्ल के साथ रहे थे। उनके दौहित्र बाबू कृष्णानन्दजी थे, जो काशीपुर के राजासाहब के शिक्षक (ट्यूटर) थे, आपकी घनिष्ठ मैत्री थी। आप अलौकिक चमत्कारोंवाले एक पहुँचे हुए साधक थे। कहते हैं, अपने से उच्चकुल की एक कन्या को सिद्धि के द्वारा शास्त्रार्थ में परास्त कर आपने उससे विवाह कर लिया था।

आप हिन्दी के एक सफल कवि थे। आपकी कविताएँ उत्तर प्रदेश के बरेली, पीलीभीत, काशीपुर और शाहजहाँपुर के काव्यानुरागियों तथा साधकों की गोष्ठियों में बड़े आदर से पढ़ी-सुनी जाती हैं। आपने 'श्रीजगदम्बा-स्तुति' नामक एक पुस्तक की रचना की थी, जिसमें श्रीजगदम्बा से सम्बन्धित आपके कुछ कवित्त संगृहीत हैं।

उदाहरण

(१)

दक्षिणा को दास हौं फराश पासवारी को
मैं रासभ हौं राज राजरानी स्रो कृपाली का।
तल्प उग्रतारा को हौं बगुलामुखी को बैल
छिन्ना को छोकरा हौं मूढ़ मुण्डमाली को ॥
सुकवि मुनीन्द्र त्रिपुरबाला जू को बालक हौं
भैरवी को भक्त पूत धूमा विकराली को।
चामुंडा के चाकर के चाकर को चू कर मैं
शूकर हौं श्यामा जू को कूकर हौं काली को ॥[४]

---

१ स्वामी हैं बिसौली के स्वकारी मिथिला के हम सब मुनमानो काशीपुर की थरैला के।
लेकिन मुनीन्द्र सरकार कारिन्दारी भारी पुत्र हैं प्रसिद्ध श्रीकवीन्द्र कवि मैथी के।
पौत्र हैं हरीन्द्र के प्रपौत्र हैं रामचरित जू के गुरु शिवपुरी श्रीराजा माधवपुर देवी के।
लाहौर, कुमाऊँ कलकत्ता और लंदन आदि-वासी के अवैधा अगाध्या जानेगी के॥
— सरस्वती (मासिक, भाग [illegible] खंड १ संख्या ५ मई सन् १९१८ ई०) पृ० ११०।
२ इसी आधार पर यह अनुमान होता है कि आपका जन्म सन् १८१०-२० ई० के बीच हुआ होगा।—सं०
३ ये भी हिन्दी के एक सफल कवि थे। इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य है।
४ 'सरस्वती' (वही) पृ० ५१७।

(२)

जाके अम्बुजासन खगासन वृषासन गणेश
शेष आसन सिंहासन भरे रहें।
तापर अनंग-रूप सेज-रूप ब्रह्माणी की
चंद्र हूँ वितान छाँह सीस पै करे रहें॥
श्रीपति रहत जाकी चरण-शरण ताके
चाकर-से बारहों दिवाकर खड़े रहें।
मंदिर के चनावीश द्वार पै कलंदर स
संदर से चौदहों पुरन्दर पड़े रहें॥[1]

(३)

नागानन नाजिर सो हाजिर हो हुजूर
श्री पति सिरस्तेदार सुखमा सने रहें।
द्रुहिण दिवान मघवान ऐसे मुंशी जी
सु मारतंड तुल्लिन मुसद्दी से बने रहें॥
वरुण वकील तहसीलदार तारा-पति
जम से जमादार संतत भने रहें।
सुकवि मुनीन्द्र महारानी जू के दरबार
महादेव ऐसे यूँ मुसाहिब बने रहें॥[2]



रघुवंश सहाय

आप छपरा के निवासी थे।[3] आपने 'मजमन-याना' नामक एक पद्यात्मक पुस्तक[4] की रचना हिन्दी में की थी, जिसे आपने स्वयं प्रकाशित भी कराया था। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



---

१ सरस्वती (पत्री) पृ० ११७।
२ वही।
३ हिन्दी-पुस्तक-साहित्य (पत्री), पृ ५६४।
४ इस पुस्तक का रचना-काल सन् १८७० ई० है। अतः आपका जन्म-काल सन् १८२ ४ ई० के लगभग अनुमित है।

रत्नपाणि[1]

आपका मूल नाम 'बबुरैया झा' था।

आप मिथिला-निवासी शाक्त तथा संस्कृत के महान पंडित और कर्मकाण्ड सम्बन्धी पुस्तकों के अधिकारी प्रणेता थे।[2] आप महाराज छत्रसिंह एवं रुद्रसिंह के दरबार में सभा पंडित थे।

कीर्तनिया-नाटकों की परम्परा में आपने 'उषाहरण' नामक एक नाटिका लिखी थी, जिससे आपके पांडित्य का भी परिचय मिलता है। इस नाटिका में आये मैथिली-गीतों के अतिरिक्त आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ भी मिलती हैं। आपका निधन सन् १८६० ई० में हुआ।

उदाहरण

(१)

शिव मोर करिअ तराने।
असह व्यथा हम सहय न पारिअ संकट पड़ल पराने ॥
नाचि-नाचि शिव तोहि रिझाओल भाव हायत वरदाने ॥
सजन मेलहुँ मायावस अभिमत जाचक आनक आने ॥
तकर उचित फल आय तुलायल जहुन कयल अभिमाने ॥
दस सत बाहु छनहि काटल गल नहि दायी भगवान ॥
सभ तेजि धाय आय तुअ परिसर भय मन आस विधान ॥
दलिअ नाथ हरषि हर हेरिअ हरिअ दोष सम्ताने ॥
दलित माथ हर सभ दुख फेरल कयल गनक परधाने ॥
रत्नपानि भन वरद एक शिव जगत-विदित जस गान ॥[3]

(२)

कर्णा वर्ण सुनल सभ लोक। भेल कृतारथ विसरल सोक ॥
तखन सँवारी नगरक भेल। दोसर द्वारका जनि बनि गेल ॥
चन्दन चर्चित जगमग सरनि। कुसुम-विभूषित भय गल धरनि ॥
तखय पताका सभ दिसि सोभ। देखइत सुरपति कौं होअ लोभ ॥

---

१ महाराज शिवसिंह के समकालीन महाराज शिवसिंह के मंत्री 'भव्युत' के एक पुत्र भी 'रत्नपाणि' नाम के हो गये हैं। किन्तु, वे आपसे भिन्न व्यक्ति थे।—ले०

२ 'हिन्दी-साहित्य को बिहार की देन' (वही) पृ० ११७। इस पुस्तक में आपका समय सन् १८[illegible] ई० संकेत है। अतः आपका जन्म अनुमानतः सन् १८०८ ई० में हुआ और देहान्त १८[illegible] ई० में।—ले०

३ मैथिली साहित्य-इतिहास (वही) पृ० १४७।

कि कहव नगरक तखनुक चरित। विसकर्म्मा जनि सिरजल रचित॥
सभ दिसि बाज सकल जन तखन। कृष्ण-कमल-मुख देखव कखन॥
गजरथ बाजि पदाति मलेछ। हरप वेभापित चलल असेष॥[1]

(३)

अयुत उदित रवि-शशिचर देह छवि, मल्लणपाट पटमासे।
रिपु सिर निकर माल उर शोभित दश दिस ज्योति विकासे॥
रुधिर-लेपमय पीन पयोधर, मुख अरविन्द समाने।
ससिवर रत्न-मुकुट शिर शोभित मृदुल हास परधाने।
पुस्तक अभय अक्ष जपमाला वर कर चारि निधाने।
निज जन शकरि असुर-भयंकरि श्री भैरवि तुअ ध्याने॥
विपय विपम रस हृदय देविपद भजल न वरत न शाने।
भुवन भवन तसु उदित सुकृति वसु से जन भव परधाने॥
जगत जननि! विनती किछु सुनिअ 'रत्नपाणि' मन दासे।
श्रीमिथिलेशक हृदय वास कए पुरिअ तासु सभ आसे॥[2]

(४)

वसहा भिरल पलान रे, कर धए लेल डोरी।
पथ चलल नहि जाए रे, व्याकुलि भेलि गौरी॥
साँझ पड़ल वनमाझ रे, गणपति छथि कोरा।
अवहुँ करिअ दृढ़ ज्ञान रे, बुढ़ भङ्गी मोरा॥
भाङ धुथुर केर थूर रे, फाँकथि भरि गाला।
परिजन भूत वेताल रे, ओढ़न वघछाला॥
'रत्नपाणि' धर ध्यान रे, विनती कर जोरी।
हर थिक त्रिभुवन नाथ र, सुनु गौरी मोरी॥[3]

✿

---

१ मैथिली साहित्यक इतिहास (वही), पृ १६८।
२. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद सं० ८४ पृ० ४८ ४९।
३. वही, पृ ४९।

राजेन्द्रशरण

आपका उपनाम 'जानकीप्रपन्न' था।

आप छपरा-निवासी एक राम भक्त थे।[१] खड़ीबोली में रचित आपकी एक प्रकाशित पुस्तक 'रसिक उर-हार' का पता चला है।

उदाहरण

राजिन्दर जानकी-वर चरन ध्यावो।
सुजस श्रीप्रानपति के नित्य गावो॥
नमो प्रीतम पियारे प्रान-वल्लभ।
दरस अपना दिखाओ जो है दुर्लभ॥
विनय करता हूँ अतिसय प्रान-प्यारे।
लगी है आस चरनों में तुम्हारे॥
तुम्हारे बिन बहुत दिन प्यारे बीते।
नयन लोचन सफल हों अब तुम्हीं से॥
दरस तव प्रान-वल्लभ मैं जो पाऊँ।
कमल-चरनों का मधुकर हो हो जाऊँ॥
चरन-रज से कृतारथ सीस करके।
रहूँ मैं मोद से निज हीय भरके॥
धरे हाथा पै आर्पकंज चरन को।
सदा देखा करूँ सोभा सदन को॥

१ कहा जाता है कि आप मुंगेर जिले के 'छपरा' नामक स्थान के निवासी थे और जिस समय श्रीरूपकला जी मुंगेर में कई साल लगातार रहे थे उसी समय उनके संपर्क से आप भी माधुरी मधुर भावना की रामभक्ति के अधिकारी हुए। श्रीरूपकला जी सन् १८८० ई० के आसपास मुंगेर में थे। कहते हैं कि वहाँ वे करीब [illegible] साल रहे। संभव है वहीं के सत्संग से आपके मन में जनकदुलारी-भक्ति उदित हुई हो। उस समय आपकी अवस्था ५० वर्ष के लगभग रही होगी। अतः अनुमान है कि आपका जन्म सन् १८३० ई० के इधर उधर हुआ होगा। —सं०

कभी हँस के न बोले तुम सियावर।
कृपाकर दो य' सुख मुझको दया कर॥
मुझे अपनी झलक प्यारे दिखाओ।
वचन मीठे मुझे अपने सुनाओ॥
सदा राजेन्द्र सिय पिय ध्यान लाओ।
सुजस श्री प्रानपति के नित्य गाओ॥[1]



राम

आपके जन्म-स्थान का पता निश्चित-रूप से नहीं चलता किन्तु इतना ज्ञात हुआ है कि आप सन् १८५७ ई० के सैनिक विद्रोह के अमर सेनानी जगदीशपुर निवासी बाबू कुँवरसिंह के आश्रित कवि थे।[2] जिस प्रकार महाकवि भूषण ने छत्रपति शिवाजी की यशोगाथा लिखकर अपनी लेखनी को धन्य किया था, उसी प्रकार आपने अपने आश्रयदाता बाबू कुँवर सिंह के शौर्य-पराक्रम पर काव्य-रचना की थी, जो आगे चलकर 'कुँवर पचासा'[3] नाम से पुस्तकाकार प्रकाशित हुई।

उदाहरण

जैसे मृगराज गजराजन के मुण्डन पै
प्रबल प्रचण्ड सुण्ड खण्डत उदण्ड है।
जैसे बाज लपकि लपेट के लवान-दल
दलि-मलि डारत प्रचारत विहण्ड है।
कहै 'राम' कवि जैसे गरुड़ गरब गहि
अहि-कुल दण्डि-दण्डि मेटत घमण्ड है।
तैसे ही कुँवरसिंह कीरति अमर मण्डि
फौज फिरंगीन को करी खण्ड-खण्ड है॥[4]



१ 'रसिक कंठ-हार' (मिश्रबन्धु अनुप्रकाश) पृ १६।
२ 'आज' (दैनिक, साप्ताहिक-विशेषांक, ६ जनवरी सन् १९५८ ई०) के '१८५७ के समकालीन कवि और उनका काव्य' शीर्षक लेख से। सन् १८५७ ई० में कविता-रचना-काल में आपकी अवस्था चालीस वर्ष के लगभग रही होगी। अतएव अनुमानतः आपका जन्म-काल सन् १८२० ई० के आसपास माना जा सकता है।—सं०
३ इस नाम की एक पुस्तक भोजपुरी भाषा में 'तोफाराय' नामक कवि की भी है। इसी पुस्तक में अन्यत्र उनका परिचय देखिए।
४ 'आज' में प्रकाशित उक्त लेख से ही।

रामचरणदास[1]

आपका उपनाम 'हंसकला' था। आपका यह नाम आपके गुरु श्रीरामदास 'नृत्यकला' ने रखा था।[2] आपका वास्तविक नाम था 'नागापाठक'।

आप सारन जिले के 'कमसर' परगने के गंगा-तटस्थ गंगहरा-ग्राम के एक ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुए थे।[3] आप किशोरावस्था में ही विरक्त हो गये। गृहत्यागी विरागी होकर जब आप वैद्यनाथ-धाम (देवघर) पहुँचे तब ईश्वरीय प्रेरणा से आपको लक्ष्मीपुर की रानी के जगन्नाथ-धाम मंदिर में वैष्णव-भक्त श्रीरामदासजी 'नृत्यकला' के दर्शन हुए। आपकी श्रद्धा-भक्ति से सन्तुष्ट होकर उन्होंने आपको अपना शिष्य बना लिया और उसके बाद ही आप 'रामचरणदास' के नाम से प्रसिद्ध हो गये। आपने बहुत दिनों तक उनके साथ रहकर सांप्रदायिक ग्रन्थों का अध्ययन किया तथा धार्मिक विषयों में अच्छी योग्यता प्राप्त करके विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त की। जबसे श्रीरामदासजी ने आपको अपने गुड़हटा (नागमपुर) के श्रीराम-मंदिर की महन्थी गद्दी देकर श्रीसाकेत-यात्रा की तब से आप बराबर उसी स्थान में रहकर ईश्वर भजन और साधु-सेवा किया करते थे। आपने अपने अमृतमय उपदेशों से बहुतों को सत्पथ पर लाकर कृतार्थ किया। आपके शिष्यों में प्रमुख थे श्रीसीतारामशरण भगवान प्रसाद 'रूपकला'।[4] वे आपको ही अपना दीक्षागुरु मानते थे।

नागमपुर में आपके स्मारक-स्वरूप आज भी 'श्रीहंसकला भगवत् संकीर्तन-समाज' स्थापित है। सं० १९४९ वि० (सन् १८९२ ई०) की शरद-पूर्णिमा को, लगभग ७५ वर्ष की आयु में, आपने साकेत-यात्रा की।

आपने हिन्दी में एक धार्मिक-पुस्तक 'राममाहात्म्य-चन्द्रिका' लिखी थी।[5] आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।



---

१ इसी नाम के एक और कवि १७ वीं शती में हो गये हैं। उनका उपनाम 'भवसेवक' था और वे रवा के निवासी थे। उन्होंने रामायण की परम्परा में एक काव्य-ग्रन्थ 'अनुकम्पा' की रचना की थी। उनके विस्तृत परिचय के लिए देखिए—'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही) पृ० ८८।

२. कहते हैं कि घर से विरक्त होकर जब आप श्री वैद्यनाथ-महादेव के दर्शनार्थ वैद्यनाथ-धाम (देवघर) गये तब वहाँ स्वप्न में आपको आज्ञा हुई कि 'मझौली में लक्ष्मीपुर की रानी के जगन्नाथ-मंदिर में श्रीरामदास 'नृत्यकला' नामक वैष्णव महात्मा रहते हैं उन्हीं की सेवा में जाकर रहो।' इसके पश्चात् वैद्यनाथ-धाम में तीन दिनों तक रहकर आप उक्त महात्मा की शरण में पहुँचे। कुछ ही दिनों में आप उनके बड़े कृपापात्र हो गये। आपकी शृंगार भाव की उपासना देखकर उन्होंने आपका नाम 'श्रीसीताराम हंसकला' रख दिया।—देखिए, रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय (वही) पृ० ४१८ तथा 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही प्रथम खण्ड), पृ० ८८।

३ श्रीहरिहरक्षेत्र-पत्र (मासिक भाग १६ संख्या १), पृ० ३०-४। सं० १९१८ वि० (सन् १८६१ ई०) में आपने रूपकला जी को दीक्षित किया था। अनुमानतः उस समय आप साठ वर्ष के रहे होंगे। इस तरह आपका जन्म-काल सन् १८०१ ई० के लगभग होना चाहिए।—सं०

४ इनका परिचय प्रस्तुत पुस्तक में ही यथास्थान मुद्रित है।

५ इसका प्रकाशन सन् १८९२ ई० में मुंगेर के श्रीरामगोविन्द मारवाड़ी नामक किसी व्यक्ति ने किया था।—देखिए, हिन्दी पुस्तक-साहित्य (वही) पृ० ३५८।

रामरूपदास[1]

आपका जन्म दरभंगा जिले के 'पुष्पपुर' नामक ग्राम में हुआ था।[2]

आप बल्लभ सम्प्रदाय के एक पहुँचे हुए सन्त थे। कहते हैं कि एक बार एक निर्धन व्यक्ति कुछ आर्थिक सहायता के लिए आपके पास आया। आपने उसे एक पत्र के साथ अपनी पत्नी के पास भेज दिया। पत्र में उक्त व्यक्ति को बीस रुपये दे देने का आदेश था। आपकी पत्नी ने रुपये रहते हुए भी उस व्यक्ति को निराश वापस कर दिया। इसी बात पर आपके मन में विरक्ति उत्पन्न हुई और आप गृहत्यागी हो गये।[3] भगवान श्रीकृष्ण में आपकी अपार श्रद्धाभक्ति थी। आप एक आत्मनिष्ठ योगी थे। आपका जीवन लोक-कल्याणकारी था। आपने अनेक स्थानों में भ्रमण करके वैष्णव धर्म का प्रचार किया। जब आप धर्म प्रचारार्थ भ्रमण में निकलते थे, तब आपके पीछे सैकड़ों की जमात चलती थी।

अपने जीवन के अन्तिम दिनों में रमता योगी की तरह पर्यटन करते हुए आप बड़हिया (मुंगेर) आये थे और वहाँ के शाक्तों को समझा-बुझाकर पशु-बलि की प्रथा बन्द करा दी थी। उस समय आप वृद्ध थे। आपका स्वर्गारोहण मुंगेर जिले के ही गंगा-तटस्थ मथुरापुर-ग्राम में, सन् १८७१ ई० के आसपास, हुआ था।

हिन्दी में आपने अनेक भजनों की रचना की थी। ऐसा कहा जाता है कि आप नित्य नियमपूर्वक पाँच भजनों की रचना करके भगवान श्रीकृष्ण को अर्पित करते थे। आपके भजनों का एक संग्रह 'गोपाल-सागर'[4] के नाम से श्रीवेंकटेश्वर स्टीम-प्रेस, (बम्बई) में छपा था।

---

१ इस नाम (रामरूप) के एक और भी मिथिला-निवासी कवि का उल्लेख मिलता है जो 'रामरूप' के नाम से भजन-रचना करते थे। डॉ॰ ग्रियर्सन ने मिथिला में रहते समय इनके अनेक गीत संकलित किये थे। पता नहीं चल सकता कि ये दोनों व्यक्ति (रामरूपदास और रामरूप (स्वरूप')) एक ही थे या भिन्न।—देखिए, डॉ॰ ग्रियर्सन-कृत 'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (पटना) पृ॰ १४।

२. डॉ॰ लक्ष्मीकान्त राय (भिषग्-पदाधिकारी अस्पताल बड़हिया मुंगेर) से प्राप्त सूचना के आधार पर। उन्हीं के मतानुसार आपका जन्म उन्नीसवीं शती के आरम्भिक वर्षों में ही अर्थात् सन् १८०० से १८१० ई॰ के आसपास कभी हुआ था।—सं॰

३ वही।

४ इसकी एक जीर्ण-शीर्ण प्रति श्रीकुमार भागवतभूषण 'शिवदास' (बड़हिया मुंगेर) के पास है।

उदाहरण

(१)

यमुना-तट बंशी बाज रही मन-मोहन रास-रसीले के।
मुरली-धुनि सुनी बाउरी हो गये मनहर रूप रंगीले के।
विपिन घोर अँधियार एरि रजनी ढूँढ़त फिरत छबीले के।
घर दुआर परिवार सुख छूटल परि गये भग अहीरे के।
रामरूप कह दो कृपा करि मिलिहैं हमरा सुअन जसोदे के॥[1]

(२)

हरि हम मूढ़ मन्द अभिमानी।
सम्पति अवर को देखि जरत उर विपति निरखि हरखानी।
डोलत फिरत घर-घर कूकुर सम कबहुँ न पेट अघानी।
पर को छिद्र विलोकत जहँ-तहँ पर-तिय निज करि जानी।
पर अपमान मान नहिं कबहुँ दिन-दिन मान मोटानी।
पर-उपकार कबहुँ नहिं कीन्हों अपकार सदा जिय आनी।
पतितन कर सरदार सिरोमनि श्रुति पुरान नहिं मानी।
हौं अपराधी अनग जनम कर हरि तेरो हाथ बिकानी।
रामरूप पाप-सागर महँ बूड़त कर गहु सारंगपानी॥[2]

❁

रामसनेही दास[3]

आपका जन्म दरभंगा जिले के मधुरा-ग्राम में, एक निर्धन परिवार में हुआ था। जब आप दस वर्ष के हुए, तभी आपके पिता पं० हनुमान दत्त झा का देहान्त हो गया।

---

१ ओरिएण्टल (पटना) से प्राप्त।

२ काशी से प्राप्त।

३ आपका परिचय 'आर्यावर्त' (दैनिक, १ मई सन् १९५८ ई०) में प्रकाशित श्रीयोगेश्वर प्रसाद सिंह के लेख के आधार पर तैयार किया गया है। उसी लेख के लेखक का अनुमान है कि आपका जन्म सन् १८११ ई० के आसपास हुआ होगा। —सं

बाल्यपन में आपका प्रमुख कार्य अपनी गायों को चराना था। गायें चराते समय भी आप भजन गाते रहते थे। संध्या-समय उक्त कार्य से निवृत्त होकर आप चौपाल में धर्म-चर्चा सुनने में रम जाते थे।

एक दिन एकाएक आपके हृदय में निर्वेद-भाव का उदय हुआ और आप घर त्याग कर अयोध्या चले गये। वहाँ नागा-साधुओं के सत्संग में आपके शरीर एवं मन का स्वस्थ विकास हुआ। इसके पश्चात् विद्योपार्जन के लिए आप काशी पहुँचे। वहाँ आपने साहित्य के अतिरिक्त व्याकरण ज्योतिष एवं आयुर्वेदादि शास्त्रों का अध्ययन किया। लगभग तीस वर्ष की अवस्था में, वृन्दावन आदि तीर्थों का पर्यटन करते हुए, आप पुनः अपनी जन्मभूमि को लौट आये। यहाँ श्री-सम्प्रदाय में दीक्षित होकर आपने संत चण्डीगोस्वामी का शिष्यत्व ग्रहण किया। इसके बाद का आपका जीवन एक संत एवं काव्य-साधक का जीवन है।

कहते हैं, मधुकरदास[1] मुरतानदास, पंचमदास प्रभृति संतों को काव्य प्रणयन की प्रेरणा आपसे ही मिली थी। भक्ति के क्षेत्र में आपके प्रिय शिष्य थे मोहनदास जी।

आप हिन्दी और मैथिली के एक कुशल कवि थे।[2] हिन्दी में आपकी स्फुट-काव्य रचनाएँ उपलब्ध हैं। आपका निधन लगभग ८७ वर्ष की आयु में, सन् १९०६ ई० में, हुआ।[1]

उदाहरण

(१)

सीतापति रामचन्द्र कोशल रघुराई।
वेद विप्र धेनु संत दुखित सकल जीव-जंत,
मथिल-नृप ज्ञानवंत विपति-घटा छाई।

---

१ किंवदन्ती यह है कि मधुकरदास ही रामसनेहीदास जी को गुरु समझते थे। किन्तु छन्द-प्रमाण के आधार पर रामसनेही दास ही मधुकरदासजी के शिष्य रूप में मालूम होते हैं—

"मधुकरदास गुरु तब कसे राम कियो जब नेह।
रामसनेही आनि तब सीस धरे पग खेह॥"

—'ज्योतिर्वर्द्ध' के उसी लेख से।

२ एक समय साधु-सम्मेलन का आयोजन किया गया था जिसमें रामसनेहीदासजी ने 'कबीर' शब्द का विश्लेषण विरक्ति-भावधारा की सहायता से इस प्रकार किया—

'क' कहत भवजल से 'बी' कबहुँ भय नाहिं।
रामरूप 'र' जाम हरि सो कबीर कह आहि॥

रामसनेहीदास जी बड़ सूझवाले थे। उन्होंने अपने प्रवचन में 'साधु' का विश्लेषण और स्वरूप-निर्धारण इस प्रकार किया—

मन काया अरु वचन से साधु दूषण नाहिं।
रामसनेही साधु सो रामरूप जग माहिं॥

१ वही।

ब्रिटिश राज करत पाप जनगण विच बहुत दाप,
आवि आय हरहु ताप सुखर सुखदायो।
सबल सुवन भेल मद देशक दय फटक फंद,
मूँह कान कनै बंद गोरा कटकायो।
कहत 'रामस्नेहिदास' मारहु सबह ओनिवास,
हरहु त्रास एक आस चरण केरि साईं॥[१]

(२)

जगत में रामनाम छथि सार।
शिव गणपति आदिम कवि जानथि महिमा हिनक अपार।
मातु-पिता गुरु-मित्र सहोदर पुरजन कुल परिवार।
सबमयो माया मोहक सगी छथि करु मनहि विचार॥
अवध जनकपुर की वृन्दावन जाकै हो हरिद्वार।
पुरी प्रयाग वाराणसी में शिव सदिखन इएह उचार।
गणिका गीध गजेन्द्र पापिनी अधम गँवार।
से सै नाम प्रेम सौं प्रभु के उतरल भवनिधि पार॥
सतयुग योग जाग त्रेता छल द्वापर दान उदार।
'रामसिनेही' जनहित केवल कलयुग नाम प्रचार॥[२]

(३)

मानिक मुक्ता माहिं सब, नग करि देखु विचारि।
उपज 'रामस्नेही' नहीं, चन्दन सब बस झारि॥
संग महाभारत कियो, पार्थ वीर बलवान।
रामसिनेही प्रभुबिना, ब्याधा मारो बाण॥[३]

१ "मार्थोदर्थ" के सौजन्य से।
२. वही।
३. वही।

रिपुभंजन सिंह

आप जगदीशपुर (शाहाबाद) के पास दलीपपुर-गढ़ के निवासी थे।[1] आपके पिता का नाम था बाबू दयालु सिंह, जो सन् १८५७ ई० के गदर के अमर सेनानी बाबू कुँवर सिंह के सगे छोटे भाई थे।[2] आप अपने पिता के ज्येष्ठ पुत्र थे।[3] आपके छोटे भाई का नाम था गुमानभंजन सिंह। आपका विवाह रहसुआ (शाहाबाद)-निवासी बाबू निरंजन सिंह की कन्या से हुआ था।[4] कहते हैं, उन्होंने आपको विवाह के अवसर पर तीन लाख रुपये दिये थे—एक लाख कविता-रचना की शिक्षा के लिए, एक लाख कुश्ती लड़ने के लिए और एक लाख शिकार खेलने के लिए। आप स्वयं निस्संतान ही मरे। आपकी विधवा पत्नी बहुत दिनों तक जीती रही। सन् सत्तावन के गदर के बाद आप राज्याधिकारी हुए।[5]

आप एक लम्बे कद के बलिष्ठ जवान 'नामी पहलवान और साहसी शिकारी थे।'[6] बाबू कुँवर सिंह ने जगदीशपुर में जो शिवालय सन् १८४६ ई० में बनवाया था,

---

१. 'बाबू कुँवरसिंह' दुर्गाशंकरप्रसाद सिंह (प्रथम सं०, सन् १९५५ ई०) पृ० १६, १९।

२. कुँवरसिंह से न पटने के कारण दयालु सिंह ने जगदीशपुर रियासत से अपना हिस्सा निकलवाकर अपने पिता साहबजादा सिंह के समय में ही अलग ले लिया था। साहबजादा सिंह की मृत्यु के बाद फिर कुँवरसिंह से दयालु सिंह की अनबन बहुत अधिक बढ़ गई, तब उन्हें जगदीशपुर त्याग देना पड़ा।

३. आपका जन्म अनुमानतः सन् १८२० ई० के आसपास हुआ होगा। सन् १८३९ ई० में बाबू कुँवर सिंह द्वारा स्थापित शिवमूर्ति के सामने का शिलापट्ट वहीं देर तक गाड़े रहने के कारण अनुमान होता है कि उस समय आपकी अवस्था कम-से-कम बीस वर्ष की रही होगी। इस हिसाब से आपका जन्मकाल सन् १८२१ ई० अनुमित होता है।—सं०

४. "इस बरात में डुमराँव के महाराजा जयप्रकाश सिंह और जगदीशपुर से बाबू कुँवर सिंह भी गये थे। जो इन्तजाम बरात में हुई थी वह बयान से बाहर है। इसी शादी की बदौलत से बाबू निरंजन सिंह बरबाद हो गये।"—'तवारीखे उज्जैनिया' (उर्दू, हिस्सा १) पृ० ११४-१५।

५. "सन् १८५७ ई० के गदर के पहले ही बाबू कुँवर सिंह के एकमात्र पुत्र दलभंजन सिंह मर चुके थे और गदर के समाप्त होते ही नौरा (उत्तर प्रदेश) में पौत्र वीरभंजन सिंह भी मर गये। इसलिए गदर के बाद रियासत रिपुभंजन सिंह को नहीं मिली। डुमराँव के महाराज महेश्वरबख्श सिंह ने सरकारी नीलाम खरीद ली। बहुत धूमधाम से गद्दी-नशीनी हुई।"—वही।

६. सन् ५७ के गदर के समय भारत-सरकार (गवर्नर जनरल) ने शाहाबाद के गदर-कालीन अधिकारियों की जो सूचिका निकाली थी, उसमें आपके रूप का विवरणात्मक परिचय है।

७. "शेरों के शिकार के लिए दक्खिनी पहाड़ों में बराबर जाया करते थे। एक बार शेर को गोली लगी पर जख्मी होकर झपटा तो रिपुभंजन सिंह ने उसके दोनों अगले हाथ (?) पकड़ लिये। आपके साथी गोपालदीन अहीर ने बन्दूक की नाल शेर के मुँह में डाल दी। गुस्से में आकर शेर ने नाल चबा डाली। एक घंटे तक कुश्ती शेर से होती रही। अवसर देखकर अपने को बचाने की फुर्सत नहीं मिली। वही साथी जान से लाचार कर बचाव करता रहा। वह साथी भी शेर के नाखूनों से कई जगह घायल हो गया। आखिर आप शेर को पीछे धकेलते पहाड़ की खोह तक ले गये और वहाँ ऐसा धक्का दिया कि शेर नीचे खोह में जा गिरा। शेर की कमर टूट गई वह उठ नहीं सकता था। आप दोनों साथी भी घायल हो गिर पड़े थे। तबतक लोग आ पहुँचे और घर ले आये, दवा-दारू से घर पर दुरुस्त हुए। उस साथी को जमीन और खेत इनाम दिये गये।"—(वही) पृ० ११४-१५।

जिसको आगे चलकर (सन् १८५८ ई० में) अँगरेजों ने बारूद से उड़ा दिया, उसमें स्थापित होनेवाली शिवमूर्ति का अरघावाला शिलाखण्ड बहुत भारी था। स्थापना के समय उसे पाँच-छः पहलवान मिलकर उठा सके थे। कहते हैं, आपने अकेले ही उसे उठाकर मंदिर में प्राण प्रतिष्ठा के स्थान पर रख दिया था।[1] आपको अस्त्र शस्त्र संचालन का भी अच्छा ज्ञान था तथा आप संगीत के भी आचार्य थे।[2]

कहा जाता है कि सन् सत्तावन के गदर के पूर्व जब बाबू कुँवर सिंह के दरबार में क्रांति के पक्ष और विपक्ष में दो दल काम कर रहे थे, तब आप क्रांति विरोधी दल के नेता थे। आगे जब खुलकर बलवा हो गया, तब आपने अँगरेजों की सहायता भी की। इस काम में आपने डुमराँव के तत्कालीन महाराज महेश्वरबख्श सिंह का भी सहयोग पाया। आपका यह काम बाबू कुँवर सिंह की मृत्यु के बाद तक चालू रहा। बाबू कुँवर सिंह की जब्त रियासत प्राप्त करने के लिए भी आपने कोई प्रयत्न उठा नहीं रखा।

आपके पिता का देहान्त बहुत पहले ही हो गया था। उनके देहान्त के पश्चात् आपही अपनी रियासत के कर्त्ता धर्त्ता हुए। आपकी रियासत लगभग साठ-सत्तर हजार सालाना आमदनी की थी। इसका उपभोग आपने अपने भाई के साथ लगभग १२८१-८४ फसली (सन् १८७५-७८ ई०) तक किया। उसके बाद कर्ज, [illegible] और मुकदमे लड़ने में आपकी सारी रियासत बिक गई[3] और आपकी आर्थिक दशा बहुत बिगड़ गई।[4]

---

१ "बाबू कुँवर सिंह के भतीजा बाबू रिपुभंजन सिंह बड़े ताकतवर और हिम्मत-बहादुर थे। बाबू कुँवर सिंह जगदीशपुर में कुबेरेश्वर महादेव का मन्दिर बनवाकर शिवजी मूर्ति की स्थापना कर रहे थे। जब विधियाँ कुँवर सिंह के हाथ से कराई गई। शिवजी के अरघे में रखने के लिए पत्थर की एक शिला भी जो डेढ़ गज लम्बी और डेढ़ गज चौड़ी थी और उसके बीच में मूर्ति के लिए बड़ा छेद बना हुआ था। बड़े ताकतवर जमा आये, पर उसके बहुत भारी होने के कारण वे काँपने लगे, मगर विधि के सम्पन्न होने पर ही वह शिला नीचे अरघे में रखी जा सकती थी। आखिरी को बिगड़ता देख रिपुभंजन सिंह ने बड़े ताव किया और उस बड़ी शिला को दोनों हाथों उठाकर बगल में दबा लिया जब तक विधियाँ पूरी हुईं तब होरे (अरघे) में रख दिया। बाबू कुँवर सिंह आदि उपस्थित लोगों को बड़ा अचम्भा हुआ और वे लोग आपको शाबाशी देने लगे। —'शाहाबाद गजेटियर (जिल्द १), पृ० ११७-१८।

रिपुभंजन सिंह चित्रकला, वास्तुकला, संगीतकला, नृत्यविद्या, घुड़सवारी शस्त्रकला आदि में बड़े निपुण थे। उन्हें यहाँ के सवार नामी राजपूतों ने शस्त्रविद्या की तालीम दी थी। [illegible] सिंह और चाचा अमर सिंह ने भी घुड़सवारी-शिकारी सिखाई थी। —वही ११४ १५।

गदर के बाद आप दोनों भाइयों में अनबन शुरू हो गई। [illegible] होने के कारण आप बहुत खर्चीले स्वभाव के थे। आप [illegible] भाई गुलाब [illegible] सिंह आपके कर्ज दिया करते थे। मूलतः इसी बात पर आप दोनों में भेद बढ़ता ही गया। रियासत भी कर्ज के बोझ से लदती गई। अन्त में मुकदमेबाजी में सारी रियासत स्वाहा हो गई। —देखिए, बाबू कुँवर सिंह (वही) पृ० १६० और २०१।

आपकी इस परिस्थिति में डुमराँव के उपर्युक्त महाराज राधाप्रसाद सिंह ने तथा जगदीशपुर रियासत के अंगरेज ठीकेदार [illegible] से बहुत सहायता की थी। इन दोनों व्यक्तियों की ओर से आपको आजीवन [illegible] की आर्थिक सहायता मिलती रही। —वही

आपके दरबार में विद्वानों और कवियों का आना जाना बराबर हुआ करता था। आप स्वयं भी हिन्दी, संस्कृत और फारसी के बड़े अच्छे विद्वान्, दर्शन-शास्त्र के पंडित तथा कवि थे। हिन्दी में आपकी कोई पुस्तकाकार रचना नहीं मिलती, स्फुट काव्य रचनाएँ भी दुर्लभ हैं।

उदाहरण

जदुकुल बंस चले, रघु औ दिलीप चले,
चले राम रावन अचल जस आपनो।
सिव चले सक्ति चले ब्रह्मा दिग्पाल चले,
चले सेस सहस-फन उदन प्रमापनो।
कहे 'रिपुभजन' कतेक देव-दानव चले,
चले बलि बामन तीन लोकन को नापनो।
जगत के देखे में लोग सब चले जात,
लोगन के देखे में चलन होइहैं आपनो॥[1]



लक्ष्मीनारायण[2]

आप शाहाबाद जिले के अखित्यारपुर-ग्राम के निवासी थे।[3] आप गोरखपुर में पुलिस-दारोगा थे। श्रीहनुमान्‌जी के उपासक के रूप में आपकी अच्छी प्रसिद्धि थी। सरकारी नौकरी से अवसर ग्रहण कर स्थायी रूप से आप अखित्यारपुर में ही रहने लगे। यहाँ आपका अधिक समय एक मंदिर में रहकर काव्य-रचना तथा भगवद्भजन करने में ही बीतता था। आपके एक पुत्र का नाम नागेश्वर प्रसाद था। वे भी हिन्दी में कविता रचना करते थे। बाबू शिवनन्दन सहाय का कहना है कि आपने हनुमान्‌जी के गुण-कीर्तन में विरासी चौपाइयों की एक पुस्तिका रची थी। फारसी लिपि में लिखी हुई उसकी एक प्रति उन्होंने (बाबू शिवनन्दन सहाय ने) देखी भी थी। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।

---

१ स्व० के० सरयूपुत्र मीड़ (जगदीशपुर शाहाबाद) के दिनांक १९-२ १८ के पत्र से।

२ इस नाम के एक और कवि १९वीं शती में मिथिला में हो गये हैं। वे सं० १८८ वि (सन् १८२१ ई) के लगभग हिन्दी के कवि मधुरीश शाहजादा (सन् १८०७-१८११ ई०) के दरबार में थे। हिन्दी में उनकी दो रचनाएँ मिलती हैं—(१) देवताउत्पत्ति और (२) 'हनुमानजी का तमाशा'। —ग्रियर्सन, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही) पृ० ६८।

३ श्रीशिवनन्दन सहाय (अखित्यारपुर, शाहाबाद) द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर। आपके जन्म-काल के सम्बन्ध में अनुमान है कि यह सन् १८१० ई० के आसपास होगा; क्योंकि बाबू शिवनन्दन सहाय ने उन्नीसवीं शती के अन्तिम भाग में इन्हें वयोवृद्ध देखा था।—सं०

लक्ष्मीसखी

आपका वास्तविक नाम 'लक्ष्मीदास' था।

आप सारन जिले के 'अमनौर' नामक ग्राम के निवासी मुंशी जगमोहनदासजी के पुत्र थे।[1] बाल्यावस्था से ही आपकी बुद्धि किसी सारतत्त्व की खोज में लीन रहती थी। उस समय से ही आप योग-ध्यान में मग्न रहते थे। आपके भाइयों ने आपको सांसारिक बनाने की अनेक चेष्टाएँ कीं, किन्तु असफल रहे। युवा होने पर आपने विवाह भी नहीं किया और क्रमशः भक्ति-पथ पर अग्रसर होते गये। सांसारिक वस्तुओं से आपने यहाँतक नाता तोड़ लिया था कि शरीर पर वस्त्र भी नहीं धारण करते थे।

लगभग पचीस-छब्बीस वर्ष की अवस्था में आपने एक संत श्रीज्ञानीदासजी का शिष्यत्व ग्रहण कर अनेक स्थानों में भ्रमण किया। कहते हैं, इसके पूर्व आप कबीरपंथी थे। श्रीज्ञानीदासजी के साथ विचरण करने के पश्चात् सरभंग-सम्प्रदाय की साधना-पद्धति से आपको विराग हो गया और आपने सखी-सम्प्रदाय के नाम से एक नये पंथ का ही प्रवर्तन किया। इस नये पंथ के प्रवर्तन के पश्चात् भी प्रायः साठ वर्ष की अवस्था तक आप अपने अनुयायी संत-भक्तों की जमात के साथ तीर्थाटन करते रहे। अन्त में उसका भी परित्याग कर आपने सारन जिले के रामपट्टी-स्टेशन (एन० ई० आर) के निकट शालग्रामी-नदी के तट पर 'टेरुआ चौंवर' में एक कुटिया[2] बना ली, और उसी में स्थायी रूप से रहकर योग-साधना एवं भगवद्भजन में अपने दिन बिताने लगे। आपने अपने जीवन के शेष सात वर्ष उसी कुटिया में बिताये। इनमें भी अंतिम चार वर्ष आप कुटिया के अन्दर प्रायः समाधिस्थ ही रहे। कहते हैं, इन्हीं चार वर्षों में आपने अपनी समस्त रचनाएँ पूरी की थीं। आपके शिष्यों में सर्वप्रधान हैं—कामतासखी[3], जिन्हें आपके सम्प्रदाय के प्रधान अधिकारी होने का भी श्रेय प्राप्त है। इनके अतिरिक्त आपके शिष्यों में दो सज्जन और भी प्रमुख हैं—श्रीमहीपसखी और श्रीरघुनाथसखी।

आप सं० १९७० वि० में, वैशाख शुक्ल ३ मंगलवार (सन् १९१४ ई० की २८वीं अप्रैल) को ७१ वर्ष की आयु में समाधिस्थ हुए।

आपकी अधिकांश रचनाएँ भोजपुरी भाषा में ही हैं। आपकी रचनाओं में निम्नांकित पुस्तकाकार में प्राप्त हैं—अमर-सीढ़ी[4], (२) अमर-कहानी[5], (३) अमर

१ 'अमर-कहानी' (लक्ष्मीसखी, प्रथम सं० सन् १९५० ई०) पृ० क (प्रशस्ति) तथा 'अमर-विलास' (वही प्रथम सं० सन् १९५५ ई०) पृ० क (भूमिका)।

२. इसमें आपके एक शिष्य महात्मा श्रीरामदीनजी भी निवास करते थे।

३ इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान [illegible] है।

४ इसमें आपके लिखे ८४ छन्द संगृहीत हैं।

५ इसमें आपके ७७२ छन्द हैं। इसका प्रकाशन आपके ही प्रमुख शिष्य श्रीकामतासखी ([illegible], मुजफ्फरपुर) ने १९५० ई० सन् में करवाया था।

विलास[1] और (४) अमर-फरास[2]। इन चारों रचनाओं[3] को सर्व-सम्प्रदायवालों ने 'भेद्मस्वरामभी' की संज्ञा दी है। आपकी उक्त पुस्तकों के अतिरिक्त होली, कहरा, कजली मल्हार, झूमर, सोहर, झूलना आदि पदों के छोटे-छोटे संग्रह भी प्रकाशित हुए हैं।[4]

उदाहरण

कब लगि सहबे अगिनियाँ के माहवा, ये सुहागिनि,
लख चौरासी कर धार।
नैया रे डुबेला ना त अगम अथहवा, ये सोहागिनि,
कहिले से कर ना विचार।
सतगुरु ज्ञान के केवट मलहवा, ये सोहागिनि,
संत कर शब्द करुआर।
आपन प्रीतम बसेला सखी जहवाँ, ये सोहागिनि,
सहजे से उतरि लेहु पार।
लछिमी सखी एगो गावे निर्गुनवाँ, ये सोहागिनि,
ना त टूटेला सोऽहं तार।[5]

(२)

लागेला हिंडोलवा रे अमरपुर में झूलेला सत सुजान,
चलु सखियन सुन्दर वर देखे खासि लेहु गगन पेहान।
येह पार गंगा ओह पार जमुना बीचे-बीचे सुन्दर भान,
चारु ओर उगेला जगमग तारा झलकेला सुन्दर चान।

---

१ इसमें आपके लिखे ७०५ छन्द सुरक्षित हैं। इसका प्रकाशन श्रीबाबूरामजी चम्पारन ने सन् १९११ ई० में किया था।

२. इसमें आपके लिखे १०२ छन्द हैं। इसका प्रकाशन अभी तक नहीं हो सका है। बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित ग्रन्थ-अनुसंधान-विभाग में इसकी एक हस्तलिखित प्रति सुरक्षित है। परिषद् का उक्त विभाग की ओर से इसके प्रकाशन की व्यवस्था हो रही है। —सं०

३ लक्ष्मीमठ (कहरा) में इन चारों पुस्तकों की मूल प्रतियाँ सुरक्षित हैं। वहाँ इनकी नित्य आरती होती है और गौरा-पूर्णिमा के दिन इनकी पूजा बड़ी धूमधाम से की जाती है। —श्रीकृष्णदेवप्रसाद (शिक्षक, डायमण्ड स्कूल, आरा) के १० जून, सन् १९५५ ई० के पत्र से।

४. 'साहित्य' (वर्ष ४, अंक ४ जनवरी, सन् १९५० ई०), पृ० ६५। इस प्रकार का एक संग्रह सीवान (सारन) के बिहार प्रेस से श्रीरघुनाथ प्रसाद वर्मा ने और दूसरा छपरा के श्रीसरस्वती प्रेस से श्रीदुर्गेश मास्टर श्रीधर ने प्रकाशित कराया है। —सं०

५ 'अमर-फरास' (वही) पृ० ५ (पद्यांश)।

लछमी सखी के सुन्दर पियवा मिलि गइले पुरुष पुरान,
भागेला हिरोलवा रे अवधपुर जे झुलेला राम नरेस।
चलु सखी चलु अब देखन पियवा के नीके सरी बाँधि-बाँधि केस,
एक ओर सीया धनी एक ओर लखिया बीच में बइठेला अवधेस।
सोने कर बरहा रूपन कर पाटी झिलुहा झुलावेला सेस,
लछिमि सखी के सुन्दर पियवा गुरुजी दिहले उपदेस।[1]

(३)

अब लागल ए सखी मेघ गरजे, चलु अब पियाजी के देस हे,
मोहि रे देखवा म जगमग जोती गुरुजी दिहले उपदेसा हे।
गगन गोफा में एगो सुन्दर मूरत देखत लागेला परमेस हे,
रूप अनूप छवि बरनि ना जाला जनु कोटिन उगेला दिनेश हे।
उगेला धाम ताहाँ आठो पहारा माया मोह फाटेला कुहेस हे,
जनम मरन कर छूटेला मनसा जे पुरुष मिलला अवधेस हे।
चारु ओर हीरा लाल के बाती हस-हस बरेले हमेशा हे,
उठेला गगन घनघोर महाधुनी अमृत भरेला अलेख हे।
लछमी सखी के सुन्दर पियवा सुनि लेहु पिया क सनेस हे,
मानुष जनम के बूझल पियावा फेरू नाही लगिहें उपेस हे।[2]

(४)

बरिसला गगन भिजेला मोरा सारी कैसे चला दसम दुआर हे,
भेजि देहु ए पिया डोलिया कहरिया एगो सुन्दर सबुजी ओहार हे।
आव-जाव ए मोरा सखिया सलेहर मिलि-जुलि कर ना सिंगार हे,
अबकी के जावना फेरु नहीं आवना करि लेहु भेंट अँकवार हे।
हुलसत दलमल चलेला कँहरवा आई के लागेला दुआर हे,
देखला मैं ए सखी सुन्दर पियवा आसि के बइठेला पँवार हे।

---

१ 'भोजपुरी के कवि और काव्य' (वही) पृ० १९६।
२ 'भजन-संग्रह' (वही, प्रथम सं०, सन् १९५० ई०) पृ० ११।

रूप अनूप कहाँ कहाँ सखिया जनु कोटिन चन्द्र उजियार हे,
हाथावा में लिहले बान सरासन भंजन भूमि भार हे।
लछमी सखी के सुन्दर पियवा भगत हेत अवतार हे,
अवकी के जनम सुधारि लेहु सखिया ना त होइबे कुकुर सियार हे।[1]

(५)

उठु सखी उठु चलु अमर नगरिया।
सुख के सागर सखी भरिले गगरिया,
सतगुरु हमरो मिलले चरहरिया।
यार तोरा भल नीक लागेला जहरिया,
जे खोजत बने ना दुइ दमरि चमरिया।
छोरि देहु साक पोसाक ओढ़िले कमरिया,
आरे का तोरे आँख में लागल बा अमरिया।
लछिमा सखी बान्हि लेहु गेंठी में समरिया,
फरफर पेन्हि लेहु चुमुकी चुनरिया।[2]

*

लालबाबू

आप मुजफ्फरपुर जिले में गोपालपुर नामक स्थान के निवासी थे।[3] आपने पदई (छारन) के साहित्यिक रईस बाबू कमलनारायण सिंह के आश्रय में रहकर काव्य-रचना की थी।

उदाहरण

नव-गुन-निधान नग ईसन उदार नृप।
कौसल-नृपा क गेह नाम समुदाई है॥
लहि सतसंग मतिमन्द मधु गुनि भयो।
मलयाचल गन्ध गुन चन्दन सुहाई है॥

---

२. 'भजन-संग्रह' (वही) पृ० ४।
३. 'भ्रमर-विलास' (वही) पृ० २।

बिरद बड़ाई जस कीरति किरन 'लाल'।
उदयाचल भानु सब लोक-सुखदाई है॥
बुद्धि वा बिबेक गुन लाज मरजाद देखि।
कोबिद कबीन्द्र बुद्धि अस्ताचल आई है॥[१]

❀

विजयगोविन्द सिंह

आप पूर्णिया जिले के 'चरकिया-स्टेट' के मालिक और श्रोत्रिय मैथिल ब्राह्मण थे। आपके पिता 'मैयाजी' नाम से प्रसिद्ध थे। कहते हैं, सन् १८५७ ई० की लड़ाई में अँगरेजों ने आपकी रियासत से एक करोड़ रुपया कर्ज लिया था।[३] हिन्दी में आपने स्फुट काव्य रचनाएँ की थीं। 'सिस्टीनामा'[२] नाम की आपकी एक पुस्तक का नाम सुना गया है, पर आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।[४]

❀

श्यामसुन्दर

आप बनैली (पूर्णिया) के राजा वेदानन्द[५] सिंह के दरबार में रहते थे।[६] कहते हैं राजा वेदानन्द सिंह के ज्येष्ठ कुमार श्रीलीलानन्द सिंह[७] ने जब अपने दरबार के कवि गोपी

---

१ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित ग्रंथ अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित हस्तलिखित पोथी 'दुर्गा-मेघ-तरंगिणी' से। ये पंक्तियाँ बाबू मनमोहनानन्द सिंह की प्रशंसा में लिखित हैं। बाबू मनमोहनानन्द सिंह का परिचय प्रस्तुत पुस्तक में ही यथास्थान प्रदर्शित है। वे सन् १८७१ ई० में, इकसठवें वर्ष में, स्वर्गीय हुए थे। उनके दरबारी कवि की अवस्था उनके समय में ४०-५० वर्ष की रही होगी और इस आधार पर अनुमान होता है कि आपका जन्म सन् १८३० ई० के आसपास हुआ होगा।—सं०

२ कहते हैं कि इस पुस्तक की हस्तलिखित प्रति राज-पुस्तकालय, दरभंगा में सुरक्षित है।

३ उस समय आप ४०-५० वर्ष के होंगे, अतः आपका जन्म-काल सन् १८०७-१० ई० के बीच अनुमित है।

४ आपकी रियासत का मैनेजर 'ग्रामर' नामक एक अँगरेज था। किंवदन्ती है कि उसकी ज्यादतियों से रियासत के नीलाम होने पर आपने एक कविता बनाई थी, जिसका अन्तिम अंश था—'ग्रामर चमत्कार दिखलाई'। फिर अपने विषय में भी आपने लिखा था—

जन्म लये ठाकुर कुल पाये सुमति सुभाय।
फिर पाछे ठाकुर भये रिनियाँ कही न जाय॥—सं०

५ इनका परिचय 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (खंड २, पृ० १११) में देखिए। सन् १८५१ ई० में इनका देहान्त हुआ था। इनके पुत्र राजा लीलानन्द सिंह (सं० ५१-८३ ई०) के दरबार में भी आप रहे। इस आधार पर अनुमान होता है कि आपका जन्म सन् १८०५ ई० के आसपास हुआ होगा।—सं०

६ 'सरस्वती' (मासिक, मई, सन् १९१३ ई०, भाग १४, खण्ड १, संख्या ५), पृ० २६१-२७०।

७ इनका समय सन् १८५१-८३ ई० है। इनके पिता के दरबार में भी आप रह चुके थे। दरबारी कवि होने के लिए आपकी अवस्था कम से कम चालीस वर्ष की रही होगी। इसी आधार पर आपका जन्म-काल अनुमित है। दूसरे जानकारों के मत से आप नरेन्द्र रहे होंगे।—सं०

महाराज की काव्य-रचना पर प्रसन्न होकर उन्हें दानस्वरूप एक हाथी दिया था,[1] तब आपने अपने आश्रयदाता से निम्नांकित पंक्तियाँ निवेदित की थीं—

अहो हंस-अवतंस मणि, यह अचरज मोहि मान।
गोपी हाथी पै चढ़े, पैदल सुन्दर श्याम॥[2]

आपकी इस उक्ति पर आपके आश्रयदाता बहुत प्रसन्न हुए और आपको भी पुरस्कार-स्वरूप एक हाथी दिया। आपकी रचना[3] का कोई अन्य उदाहरण नहीं मिला।



श्यामसेवक मिश्र

आप शाहाबाद जिले के सूर्यपुराधीश राजा राजराजेश्वरीप्रसाद सिंह के दरबारी कवि थे।[4] आप राजा साहब के जीवन के अंतिम प्रहर तक उनके दरबार में रहे। कहते हैं, उनके दरबार में आपकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ सामयिक गीतों के रूप में आज भी उपलब्ध हैं।

---

१ कुछ लोगों का कथन है कि गोपी महाराज को दान-स्वरूप हाथी राजा वेदानन्दसिंह ने अपने ज्येष्ठ कुमार श्रीनित्यानन्द सिंह के जन्मोत्सव के अवसर पर दिया था।—देखिए, 'सरस्वती' (वही), पृ० १९९-२७।

२. इस दोहे का पाठान्तर भी मिलता है—

महाराज-दरबार में एक अचरज अभिराम।
गोपी तो हाथी चढ़े पैदल सुन्दर स्याम॥—देखिए, वही।

३ "श्रीभगवान पुस्तकालय (भागलपुर) में आठ कवियों की रचनाओं का अच्छा संग्रह है। इन आठ कवियों में सर्वश्रेष्ठ कवि पं० श्रीश्यामसुन्दर हो गये हैं, जो गोपराज कवीश्वर के आत्मज और भागलपुर नगर के उत्तर गंगापार बिहपुर अंचल के अन्तर्गत मिरची ग्रामवासी थे। उनका संबंध मिरची के चौबे-दरबार से था। चौबे-परिवार इस अंचल का एक संभ्रान्त जमींदार-परिवार माना जाता था। इसी परिवार के विद्याप्रेमी पं० श्रीभगवानप्रसाद चौबेजी ने सन् १९११ ई० में भागलपुर-नगर में भगवान पुस्तकालय की स्थापना की और इन कवियों की रचनाओं को पुस्तकालय में संकलित करवाया। बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के अनुसन्धायक श्रीरामनारायण शास्त्री ने उनके एक ग्रन्थ 'भंगालहरी' का रचना-काल सं० १९२२ वि० लिपिकाल सं० १९५१ वि० मानते हुए उसे हिन्दी की मौलिक रचना कहा है। कवीश्वर श्यामसुन्दर की ही एक प्रमुख पुस्तक 'विरवाभरण' का उल्लेख करते हुए शास्त्रीजी ने लिखा है—"इस विषय में अन्य अनेक कवियों की रचना है जो भागलपुर के कवि हो गये हैं, जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।" इस काव्य का रचना-काल सं० १९७२ वि० है। इन आठ कवियों का मूल स्थान बनारस एवं पंजाब था, जहाँ से आकर ये लोग मिरची दरबार के आश्रय में बस गये। श्यामसुन्दर कवि की अन्य दो रचनाएँ 'मानवेन्द्रप्रकाश' एवं 'फतहनामा' के संबंध में शास्त्रीजी का मत है कि ये ग्रन्थ कवि ने अपने आश्रयदाता राजा मानवेन्द्र के जीवन के संबंध में लिखे हैं। ग्रंथ के अंत में एक चित्र भी है। अपने इन ग्रंथों का लिपिकार श्यामसुन्दर स्वयं है।"—देखिए, सुन्दरवती-महाविद्यालय, भागलपुर पत्रिका' (सन् १९६ ई०) में प्रकाशित प्रो० देवन राम् ... का लेख 'हिन्दी-साहित्य को भागलपुर की देन' द्रष्टव्य।

४ पं० जगदीश शुक्ल (संस्कृत-हिन्दी-अध्यापक, राज हाई-स्कूल सूर्यपुरा) से प्राप्त सामग्री के आधार पर। आपके आश्रयदाता राजासाहब का राज्य-काल उन्नीसवीं शती का अन्तिम चरण था। उनका देहान्त सन् १९ १ ई० में हुआ था। उनके दरबार में रहते समय आपकी अवस्था पचास वर्ष से कम न होगी। अतः अनुमान है कि आपका जन्म सन् १८४०-५ ई० के लगभग हुआ होगा।—सं०

विरद बढ़ाई जस कीरति किरन 'भास'।
उदयाचल भानु सम लोक-सुखदाई है ॥
बुद्धि औ विवेक गुन सास मरजाद देखि।
कोविद कवीन्द्र बुद्धि अस्ताचल धाई है ॥[1]



विजयगोविन्द सिंह

आप पूर्णिया जिले के 'करकिया-स्टेट' के मालिक और कोविद मैथिल ब्राह्मण थे। आपके पिता 'मैयाजी' नाम से प्रसिद्ध थे। कहते हैं, सन् १८५७ ई० की लड़ाई में अँगरेजों ने आपकी रियासत से एक करोड़ रुपया कर्ज लिया था।[2] हिन्दी में आपने स्फुट काव्य रचनाएँ की थीं। 'विरलीनामा'[3] नाम की आपकी एक पुस्तक का नाम सुना गया है, पर आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।[4]



श्यामसुन्दर

आप बनैली (पूर्णिया) के राजा वेदानन्द[5] सिंह के दरबार में रहते थे।[6] कहते हैं, राजा वेदानन्द सिंह के ज्येष्ठ कुमार श्रीलीलानन्द सिंह[7] ने जब अपने दरबार के कवि मोदी

१ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित ग्रंथ अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित हस्तलिखित 'पोथी दुर्गा-प्रेम-तरंगिणी' है। ये पंक्तियाँ बाबू कमलनारायण सिंह की प्रशंसा में लिखित हैं। बाबू कमलनारायण सिंह का परिचय प्रस्तुत पुस्तक में [illegible] यथास्थान प्रकाशित है। वे सन् १८०१ ई० में, [illegible] स्वर्गीय हुए थे। उनके दरबारी कवि की अवस्था उनके समय में ४०-५० वर्ष की रही होगी और इस आधार पर अनुमान होता है कि आपका जन्म सन् १८६ [illegible] ई० के लगभग हुआ होगा।—सं०

२ कहते हैं कि इस पुस्तक की हस्तलिखित प्रति राज पुस्तकालय, दरभंगा में सुरक्षित है।

३ उस समय आप ६०-७ वर्ष के होंगे, अतः आपका जन्म-काल सन् १८०७-१० ई० के बीच अनुमित है।

४ आपकी रियासत का मैनेजर 'बाकर साहब' एक अँगरेज था। किंवदन्ती है कि उसकी बदचाली [illegible] रियासत के नीलाम होने पर आपने एक कविता बनाई थी, जिसका अन्तिम अंश था—'बाकर [illegible] दिखलाई', फिर बाद में विपत्ति में भी आपने लिखा था—

कनक भरे [illegible] पाछे [illegible]।
फिर पाछे [illegible] विपत्ति [illegible] ॥—सं०

५ इनका परिचय 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (खंड २, पृ० ११६) में देखिए। सन् १८७१ ई० में [illegible] देहान्त हुआ था। इनके पुत्र राजा लीलानन्द सिंह (१० ५१-८१ ई०) के दरबार में भी आप रहे। इस आधार पर अनुमान होता है कि आपका जन्म सन् १८०६ [illegible] ई० के आसपास हुआ होगा।—सं०

६ '[illegible]' (साप्ताहिक पत्र, सन् १९३९ ई० भाग १७ [illegible] संख्या ४) पृ० १९९-२०।

७ इनका समय सन् १८५३-८३ ई० है। इनके पिता के दरबार में भी आप रह चुके थे। दरबारी कवि के रूप में आपकी अवस्था कम-से-कम चालीस वर्ष की रही होगी। इसी आधार पर आपका जन्म-काल अनुमित है। दूसरे व्यवस्थापत्र के समय में आप बनैली में रहे होंगे।—सं०

महाराज की काव्य-रचना पर प्रसन्न होकर उन्हें दानस्वरूप एक हाथी दिया था,[1] तब आपने अपने आश्रयदाता से निम्नांकित पंक्तियाँ निवेदित की थीं—

> अहो हंस-अवतंस मणि यह अचरज मोहि मान।
> गोपी हाथी पै चढ़े, पैदल सुन्दर श्याम॥[2]

आपकी इस उक्ति पर आपके आश्रयदाता बहुत प्रसन्न हुए और आपको भी पुरस्कार-स्वरूप एक हाथी दिया। आपकी रचना[3] का कोई अन्य उदाहरण नहीं मिला।



श्यामसेवक मिश्र

आप शाहाबाद जिले के सूर्यपुराधीश राजा राजराजेश्वरीप्रसाद सिंह के दरबारी कवि थे।[4] आप राजा साहब के जीवन के अंतिम प्रहर तक उनके दरबार में रहे। कहते हैं उनके दरबार में आपकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ सामयिक गीतों के रूप में आज भी उपलब्ध हैं।

---

१ कुछ लोगों का कथन है कि गोपी महाराज को दान-स्वरूप हाथी राजा वेदानन्दसिंह ने अपने ज्येष्ठ कुमार श्रीलीलानन्द सिंह के यज्ञोपवीत के अवसर पर दिया था।—देखिए, 'सरस्वती' (वही), पृ० ६६६-६७।

२. इस दोहे का पाठान्तर भी मिलता है—

> महाराज-दरबार में एक अचरज अभिराम।
> गोपी तो हाथी चढ़े पैदल सुन्दर श्याम॥—देखिए, वही।

३ "श्रीयमराम पुस्तकालय (भागलपुर) में चार कवियों की रचनाओं का अच्छा संग्रह है। इन चार कवियों में सर्वश्रेष्ठ कवि पं० श्यामसुन्दर हो गये हैं, जो पीताम्बर कवीश्वर के वंशज और भागलपुर नगर के उत्तर गंगापार बिहपुर-अंचल के अन्तर्गत मिल्की ग्रामवासी थे। उनका संबंध मिल्की के चौबे-दरबार में था। चौबे-परिवार इस अंचल का एक सम्भ्रान्त जमींदार-परिवार माना जाता था। उसी परिवार के शिक्षाप्रेमी पं० श्रीमयनारायणप्रसाद चौबेजी ने सन् १६११ ई० में भागलपुर-नगर में श्रीयमराम पुस्तकालय की स्थापना की और इन कवियों की रचनाओं को पुस्तकालय में संकलित करवाया। बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के अनुसन्धायक श्रीरामनारायण शास्त्री ने उनके एक ग्रन्थ 'पंचानन्दी' का रचना-काल सं० १८८१ वि० निश्चित कर १६६२ वि० मानते हुए उसे हिन्दी की मौलिक रचना कहा है। कविवर श्यामसुन्दर की ही एक प्रमुख पुस्तक 'विश्वप्रकाश' का उल्लेख करते हुए शास्त्रीजी ने लिखा है—"इस जिल्द में उन अनेक कवियों की रचना है जो भागलपुर के कवि हो गये हैं, जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।" इस ग्रन्थ का रचना-काल सं० १६०२ वि० है। इन चार कवियों का मूल स्थान उत्तरप्रदेश एवं पंजाब था, जहाँ से आकर वे लोग मिल्की दरबार के आश्रय में बस गये। श्यामसुन्दर कवि की अन्य दो रचनाएँ 'माधवेन्द्रप्रकाश' एवं 'कवरसाला' के संबंध में शास्त्रीजी का मत है कि ये ग्रन्थ कवि ने अपने आश्रयदाता राजा माधवेन्द्र के जीवन के संबंध में लिखे हैं। ग्रंथ के अंत में एक चित्र भी है। अपने इन ग्रंथों का विनियोग उन्होंने स्वयं है।"—देखिए, सुन्दरवती-महाविद्यालय, भागलपुर पत्रिका' (सन् १६६० ई०) में प्रकाशित प्रो० देवेन्द्र एम्० ए० का लेख 'हिन्दी-साहित्य को भागलपुर की देन' द्रष्टव्य।

४ पं० जगदीश शुक्ल (संस्कृत-हिन्दी अध्यापक, राम हाई-स्कूल, सूर्यपुरा) से प्राप्त सामग्री के आधार पर। आपके आश्रयदाता राजासाहब का राज्य-काल उन्नीसवीं शती का अन्तिम चरण था। उनका देहान्त सन् १८ २ ई० में हुआ था। उनके दरबार में रहते समय आपकी अवस्था पचास वर्ष से कम न होगी। अतः, अनुमान है कि आपका जन्म सन् १८४०-५० ई० के लगभग हुआ होगा।—सं०

बिरद बड़ाई बस कीरति किरन 'लाल'।
उदयाचल भानु सम लोक-सुखदाई है॥
बुद्धि वो विवेक गुन सील मरजाद देखि।
कोविद कवीन्द्र बुद्धि अस्ताचल पाई है॥[१]

❁

विजयगोविन्द सिंह

आप पूर्णिया जिले के 'भरकिया-स्टेट' के मालिक और ओझिया मैथिल ब्राह्मण थे। आपके पिता 'मैयाजी' नाम से प्रसिद्ध थे। कहते हैं, सन् १८५७ ई० की लड़ाई में अँगरेजों ने आपकी रियासत से एक करोड़ रुपया कर्ज लिया था।[२] हिन्दी में आपने स्फुट काव्य बनाएँ की थीं। 'विलसीनामा'[३] नाम की आपकी एक पुस्तक का नाम सुना गया है, पर आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।[४]

❁

श्यामसुन्दर

आप बनैली (पूर्णिया) के राजा वेदानन्द[५] सिंह के दरबार में रहते थे।[६] कहते हैं राजा वेदानन्द सिंह के ज्येष्ठ कुमार श्रीलीलानन्द सिंह[७] ने जब अपने दरबार के कवि गोपी

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित ग्रंथ अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित हस्तलिखित पोथी [illegible]' है। ये पंक्तियाँ बाबू [illegible] सिंह की प्रशंसा में लिखित हैं। बाबू [illegible] सिंह का परिचय प्रस्तुत पुस्तक में ही यथास्थान प्रकाशित है। ये सन् १८०१ ई० में, [illegible] में स्वर्गीय हुए थे। उनके दरबारी कवि की अवस्था उनके समय में ५०-६० वर्ष की रही होगी और इस आधार पर अनुमान होता है कि आपका जन्म सन् १७५० ई० के आसपास हुआ होगा।—सं०

१ कहते हैं कि इस पुस्तक की हस्तलिखित प्रति राज-पुस्तकालय, दरभंगा में सुरक्षित है।

२ उस समय आप ४०-५० वर्ष के होंगे, अतः आपका जन्म-काल सन् १८००-१० ई० के बीच अनुमित है।

३ आपकी रियासत का मैनेजर [illegible] नामक एक अँगरेज था। किंवदन्ती है कि उसकी बदमाशी से रियासत के नीलाम होने पर आपने एक कविता बनाई थी जिसका अन्तिम चरण था—[illegible] दिखायो। फिर उसके विषय में भी आपने लिखा था—

[illegible]।
फिर [illegible] [illegible]॥—सं०

४ इनका परिचय 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (यही पृ० १९९) में देखिए। सन् १८०१ ई० में इनका देहान्त हुआ था। इनके [illegible] राजा लीलानन्द सिंह (१८५१-८३ ई०) के दरबार में भी आप रहे। इस आधार पर अनुमान होता है कि आपका जन्म सन् १८०० ई० के आसपास हुआ होगा।—सं०

५ 'भारती' (मासिक, मई, सन् १९३१ ई०, वर्ष १०, खण्ड २, संख्या ४) पृ० १२१ २०।

६ इनका समय सन् १८५१-८३ ई० है। इनके पिता के दरबार में भी आप रह चुके थे। दरबार में प्रवेश के समय आपकी अवस्था कम से कम चालीस वर्ष की रही होगी। इसी आधार पर आपका जन्म-काल अनुमित है। इनके अभावकाल के समय में आप बनैली रहे होंगे।—सं०

महाराज की काव्य-रचना पर प्रसन्न होकर उन्हें दानस्वरूप एक हाथी दिया था,[1] तब आपने अपने आश्रयदाता से निम्नांकित पंक्तियाँ निवेदित की थी—

अहो हंस-अवतंस मणि, यह अचरज मोहि मान।
योपी हाथी दे सके, पैदल सुन्दर श्याम॥[2]

आपकी इस उक्ति पर आपके आश्रयदाता बहुत प्रसन्न हुए और आपको भी पुरस्कार-स्वरूप एक हाथी दिया। आपकी रचना[3] का कोई अन्य उदाहरण नहीं मिला।

❁

श्यामसेवक मिश्र

आप शाहाबाद जिला के सूर्यपुराधीश राजा राजराजेश्वरीप्रसाद सिंह के दरबारी कवि थे।[4] आप राजा साहब के जीवन के अंतिम प्रहर तक उनके दरबार में रहे। कहते हैं, उनके दरबार में आपकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ सामयिक गीतों के रूप में आज भी उपलब्ध हैं।

---

१ कुछ लोगों का कथन है कि योगी महाराज को दान-स्वरूप हाथी राजा वेदानन्दसिंह ने अपने ज्येष्ठ कुमार श्रीलीलानन्द सिंह के जन्मोत्सव के अवसर पर दिया था।—देखिए, 'सरस्वती' (वही), पृ० १२६-२७।

२ इस दोहे का पाठान्तर भी मिलता है—

महाराज-दरबार में, एक अचरज अभिराम।
योगी तो हाथी चढ़े पैदल सुन्दर श्याम॥—देखिए, वही।

३ "श्रीकलानाथ पुस्तकालय (भागलपुर) में आठ कवियों की रचनाओं का अच्छा संग्रह है। इन आठ कवियों में सर्वश्रेष्ठ कवि पं० श्रीश्यामसुन्दर हो गये हैं जो सोमनाथ कवीश्वर के आत्मज और भागलपुर नगर के उत्तर गंगापार बिहपुर-थाना के अन्तर्गत मिश्री ग्रामवासी थे। इनका संबंध मिश्री के चौबे-दरबार से था। चौबे-परिवार इस जिला का एक संभ्रान्त जमींदार-परिवार माना जाता था। इसी परिवार के हिन्दीप्रेमी पं० श्रीकलानाथप्रसाद चौबेजी ने सन् १९११ ई० में भागलपुर-नगर में उपर्युक्त पुस्तकालय की स्थापना की और इन कवियों की रचनाओं को पुस्तकालय में संकलित करवाया। बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के अनुसन्धायक श्रीरामनारायण शास्त्री ने इनके एक ग्रंथ 'गंगालहरी' का रचना-काल सं० १९११ वि० लिपिकाल सं० १९१२ वि० मानते हुए उसे हिन्दी की मौलिक रचना कहा है। कविवर श्यामसुन्दर की ही एक प्रमुख पुस्तक 'चित्रकाव्य' का उल्लेख करते हुए शास्त्रीजी ने लिखा है—"इस चित्र में अन्य अनेक कवियों की रचना है जो भागलपुर के कवि हो गये हैं, जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।" इस काव्य का रचना-काल सं० १९४२ वि० है। इन आठ कवियों का मूल स्थान प्रतापगढ़ का पंजाब था जहाँ से आकर ये लोग मिश्री दरबार के आश्रय में बस गये। श्यामसुन्दर कवि की अन्य दो रचनाएँ 'भावेन्द्रप्रकाश' एवं 'पत्रमाला' के संबंध में शास्त्रीजी का मत है कि ये ग्रन्थ कवि ने अपने आश्रयदाता राजा भावेन्द्र के जीवन के संबंध में लिखे हैं। ग्रन्थ के अंत में एक चित्र भी है। अपने इन ग्रंथों का लिपिकार स्वयं कवि ही हैं।"—देखिए, पुरातत्त्व-महाविद्यालय, भागलपुर पत्रिका' (सन् १९६० ई०) में प्रकाशित प्रो० वैद्य, एम० ए० का लेख 'हिन्दी-साहित्य को भागलपुर की देन' शीर्षक।

४ पं० जगदीश शुक्ल (संस्कृत-हिन्दी-अध्यापक, राज हाई-स्कूल सूर्यपुरा) से प्राप्त सामग्री के आधार पर। आपके आश्रयदाता राजसाहब का शासन-काल उन्नीसवीं शती का अन्तिम चरण था। उनका देहान्त सन् १९०१ ई० में हुआ था। उनके दरबार में रहते समय आपकी अवस्था पचास वर्ष से कम न होगी। अतः अनुमान है कि आपका जन्म सन् १८४०-५० ई० के लगभग हुआ होगा।—सं०

उदाहरण

(१)

पिचकी मति मारो पैयाँ परूँ।
नाहक ही बदनाम होऊँगी, गाँव धवाई हाय करूँ॥
गहो न लाल गैल में बहियाँ, एती अरज कर जोरि करूँ।
'सेवक स्याम' गुलाल मलो ऑनि, लखि लैहैं कोउ लाख मरूँ॥[१]

(२)

काहे री दाहति मालिन मोट अबीर।
देखि होत पूनो दुख बौरी उठति करेजे पीर।
ले यह मसर डारि होरी में लगत हिये ज्यों तीर॥
'सेवक स्याम' बिना नहिं भावत वार सुरँग रँग चीर॥[२]



शिवप्रसाद

आप 'कवीश्वर' के नाम से प्रसिद्ध थे।[१]

आप गया निवासी श्रीवास्तव-कायस्थ थे। आपके पुत्र सर्वेश्वर भी हिन्दी के कवि हो गये हैं। आपने मधुमार-चौरा (गया)-निवासी बाबू गंगाविष्णु कायस्थ के लिए, रामभक्ति-सम्बन्धी अनेक ग्रंथों की प्रतिलिपियाँ तैयार की थीं।[२] सन् १८८४ ई० के लगभग आप दरभंगा-राज के दीवान हुए और जीवन के अन्त तक वहीं रहे।

आपकी गणना प्रसिद्ध रामभक्तों में होती थी। रामभक्ति-सम्बन्धी कई मौलिक ग्रंथ[३] आपने लिखे हैं जिनमें (१) 'सत-छप्पै-रामायण' (२) 'कन्दमदन-हरछंद-रामायण', (३) 'सत-मोहिनी-छंद-रामायण' (४) 'संक्षिप्त दोहावली-रामायण' (५) 'सतहरि-गीत छंद रामायण', (६) 'सत सोरठा-रामायण,' (७) 'अनुष्टुप-रामायण', (८) 'पंचपदावली रामायण' (९) 'हरिहरात्मक हरिवंशपुराण' आदि प्रमुख हैं।[४] स्फुट रचना के रूप में आपकी बहुत-सी समस्या-पूर्तियाँ भी मिलती हैं।

---

१ पं० कमलेश शुक्ल (गया) से प्राप्त।

२ वही।

३ अनुमान है कि आपका जन्म सन् १८२६-३० ई० के लगभग हुआ था। 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' की रूप (रामेश्वर शर्मा' अप्रकाशित, सं० २ ११ लि०) पृ० ११।

४ ये सभी ग्रन्थ अन्नूपनाथ-पुस्तकालय (गया) में सुरक्षित हैं।

५. इन ग्रन्थों के विवरणात्मक परिचय के लिए देखिए, 'साहित्य' (त्रैमासिक, वर्ष ४, अंक २ और ३ जुलाई और अक्टूबर सन् १९५३ ई०), क्रमशः पृ० ५७-६१ तथा ८०-९८।

६ बाबू शिवनन्दन सहाय ने 'बहुत प्राचीन काल से बिहार में हिन्दी की दशा' शीर्षक अपने लेख में 'कवीश्वर'-सूचक भजन आपके पद और ग्रन्थ की भी चर्चा की है।—देखिए, 'साहित्य-पत्रिका' (भाग ८, सं० १० जनवरी, सन् १९१४ ई०) पृ० १४।

उदाहरण

(१)

सुनि सुनि बंसी तान सिगरी सिमिटि आईं,
करिकै सुमति रासमंडल अखंड का।
परम सुजान तान लेतीं गान केतीं,
करि केतिन के छाई छबि मदन प्रचंड को।
मध्य मंडली में किन्यो स्यामैं अभिरामैं,
तामैं श्रीसिव सुकविता को उपमा उदंड की।
निखिल निखंड घनमंडलहि घेरिलियो,
मानो बाँधि मंडल मारीचं मारतंड की।[१]

(२)

पावक की लपटें लहरें जे उठावत,
तेई अबीर की झोरा।
बीरन के तन तें बहै सोनित,
सोई चलैं पिचका चहुँ ओरी।
हाँक सुने रजनीचर भाजत,
धूम धमारन की बरजोरी।
मानहुँ श्री हनुमन्त बली गढ़,
लंक के बीच मे खेलत होरी।[२]

(३)

घूँघट के पट बाहर बैन,
कढ़ै न कपोलन ते हँसी जाकी।
भौन के बाहर गौन करै,
नहि पाँव धरै रुचि राखि पिया को।

---

१ श्रीलक्ष्मणराघव शास्त्री (अनुसंधायक, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्) प्राप्त।
२. वहीं से प्राप्त। यह रचना कानपुर रसिक-समाज के मासिक-पत्र "रसिकमित्र (वर्ष ?, सं ?, सन् १८११ ई.) में भी छपी थी।

श्री शिव सीस सुभायन सों,
छवि छाजति सुन्दरि ज्यों रतिया की।
संभु-तिया मा सिया की सिखी,
मति रीति सु याको सखा सुकिया की।[१]

(४)

तेरी बात मानत हैं लोग औ लुगाई सबै
कौन दुख तोको भयो शिशिर जवाई मैं।
सुतनु अरोग कछू रोग न दिखात होय,
रोग जो सँजोग क्यों सुरत दवाई मैं।
'श्रीशिव' सुकवि रूप लखि-लखि तेरो,
आजु पाई लघुताई कजकली समताई मैं।
कंत को निरन्तर विहार पास वास रहे,
तऊ तू उदास क्यों बसंत का बधाई मैं।[२]

✿

शिवबख्श मिश्र

आप गया जिले के बेलखरा नामक स्थान के निवासी थे।[३] आपके भ्रातृपुत्र बालगोविन्द मिश्र[४] क्रमशः संस्कृत और हिन्दी के प्रसिद्ध कवि तथा भारतेन्दुजी के सहपाठी मित्र थे।

आपके गुरु थे काशी के स्वनामधन्य विद्वान् श्रीरामनिरंजन स्वामी। आप टिकारी-राज (गया) के प्रधान राज पंडित थे। आपकी गणना अपने समय के धुरंधर विद्वानों में होती थी। कहते हैं धर्मशास्त्र-संबंधी लगभग पन्द्रह हजार पोथियाँ लिख लिखवा कर आपने अपने संग्रहालय में एकत्र की थीं। संस्कृत हिन्दी के अतिरिक्त उर्दू भाषा का भी आपको अच्छा ज्ञान था। ज्योतिषशास्त्र और धर्मशास्त्र के आप प्रकाण्ड पण्डित माने जाते थे। उक्त तीनों भाषाओं में आपकी रचनाएँ हैं। हिन्दी में आपने स्फुट कविताएँ लिखी थीं, जो आज उपलब्ध नहीं होतीं। आपकी रचना का उदाहरण नहीं मिला।

✿

१ समस्यापूर्ति ([illegible] सन् १८८७ ई०) पृ० १।
२ वही ([illegible] सन् १८८८ ई०) पृ० १।
३ 'गया के लेखक और कवि' (वही) पृ० १०५।
४ इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य। इनके परिचय की पाद टिप्पणी में भी आपका उल्लेख है। वे [illegible] थे। इनके [illegible] (चाचा) इनसे कुछ बड़े ही होंगे। इस हिसाब से आपका जन्म प्रायः सन् १८४० ई० के लगभग अनुमित है।—सं०

सोहनलाल

आपको अँगरेजों की ओर से 'रायसाहब' की उपाधि प्राप्त थी।[1]

आप पटना के निवासी थे। जब आप पटना-नामल स्कूल के हेडमास्टर थे, तब सरकारी 'हिन्दी-गजट' का सम्पादन करते थे। पीछे जब गजट का कार्यालय पटना से कलकत्ता चला गया,[2] तब आप भी वहीं चले गये। कुछ काल के अनन्तर जब उक्त गजट का प्रकाशन बन्द हो गया, तब आप अनुवादक के पद पर काम करने लगे। सन् १८८७ ई० में आप उसी पद पर काम कर रहे थे।[3]

आपकी गणना अच्छे विद्वानों में होती थी। अँगरेजी पर आपका पर्याप्त अधिकार था, हिन्दी के तो आप लेखक ही थे। आपकी हिन्दी सरल होने के कारण बहुत लोकप्रिय हुई। अपनी कृतियों को सरल बनाने की धुन में आप प्रायः नये शब्दों की रचना कर डालते थे।[4]

खड़ीबोली के उन्नायक श्रीअयोध्याप्रसाद खत्री ने आपको निर्विरोध हिन्दी की 'मुंशी-शैली' का जनक बतलाया है। उनके मतानुसार आपने विज्ञान व लोकप्रिय पारिभाषिक शब्दों का निर्माण संस्कृत, अरबी या अन्य पुरानी भाषाओं के मूल से न करके स्वतंत्र रूप से मुंशी-शैली में किया था।[4] हिन्दी में आपकी विज्ञान-सम्बन्धी तीन पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं—(१) शीत विजली-बत्ती[5] (२) रगड़ बिजली-बत्ती[6] और (३) वायुविद्या[7]।

उदाहरण

(१)

थी एक पतङ्ग चाँद वाली,
सज-धज वह रखती थी बस निराली।

---

१ 'पुस्तक-भण्डार रजतजयन्तीस्मारक-ग्रन्थ' (वही) पृ० १०८।

२ सन् १८८७ ई० में सरकारी नौकरी करते समय आप कम-से-कम पचास वर्ष के रहे होंगे। अतः, अनुमान है कि आपका जन्म सन् १८३०-४० ई० के मध्य हुआ होगा।—सं

३ —देखिए, बाबू शिवनन्दन सहाय लिखित 'गत पचास वर्षों में बिहार में हिन्दी की दशा' शीर्षक लेख —'साहित्य-दर्पण' (वही) पृ० २-२१।

४ Popular Scientific terms, independent of Arabic Sanskrit or any classic origin have also been coined in the Munshi's style by Rai Sohan Lall the late very able Headmaster of Patna Normal School and now translator to the Government of Bengal, who may without opposition be styled as the father of the Munshi Style. Thus the style is becoming complete Language in itself

—'खड़ी बोली का पद्य (पहला-भाग) की भूमिका'—देखिए, अयोध्याप्रसाद खत्री-स्मारक ग्रंथ (शिवपूजनसहाय तथा नलिनविलोचन शर्मा, प्रथम सं० सन् १९६० ई०) पृ० ११२।

५ इसका प्रकाशन सन् १८७१ ई० में स्वयं लेखक ने किया था।

६ इसका प्रकाशन सन् १८७१ ई० में भी स्वयं लेखक ने किया था।

७ —देखिए, बाबू शिवनन्दन सहाय का पटनामारी-सम्मेलन का भाषण।

—'बिहार की साहित्यिक प्रगति' पृ० ६२।

कुछ कभी झुकाके झोंके खाके,
ऊपर को उठी वह सिर हिलाके।
ले ढील बहुत सा राह जो पाई,
आकाश चढ़ी वह सिर पै आई।
अब अपना उड़ना उठान भूली,
उड़ने की जो डोर था सो भूली।
वह ऊँचा जगह जो हाथ आई,
यह बात वह अपने मन में लाई।
है आज जहान में कौन ऐसा,
ऊँचा जो चढ़ा हो मेरे जैसा।
जो कुछ है बस मेरे तले है,
मालूम है कि मेरा मुँह तके है।
यों कहती हुई वह सिर पै चढ़के,
भो, ऊँची उठा हवा में भरके।
टूटी जा कहीं वह डोर जाके,
नीचे को चली वह सिर झुकाके।
चकराती, तड़पती, फिरफिराती,
गैरत में चली वह गोते खाती।
पहुँची वह यहीं जमीन पै आके,
ग़ारत हुई दम में लुट-लुटाके।
पूरे हैं जो भारी हैं भरे हैं,
हिलते नहीं, एक जा पड़े हैं।
हलके को हवा लगी उड़ेगा,
उड़ता है सो जानिये गिरेगा।[1]

१ [illegible] (१९०१), पृ० १९५-२१।

(७)

यहाँ चाँद पेड़ों के पीछे उगा,
उठा लाल सा जगमगाता हुआ।
वह किरनें जो फूटीं अजब लाल लाल,
था पेड़ों में एक जगमगाहट का जाल।
उठा चाँद कुछ एक अनोखा-सा ढंग,
वह दम दम में उसका बदलता था रंग।
गुलाबी-सा जाड़ा वह ठंढा हवा।
वह नीलम-सा आकाश निखरा हुआ।
वह चढ़ता था चाँद और खिलता था नूर,
हुआ जगमगाहट के जोबन का चूर।
हर एक तरफ नूर एक बरसने लगा,
हर एक फूल पत्ता चमकने लगा।
बनी रत्न का वह दमकता हुई,
वह चाँदी-सी मट्टी चमकती हुई।
जमीं पर बिछा नूर का चाँदना
अनोखी अदा एक जमीं की बनी।[1]



हरनाथ सहाय

आप सारन जिले के निवासी थे। धनरा के ठाकुर-कवि आपके अन्तरंग मित्रों में थे।[2] आपने हिन्दी में 'कार्याणव' नामक एक पुस्तक की रचना की थी। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



१ [illegible] (वही) पृ० १२८-२९।

२. 'बिहार-दर्पण' (वही) पृ० १११। ठाकुर कवि का जन्म सं० १८८१ वि० (सन् १८२४ ई०) के आस-पास में हुआ था। आप उनके समकालीन थे। अतः आपका जन्म भी उसी समय के लगभग हुआ होगा। उनका परिचय अन्यत्र देखें।—सं०

हरनारायण दास

आप पटना जिले के इस्लामपुर नामक ग्राम के नानकशाही गुरुद्वारे में निवास करते थे। बहुत दिनों तक बाबू रामदीन सिंहजी ने अपने खड्गविलास प्रेस में भी आपको रखा था।[1] प्रेस में रामायण-सम्बन्धी सारे प्रकाशन-काम आपकी ही देख-रेख में होते थे।

आप एक नानकपंथी उदासी-संप्रदाय के साधु थे। आप बड़े ही मृदुभाषी और उदारचेता थे। किसी भी धर्म से आपका कोई विरोध नहीं था। कितने ही मुसलमान भी आपसे शिक्षा-ग्रहण करने आते थे। आपका व्याख्यान सुनने के लिए लोग बड़े आग्रह से आपको बहुत दूर तक ले जाया करते थे। भाषण करने की कला भी आपमें अद्भुत थी। कथावाचक के रूप में आप श्रोताओं को मुग्ध कर देते थे। कथा बाँचने में आपके अर्थ अपूर्व और आशय गूढ़ तथा गंभीर हुआ करते थे। आप 'रामचरितमानस' के बड़े अच्छे ज्ञाता और वक्ता थे। आपने 'मानस' की एक टीका भी तैयार की थी, जो आपके देहावसान के बाद किसी के द्वारा गुम कर दी गई। उसके गायब होने से बाबू रामदीन सिंह अत्यन्त मर्माहत हुए थे। उस टीका के प्रकाशित न होने का दुःख उन्हें बराबर खलता रहा।[2]

आप कवि भी थे। विशेषकर आप लावनियाँ बनाते और ढंग पर गाते थे। श्रीवृन्दावन निवासी नारायणस्वामी की दोहावली पर आपने कुछ कुण्डलियाँ भी बनाई थीं।[3] आपका देहान्त सन् १९०१ ई० में, मोगलपुरा मुहल्ले (पटना) में, वृद्धावस्था में हुआ था।[4] आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।

*

हरसहाय भट्ट

आप पटना के निवासी थे।[5] आपके गुरु थे गाजीपुर निवासी जीवनदासजी। हिन्दी में आपकी लिखी दो पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं—(१) रामरत्नावली[6] और (२) रामरहस्य। आपका रचना काल सं० १८८५ वि० (सन् १८२८ ई०) है।[7] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।

*

---

१ 'हरिऔध-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (वही) पृ० ५२८-२९।
२ वही।
३ कहते हैं उसकी प्रति खड्गविलास प्रेस (पटना) में सुरक्षित है।
४ सन् १९०१ ई० में, आप वृद्धावस्था में मरे थे। साधु-सन्तों की आयु का ध्यान रखते हुए, अनुमान होता है कि आपका जन्म सन् १८३० ई० के आसपास हुआ होगा।
५ 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही) द्वितीय भाग, सं० (१८८५ वि०) पृ० ९४१।—सं०
६ वही। आपके रचना-काल के आधार पर ज्ञात होता है कि आपका जन्म सन् १८०१ ई० के लगभग हुआ होगा।—सं०
७ यह पुस्तक १५२ पृष्ठों की है। —वही।

हरिचरणदास

आप पूर्णिया जिला के 'कसबा' नामक स्थान के निवासी अग्रहरि-वैश्य थे।[1] आपके पिता का नाम था बेचू साह। आपकी शिक्षा मिडिल-कक्षा तक हुई थी। मिडिल पास करने के पश्चात् आप पुलिस विभाग में हवलदार नियुक्त हुए। किन्तु, इस पद को अस्वीकृत कर आप मधुबनी के एक प्राइमरी स्कूल में अध्यापन-कार्य करने लगे। इस पद पर भी आप बहुत दिनों तक रहे। कुछ ही दिनों में आपको संसार से स्वभावतः विरक्ति हो गई।[3]

आपका विवाह फारबिसगंज-सबडिविजन (पूर्णिया) के 'हरिपुर' नामक ग्राम में हुआ था। उक्त ग्राम के दक्षिण 'मुसहरि' नामक ग्राम में एक महंत गंगादास का अखाड़ा था, जिसमें आप नित्य जाया करते थे। आगे चलकर आप महन्त गंगादासजी से ऐसे प्रभावित हुए कि आपने उन्हीं से दीक्षा ले ली और स्वयं भी कबीरपंथी मठाधीश हो गये।

आपने अपने जीवन-काल में कई बार कबीर-पंथियों की सभा आयोजित की थी। वर्ष में एक दिन 'अनन्त-चतुर्दशी' को, एक समारोह 'आरती चौक' होता था, जिसमें नये लोग दीक्षित होते थे। आपके संबंध की अनेक चामत्कारिक घटनाएँ सुनी जाती हैं।

आपकी दो काव्य-रचनाएँ थीं—(१) हरिचरणामृत सतसई[4] और (२) चिंतामणि। इनमें दूसरी का आजकल कोई पता नहीं चलता। आप सन् १९४१ ई० की २३वीं दिसम्बर को, १०० वर्ष की आयु में, परमधाम सिधारे।[5]

उदाहरण

(१)

भाग उदय बिन मिले नहिं, सतगुरु से सत नाम।
नाम मिलावत रूप हों, तब पावहिं विश्राम॥

---

१ इस नाम के एक और साहित्यकार १८वीं सदी में हो गये हैं, जो सारन-जिले के चैनपुर नामक ग्राम के निवासी थे। वे एक स्वतन्त्र कवि थे और उन्होंने हिन्दी में कई ग्रंथों की रचना भी की थी। उनके परिचय के लिए देखिए, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' ([illegible]) पृ० १०१-०४।—सं०

२. श्रीतारामोदय प्रसाद (कसबा, पूर्णियाँ) द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर। इनके अनुसार आपका जन्म सन् १८४१ ई० के लगभग हुआ था। —सं०

३ कुछ लोगों के मतानुसार आपने किसी से कुछ रुपये कर्ज लिये थे, जिसे चुकाने का कोई उपाय न देखकर आपने संन्यास ले लिया। किन्तु आपके पुत्र रोशनदास ने इस बात का खंडन किया है। उनका कहना है कि वस्तुतः उस समय आपके पास दो सौ बीघे जमीन थी। यदि आपको कर्ज होता तो जमीन बेचकर आप उससे मुक्त हो सकते थे। उनके कथनानुसार आपकी प्रवृत्ति ही विरक्ति की ओर थी, जिसके परिणामस्वरूप आप संन्यासी हुए। —सं०

४ इसे सं० १९८१ वि० (सन् १९२४ ई०) में [illegible] ने छपवाकर प्रकाशित किया था।

५ आपके इच्छानुसार आपकी समाधि आपके अखाड़े में ही बनाई गई, जो आज भी वर्तमान है।

(२)

अर्थ धर्म्म अरु काम सुख, पापिहु के घर होय।
सन्त-समागम नाम-धन, दुरलभ नर को दोय ॥[१]

(३)

चतुराई चूल्हे पड़े, वाहि न मिलिहु राम।
सत्य नाम रटता रहे, तब सरिहैं सब काम ॥[२]

(४)

जो घट प्रेम न संचरे, नहीं नाम का ध्यान।
साधुन सभा नाहि घर, जीवत जानु मसान ॥[३]

(५)

रटत-रटत रसना थके, प्यास अघठ सुखाय।
प्रेम न छाड़े पपिहरा, नित नव बढ़े सवाय ॥[४]

(६)

सुमिरन स सुधि यो करो, जैस जल अरु मीन।
एक पलक बिछुरे नहीं, राति दिवस लौ लीन ॥[५]

(७)

गुप्त जाप सुमिरन करै, बाहर लखै न कोय।
ओठ न फरकत देखिये, अन्दर राखो गोय ॥[६]

(८)

सुमिरन सेवन बिना नर, हान चाहे भव पार।
हरिचरण । मस उभर, बूड़े मांझे धार ॥[७]

(९)

मन माला जो नर जपे, नि अक्षर निज नाम।
साहेब से परिचय करे सब पाय वह ठाम ॥[८]

१-८ 'हरिचरणदास-ग्रन्थ[illegible]' (श्रीमान् हरिचरणदास कबीरपंथी प्रथम सं० सं० १९८१ वि०), ९, १०, १५, २२ तथा २१। [illegible]

(१०)

सन्तन दरस प्रताप से, महा पुन्यफल होय।
दर्शहि जो वह करि कृपा, पाप न राखे कोय ॥[1]



हरिराज द्विवेदी

आप चम्पारन जिले के 'भैकुठवा' नामक ग्राम के निवासी थे।[2] आपका जन्म एक पंडित-परिवार में हुआ था। आपके पूर्वजों में गणेशदत्त द्विवेदी, श्रीपति द्विवेदी रमापति द्विवेदी आदि संस्कृत के मान्य विद्वान् हुए थे। आप भी संस्कृत के एक अच्छे विद्वान् थे।[3] आपको बेतिया राज-दरबार से सम्मान प्राप्त था। कहते हैं, पिउनीबाग (बेतिया) के शिव-मन्दिर पर जो प्रशस्ति अंकित है, उसके लेखक आप ही हैं। हिन्दी में आपने महारानी विक्टोरिया की प्रशस्ति लिखी थी।[4] अपने जीवन के अंतिम दिनों में आप वाल्मीकि रामायण का हिन्दी-पद्यानुवाद कर रहे थे, जिसे अपूर्ण ही छोड़कर स्वर्गवासी हो गये।[5] आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।



---

१ 'हरिचरणामृत-उत्सर्ग' (वही) पृ० ३८।

२. वही पृ० २७।

३. आपने संस्कृत में कई पुस्तकें लिखी थीं जिनमें दो 'मुनिवंश-पद्धति' और 'व्यायामलहरी' प्रमुख हैं। प्रथम की रचना आपने अपने किसी पूर्वज की स्मृति में की थी। इसमें प्रकारान्तर से आपने अपनी वंश-परम्परा का भी उल्लेख कर दिया है। द्वितीय की हस्तलिखित-पोथी आपके एक वंशधर पं० रामदत्त द्विवेदी के पास है।—सं०

४ महारानी विक्टोरिया की हीरक-जयन्ती सन् १८८७ ई० में बिहार में मनाई गई थी। उसी अवसर पर यह प्रशस्ति लिखी गई होगी। इसकी रचना के समय आप कम-से-कम ५ वर्ष के रहे होंगे। अतः अनुमान होता है कि सन् १८३० ई० के लगभग आपका जन्म हुआ होगा।—सं०

५ इस अनुवाद का कुछ अंश आपके एक वंशधर पं० सरस्वती द्विवेदी के पास सुरक्षित है।

तृतीय अध्याय

[वे साहित्यकार, जिनका जन्म-काल अनिश्चित है।]

अम्बालिका देवी

आप चम्पारन जिले के उपाध्याय-परिवार की एक विदुषी सदस्या और रामनगर राज्य (चम्पारन) के आश्रित श्रीअम्बिकाप्रसाद उपाध्याय की धर्मपत्नी थीं।[1] आपको हिन्दी के अतिरिक्त बँगला-भाषा का भी अच्छा ज्ञान था। आपने बँगला-उपन्यास 'राजपूत-रमणी' का हिन्दी में अनुवाद किया था। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



अम्बिकाप्रसाद उपाध्याय

आप चम्पारन के प्रतिष्ठित उपाध्याय-परिवार के एक प्रमुख सदस्य और रामनगर राज्य (चम्पारन) के आश्रित थे।[2] आपने नेपाल का एक इतिहास लिखा था जिसमें रामनगर-राज्य का इतिहास भी है। यह सन् १९१७ ई० में पहली बार प्रकाशित हुआ था।[3] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



अम्बिकाशरण

आप सारन जिले के निवासी तथा बाबू जगनारायणवर्मा[4] के समकालीन और उनके दरबारी कवि थे। ब्रजभाषा में आपने केवल स्फुट-रचनाएँ ही की थीं, जिनमें से अधिकांश अब उपलब्ध नहीं होतीं।

---

१. 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० ५१।

२. वही, पृ० ५४-५५।

३. आपकी मृत्यु के बाद श्रीराजेश्वरीप्रसाद उपाध्याय (राजीव बाबू) ने इसमें आवश्यक संशोधन-परिवर्द्धन कर इसका नवीन संस्करण प्रकाशित किया था।—वही।

४. इनका परिचय इसी पुस्तक में अन्यत्र द्रष्टव्य। इनका जन्म-काल सन् १८११ ई० है। अतः, आपका स्थिति-काल उसी समय के आसपास होगा।—सं०

उदाहरण

एहो वृन्द विद्वज्जन तो वे का बताऊँ हाय
मुख ते निकारे उर-ज्वाला-सी जगत है।
आज नगराज त्याज अवनि समाज पद
पगन पधारे वाते फेर ना डगत है।
अम्बिका बखाने हेरि अम्बर ते देवगन
विकल बेहाल याहि बैन न पगत है।
कंचन-कलित वसुधा का ये अँगूठी हाय
नग के प्रकास बिनु सूना-सी लगत है।[1]



ईनरराम

आप चम्पारन जिले के सरभंग-सम्प्रदायी कवि थे। आपकी रचना में भोजपुरी भाषा का भी पुट है।

उदाहरण

अब घर जाए द ए सखिया, राम सुरतिया लागल मोर।
छन-छन पल-पल कल ना परत है, गृह आँगन भइले मोर।
सुरति सुहागिनि विरहे व्याकुल, पलको ना लावे भोर।
अब घर जाए द ए सखिया, राम सुरतिया लागल मोर।
निरखत परखत रहत गगन में, निसिदिन लागत डोर।
अविचल नाम जपो अभिअंतर, अब गवनवाँ होइहें मोर।
अब घर जाए द ए सखिया, राम सुरतिया लागल मोर।
भवजल-नदिया अगम बहे सखिया, चहुँदिसि उठत हिलोर।
जय 'ईनर' पलक मे उतरी, सत साहेब का ओर॥[2]



१ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रंथ अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित हस्तलिखित ग्रंथ 'सुमतिप्रेमतरंगिणी' से। इस कवित्त की रचना आपने अपने आश्रयदाता बाबू भगवानप्रसाद सिंह के स्वर्गगामी होने पर की थी।

२ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ ७०।

उमानाथ वाजपेयी

आप सिरोरवा (गोबिन्दगंज, चम्पारन) के निवासी थे।[1] आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ ही खड़ीबोली में मिलती हैं।

उदाहरण

सावन मास मिगास भये बरखा निसिबासर होत मा देखा।
धामिन से जरि जात अनाज समाज छूटे सब बंधु बिसखा।
वेद-पुरान कोई नहीं जानत लोग कहे सब झूठ के लेखा।
उमानाथ विचारि कहे जग आतहि राखि लिये असलेखा॥[2]

❁

करताराम

आप पहले मुजफ्फरपुर जिले के 'कोंटी' नामक स्थान के निवासी थे, पीछे माता का देहान्त हो जाने पर गंडकी (नारायणी) के किनारे केसरिया (चम्पारन) से चार मील दक्षिण 'बिकहर' (सत्तरघाट) नामक स्थान में आ बसे।[3] आपके पिता का नाम था बीरसिंह और माता का कुलवन्ती।[4]

'बिकहर' में राम-नाम का सुमिरन करते हुए आप अपनी जीविका के लिए कठोर परिश्रम करते थे। मूँज की रस्सी बटकर बाजार में बेचते और स्वावलम्बी जीवन व्यतीत करते थे। आपके छोटे भाई धवलराम[5] भी ईश्वर भक्त-कवि थे। आपकी वंश-परम्परा में मुसाहराम और सनेहीराम भी कवि हो गये हैं, किन्तु उनकी रचनाएँ दुष्प्राप्य हैं।

आप सरभंगी संत-कवि थे। आपकी रचनाओं का एक संग्रह 'करताराम के पद' के नाम से, पुस्तकाकार प्रकाशित हुआ था, किन्तु अब दुर्लभ है।[6]

---

१ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ० २६।

२. वही, पृ० ३०।

३. वही, पृ० १८।

४ आपके माता-पिता उत्तर-बरौरा के 'परसौनी' ग्राम (...) के निवासी थे, कहते हैं, आपके पिता के देहान्त के पश्चात् ही उस ग्राम में चोरों का आतंक बढ़ा। अतः, जीविका खोजने के उद्देश्य से आप अपने भाई धवलराम के साथ 'कोंटी' चले आये। —सं०

५ इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य। धवलराम को आपका सगा भाई भी बताया गया है। —देखिए, संतमत का सरभंग-सम्प्रदाय (डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री, प्रथम सं० सन् १९५९ ई०), पृ० १९८।

६ श्रीविश्वकेश्वर किशोर (... हाई स्कूल, केसरिया, चम्पारन) ने अपने दिनांक १८-१-२० के पत्र में आपकी इस पुस्तक की चर्चा की है। किन्तु वे इसमें संगृहीत रचनाओं को आपकी रचनाएँ नहीं मानते। अपने इस मत का उन्होंने कोई पुष्ट प्रमाण नहीं दिया है। डॉ० संतमत का सरभंग-सम्प्रदाय नामक ग्रन्थ में करताराम-धवलराम चरित नामक पुस्तक का उल्लेख है और उनकी कृती में धवलराम भी उल्लिखित है। संभवतः, आप दोनों भाइयों की रचनाओं का यह सम्मिलित संग्रह है। —सं०

उदाहरण

(१)

गहै गरीबी झूठ न बोले जथा-लाभ संतोषा है।
तन-मन से उपकार परारथ 'करता' संत अनोखा है॥
बिना परिश्रम घीव शक्कर को दुनिया से लेइ खाता है।
'करता' नाम-भेद नहिं जानत झूठा संत कहाता है॥
पर-धन धूर नारि नागिनि सम मेहनत करके खाता है।
आठो पहर नाम-रस पीवे 'करता' संत कहाता है॥[1]

(२)

जग में बैठे संत न होवे पचागिनि नहिं तापे ते।
यह 'करता' जो संत होत है रामनाम सब भावे ते॥
पूजा व्रत तो करम-काण्ड है सन्तन को नहिं दुनिया को।
'करताराम' कहतु है साधो राम-नाम का रसिया को॥
तिलक-छाप से राम-मिलन नहिं नहिं कपड़ा रंगवावे ते।
'करताराम' कहत है सुन लो संत राम-गुन गावे ते॥
सन्त न करता टोपी कमरी योगी अलख जगावे के।
जटा भभूति अवर मृगछाला 'करता' जग ठगलावे के॥[2]

(३)

बड़े सरकार से लोग कहे कोई तारथ चलिए महराजू।
मुसुकाई कहे हरिनाम गहे हिय सत्य धरे घर तीरथराजू॥
घहँ लूट मही बिचरे न घर हिय सत्य कहो तोहि का जग काजू।
'करतार' कहे गुरु सत्य गहे मन शुद्ध भय तन तीरथराजू॥[3]

---

१ संतमत का सरभंग-सम्प्रदाय (वही) पृ० १९१।

२ वही, पृ० १२१। इसकी अंतिम चार पंक्तियों का पाठ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' में इस प्रकार है—

तिलक-छाप से राम मिले नहिं नहिं कपड़ा रंगवावे से।
करताराम भजन सोइ साँचो नामहिं सुरति लगावे से॥

३ संतमत का सरभंग सम्प्रदाय (वही) पृ० ४१२।

(४)

साधेउ न तन साधु कहाँ यह क्रोध किए पुनि बोध कहाँ है।
मन नाहि मरे जिव मारिके साहु करो कर माथि लहै गति माहीं ॥
क्रोध रहे जिन्हके मन में अस बोध करो सब पाप तहाहीं।
'करता' यह नेम कियो हठ कै मनसा मुख मानु स देखे बनाही ॥[१]

❀

कवीन्द्र

आप मिथिला के बिठौली नामक स्थान के निवासी थे।[२] आपके वंशधर आगे चलकर उत्तरप्रदेश में जाकर बस गये। आपके पिता का नाम 'हरीन्द्र' और पितामह का 'रत्नपति' था। आपके पुत्र 'मुनीन्द्र' भी हिन्दी के कवि हुए। आपने हिन्दी में कुछ स्फुट कवित्तों की रचना की थी। आपकी कोई पुस्तकाकार रचना नहीं मिलती।

उदाहरण

तूही जगधारा निराधारा की अधारा मातु
तू ही धाराधर की सुधार धूं धरतु है।
सुभट हुआरन में जाने जन आपने को
जहाँ रन रुह की अद्भुत प्रगटतु है॥
भनत कवीन्द्र तेरी मूरति त्रिशालकमयी
ठौर-ठौर सूरति यों पूरन पठतु है।
जहाँ देव-वृन्दन पै परम निरारी भीर
तहाँ अम्ब तेरी हो निपारी निपटतु है॥[३]

❀

कारीराम

आप चम्पारन-निवासी सरभंगी-सम्प्रदाय के एक संत-कवि थे। आपने हिन्दी में कुछ स्फुट पदों की रचना की थी। आपका कोई अच्छा पद नहीं मिला।[४]

❀

---

१ 'मैथिली का सरभंग-प्रकाश' (वही) पृ० १११।
२ 'सरस्वती' (वही भाग ११ खंड १ संख्या ६, मई सन् १९१८ ई०), पृ० २३७।
३ वही।
४ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' में आप का एक पद उद्धृत है किन्तु वस्तुतः वह आपका नहीं ज्ञात होता है। —देखिए वही, पृ० ७८-७९।

केशवदास

आप चम्पारन जिले के जिमपारा स्टेशन के समीप बेलवनिया मठ में निवास करते थे।[1] आप एक प्रसिद्ध कबीरपंथी निर्गुणिया सन्त थे। आपके गुरु थे छतरबाबा[2], जिनकी गद्दी पंडितपुर (चम्पारन) में थी। आपके शिष्यों में प्रमुख थे रसालदास और सामबिहारी दास।[3] आपने निर्गुण भक्ति-परम्परा में कुछ पदों की रचना भोजपुरी मिश्रित भाषा में की थी, जिनमें से कुछ उपलब्ध हैं।

उदाहरण

(१)

आजु मोरा हरि के भवनवाँ, जब हम सुनलों हरि के भवनवाँ।
चन्दन लिपलो हो भवनवाँ, सिरि पण्डितपुरवा में मेरो गुरु गदिया।
उतर बहे हो लखनवाँ, गगन-मण्डल से गुरु मोरा अइले।
'केसो' लोटे हो चरनवाँ, आज मोरा हरि के भवनवाँ॥

(२)

सुधि कर बालेपन के बतिया।
दसो दिसा के गम जब नाहीं सकट रहे दिन रतिया।
बार-बार हरि से कौल कियो है बसुधा में करब भगतिया।
बालेपन बाले में बीते तरुनी कइके छतिया।
काम क्रोध दसो इन्द्री जागे ना सूझ जतिया से पँतिया।
अन्तकाल मे समुझि परेगा जब जम्हू घेरे दुअरिया।
देवा देई सभे कोई हार झूठ भइले जड़ा-चुटिया।
केसोदास समुझि के गावेल हरिजी से करेले मिनतिया।
सामबिहारी सबेरे चेतो अंत में कोई न संघतिया॥[4]



---

१ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ. ५०। 'सन्तमत का सरभंग-सम्प्रदाय' के अनुसार बेलवनिया-मठ को आपने ही स्थापित किया था। यह स्थान मोतीहारी थाने में है। —देखिए, वही पृ० १२८।

२ इनका परिचय इस पुस्तक के प्रथम खण्ड में द्रष्टव्य।

३ 'संतमत का सरभंग-सम्प्रदाय' (वही) पृ. १५६।

४ 'चम्पारन की साहित्य साधना' (वही) पृ. ५। दूसरे उदाहरण की पहली पाँच पंक्तियाँ 'सन्तमत का सरभंग-सम्प्रदाय' में छपे पाठ के अनुसार है। —देखिए, वही पृ० ४८।

५ वही।

कोलेसर बाबा

आप सारन जिले के निवासी एक राममार्गी सन्त थे।[1] जीवन-भर आप रमता योगी बने भ्रमण ही करते रहे। आपके अनेक शिष्य आज भी वर्तमान हैं। श्रीहनुमान्‌जी आपके सिद्ध इष्टदेव थे। आपकी सिद्धि के चमत्कारों की अनेक कहानियाँ लोक-प्रचलित हैं। कहते हैं कि जंगल में गाय चराते-चराते भूख लगने पर रोते समय एक दिन आपको हनुमानजी ने दर्शन दिये थे और उसके बाद प्राय आपकी पुकार सुनकर प्रकट हो जाया करते थे। राम-नाम की रट लगी रहने का यह फल हुआ। आपकी उपदेश प्रधान रचनाएँ भोजपुरी भाषा में हैं।

उदाहरण

जेकर घर महल, तेकर घर गइल। जेकर घर साफ, तेकर घर आप ॥
मुठमुट लेले सचमुच होय। सचमुच लेले बिरले कोय ॥
जो कोई लेत मन-चितलाय। होते होते होइए जाय ॥[2]



कृपानारायण

आपका जन्म नयागाँव (सारन) में हुआ था।[3] आपके पिता का नाम था ठाकुर संतोष नारायण। बीसवीं शती के प्रथम-चरण के अँगरेजी, हिन्दी और भोजपुरी के यशस्वी कवि श्रीरघुवीर नारायणजी आपके ही प्रपौत्र थे। आप स्वयं मोतीहारी (चम्पारन) में सिरिश्तेदार थे। उर्दू फारसी के आप बड़े अच्छे विद्वान् थे। इन भाषाओं में आपकी कुछ रचनाएँ भी मिलती हैं। कहते हैं आपने भोजपुरी में भी कुछ रचनाएँ की थीं। हिन्दी में आपने एक कविता-पुस्तक 'आशिक-शतक'[4] के नाम से लिखी थी, जिसमें इस्लाम की धार्मिकता के साथ-साथ जो प्रेम विह्वल भावों की मर्मस्पर्शिनी कथा है।[5]

---

१ 'हिन्दी-साहित्य को बिहार की देन' (वही) पृ० १६२।

२. वही।

३. श्रीनर्मदेश्वर नारायण (रतिबार्गी, छपरा) द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर। वे भी आपके वंशजों में एक प्रतिभाशाली युवक कवि हैं।

४ यह पुस्तक छपकर प्रकाशित भी हुई थी। इसके आरम्भ में आपने कवित्त छंदों में अपना वंश-परिचय दिया है। संयोग-शृंगार का सरल स्वाभाविक वर्णन इस पुस्तक की विशेषता है।

५. 'रघुवीर नारायण—जीवनी तथा कविताएँ' (श्रीनन्दकिशोर पाण्डेय द्वारा सन् १९५८ ई० में प्रस्तुत एम्० ए० की थीसिस) पृ० १०।

उदाहरण

औरन को छाड़ि मोहि रोकत हौ बार-बार
कहौं हौं पुकारि भारि रारि मचि जायगो।
धाय-धाय अंचल कौ झोरो झकझोरो ना
सारी मोरी फाटिहै तो कामरि बिकायगो॥
जोबन-थल पाके हौ अंगो पर हाथ धरत
एकौ लर मोतिन की टूटि जो हेरायगो।
एक-एक मोतिन के मोलन के पाछे 'कृपा'
नन्द औ जसोदा कान्ह तीनहू बिकायगो॥[1]



कृष्णप्रताप शाही

आप सारन जिले के हथुआ-राजवंश में जन्मे थे।[1] आपका विद्यानुराग प्रशंसनीय था। आपकी अभिरुचि चित्रकला की ओर भी थी। आपने अनेक प्रामाणिक पौराणिक चित्रों का निर्माण कराया था, जिनमें से एक 'अग्निदेव' के चित्र को आचार्य पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' में प्रकाशित कराया था।

आपके दरबार में कवियों का अच्छा जमघट था। आप स्वयं भी कविता करके अपने दरबारियों को सुनाया करते थे। आपने भजन और दोहे के सिवा होली, चैती आदि गीतों की भी रचना की थी। आपकी रचनाओं का एक संग्रह 'शोक मुद्गर' के नाम से काशी में छपकर प्रकाशित हुआ था। उदाहरण नहीं मिले।



लक्खन मियाँ

आप चम्पारन जिले के 'ममरखा' नामक स्थान के रहनेवाले थे।[3] 'चैनसिंह का पँवारा' नाम से आपकी एक करुण-वीर-रस प्रधान पद्यात्मक रचना आपके वंशजों के कंठ में अभी सुनने में आती है। आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।



---

१. बिहार हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के छठे अधिवेशन (१ नवम्बर सन् १९२९ ई०) के सभापति राजाबहादुर कीर्त्यानन्द सिंह बहादुर के अभिभाषण से। —देखिए 'बिहार की साहित्यिक प्रगति' (वही) पृ० ११७।

२. प्रथम सारन-जिला-साहित्य-सम्मेलन (हथुआ सन् १९५१ ई०) के स्वागताध्यक्ष कुमार महेश्वर शाही के भाषण से।

३. चम्पारन की साहित्य-साधना (वही) पृ० ३।

गंगादत्त उपाध्याय

आप चम्पारन निवासी थे।[1] आपके द्वारा रचे एक ज्योतिष-ग्रंथ की हस्तलिखित-प्रति आपके वंशधर श्रीलक्ष्मीदत्त उपाध्याय के पास सुरक्षित है। आपकी रचनाओं का कोई उदाहरण नहीं मिला।



गुलाबचन्द

आपकी रचनाओं में आपका उपनाम 'आनन्द'[2] मिलता है।

आप शाहाबाद जिले के निवासी[3] और सन्त लक्ष्मीनारायणजी[4] के शिष्य थे। आपकी एक पुस्तकाकार रचना 'आनन्द भण्डार' नाम से प्रकाशित हुई थी।[5] इसमें आपके द्वारा रचित भोजपुरी के अनेक भजन संगृहीत हैं। आपकी रचनाओं में कबीर के निर्गुणवाद की स्पष्ट झलक है और कहीं-कहीं सरभंग-सम्प्रदाय का भी प्रभाव परिलक्षित होता है तथा उनमें भाषा की सरलता, भाव की स्पष्टता, पद-पंक्तियों की समरसता आदि भी है।

उदाहरण

(१)

देख चुनरी में लागे न दाग सखी,
ई चुनरी पिया आप बनाए,
तानि करमवाँ के ताग सखी,
पतिबरत रंग में रँगल चुनरिया,
प्रेम-किनरिया के लाग सखी,
ई चुनरी जिन जतन से ओढ़े,
'आनन्द' तेहि के जागे भाग सखी।[6]

---

१ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ० ३४।

२ इस नाम के एक और कवि १८वीं शती में, मिथिला में हो गये हैं। वे मिथिलेश महाराज माधवसिंह (सन् १७७५–१८०७ ई०) के दरबारी कवि थे।—देखिए, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही), पृ० १०६।

३ 'भोर-भर' (भोजपुरी-मासिक, वर्ष १ अंक २ १ मार्च, सन् १९५२ ई०) पृ० २७।

४ ये सारन के प्रसिद्ध औघड़ सन्त भीखारामजी की परम्परा के संत थे।

५. इस पुस्तक की एक मुद्रित प्रति श्रीपारसेश्वर प्रसाद (भगवानपुर, मोतीहारी) ने आज से चार वर्ष पहले शाहाबाद जिले के किसी गाँव में देखी थी।—देखिए, 'भोर-भर' (वही), पृ० २७।

६ वही।

(२)

भजन तजि भिखरा कइसे सुख पइबे
जोग बिहाय भोग-रस चाखत,
बार-बार भव-कूप में अइबे,
नाता-नेह-गेह मे फँसि-फँसि,
अपनो सरबस मूल गँवइबे,
काम-क्रोध-लोभ में रत नित,
अपना रामजी से कब लव लइबे,
मोह निसा में निसि दिन सोवत,
अन्तहुँ जाइ चिता पर सोइबे,
भजु नारायण जय नारायण,
'आनन्द' पइबे अइबे न जइबे।[1]



गोविन्द मिश्र

आपका उपनाम 'कवीश्वर' था।

आप दरभंगा निवासी महामहोपाध्याय प० चित्रधर मिश्र के पुत्र थे।[2] आपने हिन्दी में भी काव्य-रचना की थी, किन्तु उनके उदाहरण नहीं मिले।



गौरीदत्त

आप चम्पारन जिले के निवासी थे। सरभंग-सम्प्रदाय में सदानन्दजी की शिष्य-परम्परा में परमहंसबाबा के बाद आपका ही नाम आता है।[3] आपने भी निर्गुण भक्ति-परम्परा में कुछ पद लिखे थे किन्तु वे अब उपलब्ध नहीं होते।



---

१ भजन-माला (वही) पृ० १०।

२. दीवान-बहादुर श्रीधर्मेश्वरनारायण सिंह (मझौल दरभंगा) के दिनांक २३-६-२६ के पत्र के आधार पर।

३ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० १०।

जगन्नाथ सहाय

आप महावरवार मुहल्ला, हजारीबाग (छोटानागपुर) के निवासी[1] और हिन्दी के काव्यानुरागी लेखक थे। आपकी निम्नलिखित हिन्दी पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं — (१) आनन्द-सागर[2], (२) प्रेमरत्नामृत (३) भक्तरत्नामृत, (४) भजनावली, (५) कृष्णबाललीला, (६) मनोरंजन, (७) चौसररत्न[3] और (८) गोपालसहस्रनाम। इनके अतिरिक्त आपकी स्फुट-कविताओं के दो संग्रह अभीतक अप्रकाशित हैं। आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।

*

जनेश्वरी बहुआसिन

आप बहुअरीडिहा (दरभंगा) के महाराज-कुमार श्रीनेमेश्वर सिंह (बनमाली बाबू) के द्वितीय पुत्र बाबू रूपनजी की पत्नी थीं।[4] आपने मैथिली में अनेक गीतों की रचना की थी जिनमें से कुछ आज भी लोककंठ पर जीवित हैं।

उदाहरण

(१)

जय जय तारा सब दुख हारा, जय जगदम्बा नाम तोहारा।
जय काली जय त्रिपुर सुन्दरी, जय तारिनि मोहि तारा॥
तोहर मन्त्र केओ नहि पावए, महिमा अगम अपारा।
चारि भुजा तिन नयन विराजित, परिहन वर बघछाला॥
फनि भूषन मुण्डमाल विराजए, प्रत्यालीढ़ पधारा।
दासि जनेश्वरि देवि दिखि हेरिअ, धएल चरन गहि तारा॥[5]

---

१ 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही तृतीय-भाग) पृ० ११०८।

२. यह पुस्तक नवलकिशोर प्रेस (लखनऊ) से प्रकाशित हुई थी।

३ 'हिन्दी-सेवी-संसार' (प्रयाग) में इस पुस्तक का नाम 'चौसररत्न' छपा है पर मिश्रबन्धुओं ने इस पुस्तक का नाम 'चौसररत्न' ही लिखा है।—देखिए, वही पृ० ११०८। मेरा अनुमान है कि मिश्रबन्धुओं का लिखा हुआ नाम ठीक है। लिखावट में समानता होने से ऐसी भूल हो जाना बहुत संभव है।—सं०।

४ श्री० ईशनाथ झा (चन्द्रधारी-मिथिला-कॉलेज, दरभंगा) द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर।

५ वहीं से प्राप्त।

(२)

जागिअ कृष्ण कमलदल-लोचन, दुखमोचन सुखदाइ।
भोर भेल पहु फाटए लागल, पक्षिक शब्द सुनाइ॥
पथहु जागु चिन्तामनि मोहन, तुम बिनु चित अकुलाइ।
ब्रह्मादिक सुर नर मुनि सब जन, दरस हेतु ललचाइ॥
दए दरसन करु सब दुख भञ्जन, जसुमति-पुत्र कन्हाइ।
सुनि करुनामय जागि उठल झट, दयाधाम हरखाइ॥
मुरलि मुकुट बनमाल सम्हारथि, सब मिलि दरसन पाइ।
माखन मिसरी दही मलाई, बहुबिधि भोग बनाइ।
मुदित अनेश्वरि करतो आरति, जनम सुफल बनि जाइ॥[1]



जयगोविन्द महाराज

आप पूर्णियाँ जिले के महोरा-ग्राम निवासी ब्राह्मण थे।[2] आपका जन्म सन् १८५० ई० के कुछ पहले हुआ था।[3]

आप श्रीनगराधीश राजा कमलानन्द सिंह 'साहित्य-सरोज' (सन् १८७५-१९०९ ई०) के दरबारी कवि थे।[4] राजासाहब आपको माहवारी कुछ नकद रुपये तो देते ही थे, उसके अतिरिक्त उन्होंने भागलपुर के नवहट्टा-ग्राम (सहर्षा) में आपको खेती-बारी के योग्य जमीन भी दी थी। जब राजासाहब का निधन हो गया, तब आप गंगातटस्थ 'महारीचक' चले आये और वहीं स्थायी रूप से रहकर वृद्धावस्था में भगवद्भजन करने लगे। उन दिनों श्रीनगर छोड़ने से आप बहुत दुःखी रहा करते थे। उस समय आपकी अवस्था ६६ वर्ष की थी।[5]

१. श्री० हिमनाथ झा (मही) से प्राप्त।
२. अध्यापक श्रीरामनारायण सिंह 'आनन्द' (नवहट्टा कोठी, पूर्णियाँ) से प्राप्त सूचना के आधार पर।
३. मिश्रबन्धुओं ने आपका जन्म सं० १९१० वि० (सन् १८५३ ई०) के लगभग माना है। —देखिए, 'मिश्रबन्धु-विनोद' (चतुर्थ भाग ४, प्रथम सं०, सं० १९९१ वि०) पृ० १११।
४. मिश्रबन्धुओं ने आपको कुँवर कालिकानन्द सिंह (श्रीनगर) का आश्रित कवि बतलाया है। —देखिए वही। कुमार कालिकानन्द सिंह राजा कमलानन्द सिंह के सगे भाई थे।
५. नवहट्टा कोठी (पूर्णियाँ) के अध्यापक श्रीरामनारायण सिंह 'आनन्द' ने दिनांक १८.१.५१ को प्रेषित सूचनाओं में बतलाया है कि "उस समय मैं (पत्र प्रेषक) महारीचक में अध्यापक था। आपका दर्शन पाकर बराबर आपके यहाँ जाने लगा। आपने मुझे कविता पढ़ाना आरम्भ किया। आपकी लिखित ४०-५० पुस्तकों का मुझपर बड़ा प्रभाव पड़ा।"

आप परम वैष्णव और 'गीता' के अनन्य भक्त तथा उपासक थे। दोनों जून गंगा-स्नान और संध्या-पूजा करते साधु-जीवन व्यतीत करते थे। प्रायः समस्त गीता आपको कण्ठस्थ थी। इसी कारण पूर्णियाँ के समाज में सभी मानी-मानी सज्जन आपका आदर करते थे। आपके एक पुत्र श्रीअयोध्याप्रसाद राय हैं, जो बड़े सज्जन तथा साहित्यप्रेमी हैं।

आप रीतिकालीन-परम्परा के कवि थे। पिंगल, अलंकार, नायिका-भेद, रस, गुण आदि पर आपका पूरा अधिकार था। आपकी रचनाएँ प्रायः सरस और प्रसाद-गुण-युक्त ब्रजभाषा में हैं। आपने निम्नांकित पुस्तकों की रचना की थी, जो दुर्भाग्यवश अभीतक अप्रकाशित ही हैं—(१) साहित्य-पयोनिधि, (२) अलंकार-आकर,[1] (३) कविता-कौमुदी, (४) समस्यापूर्ति और (५) दुर्गाष्टक। इनके अतिरिक्त और भी कई छोटी-मोटी स्फुट रचनाएँ आपने की थीं। आपकी अनेक समस्यापूर्तियाँ, सन् १८९८ ई० में, कानपुर से प्रकाशित 'रसिक-मित्र' नामक मासिक-पत्रिका में छपी थीं। आप सन् १९१५ ई० के नवम्बर में मदारीचक के गंगा-तट पर परलोक सिधारे।[2]

उदाहरण

(१)

विकसित कञ्ज-से चरन अरुनारे मञ्जु,
करिवर मन्द-से गमन सुहाये हैं।
चपला प्रचंचल-प्रभा से गोर गात जाकी,
उर-आरत श्रीफल-से गोल दरसावे है।
पल्लव-से कोमल सुपानि 'जयगोविन्द' कवि,
मुक्ता विसद-से दसन-पाँति भावे हैं।
सफरी-से लोचन चपल मन-भावन हैं,
चन्द से बदन-तिय दिव्य दरसाये हैं।[3]

---

१. यह पुस्तक कृष्ण-सदन (पूर्णियाँ) के मंत्री साहित्यरत्न श्रीकृष्णाचारी के पास सुरक्षित है।

२. मिश्रबन्धुओं ने आपका मृत्यु-काल सं० १९७० वि० (सन् १९१३ ई०) माना है। —देखिए, मिश्रबन्धु-विनोद (चौथा) पृ० ३२४।

३. उपाध्याय रामनारायण सिंह 'श्यामल' (पटना) से प्राप्त।

(२)

जंघ को उठाय बैठी सखिया सहारे बाल,
निबिड़ नितम्ब ताकी सोभा दरसाती है।
चम्पक-कली के हार कुच पै समीर लागे,
चंचल पटंचल की छवि छहराती है।
कवि 'जयगोविन्द' अभिषेक-मनसिज हित,
वेदी पर रम्भा दुह तरु दरसाती है।
चंदन-निवार-जुत तीरथ के तोय भरे,
कंचन के घट पै पताका फहराती है।[1]

(३)

जगत मँझार द्विजराज सों बखाना जात,
जाके आगे बिबुध-समाज को न लेखो मैं।
रह्यो सँपूरन अमल गुन जोतिन सों,
कियो उदास ताको सविधि परेखो मैं।
सनमुख होत मोंहि कवि 'जयगोविन्द' कहँ,
हेरत मैं काहे मुख फेरत निरेखो मैं।
चन्द्र सों लजात जलजात सदा जानो जात,
आज जलजात सो लजात चन्द देखो मैं।[2]

(४)

कुसुमित विविध विसाल तरु-राजिन पै,
कूँकलियाँ मधुर-मृदु बोलियाँ सुनावेंगी।
सीतल बयार'जयगोविन्द' दिसि दक्खिन से,
धीरे धीरे भौंर-भीर संग लिये आवेंगी।
होरी के उमंग में सजोगिनें सिंगार साजि,
उछरि-उछरि रंगरेलियाँ मचावेंगी।
तोहि ढिग आये बिना नायक बसंत मोहिं,
तब आप ही सों आप मान को मिटावेंगी।[3]

---

१ अध्यापक श्री रामनारायण सिंह 'आनन्द' (नरी) से प्राप्त।
२ उन्हीं से प्राप्त।
३ वही।

(५)

कनककलता मे जुगल फल, तापै सोम लखाय।
तेहि मे कोकिल कीर अरु, अनुप मान दरसाय ॥[१]

(६)

सोइ वानि 'जैगोविन्द' लोकनि में,
स्तुति-स्वाद-सुधा सरसावती है।
जोइ आम के आनन मे निकली,
वसुधा में सुकीरति छावती है।
पर आपने आनन से निकली,
विकथा हो कहीं नहिं भावती है।
कुच आपन आपहि से ज्यों तिया,
मरद मे कहूँ सुख पावती है ॥[२]

(७)

कुमुदिनि लाज-उनमोचन अमन्द चन्द,
स्वकर पसारि निसि उदित लखावेंगे।
जब कुसुमित तरु-ऊपर उमंग-भरे खग,
कोकिलादि स्वर मधुर सुनावेंगे ॥
कवि जयगोविंद मलयाचल-मिलित पौन,
धीरे धीरे लग और भीर लिये आवेंगे।
सायक-कुसुम यादु मान को मिटाये बिना,
मेरे ढिग आये बिना नायक रिझावेंगे ॥[३]

---

१ सम्पादक श्री रामनारायणसिंह 'मधुर' (वही) से प्राप्त।
२ उन्हीं से प्राप्त।
३ वही। यह कवित्त सन् १८९९ ई० में, 'काव्यसुधाकर' में प्रकाशित भी हुआ था।

(८)

गगन नखत-समाज में द्विजराज सुखमा रासि।
विसद चाँदनि सो सुशोभित रहेउ दिसि की भासि॥
चितै रहत चकोर जेहि मुद कुमुद मन में साय।
हाय! तिनको आय ग्रोषक राहु लीन्हेउ खाय॥[१]

*

जयनाथ झा

आपको 'कवीश्वर' की उपाधि प्राप्त थी।[२]

आप दरभंगा जिले के 'हरिपुर' नामक ग्राम के निवासी थे।[३] आपके पिता का नाम था सनाथ झा। आप अपने पिता के ज्येष्ठ पुत्र थे। आपने महाराज छत्रसिंह (सन् १८३९-५० ई०) के आश्रय में रहकर काव्य-रचना की थी। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।

*

जवाहर प्रसाद

आपका निवास-स्थान था शाहाबाद जिले का 'चम्पा अमौरी' (या गजराज गंज) नामक ग्राम।[४] आप उर्दू के अतिरिक्त हिन्दी के भी कवि थे। आपकी कोई रचना पुस्तकाकार प्रकाशित नहीं मिलती। आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।

*

१ इसकी रचना आपने राजा [illegible] सिंह की मृत्यु होने पर की थी।

२ [illegible] —दोहा यथा—

[illegible]।

[illegible]।"

—देखिए 'मिथिलाभाषामय-इतिहास' (म० म० पं० श्रीमुकुन्द झा बख्शी, प्रथम सं०) पृ० ४०१ (पाद टिप्पणी)।

३. वही।

४ चम्पा-अमौरी, या गजराजगंज जि० शाहाबाद के निवासी श्रीसुरेश्वरप्रसाद श्रीवास्तव 'आशु' (महादेवा आरा) से प्राप्त सूचना के आधार पर।

जानकी प्रसाद

आप पटना निवासी सरयूपारीण ब्राह्मण थे।[१] आपके पिता का नाम था पं० रोशनदास[२] जी, जो 'मानस मयंक' के रचयिता पं० शिवलाल पाठक के शिष्य थे। कहते हैं, आपने पं० शिवलाल पाठक द्वारा रचित 'मानस अभिप्राय-दीपक' पर वार्तिक टीका लिखी थी।[३] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



ठाकुर प्रसाद

आपका उपनाम 'जगदीशपुरी' था।

आप जगदीशपुर (शाहाबाद) के निवासी और रसीपपुर (शाहाबाद) के महाराज कुमार बाबू नर्मदेश्वर प्रसाद सिंह 'ईश'[४] के काव्यगुरु थे।[५] काव्य-रचना में आपकी भी अच्छी प्रसिद्धि थी। आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।



डोहूराम

आप चम्पारन निवासी एक सरभंगी सन्त थे।[६] आप भोजपुरी में निर्गुणी कविता बेजोड़ ढङ्ग से करते थे। आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।



---

१ 'मध्यन्तर' (साप्ताहिक, मुंगेर, १० जुलाई, सन् १९४४ ई०) पृ० ५।

२. इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य।

३ "सुनने में आया है कि जिला मुंगेर के कुमारपुर नामक ग्राम में मानस अभिप्राय-दीपक सं० १८८० ई० का लिखा हुआ उत्तमानसप्रत्याभिनवार्थसंयुक्ता की टिप्पणी, तुलसी-सतसई पर तिलक और मानस-प्रवाह की टिप्पणी रोशनदासजी या महावीरप्रसादजी या पं० जानकीप्रसादजी (इन्हीं में से किसी) की लिखी और लिखाई हुई एक वैष्णव की ठाकुरबाड़ी में सुरक्षित मौजूद है। श्रीरोशनलालजी से मालूम हुआ कि पुस्तक में उन्हें किसी से यह समाचार मिला है कि वहाँ एक बड़े भारी रामायणी हो गये हैं, जो मकरपुरीजी के नाम से प्रसिद्ध थे और गाते थे। उनके यहाँ बहुत-से मानस-सम्बन्धी और शं पारोपासना-सम्बन्धी ग्रंथ तथा बहुमूल्य मानस की पोथी की एक प्रतिलिपि सुरक्षित है। संभवतः इन ग्रंथों की वर्तमानता के कारण कोई-कोई इनको रोशनदासजी का सिपाही समझते हैं। —'कल्याण' (मानसांक) में महात्मा श्रीअंजनीनन्दन शरण-लिखित 'मानस के प्राचीन टीकाकार' शीर्षक लेख। —देखिए, वही पृ० ४११।

४ इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य।

५ तृतीय बिहार-प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (सीतामढ़ी) के सभापति श्रीशिवनन्दन सहाय के भाषण से। —सं०

६ 'चम्पारन की साहित्य साधना' (वही), पृ० ६० में आपकी रचना का एक उदाहरण है पर वह भी निरर्थक और अस्पष्ट है। उससे इतना ही संकेत मिलता है कि आप सरभंगी सन्त-कवि टेकमनराम और भीखमराम के शिष्य थे। इन दोनों कवियों का परिचय इस पुस्तक के प्रथम खण्ड में द्रष्टव्य है। —सं०

तोफाराय[1]

आप सारन जिला के निवासी थे। सीवान सब डिवीजन के 'अाँदर' परगने का 'पतारि' गाँव आपका जन्म-स्थान है।[2] आपका जन्म-काल अज्ञात है। किन्तु सन् १८५७ ई० के सैनिक विद्रोह के समय आप वर्तमान थे। आपने भोजपुरी भाषा में 'कुँवर-पचासा' नामक एक कविता-पुस्तक रची थी, जिसमें विप्लवी नेता बाबू कुँवरसिंह और अँगरेजी फौज की उस लड़ाई का वर्णन है, जो बीबीगंज (शाहाबाद) में हुई थी।[3]

कहते हैं, आपके पूर्वज गौड़ ब्राह्मण थे, पर मुगल-सम्राट औरंगजेब के समय में मुसलमान बना लिये गये थे। अब भी आपकी वंश-परम्परा में हिन्दू धर्म के अनुसार आचार विचार देखा जाता है। आपके कुल में कई कवि हो चुके हैं—सविता, मिट्ठू, जगेश्वरी, नानक, रामफल, बिसुनी, ममती (मगद), दया, मोद, मकाबत[4] आदि। आपके पिता का नाम समराव राय, पितामह का हरिराय और प्रपितामह का हिरूराय था। आपके एकमात्र पुत्र का नाम धनपाल राय था, जिनकी एकमात्र सन्तान एक कन्या थी।

आप जगदम्बा दुर्गा के उपासक थे। कहा जाता है कि एकबार कविता रचते समय आपको उन्माद-सा ज्ञात हुआ। ऐसा अनुभव होते ही आप विन्ध्याचल धाम चले गये और भगवती विन्ध्यवासिनी की स्तुति स्वरचित छंदों में की। वहाँ से घर लौटने पर आपका देहान्त हुआ। प्रसिद्ध हिन्दी-कवि 'पजनेस' से आपका घनिष्ठ परिचय था। मिश्रबन्धुओं ने 'पजनेस' का जन्म-काल सं० १८७२ वि० (सन् १८१५ ई०) और कविता काल सं० १९०० वि० (सन् १८४३ ई०) माना है। अतः आप 'पजनेस' के समकालीन थे। 'पजनेस' के छोटे भाई 'रसनेस' अपनी एक प्रेयसी के प्रेम-सम्बन्ध से छपरा (सारन) में ही रहते थे और स्वयं 'पजनेस' भी हथुआ राज (सारन) और बेतिया (चम्पारन) के दरबारों में आते-जाते थे। इस तरह उनका-आपका पारस्परिक सम्पर्क संभव प्रतीत होता है। हथुआ बेतिया-दरबारों के अतिरिक्त आप मझौली-नरेश (गोरखपुर) के दरबार में भी जाते थे। 'मझौली बिआह बर्नन' नामक एक कविता-पुस्तक भी आपने लिखी थी, जिसमें राजवंश के एक विवाहोत्सव[6] का दृश्य वर्णित है। उसमें आपने सं० १९०२ वि० (सन् १८४५ ई०)

---

१ आपका परिचय श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह (नाथ) द्वारा प्राप्त सामग्री के आधार पर तैयार किया गया है। —सं०

२. उन्हीं के (नाथ) द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर।

३ इससे ज्ञात होता है कि उस समय आपकी अवस्था तीस चालीस वर्ष की रही होगी। इस प्रकार आपका जन्म-काल उन्नीसवीं-शती की दूसरी दशाब्दी में जान पड़ता है।—सं०

४ इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य।

५. "हिन्दी के प्रसिद्ध कवि 'पजनेस' को एक कवित्त के लिए बेतिया के एक महाराज ने बीस हजार रुपये दिये थे।"—देखिए 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (नाथ) पृ० १८।

६ मझौली (गोरखपुर) के महाराज तेजमल के पुत्र उदयमल का विवाह डुमराँव (शाहाबाद) के महाराज महेश्वरबख्श सिंह के यहाँ हुआ था।—सं०

का उल्लेख किया है। इसकी कविता मरैठी भाषा है। तीसरी पुस्तक 'विन्ध्यवासिनी स्तोत्र' की रचनाएँ भी साधारण श्रेणी की हैं। वस्तुतः आप एक अच्छे कथावाचक पंडित थे। केवल एक बानगी काफी है, जिसमें गाँव के लोगों का चित्र अंकित है।

उदाहरण

सत्य के स्वरूप सदा करिके करत पाप,
पाप से न डरे सत्य मन से उतारे हैं।
कोविद कविन्दन के नेकु नहिं मान मानैं,
पुन्य को न जानैं बैन अविद उचारे हैं॥
कहै तोफाराय साँच बोले रिसियाय उठे,
झूठन सों नहवाय हृदय को बिगारे हैं।
करिके निसंक पाप आतमा उठाये घूम
देखि देखि रोम रोम कहकत हमारे हैं॥[1]



दरसनदास

आप चम्पारन निवासी सरभंग-सम्प्रदाय के एक संत थे।[2] निर्गुणियाँ कवि कबीर में आपकी अपार श्रद्धा-भक्ति थी। आपकी स्फुट रचनाएँ भोजपुरी में मिलती हैं।

उदाहरण

जब सग मन मोरा रहल बहेंठवा,
तब सग पिया भइले पास हो।
एक दिन मन मोरा सागल पिया से,
छुटि गइले जग संसार हो।
जगमग जगमग महल चरिअतिया
भइले मैंबइया नीच ठाढ़ हो।

---

१ श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह (बक्सर) से प्राप्त।
२ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (खंड), ४६।

केकरा के परिछी हम केकरा के छाड़ीं,
के होइहें भल हमार हो।
समता के परिछब केहू के ना छाड़ब,
निरगुन ब्रह्म अपार हो।
काम क्रोध के मारि नसावों,
छुटि गइले जम्हुआ के त्रास हो।
साहेब कबीर इहो मंगल गावेले
गावेले दरसन दास हो।[1]



दीनदयालु

आप चम्पारन जिले के निवासी और बेतिया (चम्पारन) के महाराज बहादुर आनन्दकिशोर सिंह (सन् १८१६-३८ ई०) और नवलकिशोर सिंह[2] (सन् १८३८-५५ ई०) के दरबारी कवि थे।[3] आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।



दीहलराम

आपका जन्म फतुहा (पटना) में हुआ था।[4] आप कसेरा (ठठेरा) जाति के थे। बचपन में ही आप मुजफ्फरपुर चले गये। अल्पायु होने पर भी आप अपना आजीविका-व्यवसाय स्वयं करते थे। आप एक अच्छे वक्ता थे। धार्मिक और सामाजिक विषयों पर प्रभावशाली भाषण किया करते थे। वक्ता के अतिरिक्त आप एक कवि भी थे। आपकी कविता के मुख्य विषय थे ईश्वरभक्ति तथा पारस्परिक प्रेम। आपकी एक

---

१ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ० ४९-५०।

२ ये सन् १८५५ ई० में स्वर्गवासी हुए थे। इनका जन्म-काल अज्ञात है। तब भी अनुमान है कि सन् १८३१ ई० और सन् १८३५ ई० का मध्यकाल ही इनका जन्म-काल रहा होगा।—सं०

३ —देखिए, बिहार-प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के द्वितीय अधिवेशन (बेतिया) के स्वागताध्यक्ष सेठ रामकृष्णजी का भाषण और 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० १६।

४ श्रीरामविभूतिसिंह 'मधुकर' (ग्रामपुस्तक-समिति, मुजफ्फरपुर) द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर।

भक्तिपूर्ण पंक्ति लोककंठ में मिलती है—'कवि दीहल है मन चेत करो, भजु राम सिया जिन जन्म दिया।' आपकी रचनाओं का एक संग्रह (अनुभवप्रकाश) भी छपा था, जो अब अप्राप्य है।[1]

उदाहरण

(१)

फाटा जो दूध ताहि बनत रसगुल्ला,
अति उत्तम होत स्वाद भोग ठाकुर को लगावत है।
फूटा जो मोती ताहि भसमी बनाय करि,
रोगी को खवाय केत रोग को नसावत है।
टूटा जो कनक वस्तु मोल से बिकाय जात,
याही से लोग याको जतन करावत है।
कहैं रामदीहल व्यवहार में विचारि देखो,
फाटा फूटा टूटा तीन तीन काम आवत है॥[2]

(२)

फाटा जो टाट ताको कागज बनाय जात,
पोथी पुरान लिखत यही करै गौर है।
फूटा जो कपास ता सो वसन विचित्र होत,
सुख और शोभा अति देत ठौर-ठौर है।

---

१ इस छपी पुस्तक की एकमात्र खण्डित प्रति मुजफ्फरपुर की नवयुवक-समिति के सौजन्य से प्राप्त हुई है जिसमें कवित्त, सवैया, दोहा, सोरठा, कुण्डलिया, छप्पय, लावनी, बारहमासा आदि संग्रहीत हैं। कुछ अश्लील रचनाएँ भी हैं। कई रचनाओं में भोजपुरी भाषा का पुट भी है। [illegible] दो-चार कविताओं में आपने अपना परिचय दिया है। आरम्भ और अन्त के कई पृष्ठ नष्ट हो गये हैं अतः रचना-काल आदि के अनुमान का कोई आधार नहीं है।

[illegible] है [illegible] मेरा [illegible] में रहते हैं।
रामपुर [illegible] के बीच में बैठ [illegible] को कहते हैं॥
दोनों [illegible] [illegible] पर [illegible] है।
[illegible] की [illegible] की [illegible] राम [illegible] है॥
[illegible] हुआ [illegible] पर जो [illegible] सब [illegible]।
[illegible] [illegible] हुआ [illegible] पर [illegible] मेरो मन [illegible]॥

—'अनुभवप्रकाश' ([illegible] विरोध [illegible] अनुभवप्रकाश) पृ० २२-९।

२ वही, पृ० ४४ और ४५।

टूटा है पिनाक सिया राम से बियाही गई,
आनँद उछाह बहुत होत पोर-पोर है।
कहै राम दीहल व्यवहार में बिचारि देखो,
फाटा फूटा टूटा तीन ऐसे सिरमौर है ॥[१]

(३)

सुन्दर नारि तजे गृह में बस बेस्या के होय दुलारत है।
भूषन वस्त्र सिंगार करावत खोवत माल अमारत है।
धन नाहिं मिलै गनिका को अवै गनि कै पनही दस मारत है।
तबहूँ ना तजे जब दास बने यहि कारन भारत गारत है ॥[२]

(४)

को भेंटे बिछुरे भवन, नाम रूप के नास।
रामदिहल कह जो लखे, तिनको ससुर न सास ॥[३]

*

द्वारकाप्रसाद मिश्र

आप 'कविरंग' के नाम से प्रसिद्ध थे।

आप शाहाबाद जिले के पचकसिया-ग्राम के निवासी शाकद्वीपीय ब्राह्मण थे।[४] आपका सम्बन्ध डुमरांव के राज-दरबार से था। संभवतः, आप वहाँ के दरबारी कवि थे।[५]

१-२. 'अनुभवप्रकाश' (वही) पृ ४४ और ४६।

३ वही, पृ ६४।

४ —देखिए, श्रीपंचाननसिंह का 'बिहार के कुछ कवि' शीर्षक लेख—'सम्मेलन पत्रिका'। (वही, भाग १४ अंक १ सं १९८३ वि) पृ० ६४।

५ रामपुर (जिला पटना) निवासी मिश्र भगवत्प्रसाद शर्मा काव्यतीर्थ आयुर्वेदाचार्य (हेड पंडित हेडो-स्कूल, कमीन रामपुर पटना) द्वारा प्रेषित [illegible] १०-६५ के पत्र के आधार पर। श्रीशर्माजी का अनुमान है कि आप सन् १८५६ ई० के आसपास रहे होंगे। अतः, आपका जन्म सन् ईसवी की उन्नीसवीं शती के प्रथम चरण में हुआ होगा।—सं०

आप सिंहावलोकन लिखने में सिद्धहस्त थे। श्रीगंगाशरण सिंह[1] को काशी के किसी शिक्षा प्रेस में मुद्रित आपकी एक छोटी सी कविता पुस्तिका मिली थी, जिसमें मात्र २८ छंद हैं।[2] इसके अतिरिक्त आपकी और कोई कृति नहीं मिलती।

उदाहरण

(१)

पीके बिना कबि रंग सो कादर कौन सो बादर आकरि नीके।
नीके झुके झमके झरि नीर गँभीर झकोरन झोरन जी के॥
जीके कहा बरसावन पावन सावन काम-सुधारस पी के।
पीके बिके कर जीनो भलो पै न जीने न वे धुनि दादुर पी के॥[3]

(२)

मास असाढ़ चढ़्यो कबि रंग सजो घन बाढ़ चहूँ दिसि भारी।
कारी घटा चपला की छटा लखि हाव लटा मन मोद सुधा री॥
भा मोहि आदर कौन सो बादर सादर लाज को चादर फारी।
ई बरसात न मोहि सोहात भयावन रात बिना गिरिधारी॥[4]

(३)

सावन में सजनी जो सोहात सो बात नहीं बिछुरे मनभावन।
भावन है पिय आवन की ननदी दुख दे कहि बात लजावन॥
पावन ही बन देखन को कबि रंग सखी सब धूम मचावन।
चाव नहीं चुनरी पहिरों बरसा बरसे मोर प्रान नसावन॥[5]

(४)

सारी सोहात नहीं तन में कर कंकन कुंडल कानन वारी।
वारिद घेरि लियो कबि रंग सुदामिन जोति करेज निकारी॥
कारि घटा कड़के सजनी रजनी जनु जानि परे हैं कटारी।
टारी बसन्त न मारी सखी यह भादव घोरज स्याम बिसारी॥[6]

---

१ इस इतिहास के लिए शोध का काम करनेवाले साहित्यिक व्यक्तियों में ये अन्यतम हैं। ये सारन-जिले के निवासी और वर्तमान काल में केन्द्रीय संसद्-सदस्य तथा प्रजा-समाजवादी नेता हैं।—सं

२. 'सम्मेलन-पत्रिका' (वही) पृ० ५४।

३ वही।

४ मिश्र श्यामप्रसाद शर्मा (वही) द्वारा प्रेषित।

५. उन्हीं के द्वारा प्रेषित।

६ वही।

(५)

छतिया में खिली नवरंग-कली कवि रंग मतगज का गतिया।
गतिया है मनो मनभावन को मन भावन सावन की रतिया॥
रतिया नँद कद कली विकसी निकसी रस-भेदन की बतिया।
बतिया करिके मुख फेरि लियो तब काहे लगावत हो छतिया॥[1]

❋

धवलराम

आप पहले मुजफ्फरपुर जिले के 'कोटी' नामक स्थान के निवासी थे। पीछे माता का देहान्त हो जाने पर आप अपने भाई 'करताराम' के साथ गंडकी (नारायणी) तट के 'टेकहाँ' (सत्तरघाट) में आ बसे।[2] आपके पिता का नाम वीरसिंह और माता का नाम फुलेश्वरी था। 'टेकहाँ' में करताराम के साथ आप भी रामनाम सुमिरते हुए मूँज की रस्सी बटकर बाजार में बेचते और स्वावलम्बन के सहारे जीवन बिताते थे।

आप एक सरमंगी संत-कवि थे। 'करताराम-धवलराम-चरित्र' नामक ग्रन्थ में आप दोनों सगे भाइयों की रचनाएँ संकलित हैं।[3]

उदाहरण

जग में बहुत पंथ बहु भेषा, बहु मन बहु उपाय उपदेसा।
कोइ तपसी तप करे अखण्डा, कोइ पूजा व्रत नेम प्रचण्डा।
कोइ वैराग कोइ सन्यासी, कोइ पयाहारी अमल उदासी।
जटा भभूति तिलक मृगछाला, छापा कण्ठी कपड़ा माला।
यहि सब है सन्तन के लक्षण, की कछु अंत[4] ये कहिय विचक्षण।
अवरो सन्त रहस्य अनेका, कहिये कृपा कर होइ विवेका।[5]

❋

---

१ श्री भवप्रसाद शर्मा (वही) द्वारा प्रेषित।
२ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ० १८।
३ आपकी रचनाएँ आपके भाई करताराम की रचनाओं के साथ पुस्तकाकार प्रकाशित हुई थीं, किन्तु अब वे दुष्प्राप्य हैं।—सं०
४ यहाँ 'पंथ' के बदले 'मन्त्र' पाठ पड़ता है। संभव है कि लिपिकार या मुद्रक की भूल हो गई हो।—सं०
५. 'सन्तमत का सरभंग-सम्प्रदाय' (वही) पृ० १९९। इन पंक्तियों में आपने 'करताराम' से उन्हीं के सम्बन्ध पूछे हैं। उसका उत्तर करताराम के उदाहरण में देखिए।—सं०

ध्रुवदास

आप छपरा (सारन) के निवासी थे। डॉ० भगवतीप्रसाद सिंह के लेखानुसार आप १९वीं शती (पूर्वार्द्ध) में वर्तमान थे।[1] आपने हिन्दी में तीन पुस्तकों की रचना की थी— (१) बानी, (२) सिद्धान्त विचार और (३) भक्त-नामावली। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



नवरंगी सिंह

आप मुजफ्फरपुर जिले के 'रीगा' नामक स्थान के निवासी थे।[2] आपने एक नवीन प्रणाली से 'मुक्तासागर' नामक एक ग्रंथ की रचना की थी। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।[3]



परपन्तबाबा

आप मैंधुराहा-ग्राम (गोविन्दगंज, चम्पारन) के निवासी और[4] सदानन्दजी के शिष्य थे। सरभंग-सम्प्रदाय के एक संत तो आप थे ही, संस्कृत और ज्योतिष के अच्छे ज्ञाता तथा शकुन विचारक भी थे। मैंधुराहा में एक पोखरे पर आपकी समाधि अब भी वर्तमान है। इन दिनों उक्त ग्राम में आपके नाम पर 'परपन्त-सेवा-समिति' नामक एक संस्था भी स्थापित है। आपने हिन्दी की निर्गुण भक्ति-परम्परा में कुछ पदों की भी रचना की थी, जो अब अनुपलब्ध हैं।[5] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



---

१ 'रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय', (वही) पृ० ४७२।

२ बिहार हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के तृतीय अधिवेशन (सीतामढ़ी) के स्वागताध्यक्ष श्रीरामविलासजी के भाषण से।

३. 'नौरंग' नामक एक कवि की रचना बलदेव-मिश्र श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय (गया) के हस्तलिखित-विभाग में सुरक्षित है (संख्या ११), जिसमें नौरंग कवि की ब्रजभाषा-कविताएँ संगृहीत हैं। कहना कठिन है कि ये नौरंग कवि आपही थे या आपसे भिन्न कोई दूसरे व्यक्ति।—सं०

४ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ० ११।

५. ज्ञात हुआ है कि आपके एक वंशधर (श्रीमहेश मिश्र) के पास आपके कुछ पद सुरक्षित हैं।

भेषनाथ झा

आप सँगोली (मनीगाछी, दरभंगा) के निवासी एक अच्छे नाटककार थे। आपका लिखा 'नारद भ्रम-भंग' नामक एक नाटक प्रकाशित है। किन्तु, आपकी रचना के उदाहरण मिले नहीं।



मनसाराम[1]

आप पहले 'साठी' (चम्पारन) के समीप 'सुखहरवा' नामक ग्राम में रहते थे, पीछे 'भटवलिया' (बेतिया, चम्पारन) में रहने लगे।[2] ज्ञात होता है कि मृत्यु के कुछ दिन पहले आप पुनः अपने पूर्व निवास-स्थान पर चले गये थे; क्योंकि आपकी समाधि वहीं स्थित है। आप पहले शाक्त थे, पीछे सरभंगी हुए। आपकी कुछ रचनाएँ उपलब्ध होती हैं।

उदाहरण

मूढ़ महिषासुर के मर्द्दिनी है महामाता
महिमा महान मही मंडल मा मढी है।
खूब संग खप्पर खलक-खलक खोपड़ी ले
खला का खलो का खला को खाल खंडी है।
उज्ज्वल उमंडी नव खंडो में प्रचंडी कुल
पापिन को प्रचंडी जाको विमुता विहड़ा है।
'मनसा' बखानी वेदबानी अगराना जान
संत-सुखदानी जा भवानी मातु चंडी है॥[3]



---

१ इस नाम के दो सरभंगी संत हो गये हैं जिनमें एक सरभंग-सम्प्रदाय के प्रवर्त्तक मझौलिया (चम्पारन) निवासी संत टेकमनराम के शिष्य थे और दूसरे मधुबन (चम्पारन)-निवासी सरभंगी संत, कुदरताराम के गुरु। —देखिए, हिन्दी-साहित्य और बिहार (यही) पृ० ११६ और १७३।

२. 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० ६७।

३. वही।

पूरनराम

आपका निवास-स्थान चम्पारन जिला के 'भाशापुर' नामक स्थान में 'पुरवारी घाट' पर था।[1] आप शीतलरामजी के शिष्य थे। आपकी जो स्फुट रचनाएँ मिली हैं, उनमें हिन्दी के साथ भोजपुरी का भी सम्मिश्रण है।

उदाहरण

अब भए भोर मन जागु सवेरा।
भजन करन के इहे है बेरा हो॥
माया-मोह में रहले सब दिन घेरा।
अंत में कोई ना आयगा काम तेरा हो॥
भइल विहान धुंध फाटे के बेरा।
काहे फाटे मरमक तन के तेरा हो॥
श्रीमानकराम दया कीजे सतगुरु
श्रीशीतलराम का कीरपा से
भाशापुर पुरवारी घाट पर
पूरनराम के परि गइल डेरा हो॥[2]



प्यारेलाल

आप चम्पारन जिला के निवासी कायस्थ और बेतिया (चम्पारन) के महाराज आनन्दकिशोर सिंह (सन् १८१६-३८ ई०) और नवलकिशोर सिंह (सन् १८३८-५५ ई०) के दरबारी कवि थे।[3] आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।



---

१. चम्पारन की साहित्य-साधना (वही), पृ० ४१।
२. वही।
३. द्वितीय बिहार प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (बेतिया) के स्वागताध्यक्ष सेठ राधाकृष्णजी के भाषण से। इसके आधारवाला पत्रों महात्माओं के समय के आधार पर अनुमान है कि आपका स्थिति-काल इसी शताब्दी के अन्तर्गत होगा। तदनुसार, आपका जन्म सन् ईसवी की उन्नीसवीं शती के प्रारम्भिक वर्षों में हुआ मान सकता है।—सं०

मेघनाथ मिश्र

आप गंगोली (मनीगाछी, दरभंगा) के निवासी एक लिखा 'नारद भ्रम-भंग' नामक एक नाटक प्रकाशित है उदाहरण मिले नहीं।



मनसाराम[१]

आप पहले 'छाठी' (चम्पारन) के समीप 'हुसहरा 'भटवलिया' (केसरिया, चम्पारन) में रहने लगे।[२] पहले आप पुनः अपने पूर्व निवास-स्थान पर चले गए लिखा है। आप पहले शाक्त थे, पीछे सरभंगी हुए होती है।

उदाहरण

मूढ़ महिषासुर के मर्दिनी
महिमा महान मही-मंडल मा
खूब संग खप्पर खलक-खलक
खलों का खलो की खलो को खा
उज्वल उमंडी नव खंडों मे
पापिन को प्रचंडी जाको विभुता
'मनसा' बखानी वेदवानी जगरा
सत-सुखदानी आ भवानी मातु



१ इस नाम के दो सरभंगी संत हो गये हैं जिनमें एक सरभंग-सम्प्रदाय के निवासी संत सदानन्दजी के शिष्य थे और दूसरे भलुआ (चम्पारन)-निवा के गुरु। —देखिए, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही) पृ० ११६ और।
२. 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० ९७।
३. वही।

मित्रनाथ

आप दरभंगा जिले के 'गंगौली' नामक स्थान के निवासी मैथिल ब्राह्मण (श्रोत्रिय) थे।[1] उक्त ग्राम के प्रसिद्ध नैयायिक गोकुलनाथ का आपके ही पौत्र थे। मैथिली में आपके कुछ पद उपलब्ध होते हैं।

उदाहरण

आज देखल हम ग्रोगे सजनी। मुख-छवि चन्द उदित हो रजनी ॥
नयन-कमल युग अति अभिरामे। मुरछित युवजन हनि विसरामे ॥
कुण्डल-चिकुर कपोल सोहाए। अमिय-तृषा नागिनि चलि आए।
श्रुति-ताटङ्क अनूप बनाए। जनु दुइ चक्र मदन-रथ आए ॥
रूप अनूप सकल अङ्ग ताही। कवि लज्जित उपमा देव काही ॥
तेहि छवि निरखि लपटु यदुराई। जनु नवघन तर विजुरि समाई ॥
'मित्रनाथ' कवि मन दए गाई। हृदय लाए व्रज-युवती कन्हाई ॥[2]



मिसरीदास

आप चम्पारन निवासी सरभंग-सम्प्रदाय के एक संत थे।[3] आपके गुरु थे वीवधरामजी। आपकी स्फुट-रचनाएँ यत्र-तत्र उपलब्ध होती हैं, जो संतों की अटपटी वाणी में हैं और उनमें भोजपुरी भाषा का पुट अधिक है।

उदाहरण

संझा आरती निसुदिन सुमिरा हो, सुमिरन करत दिन दिन भिनऽ हो।
धीरज ध्यान दीव कव वाती
गुरुजी के नाम अचल कर याती
ग्यान घ्रित सुरति पुरु बीच ब्रह्म अगिन तनु लेसहु दीप हो।
दया के थारी सारा घर चउर प्रेम पुहुप लइ परिछहु पाउ हो।
सुकरित आरती साजि के कीन्हा
धरम पुरुष परमातम चीन्हा,
अनहद नाद जहाँ हुसा गाजे
श्रीपूरनराम का चरन मे मिसरीराम संझा आरती गावे हो।[4]

---

१ 'मैथिली-गीत-रत्नावली' (वही) पृ ८५।
२ वही पद-संख्या ८१ पृ ४६ ५ ।
३. 'चम्पारन की साहित्य-साधना (वही) पृ ७१।
४ वही।

पाय प्रिय प्रीतम को लपटि लगाय लिन्हीं,
कर दमकाय लिन्हो माधव छतियान में ॥
काम झूलै उर में उरोजन में दाम झूले,
स्याम झूले प्यारो के अन्यारो अँखियान में ॥[1]

(२)

जात रही जमुना जल को, दुति-दसन दामिनि सो दरसै।
मुख अम्बुज कोमल चन्द्रप्रभा, दुइ नैनन खंजन सो सरसैं ॥
कटि-किंकिनि मास प्रवास लसै, मानो बोलनि बैन अमी बरसै।
उत घूँघट माधव टारि दई तम तोम में चन्द्र दुरै दरसैं ॥[2]

*

मायाराम चौबे

आप चम्पारन जिले के 'सुखहरवा' नामक स्थान के निवासी थे।[3] आप कवि दयाराम के समकालीन माने गये हैं। आप बेतिया (चम्पारन) के महाराज आनन्दकिशोर सिंह (सन् १८१५ ३८ ई०) और नवलकिशोर सिंह (सन् १८३८-५५ ई०) के दरबारी कवि थे।[4] आपने विशेषतः स्फुट रचनाएँ ही की थीं। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।

*

१ श्रीशिवप्रसाद गुप्त (रघुनाथपुर, सारन) से प्राप्त।
२. वहीं से प्राप्त।
३. ४ श्रीमहेश चौबे (ग्राम सिसवाचौधरी चम्पारन) से प्राप्त सूचना के आधार पर।
४ इन दोनों बेतिया-नरेशों के राज्य-काल के अन्तर्गत ही आपका स्थिति-काल रहा होगा।—सं०

मित्रनाथ

आप दरभंगा जिले के 'मंगरौनी' नामक स्थान के निवासी मैथिल ब्राह्मण (श्रोत्रिय) थे।[1] उक्त ग्राम के प्रसिद्ध नैयायिक गोकुलनाथ झा आपके ही पौत्र थे। मैथिली में आपके कुछ पद उपलब्ध होते हैं।

उदाहरण

आज देखल हम आगे सजनी। मुख-छवि चन्द उदित हो रजनी ॥
नयन-कमल युग अति अभिरामे। मुरछित युवजन हनि विसरामे ॥
कुण्डल-चिकुर कपोल सोहाए। अमिय-तृषा नागिनि चलि आए ॥
भ्रु ति-ताटङ्क अनूप बनाए। जनु दुइ चक्र मदन-रथ आए ॥
रूप अनूप सकल अङ्ग ताहा। कवि लज्जित उपमा देब काहा ॥
तेहि छवि निरखि लपटु यदुराई। जनु नवघन तर बिजुरि समाई ॥
'मित्रनाथ' कवि मन दए गाई। हृदय लाए ब्रज-युवती कहाई ॥[2]



मिसरीदास

आप चम्पारन निवासी सरभंग-सम्प्रदाय के एक संत थे।[3] आपके गुरु थे धोक्सरामजी। आपकी स्फुट-रचनाएँ यत्र-तत्र उपलब्ध होती हैं, जो संतों की अटपटी वाणी में हैं और उनमें भोजपुरी भाषा का पुट अधिक है।

उदाहरण

संझा आरती निसुदिन सुमिरो हो, सुमिरन करत दिन दिन भिनऽ हो।
धीरज ध्यान दीऽ कर थाता
गुरुजी के नाम अचल कर पाता
ग्यान दिव सुरति बुध बीच जहाँ अगिन तनु लेसहु दीप हो।
दया के थारी आरा भर चउर प्रेम पुहुप लइ परिछहु पाउ हो।
सुकरित आरती साजि के लीन्हा
चरम पुरुष परमातम चीन्हा,
अनहद नाद जहाँ हुआ गाजे
श्रीपूरनराम का चरन म मिसरीराम संझा आरती गावे हो।[4]

---

१ 'मैथिली-गीत-रत्नावली' (वही) पृ० ८५।
२ वही, पद-संख्या ८५ पृ० ४६५।
३ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० ४१।
४ वही।

युगलकिशोर

आप गया जिले के दाऊदनगर थाने के खुदवा नामक स्थान के निवासी थे और[1] ब्रजभाषा के एक अच्छे पूर्तिकार थे। स्फुट काव्य-रचनाओं के अतिरिक्त आपकी कोई पुस्तकाकार रचना नहीं मिलती। आपका रचना-काल[2] सं० १८९७ वि० (सन् १८४० ई०) बतलाया गया है। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



योगेश्वरराम

आप 'परमहंस बाबा' के नाम से प्रसिद्ध थे।

आपका निवास-स्थान चम्पारन का अमवलियामठ था।[3] आपने गृहस्थाश्रम में ही रहकर भक्ति और योग-साधना में सिद्धि प्राप्त की थी। हिन्दी में आपने कुछ पदों की भी रचना की थी, जिनपर भोजपुरी का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। आपके पदों का एक संग्रह 'स्वरूप प्रकाश' नाम से प्रकाशित भी हुआ था, जो अब अप्राप्य है।[4]

उदाहरण

टूटे पँचरंगी पिंजड़वा हो सुगना उड़ि जाय।
सुगनू रहले पिंजड़वा में सोभा बरनि न जाय।
उड़त पिंजड़वा खाली हो सब देखि डेराय।
दसो दरवजवा जंकिरिया हो भयले रहि जाय।
कवन दुआर होइ गइले हो तनको ना बुझाय।
सुगना भइल निरदइया हो अवघट ले जाय।
सारा रचि धरत पिंजड़वा हो आम अगिन लगाय।
सिरि जोगेसर दास काया पिंजड़ा हो नित चनन लगाय।
सहू परसे मरघटिया हो आस अगिन धहाय॥[5]



१ 'गया के लेखक और कवि' (वही) पृ० १४०।

२. आपका रचना-काल यदि सन् १८४० ई० था, तो आपका जन्म सन् ईसवी की उन्नीसवीं सदी के शुरू में ही हुआ होगा।

३ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ० ५५।

४ इसका प्रकाशन चकिया [illegible] के [illegible]-निवासी श्रीमहेश नामक किसी व्यक्ति ने किया था।

५ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० ५५।

रमाकान्त

डॉ० ग्रियर्सन का अनुमान है कि आप मिथिला के निवासी थे। आपने ब्रजभाषा में कुछ गीतों की रचना की थी, डॉ० ग्रियर्सन ने जिनका संग्रह किया था।[1] पर, आपकी रचनाओं के उदाहरण मिले नहीं।

✽

रमापति[2]

डॉ० ग्रियर्सन ने आपको मैथिल कवि बतलाया है।[3] आपके जीवन का विवरण और आपकी रचना का उदाहरण न मिला।

✽

राजेन्द्रकिशोर सिंह

आप बेतिया (चम्पारन) के महाराज थे। आपका राज्य-काल सन् १८५५ से ८३ ई० तक था।[4] आप अपनी उदारता एवं दानशीलता के लिए बड़े प्रसिद्ध थे।[5] प्रजा ने आपको 'कलि-कर्ण' की उपाधि दी थी। आपका दरबार कवियों, पंडितों, चित्रकारों और गुणज्ञों से सदा भरा रहता था। पं० छोटक पाठक, पं० जगन्नाथ तिवारी, बाबू हरिनन्दलाल, मुंशी प्यारेलाल, पं० नारायणदत्त उपाध्याय, पं० कालीचरण दुबे, पं० महावीर चौबे, मैयनीराम आदि आपके भी आश्रित दरबारी पंडित और कवि थे। इन लोगों की साहित्य-चर्चा से मनोविनोद करने के अतिरिक्त आप स्वयं भी कविताएँ रचते थे, पर आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।[6]

✽

---

१ डॉ० जार्ज ग्रियर्सन-कृत 'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही), पृ० १२२।

२ दरभंगा-जिले के तरौनी ग्राम-निवासी अठारहवीं शती के प्रसिद्ध संत-कवि परमहंस विष्णुपुरी का संन्यास के पूर्व यही नाम था। श्री संन्यास के पूर्व आपके दो और नामों (विष्णुराम और रैकुबकुंठ) की चर्चा कुछ लेखकों ने की है।—देखिए, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही) पृ० ५५।

३. —देखिए डॉ० जार्ज ग्रियर्सन-कृत 'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही) पृ० १२१ और Journal of Asiatic Society of Bengal (Vol. 53) P 83

४ 'चम्पारण' (डिस्ट्रिक्ट-गजेटियर सन् १९११-१२ ई०), पृ० ४८। आपको गद्दी सन् १८५५ ई० में मिली थी। उस समय आपकी कितनी अवस्था थी, इसका पता नहीं लगा। अतः आपके जन्म-काल का अनुमान करना कठिन है।—सं०

५ आपने 'आधुनिक हिन्दी के जन्मदाता भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र' को उनके दुर्दिन में, जब उनका पोषण किया था तथा राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' को भूमि देकर वास्तविक राजा बनाया था। कहते हैं, इसपर इन्होंने कविवर रघनेम को अनेक एक अवसर पर प्रसन्न होकर ५ हजार रुपये पुरस्कार दिये थे। बस्ती-नरेश महाराज ईश्वरीप्रसादनारायण सिंह के दरबारी कवि सरदार को भी आपने एक बार सम्मानित किया था।'—वही।

६ बिहार-प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के द्वितीयाधिवेशन (बेतिया) के स्वागताध्यक्ष हक उदारुण्डवी के भाषण के आधार पर।

राजेन्द्रप्रसाद सिंह

आप संभवतः सारन ज़िला निवासी और उक्त ज़िले के ही 'पटेढ़ी' नामक स्थान के साहित्यिक रईस बाबू जगनारायणसिंह के दरबारी कवि थे।[1] हिन्दी के अतिरिक्त आप उर्दू और फ़ारसी के भी विद्वान् थे। हिन्दी में आपकी कोई पुस्तकाकार काव्य रचना नहीं मिलती, केवल कुछ स्फुट रचनाएँ ही उपलब्ध हैं।

उदाहरण

(१)

गोर बदन आभरन जड़ित घूँघट-पट वर झीन।
बिनु नभ घन छाया सलिल, देख परत छल-हीन॥
चलत गैल चितवति पलटि, बाँका नैनन कोर।
रसिकन मन को बाँधती, निज लट छूटे छोर॥
गोरी नाइन पातरी, लचकि लंक गति मौन।
नैनन चित को चोरती, उरज उचकि भजि मौन॥
अधर लाल कुंचित अलक, दीरघ चख वर वाम।
दसन दाबि हँसि सैन करि, चली जात निज धाम॥[2]

(२)

तेरे दृग देखे हरि अवतरे हैं मीन-रूप
भृकुटी के देखे हर चाप को सँवारे हैं।
पंकज-से बदन लखि विधि को अवतार भयो
बेना को पेखि सेस धरनी को धारे हैं।
नासा विलोकि सुक लीन्हा वैराग-पंथ
अधरन को देखि अधर कृष्ण मौन धारे हैं।
विहँसनि ते इन्दु 'राजेन्द्र' कहै चितवन तें
चौदहु भुवन मुक्ति चार पद वारे हैं॥[3]

---

१ 'दुर्गाप्रेमतरंगिणी' (वही) के आधार पर। बाबू जगनारायण सिंह का परिचय इसी पुस्तक में अन्यत्र द्रष्टव्य। उनका स्थिति-काल सन् ११८० के आसपास ठहरता है। अतः, इसी अवधि के अन्तर्गत आपका स्थिति-काल भी माना जाता है।

२ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रन्थ अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित हस्तलिखित पुस्तक दुर्गाप्रेमतरंगिणी से।

३ वही।

(३)

कोकिला कलापी कीर खंजन कपोत लाल
नीलग्रीव चातक नभ बोलत है ए वई।
वैसे हो चमेली चीन चम्पा श्रीखंड चारु
हिमकर समीर मार विरह ताप ते तई।
जब हो मिथि मूरत सम्भु केलु काग पन्नग को
ताही छन भावन मन-भावन को खबर भई।
भस्मासुर विष्णु राम कृष्ण रूप बाल धापि
हर्षित राजेन्द्र मजु मगल साज कर लई॥[१]

(४)

कनक-सिंहासन पर राजे सियाराम लाल
गौर-स्याम मंजु रूप वंसहूँ नवीना हैं।
क्रीट मुकुट चन्द्रिका विराजे मनि-भूषन पट
लाजे रति काम दस सर धनुष भुज लीना हैं।
भरजी की मरजी मन मुदित विहँग बेत
दोउ प्रभा के बिलोकि भानु इन्दू हूं मलोना हैं।
जोरे राजेन्द्र हाथ रानी सुर विहँसि कहे
सिया सोन की अँगूठी राम साँवरो नगीना हैं॥[२]

(५)

जनक-नृप-मंडप में दुलह-दुलहिया सजे
राम घनस्याम सिया दामिनी नमूना है।
महामनिन मौर लसे जरकसा के वागा पट
भूषन जड़ाव मनिगुन हूँ स ऊना हैं।
मदन विलोकि दुति भानु इन्दु मन्द लागे
भोर भई उमरे जग मोद वढ़ी दूना हैं।
कहे नरनारी सुररानी मो राजेन्द्र
सिया सोन की अँगूठी राम साँवरो नगीना हैं॥[३]

---

१ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रन्थ-अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित हस्तलिखित पुस्तक 'दुर्गाप्रेमतरंगिणी' से।
२ वही।
३ वही।

रामधनराम

आप चम्पारन जिले के निवासी[1] और शीतलरामजी[2] के शिष्य थे। पूरनराम और भिखारीदास आपके भी गुरु-भाई थे। आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ भोजपुरी में मिलती हैं।

उदाहरण

जागहु हो मोर सुरति-सोहागिन राम-नाम-रस पागहु हो।
जगहत जागे सवद उर लागे देखहु अम्हू उठि भागहु हो।
जीवन जन्म सुफल कै लेहु सतगुरु सत चरन चित देहु हो।
सुरनर मुनि सब भापी कहतु है ये राम नाम कै लेहु हो।
श्रीभानकराम प्रभु श्रीसीतल जी रामधन नाम चरन चित राखहु हो।[3]



रामनेवाजमिश्र

आप चम्पारन जिले के माधोपुर-ग्राम के निवासी एक सरभंगी संत थे। आपके पिता का नाम था भीखामिश्र।[4] आप अपने पिता के एकमात्र पुत्र थे। आपकी स्फुट रचनाएँ भोजपुरी में कहीं-कहीं मिलती हैं।

उदाहरण

गुरुजी स करज अरजिया हो राम घुमरि-घुमरि।
मन दरियाव पाहुन एक अइले पाँच पचिस सँग सखिया।।
पाँच पचिस मिलिके बिंजन बनाइले जेंवे बइठे मन-रसिया।
रामनेवाज दया कैली सतगुरु सहजे छुटल कुल जसिया।।[5]



---

१ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ० ४०-४१।

२ ये सरभंगी-संत भीखमराम के बाद [illegible] थे। भीखमराम का परिचय 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (पृ० १४२) में देखिए।

३ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० ४६।

४. सेवामत के सरभंग-सम्प्रदाय में ये [illegible] 'भीखमराम' के नाम से प्रसिद्ध हुए। इनके विस्तृत परिचय के लिए—देखिए 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही) पृ० १४६ आ०।

५ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० ५६।

रामस्वरूपराम

आप फलरा-मठ (चम्पारन) के निवासी और अधिकारी थे।[1] आपके बहुत-से हिन्दी-पदों में भोजपुरी का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। 'भजनरत्नमाला' नाम से आपने एक पुस्तिका भी प्रकाशित की थी। उसमें अनेक सरभंगी संत-कवियों की रचनाएँ हैं। आपकी रचना सरभंगी सन्तों की अटपटी बानी से मिलती-जुलती है, जिसपर भोजपुरी भाषा की छाप स्पष्ट है।

उदाहरण

अरध-उरध मे रहना सतो, अरध-उरध मे रहना।
सोहंग शब्द विचारि के मोह मे मन लाई।
त्रिकुटी-महल में बैठ के गगन-महल मे जाई।
गगन-महल में अमृत टपके पीकर हंसा अघाई।
भीटेकमनराम[2] दया सतगुरु के टहलराम कहाई।
जन स्वरूप यह अरज करतु हैं सतन लेहु विचार।[3]



रामेश्वरप्रसाद नारायण सिंह

आप मकसूदपुर-राज्य (गया) के राजवंश के 'महाराज बहादुर' थे। अँगरेजों की ओर से आपको 'सर' की उपाधि भी प्राप्त थी। कविता में आप अपना नाम 'केशव' रखते थे।

आपका जन्म गया जिले के उक्त मकसूदपुर नामक ग्राम में ही हुआ था।[4] आप श्रीमजाधवप्रसादनारायण सिंह के प्रथम पुत्र थे। ग्राम-गीतों के प्रति आपका अतीव अनुराग था। आपने ऐसे गीतों का एक संग्रह भी प्रकाशित कराया था। आपने जिन पदों की रचना की थी उनमें भी ग्राम-गीतों के तत्त्व ही मुख्य रूप से पाए जाते थे। आपके समुदाय में आपके पदों का बहुत अच्छा प्रचार था। कहते हैं, आपके दरबार में विजया दशमी, होली आदि महोत्सवों के अवसर पर जो भी संगीतज्ञ आते थे, वे प्रायः आपके बनाये हुए पद ही गाते थे। तत्कालीन नर्तकी-समाज में भी आपके पदों का बहुत प्रचार था। ग्रामीण नर्तकियों में आज भी आपके पद बहुत प्रचलित हैं, पर उदाहरण मिला नहीं।



१ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ॰ ८६।
२. इनका परिचय इस पुस्तक के प्रथम खण्ड में द्रष्टव्य।—दर्पण, वही पृ॰ १२६।
३ वही।
४ 'गया के लेखक और कवि' (वही) पृ॰ १४।

सहवरदास

आप चम्पारन निवासी एक सरभंगी संत थे।[१] आपके गुरु थे मिनकरामजी।[२] आपकी जो स्फुट रचनाएँ उपलब्ध हैं, उनमें भोजपुरी का पुट अधिक है।

उदाहरण

दखिन जगिरहा, उत्तर पुरनहिया
बीच में सहवरदास के कुटी।
भीनकराम दया सतगुरु जी के
हरिदम निरखो गगन त्रिकुटी।[३]



वासुदेवदास

आप छपरा (सारन) के निवासी थे। डॉ॰ भगवतीप्रसाद सिंह के लेखानुसार आप सन् १८६२ ई॰ में वर्तमान थे।[४] हिन्दी में आपकी एक पुस्तक 'रसिक-प्रकाश (भक्तमाल की सुबोधिनी टीका)' मिलती है। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



शत्रुघ्न मिश्र

आप चम्पारन जिले के 'बसमटिया' (सुगौली) नामक स्थान के निवासी थे।[५] हिन्दी में आपने 'मंत्रदीपिका' नामक पुस्तक रची थी, जिसमें वेद मंत्रों की व्याख्या के साथ कुछ तांत्रिक प्रयोग भी हैं। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



---

१ चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ॰ ४२।
२ इसका परिचय इस पुस्तक के प्रथम खण्ड में द्रष्टव्य।—लेखक, वही पृ॰ १५८।
३. 'चम्पारन की साहित्य-साधना (वही), पृ॰ ४२।
४ 'रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय (वही) पृ॰ ५४४।
५. चम्पारन की साहित्य-साधना (वही) पृ॰ ११।

शम्भुदत्त झा

आप दरभंगा जिले के उजान-ग्राम के निवासी थे।[1] आपने मैथिली में स्फुट पदों की रचना की थी।

उदाहरण

जय-जय आदि शक्ति शुभ-दायिनि ! महिधर शायिनि देवी ।
सुर-नर-मुनिगन सकल सुखित मन, केवल तुअ पद-सेवा ॥
हमहु शरण भए चरण अराधल, तोहि करुणामय जानी ।
तइओ रहल दुख सपनहुँ नहि सुख, तकर परम होऊ हानी ॥
हम सन अधम जगत नहि दोसर, जप-तप-गति नहि जानी ।
अब हम मगन भेलहुँ भवसागर, गति एक तोहिं भवानी ॥
जन अपराध कएल भरि जीवन, कहि न सकिअ सत माता ।
सुत शरणागत सेवक पामर, सभक जननि तों त्राता ॥
दुहु कर जोडि अरज अवनत भए, शम्भुदत्त कवि भान ।
त्रिभुवन-तारिणि अधम-उधारिणि, देहु अभय वरदाने ॥[2]



शिवकविराय

आप शाहाबाद के निवासी और जगदीशपुर (शाहाबाद) के इतिहास-प्रसिद्ध विद्रोही वीर बाबू कुँवरसिंह के अनुज बाबू अमरसिंह के दरबारी कवि थे।[3] देश की शान पर तन-मन-धन निछावर करनेवाले शूरों के प्रशंसक कवियों में आपका नाम भी उल्लेखनीय है। पुस्तकाकार आपकी कोई रचना नहीं मिलती, स्फुट रचनाएँ भी बहुत कम मिलती हैं।

---

१ 'मैथिली-गीत-रत्नावली' (वही) पृ० १२५।
२. वही पृ० १४।
३ 'प्रदीप' (स्वाधीनता विशेषांक, १ जनवरी, सन् १९४८ ई०) के 'सन् १८५७ ई० के समकालीन कवि और उनका काव्य' शीर्षक लेख से। बाबू कुँवरसिंह के दरबार में रहते समय आप पचास वर्ष से अधिक ही अवस्था के होंगे। अतः आपका जन्म सन् ईसवी की उन्नीसवीं शती की प्रथम दशाब्दी के लगभग हुआ होगा।—सं०

उदाहरण

कसिकै तुरंग तंग चढ़्यौ जब जंग पर
अंग-अंग आनँद उमंग-रंग भरिगौ।
सनमुख समर बिलोकि रनधीर वीर
फौज फिरगाना की समेटी सो कतरिगौ।
कहै 'शिव' कवि काटि-काटि कप्तानन कूँ
काटि-काटि कांकड़ा कुम्हेंड़ौ-सौं निकरिगौ।
हाय मीचि हाकिम कहत साह लन्दन सौं
हाय-हाय आफत अमरसिंह करिगौ॥[1]



शिवेन्द्र शाही

आपका उपनाम 'लाल साहब' था।

आप सारन जिले के प्रसिद्ध माँझा-राज के राजकुमार और वहीं के निवासी थे।[2] मिश्रबन्धुओं ने आपको पं० जगन्नाथ दीक्षित का शिष्य और महाराज बेतिया का जामातृ बतलाया है।[3] आपने हिन्दी में स्फुट-पदों की रचना की थी। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



शीतल उपाध्याय

आपका उपनाम था 'शीतल द्विज'।

आप सारन जिले के शीतलपुर-बरेजा नामक ग्राम के निवासी थे। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



१ श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह (एकौना, शाहाबाद) के सौजन्य से प्राप्त।
२ 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, चतुर्थ भाग), पृ० ११६।
३ वही।

शीतलराम

आप चम्पारन-जिला के निवासी सरभंगी संत थे।[1] आपका आविर्भाव 'भिनकराम'[2] के बाद हुआ था। आपके शिष्यों में प्रमुख थे—पूरनराम, रामधन और मिसरीदास। अन्य सरभंगी संतों की तरह आपने भी कुछ पदों की रचना की थी। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



श्रीधर शाही

आपका जन्म सारन-जिला के प्रसिद्ध 'माँझा'-राजवंश में हुआ था।[3] हिन्दी में आपने कुछ समस्यापूर्तियों की रचना की थी, जो अब नहीं मिलतीं।[4]



सनाथराम[5]

आप चम्पारन निवासी एक सरभंगी संत थे।[6] आपकी स्फुट रचनाएँ भोजपुरी में मिलती हैं।

उदाहरण

हम्हीं गइली सहदनिया राम नइहरनिया देवो।
त्रिकुटी-संगम मेला-असनान सुरदम धरीले संतन के ध्यान॥
हकनी-डकनी सुतनी-पियसनी लिहले सँगवा साथ।
अपन जाके दवा बैठलू सिंगासन हमरा के बजलू बगहा मठिया॥
थीं टेकमनराम[7] का मिलना सियम स्वामी।
सनाथा राम के दहलू बखनियाँ बरदान॥[8]



---

1 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ० ४।
2 इनका परिचय इस पुस्तक के प्रथम खण्ड में द्रष्टव्य।—देखिए, वही पृ० १६८।
3 बिहार प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के तृतीय वार्षिक अधिवेशन (सीतामढ़ी) के सभापति श्रीशिवनन्दन सहाय के भाषण से।
4 समस्यापूर्ति-सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाओं की दुर्लभता के कारण अनेक कवियों का पता नहीं लगता।
5 इसी नाम (सनाथ) के एक और कवि की रचना मैथिली में मिलती है। उनका स्थिति-काल भी अठारहवीं शती पूर्वार्द्ध ही अनुमित है।—सं०
6 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ० ४८।
7 इनका परिचय इस पुस्तक के प्रथम खण्ड में द्रष्टव्य।—देखिए, वही पृ० १२४। भीखमराम इनके शिष्य थे।—सं०
8 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ० ४५।

सबलराम

आप चम्पारन जिले के निवासी एक सरभंगी संत थे। आपकी स्फुट रचनाएँ भोजपुरी में मिलती हैं।

उदाहरण

जय चरनो देवी दुर्गा भवानी देत वचन वरदानी।
असुरन मारेलू भक्त उबारेलू संतन के आगे धावेलू।
हरिजन भक्त सहज में उबारलू, आपु तपे महरानी।
भारत में जाके करिके लड़ाई, पाँचो पाण्डो बचावलू।
दुरयोधन के मरदन करेलू, श्री भवैया नाम धरावेलू।
सहस्त्र वदन सहस भुजा तूरेलू सहस्ता देवा कहावेलू।
रामचन्द्र के मूर्च्छा छोड़ावलू श्री जानकी नाम धरावेलू।
राम सिपमराम दया कर्मो सतगुरु श्री टेकमनराम'[1] कहाईले।
जन 'सबल' चरन म मिलि रहि पावले भक्ति अचल वरदानी ॥[2]



हरिनाथ मिश्र

आप 'कवीश्वर' के नाम से प्रसिद्ध थे।

आपका निवास-स्थान मुजफ्फरपुर जिले के सीतामढ़ी थाने का 'रघुनाथपुर' नामक ग्राम था।[3] आपकी नवीं पीढ़ी के वंशधर वर्त्तमान हैं। आपका सम्बन्ध परसौनी-राज (सीतामढ़ी) तथा मझौलिया-दरबार

---

१ इनका परिचय इसी पुस्तक के प्रथम खण्ड में द्रष्टव्य।—देखिए, वही पृ० १२९। भीखमराम जी के शिष्य थे।—सं०

२ 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही) पृ० ८८।

३ श्रीलक्ष्मीकान्त मिश्र काव्यतीर्थ (सीतामढ़ी मुजफ्फरपुर) द्वारा दिनांक २७-११-३१ को प्रेषित पत्र के आधार पर।

(सीतामढ़ी) में था। हिन्दी में 'वैद्यनाथ-विलास'[1] नामक आपकी एक हस्तलिखित पुस्तक तथा ब्रजभाषा और मैथिली में स्फुट कविताएँ उपलब्ध हैं। किन्तु, उदाहरण-योग्य आपकी कोई रचना नहीं मिली।



हीरासाहब

आप सारन जिले के 'माँझा' राजघराने के थे। आप स्वयं तो हिन्दी के कवि न थे[2], आपके पुत्र माधवेश्वरेन्द्र प्रताप शाही[3] भी कवि थे। आपके दरबार में कवियों, कलाकारों और गुणियों का बड़ा आदर था। आपकी रचनाएँ नहीं मिलीं।



---

१ यह पुस्तक लगभग ६० पृष्ठों की है। इसमें तीन भाषाओं—संस्कृत, ब्रजभाषा और मैथिली—का प्रयोग हुआ है। इसकी कुछ पंक्तियों की बानगी देखिए। रावण का वध करके जब राम लंका से आने के लिए शिवजी की पूजा से चले, तब देवताओं ने भगवान् शंकर से कहा (मैथिली में)—

गिरिजा-रमण [illegible] [illegible]।
[illegible] देव-जन-हितकारि।
[illegible] [illegible] दूत के देख [illegible]।
[illegible] ते [illegible] पुरारि [illegible]॥—शिव-शिव॥

२ एकादश सारन-जिला हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (हथुआ, सन् १९५१ ई०) के स्वागताध्यक्ष श्रीकुमार मधुरेश्वरेन्द्र शाही के भाषण से।

३ इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान द्रष्टव्य।

परिशिष्ट-१

[वे साहित्यकार, जिनकी रचनाओं के केवल उदाहरण मात्र हैं।]

अग्रदास[1]

उदाहरण

धाय गोविन्द गजेन्द्र उबारो।
खैंचत ग्राह-महीत अपन कै, गज डूबत हरिनाम उचारो।
मुख नासिका डूबय लागत, चरन-कमल देखत ललचायो।
फहर-फहर फहराय पीत पट, कमल नयन तें गरुड़ बिसारो।
काटत फंद प्रभु चक्रधार सों, अघमोचन प्रभुनाम तिहारो।
'अग्रदास' पद-पंकज परसय, द्वन्द्व-दमन बैकुण्ठ सिधारो ॥[2]



---

१ (क) इस नाम के एक कवि १६वीं शती में [illegible] में रामानन्द में भी हुए थे। रामभक्ति के रसिक-सम्प्रदाय में ये 'अग्रअली' के नाम से विख्यात थे। हिन्दी में इनकी दो रचनाएँ मिलती हैं— 'ध्यानमंजरी' (रामध्यानमंजरी) और 'कुंडलिया' (हितोपदेश उपखाणा बावनी कुंडलिया बावनी या कुंडलिया रामायण)। इनके अतिरिक्त 'शृंगार रस-सागर' या 'अष्टयाम' नामक एक विशाल रसिक-ग्रंथ भी इनके द्वारा रचित बतलाया जाता है।— देखिए, रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय (काशी), पृ. [illegible] तथा 'सम्मेलन-पत्रिका' (प्रयाग, भाग [illegible] सं० [illegible] माघ-चैत्र सं २००१ वि. तथा भाग [illegible] सं० [illegible] वैशाख-भाद्र, सं० २००४ वि०), क्रमशः पृ [illegible] तथा [illegible]।

(ख) [illegible] (बिहार) के हस्तलिखित ग्रन्थ-विभाग में [illegible] संग्रह (कुंडलिया, [illegible]) सुरक्षित है। [illegible] करते हैं।—सं

२. 'भक्तिकाव्य-गीत-संग्रह' (काशी) पृ. [illegible]।

अभिनव

उदाहरण

माइ गे अचरज देखिअ मण्डप बिच, एक गोट नयन ललाट बिच।
माइ गे सहस्र नयन केरि एक जन, छओ मुख देखिअ दुइ जन॥
माइ गे तीन चरन भुज छओ गोट, तीन नयन केर एक गोट।
माइ गे पसु-पक्षी चढ़ि अमसाह, भूत प्रेत संग नयसाह॥
माइ गे सातू नाम एके कहु, गोत्र-प्रवर अपि सहो कहु।
माइ गे 'अभिनव' कवि मन मजगुत, ईस्वर नहीं ककरो पूत॥[1]



आनन

उदाहरण

(१)

बसहा चढ़ल शिव सिर छोड़य गौरा, चलल बियाहय दिवि घर गौरी।
देखइत गौरि हिआ उपजल लाजे, पसरल प्रेम उसरि गेल काजे॥
दुहुँक मिलल तनु अपरुब भाँति, राजत गिरि जनि दामिनि पाँति।
'आनन' कवि सवक परमेशे, माधवेश समुचित गिरिजेशे॥[2]

(२)

मुगुधि मनाइनि देखि मगन वर, गाइनि रहलि लजाए।
धिक धिक सम कहु कओन कहलक, निर्दय घटक ज्ञान।
माए बाप नहि, उर फणिपति अहि, सहजहि धिक समसान।
घर सम्पति सुन, एकओ ने वर गुन, कोन सुख करति भवानी।
'आनन कवि' कहु किए ने जननि सहु, बिनति सुनिअ महरानी।
तीन लोक गति, गौरि उचितपति, माधवेश महराना॥[3]



१. श्री रेणुकान्त झा (दरभंगा) से प्राप्त। विवाह में [illegible] का गीत।
२. उन्हीं से प्राप्त।
३. वही।

आद्याशरण[1]

उदाहरण

(१)

नूतन तमाल पट गमन मराल बाल
सुभग नवीन चम्प बदन गोराई है।
जानु जुग केदली मुकुन्द को कली-सी नख
अधर जपा-सी पद-कमल सोहाई है।
चरित मयूर पग नूपुर विहंग-ध्वनि
पिक बच वेव मना मधुप लोभाई है।
त्रिविध समीर-लीला लखि जन 'आद्या' कहे
छवि-वन-मध्य में वसन्त-रितु आई है।[2]

(२)

मातु पितु मोद ते उमा कर दीन्हो विदा
आवत ही मन्दिर फुलाई वृषयान का।
याकी फैलो सोर चहुँओर तिहुँ लोकन में
चलीं सुर नारिन धन छाई विमान की।
कौतुक निहारि करि मन में बिचार करि
जग मे प्रचारि ऐसी नारी पंचवान की।
देखें चलो जाई ऐसी दूसरी न माई माई
जैसी एक आई जाई गिरि हिमवान की।[3]

✿

१ आप छोटी (सारन) के सार्वभौमिक रईस श्रीजगन्नारायण सिंह के दरबारी कवि थे। संभव है, आप स्वयं भी वहीं के निवासी हों। श्रीजगन्नारायण जी का परिचय इसी में अन्यत्र देखिए।

२. श्रीजगन्नारायण सिंह रचित 'कुवलयानन्दिनी' नामक हस्तलिखित पुस्तक से, जो बीरबहू-संग्रहालय में सुरक्षित है।

३. यही।

आशादास

उदाहरण

चैत चिन्ता कियो है ग्वालिनि, कृष्ण राधा साथ री।
लेहु दान प्रभु अधिक गोरस, करहु जमुना पार री॥
बैशाख राधा गेलि मधुपुर, हरि सौं कहल बुझाय री।
आन ठाकुरा लाज ककरा, सकट प्राण गँवाय री॥
जेठ प्रभुजी सौं भेंट भय गेल, मोहि कदम जुड़ि छाँह री।
छानि लियो प्रभु चीर चोली, ग्वालिनि करत कलोल री॥
आषाढ़ राधा रास ठानल, कृष्ण राधा साथ री।
'दास आशा' इहो पद गाओल, राधाकृष्ण विलासपरी॥[1]



ईश्वरपति

उदाहरण

सखि हे शिव क कहु न बुझाय। ध्रु०।
चलइक बेरि विहुँसि हँसि तानय, हमरहु नयन जुड़ाय॥
एक बेरि आबि एतए भए रहितथि, दुलहिन दास कहाय॥
हमर गौरि कें ओरि जोग विहुसि, सरची देव पठाय॥१॥
बड़ रे मनोरथ कयल प्रथम बर, मिथिला देस अंक लगाय।
सकर निगाह हृदय बिच रखितहुथि, हमरो मेलाह जमाय॥२॥
सासु मनाइनि गाइनि सभ मिलि, विनति करथि कर जोड़ि॥
एक बेरि मासिक बीझ भेटविहुथि, हमर आँगन बिच आवि॥३॥
सारि सरहोजि मिलि रभसि करें छनि, सुनु शिव वचन हमार।
'ईश्वरपति' इहो पद गाओल, शिव कैलास सिधार॥४॥[2]



---

१ "मिथिला-गीत-संग्रह" (वही, चतुर्थ भाग), पद २०-२४
प्रो० रमानाथ झा (वही) के पास।

कलानाथ

उदाहरण

(१)

वड़सल झाँखथि माइ मनाइनि, झाँखथि मन अनुमान ।
मनक मनोरथ करव प्रथम वर, निक वर करव विचारि ॥
कथा सुनल घटकक मुहृ जइ जखन, वड़सलो निज मन मारि ।
पहिन सुनिऐन्हि तिन गुन सुन्दर, मैंगाग्रा वूढ़ भिखारि ॥
भागिन माय-वाप हारि वइसल, वइसल सोदर भाय ।
विधाक कर्म न जागिग्रा लिखल छल नहिं अछि एकर उपाय ॥
'कलानाथ' कवि पूर्वा लाखल, लिखल मेटल नहिं जाय ।
सुभ-सुभ कय गौरी विम्राहिअ, सखि सब मंगल गाय ॥[1]

*

(२)

नयन कोर भरि झाँखथि मनाइनि, देखि देखि अपन दुलारिए ।
हमर कर्म थमबर वाउर, कान लग चुकलि भवानि ॥
केम्रो जनु करहु पसाहुनि नागरि, भूषण घरहु उतारि ।
हिन तह कओन विधे हम निवहुव, गौरी मोरि राजदुलारि ॥
निर्धन वूढ़ हिता वर जनिका, नहिं थुनि कुल नहिं मूल ।
तनिको एहन मनोरथ सुन्दरि गौरि मोरि रहति कुमारि ॥
"कलानाथ कवि" इहो गाम्रोल, हर कपिलेश दिनेश ।
सुभ-सुभ-सुभ कए गौरि विम्राहिअ, मेटल गौरिक कलेश ॥[2]

*

---

१ श्री ईशनाथ झा (दरभंगा) से प्राप्त ।

२. उन्हीं से प्राप्त ।

कान्हरदास

उदाहरण

जय गंगाजी जय जग जनना, जय सन्तन-सुखदाई।
चरन-कमल-अनुराग भाग सौं, जय ब्रह्मा उर लाई।
चारि पदारथ अछि जगजीवन बेद बिमल जस गाई।
भक्त भगीरथ उनके कारन, प्रगटि अवनि महँ आई।
तेज प्रताप कहाँ धरि बरनब, संकर सीस चढ़ाई।
हेम-सिखर पर ललित मनोहर, उर जयमाल सोहाई।
ताकर नाम लेत जम किंकर, करुना करि फिरि जाई।
राम-नाम गंगा कलि केवल, दास और ने उपाई।
'कान्हरदास' आस रघुबर के, हरखि निरखि गुन गाई॥[1]



कुँवर

उदाहरण

चलु सखि चलु सखि मौड़ब ठाम, कुस भए कें बइसल छथि राम।
तिल जल कुस लय करता दान, अपनहिं जनक सुनल अछि कान।
गारा-पूजा कयलहुँ बेस, तें अति भेला आ अवधेस।
उठ-उठ आज करै छहु लाज, बुझइत छहु जे बनले काज।
सज्जित सीता उठलि लजाय, मौड़ब-बिसि सभ पहुँचलि जाय।
राम दहिन भए बइसलि जाय, सभ सखि मंगल सुभ-सुभ गाय।
जनकक नयन हरख जल भेल, तिल-कुस लए कन्या दए देल।
सभ जनि गावहु गात उछाह, जय-जय सीता सीतानाह।
कुमर मनय दुहु जग पितु माय, सभ छन सभ पर रहहु सहाय॥[2]



१ मिथिला-गीत-संग्रह (वही, तृतीय भाग) पद २७-२८।
२ प्रो० हरिनाथ मिश्र (काशी) से प्राप्त।

खड्गपाणि

उदाहरण

माज चतुर्थी करु हर मेल मिनसर।
विधिकरि सज उठाए निपाओल कोवर।
कामिनि सिन्दुर भरल थार देलन्हि धार।
आँगुरि लागलि सुकुमारि चलत हर बाहर।
पालव जुगुति बैसाओल नहाओल हे।
कर धए लेल शूलपाणि चलल हर कोवर।
कावर जाए हर होम कएल घोघट देल।
कङ्कण खोलि खिर राखि कि जुगुति सराओल हे।
गारिक फुजल पसाहनि हेंधु सुलपाणा।
गाविम मंगलराग जत छलि गाइनि।
"खड्गपाणि" हरिदास कहो धर आस लेल।
शिव संग गौरि विवाह कहो धर मौगल॥[1]



गुणनाथ

उदाहरण

किछु नहि थिर होम' कान विधि कि करव,
हृदय कुसुमसर-जरजर कि कहव,
केवल अवगुन आसपास लागि थरथर रे का॥
सहजहि उपजल नह परम प्रिय
देकत परसपर सुख उर भए हिय,
परवस दुलभ मिलन धार नहि उर धर रे का॥
सुथ पद अनुपम छारि सुबुधि मन
रसिक रहत कहि धनि सें कहुखन
असमञ्जस अभिशाप लाख करत विधि रे का॥

---

१ प्रा० ईशनाथ झा (सदी) क प्राप्त।

गहि कर हेरि मुख अक्कुम भरि-भरि
चुमि मुख नयन कपोल कोर करि
निधुवन केलि विनोद मोदमय लागि गर रे की ॥
सब गुनखानि सिवक विहित अघि-
मोचन-कोर धार सित निरवधि
कर 'गुणनाथ' कृतारथ प्रभुवर कवियर रे का ॥[1]



चन्द्रनाथ

उदाहरण

(१)

कौतुक चललि भवन केलि-गृह, सजना गे, संग दस चतुविसि नारि ।
विध विध सुन्दरि सोभित, सजनी गे, जनि वर मिलत मुरारि ॥
कहि पोडस कहि अभरन, सजनी गे, पहिरल अपरूप चीर ।
देखि सकल रस उपजय, सजना गे, मुनिहुँक मन नहि थीर ॥
दसन नाम दाड़िम विम्ब, सजनी गे, सिर लेल मोथट सम्हारि ।
लघु-लघु चलै पगु दै, सजनी गे, हेरल वसन उघारि ॥
सखि सभ लैकर भवन में येलन्हि, सजनी गे, घुरि आएल सभ नारि ।
कर धय पास बइसाओल, सजनी गे, हेरल वसन उघारि ॥
चन्द्रनाथ भन मन दय, सजना गे, ई सभ बड विपरीति ।
चमस युक्त समुचित धिक, सजना गे, ते नहि मानिय भाति ॥[2]

---

१ प्रो० वैद्यनाथ झा (बही) के पास।
२. 'मिथिला-गीत-संग्रह' (बही प्रथम भाग) पृ० १४१५।

(२)

माधव सब विधि पिक मोर दोषे ।
वयस प्रलप थिक तनु अति कोमल, तें नहि दरस परोस ॥
तुम अभिरोप रोस हम चललहुँ, जाय सहब दुख देहे ।
सखि सब हेरि घेरि कँ राखल, एखन एहेन सिनेहे ॥
काँच कला जा हरि तोडब, तो पुनि होएत उदास ।
होयत कला पुनि रंग सुरंगति, दिन दिन होयत प्रकास ॥
निकसि सुवास मास तोहि पूरत, वइसि पिवह रस पास ।
कछु दिन और धीर धरु मधुकर, जखन होयत सुविकासे ॥
चन्द्रनाथ भन अरज कर कामिनि, न करिय एहेन गमाते ।
दिन-दिन तोहु प्रेम हम लाएब, पुरत सकल विधि कामे ॥[1]

चन्द्रमणि

उदाहरण

ऋतुराज समय वसन्त माधव पहु रहल परदेश यो ।
मदन बान मलीन मानस, विरह बाढ़ कलेस यो ॥
ललित लाल कपोल नासा, भ्रमर गुञ्जित केश यो ।
हहरि हारि निहारि चहुदिसि, भेल योगिनि भेस या ॥
आर, परदेशा पहु परवश, पिया बिनु विसरल सब रस ।
जेठ मास कठार बालमु, नहि रमण-सुख पावहाँ ॥
सखी गाए हिंडोलना एक, ताहि सखि पहु झूलहीं ॥

---

१ मिथिला-गीत-संग्रह (पहो प्रथम भाग), पृ १० ।

मुसए स सब मुसए रसमय, वसि कएल एहु कामिनी।
वीर नारि विचारि मनमह, कास भेल मोहि यामिनी ॥
मारे, सुनि सब नेह लगाओल, सकर उचित फल पाओल ॥
असाढ़ घन घहराए चउदिसि, वरसि घन हन वून्द ओ,
पवन जोर झकोर झिगुर, कन्त विनु घर सून ओ।
कठिन हृदय कठोर बालमु, कठिन नेह न जान ओ,
सुमरि नेह अनङ्ग जागल, अव न बाँचत प्रान ओ ॥
मारे, घुरि-घुरि जे पहु अओताह, जिवइत नहि जिव पओताह ॥
साओन सगुन विचारि मनमहँ, वायस मधुरस वोल ओ,
नयन अञ्जनि नागिनो पर, करकि आँचर डोल ओ।
अवन घर मोहि कन्त औता, करव रास विलास ओ,
'चन्द्रमणि' मन सुनिअ सुन्दरि, पुरत मन केरि आस ओ ॥
मारे आस, पुरत मोर सब दिन, ककरहु हो नहि दुरदिन ॥'[1]

चिरंजीव

उदाहरण

(१)

मन ! धरु चित लाय, गिरिजा-ईस-चरन सुखदाय।
शुभ्र जटिल पीवर शुभ काय, चारि बाहु सुन्दर छवि छाय ॥
सुब सिखर हिमगिरि भल थान, गौरीशंकर करु अवस्थान।
दया दृष्टि सँ भक्तक मान, राखथि सदा करि अभय-प्रदान ॥
नन्दी कार्तिक निगम बखान, गनपति अगनित करु गुनगान।
मिहिर छपाकर सप सुजान, भरव धरथि अनुखन ध्यान ॥
सम सौं नारद वीन वजाय 'चिरंजीव' चलु निरखू धाय ॥[2]

---

१ श्री ईशनाथ झा (बही) से प्राप्त।
२ 'मिथिला-गीत-संग्रह (बही द्वितीय भाग) पृ० ९२।

(२)

जय काली जय तारा भुवना, षोडशी मन भावै।
धूमावति मंजु बगला छिन्ना, भैरवी सुख पावै॥
मातंगी मंजु कमला माता, लक्ष्मीरूप कहावै।
दुर्गा दुर्गति-नाशिनि गिरिजा, चण्डी रूप जनावै॥
चामुण्डा मंजु कौशिकी दयानी, महामोह मेटि जावै।
कामाख्या मंजु विन्ध्य-निवासिनी, ज्वालामुखि जग गावै॥
गुह्य कालि मीनाक्षी विमला, मंगल गौरि देखावै।
राजेश्वरी सिद्धेश्वरि सीता, गंगा गडकि रावै।
कौशिकि कमला वाग्मति भजि ले, 'चिरजीव' द्विज गावै॥'



जयदेवस्वामी

उदाहरण

की सुनि कान्ह गमन कियो मदन दहत तन जोर।
चंचल नयन विलम्बित पथ चितवहु पिय तोर॥

पंथ विषाद हे सखि, श्याम गेल परदेस यो।
सून्य सज निकन्त देखल कास भेजब सन्देस यो॥
दादुर घन घनहि रोयँ भृग झिंगुर वाज यो।
नव नह्र अंकम हृदय सालै प्रथम मास अषाढ़ यो॥

सावन सर्व सोहावन कानन बोले मोर।
तापर दक्षिन पवन बहै कठिन हृदय पिया तोर॥

१ 'मिथिला-गीत संग्रह' (वही तृतीय भाग) पृ० २८।

कठिन मोर कठोर बालम दद किछु नहि जान यो।
बहु पठायल बिरह-दुख सें काम देल अनेक यो॥
काम देल अनेक हहरत प्रान अतिसय मोर यो।
बिरह-प्रीति समुद्र-जल में बुड़ित रैनि गमाव या॥
भादव-रनि भयावनि कारि रैनि अन्हियारि।
चित्र-विचित्र हिंडोला झूलैं सोहागिनि नारि॥
गाबि गाबि झुलावँ सखी सब अधर भरि भरि पान यो।
हीन छान मलीन पिय बिनु कठकै पाँचो बान यो॥
दसय चाहल कारि नागिनि प्रान पापर मोर यो।
बिकलि कामिनि पहु दरस बिनु नयन झहरत नीर यो॥
शरद समय जल भासिन पन्थुक सचर मन डोल।
सूतलि धनि उठि बइसलि काग कदम पर बोल॥
बोलु कागा कदम अयोला पास कव हरि आव यो।
उर्ध्व बाहु निवास सखि सब करहि मंगल गान यो॥
राधिका-मुख-कमल विकसित सप सुरमुनि गाव यो।
जयदेव-स्वामी चरन बन्दहि सरन राखु गोविन्द यो॥[1]



जयानाथ

उदाहरण

नवयौवन नवनागरि, सजनी गे, नव सन नव अनुराग।
पहु दखि मोर मन बाकुल, सजनी गे, जेहन गोपी चन्द्राव॥
बाकुल विरह-पयोनिधि, सजनी गे, कैसन्हि जीवक आदि।
कत दिन हेरब हुनक पथ, सजनी गे, भाव वइसलहुँ पिय हारि॥

---

१ 'मिथिला-गीत-संग्रह' (वही, चतुर्थ भाग) पृ० २१-२२।

हम पसलहुँ दुख सागर, सजनी गे, नागर हमर कठोर।
जानि नहि पड़ल एहन सन, सजना गे, दग्ध करत जिय मार॥
धम 'जयानाथ' गाओल, सजनी गे, अधो जनु करँ कुरीति।
धैरज धरहु कलावति, सजनी गे, आज करत पहु रीति॥[1]



जलधर

उदाहरण

सजन अरज कत हन्द रे, तहँ अवसर न करिय मन्द रे।
इहो थिक सजनक रीति रे, हठहु ने तेजय पिरीति रे॥
नारिक जा थिक दोष रे, नागर के हँस लोक रे।
छमिय हमर अपराध रे, वचन कहत नहि भाष र॥
सत अपिहत कुसिआर रे, निकसल रसल पेआर रे।
स जलधर कवि गाव रे, जलधर जलनिधि पाव रे॥[2]



जलपादत्त

उदाहरण

जननि ! अब जनु होइअ मोरि।
पूजा ध्यान एकओ नहि जानिअ, तोहर चरण गति मोरि॥
सुत अपराध कोटि जँ करइछ, माता होए न कठोर।
जओ मोर दोष लिखल बसुधा भरि, उदधि करिअ मसिघोरि॥
सब विधि आस राखल देवि तोहर, सुनु सुनु हेमँत-किसोरि।
जलपादत्त विनति करु भगवति, तोहे देखी अधम उधोरि॥[3]



---

१ 'मिथिला-गीत-संग्रह' (वही, प्रथम भाग), पृ० १४।

२ वही पृ १२ ११।

३ श्री ईशनाथ झा (वही) से प्राप्त। तीसरी और चौथी पंक्ति में प्राचीन श्लोकों का भावांतर है— 'कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति' और '[illegible] सिन्धुपात्रे सुरतरु-शाखा लेखनी पत्रमुर्वी ....।

जानकीशरण

उदाहरण

(१)

झाँकी भाँति भाँति का बनी है महि-मण्डल में,
  बाला बलराम विष्णु बगला बनवारी की।
राम की रमा की भारती की त्रिपुर-सुन्दरी की,
  भुवना भैरवी की और तारा त्रिपुरारी की।
'जानकी' बखाने बहु भाँति की निहारी वारी,
  राधिका रसीली छवि और सिय प्यारी की।
छकित सुरेस सेस अकथ अनूप रूप,
  देखि-देखि झाँकी साँकी सैल की कुमारी की ॥[1]

(२)

कोसल-किसोर चितचोर अवधेस, जू के,
  आये रंगभूमि छवि वृद्ध का द्युति दीना है।
लखन-सखा के साथ धनुष अरु बान हाथ,
  कीट-मुकुट धर माथ नवरस रस भीना है।
'जानकी' सहेट हेरी मान की वसा चहेट,
  मन में बिचारो यह उपमा नवीना है।
स्याम-गौर जाहि दोउ निरखि मन भूलो,
  सिया सोने की अँगूठी राम साँवरो नगीना है।[2]

---

१ परिषद् के हस्तलिखित ग्रंथ-अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित हस्तलिखित ग्रंथ '[illegible]' से। इसी आधार पर आप श्रीरामनारायण सिंह (बरेली ग्राम) के समकालीन माने गये हैं।

२. वही।

(१)

स्याम सखा सँग राधा सोहाग सिँगार सबै सुकुमारी सँवारी।
मोतिन माँग भरी सजनी अरु भूसन को पुनि वार बगारी।
लागी पेन्हायो लगी जरतारा सा कृष्णहुँ छाड़ि निमेष निहारी।
काहि न भावत ऐसो समय ठकुराइनियाँ हरि प्यारी विहारी ॥[1]

*

दत्त[2]

उदाहरण

गिरिजापति सुनु विनती मोर, सम सुर तेजि सरन धएल तोर।
दीनबन्धु सम देवक देव, सभक पुरल मन जे तुअ सेव॥
पवन भवन हम दुर्मति मूढ़, मोर कृति-कर्मक न करिअ बूढ़।
'दत्त'भनय शिव सुनु मन लाय, मोर मिथिलेसक रहिअ सहाय॥

*

दलगणक

उदाहरण

नगर नारि विचारि एहि विधि वारि लेसन्हि कर दीप हे।
चलहु देखय गौरि दुल्लहु परिछि लय समीप हे॥
निरखि सकल समाप सौं हर-रूप शंकर साँच हे।
बाघछाल उघारि ताकल उगल वर-मुख पाँच हे॥
जखन हर एक आँखि तकलन्हि आगि धधकल ताहि हे।
नाग ऊपर जागु अचरज समहि पड़ाइलि नारि हे॥

---

१ परिषद् के हस्तलिखित ग्रंथ-अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित हस्तलिखित ग्रंथ [illegible] (मिश्र) से। इसी प्रकार का एक [illegible] सिंह (स्वर्गीय [illegible]) के समकालीन माने गये हैं।

२ दरभंगा-जिले के [illegible]-ग्राम-निवासी १८वीं शती के [illegible] भी इसी नाम से मैथिली में पद-रचना करते थे। — देखिए, हिन्दी-साहित्य और बिहार (वही) पृ० २४५-४६ ई०।

३ श्री [illegible]नाथ झा (वही) के साथ।

लखन जनि-जनि पाँखि ताकल झाँखि बइसलि ताहि हे।
*चन्द्रकला सौं चुइल अमारस तें जिअल मृगराज हे॥
एहेन बर के नग्न आनल जनिक बाघ समाज हे।
ठाम ठाव अहो गाम उजरत रहत ऋषि केर राज हे॥
देखय चललि लजाए शंकित केहेन उमत जमाय हे।
*वसन खल सँ विवसन भय गेल हँसथि हर मुसकाय हे॥
फेंकल दीप समीप सँ हर सबहिं पड़ाइल झाड़ि हे।
गंग उमड़ि तरंग फेंकल मानु वर्षा-धन फाड़ि हे॥
'दत्तगणक' अहो गाओल हर आएल एहि ठाम हे।
शुभ-शुभ कहि कय गौरि-विवाह पुरत सबक मनकाम हे॥[1]

*

दास

उदाहरण

जन के पोर हरे, सुरसरि हे।
देस-देश केर यात्री आएल दर्दर-क्षेत्र भरे॥
सरयू आवि मिलल्हि संगम भय, त्रिकुटी स्थान धरे॥
ब्रह्म-कमण्डलु जटाशंकरी, विष्णुक चरण परे॥
सवा कय भागीरथ आयल, पतित अनेक तरे॥
अम्मक देला पापक छेती, सन्तक चरण परे॥
सकल पतित कें तारल गंगा, 'दास' कियक ने तरे॥[2]

*

१ *मिथिला-गीत-संग्रह (वही तृतीय भाग) पृ० ४१।
*[illegible] ।
[illegible] मास्तु वः ॥
(सुभाषितरत्नभाण्डागारे)

२ मिथिला-गीत-संग्रह (वही तृतीय भाग) पृ० ३।

दिनकर

उदाहरण

हरियर तरु वन, कुसुमित उपवन, पहुमन परसन, मनुछन रे की।
सब खन दुरजन, सनमन परिजन, कुवचन दह तन, छन-छन रे को ॥
अनिल सरस वह, चित नहि थिर रह, मदन दहन दह, शिव कह रे का।
सब जन शशि कह, मोर मन हुतवह, लहरत सहसह, तन दह रे का ॥
धकधक हिम कर, तन दह हिमकर, कुसुम सुमास उर, विषधर रे की।
उर दह कर पर, जनि थिक विषचुड़, हरि-हरि जाएव, सुर पुर रे की ॥
हिम कमलिनि वन, सकल दहन सन, जव करपुर गन, छन-छन र का।
'दिनकर'कवि मन, तिरहुति-पति मन, रमहु सतत छन, गुणि जन रे की ॥[1]

❀

दीनानाथ

उदाहरण

आजु सुदिन दिन आओल रे, प्रसन भेल व्रजराजे।
सुदिन दीन नयन मोर रे, फडकै पहुक समादे ॥
सानन्द हृदय पुलक भरु रे, दीन दुख दुरि गेल।
कतेक दिवस हरि पाहुन रे, जनम कृतारथ भेल ॥
लै फुल-सज आछाओल रे, वासल करपूर तमोल।
भाव भरम किछु राखब रे, वाजव बचन अमोल ॥
प्रेम-हार लै बान्हव र, कौशल करत उपाए।
पल भरि सगो ने छाडब रे, राखब हृदय लगाए ॥
नागरि सम गुन आगरि रे, पहु विनु करिए समधान।
'दीनानाथ' मोहि पाहुन र, सम विधि भेलहुँ सनाथे ॥[2]

❀

---

१ श्री ईशनाथ झा (वही) से प्राप्त।
२. 'मिथिला-गीत-संग्रह (वही तृतीय भाग) पृ २१-२३।

दुखहरन

उदाहरण

सखि रे तेजल कुञ्जविहारा ॥
आएल अपाढ़ बिरह-मद मातल, नहि येखिय गिरिधारी ॥
साव केहि संग झुलब हिंडोल, सावोन सजल मुरारी ॥
भादव-यामिनि यम सम बीतल, दिवस लागय अन्हियारी ॥
आसिन बिनति करय कवि 'दुखरन', गोपिअहिं भेटल मुरारी ॥[1]



दुरमिल

उदाहरण

दशम राशि घो जँ उपगत भेल। पाय एकादश परदश गेल ॥
बाहर चारि जेहन जल मीन। ताहि समान हमर तन खीन ॥
आठम राशिक बदन मूल। छठहि पाय तसरहि समतूल ॥
नव समान हम पिय बान। आठम रहि सकुलिए नव मान ॥
मधुपुर नागरि अतिगुण जान। दोसर मति पहु पहिल समान ॥
'दुरमिल' सुकवि गणक इहो मान। राशि विचार पविडत गुणवान ॥[2]



धनपति

उदाहरण

जखन चलल हरि मधुपुर रे, ब्रज भेल अनाथ।
बिन यदुपति नहि जीउम रे, कर धूनव माथे ॥
दृग चित वदन मलिन भेल रे, सिर फूजल केस।
नागरि नयन बरसि गेल रे, जनि जल अमरेसे ॥

---

१ 'मिथिला-गीत-संग्रह' (चौथी, द्वितीय भाग), पृ० १।
२. वही (प्रथम भाग) पृ० २१-२२।

प्रेम-परसमनि छुटि गल रे, मघम्भित गेल घोरा।
माव जिवन नहि आउव रे, विष पीउव घारा॥
घनपति मन धरज धरु रे, तोहि भेटत सोहागे।
माधव मघुपुर पायास रे, पुनि आगत भागे॥[1]



धनुपधारी सिंह

उदाहरण

सजन सराहैं बल यपु में सुनि है नग,
कान से सुनो है बस छमा में धरा-स हैं।
गुनिन गुनाहैं नाहैं ना हैं नू माहे सम,
ऐगुन गुनाहैं बुद्धि भाजन भऐ-स हैं।
देसहू महँ फैले खाते धर्म की ध्वजा-से नित,
धम्व मन मासें बँस नर भ्रमरा-स हैं।
चन्द्र का प्रभा-स यश दिनकर प्रकाश तेज,
तापन तम नास गुन ज्ञानहु के रासे हैं॥[2]



धर्मदास

उदाहरण

माव कि कर्गहु धनि, बैसू श्रवण सुनि अमृत नाम अमोल,
स घोरि घोरि पीविय रे की॥
एक सें मन्द्हार राति, दोसर न सङ्गसाथि, यम सें पकल मरारि,
कमान विधि बाँचव रे का॥

१ 'मिथिला-गीत-संग्रह' (वही, द्वितीय भाग), पृ० ३३-३४।
२ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रन्थ-अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित 'दुर्गेमेश्वरशिवो' नामक हस्तलिखित ग्रन्थ है। इस कवित्त की रचना कवि ने बाबू मधवाप्रसाद सिंह की मृत्यु के शोक में की थी। ये उन्हीं के समकालीन और आश्रित भी थे। इनका परिचय इसी पुस्तक में अन्यत्र है।—सं०

अन्तर ध्यान धरु, गुरु पर सुरति राखु, ज्ञान कोठलिया दृढ़ करु,
मन सँ बाँधब रे की ॥
'धमदास' ई मारनि करथि छथि, गुरुक चरण गहि रहबे,
मन सँ बाँधब रे की ॥[१]



धर्मेश्वर

उदाहरण

भादव परम सयाओल, भेल शोभामान रे। ललना।
उपगत त्रिभुवननाथ, परम सुख पाओल रे॥
भरजही उरजल गाओल, वसन ओढ़ाओल रे। ललना।
जलधर पुष्पक वृष्टि, कर धन उर चानन रे॥
परिजन सबहु सुमति करु, चलहु नन्द गृह रे। ललना।
सैंय सुधारस देवकी, दल वदसि सिम रे॥
अनमस यदुकुल-नन्दन, कंस-निकंदन रे। ललना।
यशोमति हरषि हृदय गहि, कण्ठ लगाओल रे॥
कहु 'धर्मेश्वर' बालक, मति सुख पाओल रे। ललना।
गोकुल सकल छकित भेल, अरि-उर सालक रे॥[२]



धैरजपति

उदाहरण

मालती हम लगाओल सजनि गे, नैनक नीर पटाय।
से फल भय उल्लत भेल सजनि गे, भ्रमर तर ने समाय॥
काँच साँच पिया तजि गेल सजनि गे, कसु मन मठै से मान।
दिन-दिन फल उल्लत भेल सजनि गे, पिया मन करि ने ग्यान॥

---

१ श्री हेतनाथ झा (बड़ी) से प्राप्त।
२. मैथिली-गीत-संग्रह (बड़ी, तृतीय भाग) पृ० १८-१९।

सभक पिया परदेश वसु सजनि गे, आएल सुमरि सनेह।
हमर कन्त निरदय भेल सजनि गे, मन नहि वाढ़य विवेक॥
'धैरजपति' कहु धैरज धरु सजनि गे, मन नहि करिय उदास।
ऋतुपति आय मिलत तोहि सजनि गे, पुरत सकल मन आस॥[1]



नन्दलाल

उदाहरण

हेरि यदुनाथ यशोमति अकम आओल रे।
ललना, जनि पथ पड़ल परशमणि, निरधन धन पाओल रे॥
निरधन धन पाबि मगन मन आनन्द उर ने समाय यो।
कहथि हरषि गंधब अवसरु पिकाहु यदुवर राय-यो॥
पहिलहि तुरित यशोमति तनय नहाओल रे।
ललना, सुनि नन्द दगरिनि सहित धाय गृहि आएल रे॥
धाय गृहि मह आय दगरिनि, आनन्द भेल सुत मोर यो।
यदुवंश क्षीर-समुद्र सम जनि प्रगट दोसर चन्द्र यो॥
नार छेदाओन मोहर दगरिनि पाओल रे।
ललना, कंस-निकृन्तन-हेतु नन्द - गृह आयल रे॥
'नन्दलाल' कवि कैल नेहाल, गोकुल भेल सनाथ यो।
धन्य यशोदा भाग तोहर, प्रगट आयदुनाथ यो॥[2]



---

१ 'मिथिला-गीत-संग्रह' (वही प्रथम भाग), पृ० ११ ११। इसी भाव का एक पद विद्यापति का मिलता है। इस पद की कुछ पंक्तियाँ भी उससे मिलती हैं।—सं०

२ वही (द्वितीय भाग) पृ० २-२१।

नरसिंह दत्त

उदाहरण

दुर्गा लेखा दय दय तोर।
तीनि तानि जय दय दय दुर्गा, लक्षा दय दय तोर॥
नन्द तरो तात यशोदा, गुरुजन तेरो भ्राता।
एक सराहिय तेरो भगवति, कर्त्ता धर्त्ता भ्राता॥
और पद छाड़ि तुम पद सविय, तापर ऊपर मोती।
अङ्ग-अङ्ग जे ज्योति विराजय, सोतो मोती माती॥
कुण्डल डोलय वेसरि लोलय, कटि किंकिणियाँ बोलय।
दत्त नरसिंह भवाना तरो, डोलय लोलय बोलय॥[1]

✿

नाथ[2]

उदाहरण

सरस सुधाकर देखि मनोहर रे, जनि जगमग आनन राता।
उमगि उठल आनन्द हरि सौं रे, जानि गई मदन मदमाती॥
वट-वंसी-तट जाय मंत्र भूपण र, जहँ मोहन मुरली बजाई।
सुर-नर-मुनि सम कान श्रास धुनि रे, अनि सबहु रहलि मुरछाई॥
घर गुरुजन पुर परिजन तेजल रे, लाज तेजल व्रजबाला।
साजि चलसि जहँ चन्द्रमुखी सब रे, रास करैं नन्दलाला॥
कंकण-किंकिणि-नूपुर के धुनि रे, सुनि मन डोलै।
मलिन करैं दुति-दामिनि रे, छवि वचन सुधाकर बोलै॥
कनक-जड़ित तन रतन-भूषण रे, त्रिभुवन बसन वर सोहे।
एकसँ एक विचित्र बने हैं रे, त्रिभुवन की छवि मोहे॥
भनहि 'नाथ' सनाथ भयो है रे, देखि-देखि मुरारी।
कुंज-कुंज हरि रोकि लिया है रे, एक पुरुष बहु नारी॥[3]

✿

---

१ 'मिथिला-गीत संग्रह (वही, चतुर्थ भाग) पद-सं० २।
२ इस नाम के भवानन्द दत्त के मैथिल कवि 'भानुनाथ' की रचनाएँ भी मिलती हैं।—देखिए, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार (वही), पृ० ९२।
३ मिथिला-गीत-संग्रह (वही, चतुर्थ भाग), पद-सं० १७।

परसमनि

उदाहरण

पहिरन पाट पटम्बर, कनक-लता सन देह।
चम्पक-दलि धनि झाँपलि, दामिनि अनुपम गेह॥
कर पर के लेल ढाकन, ताहि भरिअ लेल मासु।
ननदि गहिअ लेल कर धय, जतन सिखाओल सासु॥
ससुर भैंसुर गुरु मागिन, दिअ सहोदर भाय।
सम के सब विधि परसल, भल विधि रहल जमाय॥
पाँतो फिरथि सोहागिनि, धयल ननदि कर सएह।
कवि 'परसमनि' मंगल गाओल, युग-युग ई रहु नेह॥[1]



प्रेमलाल

उदाहरण

अवध-नगर लागु रतन-पालना, झूलय राम-लछन सँग म॥
चैत-चकोर समान सखि हे, मातलि आस लेल कर मे॥
निज-निज सुरति निरखि रघुवर के, पलको ने लागै मोर नयन मे॥
आएल वैसाख सकल पुर-परिजन, बाल-युवा तरुणा-सन मे॥
चानन अतर-गुलाब बासि कै, सींचय प्रभुजाक गात्न मे॥
जेठ मास भरि कनक-कटोरी, लय मिसरी पकवानन मे॥
रुचि-रुचि भोजन करु रघुनन्दन, बिजुली छिटकि रहु दाँतन मे॥
आयल अषाढ़ घेरि घन-बादरि, पवन बहै पुरिवाहन मे॥
दान देहु रनवास रजा मिलि, 'प्रेमलाल' हरषै मन म॥[2]



---

१ श्री रैतनाथ झा (बड़ी) से प्राप्त।

२ 'मिथिला-गीत-संग्रह' (बड़ी तृतीय भाग) पृ ६ १०।

बदरीविष्णु

उदाहरण

साजि सकल सिंगार-माला गौरि पूजय चललि बाला,
प्रिय सखी सब सङ्ग मिलि कए, रङ्ग करइत रे ॥
साजि चानन फूल-डाला, ताहि उपर सिन्दूर माला,
अगरु-गुग्गुल-धूप लय कए, दीप चौमुख रे ॥
दछिन चिर सय मण्डप झारल, ताहि उपर कलस राखल,
लागल वन्दनवार पाँती, भाँति-भाँतिक रे ॥
कतहुँ वीणा-वेणु बाजय, कतहुँ झालि मृदङ्ग बाजय,
कतहुँ किन्नर गान गावय, भाव लावय रे ॥
'वदरिविष्णु' विचारि गाओल, गौरि-गणपति पूजि पाओल,
जेहन मन छल तेहन पाओल, दुख मेटल रे ॥'

✿

भैयनि देवी

उदाहरण

(१)

सुन्दर स्याम सिर सोमय गौरी, कर जोड़ि जानकि पूजल गौरी।
चानन फूल अच्छत लेल हाथ, गौरी पुज चलली पहुक समाज।
नाना विधि नैवेद्य मनाय, सभ सखिगन मिलि मंगल गाय।
दस-पाँच सखि मिलि बइसलि घेरि, धूप-दीप लय आरति फेरि।
'भैयनि देवि' यशोगुण गाइ, देहु अभय वर दशरथ-सुत राइ ॥[२]

(२)

जय जय दुर्गे अनुपम-रूपे, नाम उदित जगदम्बे।
तुअ पदपङ्कज सवि चरण मन, दोसर नहि अवलम्बे।
तुअ गुणवाद करय के पाअय, लिखि नहि सकथि महेशे।
निर्गुण भए सगुण कए धारण, विहरथि मगन प्रकाशे।
'भैयनि देवा' गहल चरण युग हरु न हमर दुख भारे ॥'

✿

१ श्री ईशनाथ झा (नरौ) से प्राप्त।
२ कन्नी से प्राप्त।
३. वही।

मंगलाप्रसादसिंह

उदाहरण

रानी तू सयानी सम्भुरानी करुना की खानि,
वेदहू न जानी और देव बरने को हैं।
सुर मुनि ग्यानी नित जोरे जुग पानी,
तोहि सीस को नवाय ठाढ़े भूमि पग एको हैं।
जो तू महरानी करु कृपा-दृष्टि मो पै आजु,
ध्यावत जो तोहि दुख टरत अनेको हैं।
मंगला भवानी नाम जपत कृपा निधानि,
और कौन आस पास चरन हमे को हैं॥[1]



मतिलाल

उदाहरण

आज गोकुल एक अचम्भित सुनिय आनन्दित ए।
ललना, नगर जतेक छल शोक सभक भेल खण्डित रे॥
गृह-गृह नारि उताहुलि कखन देखब हरि ए।
ललना, परत हैत एक बेरि सुफल कय लेखब रे॥
तेल-उबटन लय हाथहिं चललि सभ नागरि ए।
ललना, पहिरन अनुपम चीर सकल गुन-आगरि ए॥
जाय सबहिं नृप आँगन पुछल जसुमति सौं ए।
ललना, अघ-मोचन जाहि नाम ताहि दिय देखन ए॥
आनि यशोमति मोहन कोर कय देलन्हि ए।
ललना, कवि 'मतिलाल' विचारि चरण गहि धयलन्हि ए॥[2]



---

१ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित ग्रन्थ शोध-अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित हस्तलिखित-ग्रन्थ 'दुर्गा-मेधऽठिणी' से। इसी आधार पर श्रीमन्नारायण सिंह (बेढ़ी आरा) के समकालीन माने गये हैं। इनका परिचय इसी पुस्तक में अन्यत्र द्रष्टव्य।

२ 'मिथिला-गीत-संग्रह' (वही तृतीय भाग) पृ० १६।

मधुकर

उदाहरण

पलटि ने आयल गोपाल माई ॥ध्रु०॥
हरि मधुपुर गेल कुबरिक बस भेल, दै गेल विरह-जँजाल ॥
विधि विपरित भेल हरि मोहि तेजि गेल, दिन दिन फिरत बेहाल ॥
चहुँ दिसि हेरि-हेरि मुरछि-मुरछि खसु, कौन पथ गेलाह नँदलाल ॥
'मधुकर' जौं हरि देख नयन भरि, बँसिया शब्द हिया साल ॥[1]



मुक्तिराम

उदाहरण

मधुकर जाय रहल हरि ओतही, फिरिने आयल हरि व्रज-नागरी ॥ध्रु०॥
जेठमास भरिआय सखी री, घुरमि-घुरमि घन घेरी लई री।
विकल राधिका हेरथि स्याम-पथ, कब हरि आओत मोरि ओरी री॥
अषाढ़ मास भरिआय सखा री, चहुँदिसि दादुर शब्द करी री।
हरि बिनु झूठ जावन मेरो सखिया, रात-दिना पछतात रही री॥
सावन अधिक सोहावन सखी री, उमकि-झुमकि सब झुलन चढ़ा री।
अब के आस लगाओल हरि बिनु, मुरछि नयन सों नीर बहा री॥
भादव भवन भरम देखु सखी री, सब मिलि चलहु बैराग करा री।
भसम लगाय खसम के हेरिय, बिछुड़ि गेल हरि कौन नगरी री॥
आसिन अवधि बितल दिन थोरे, अब हरि आओत कौन घड़ी री।
सब सखियन मिलि गौर कियो है, चलु जमुना-जल धसिके मरी री॥
कार्तिक कंथ घुरल सौं आयल, सब मिलि मंगल गाय रही री।
'मुक्तिराम' धामपद देखल, व्रज के सखी सब साथ सही री॥[2]



१ मिथिला-गीत-संग्रह (चौथी भाग), पद-सं० ४१।
२ वही (चतुर्थ भाग) पद सं० ११।

मोदनाथ

उदाहरण

उतरि साओन चढ़ भादव चहुँदिसि कादव रे।
ललना, दामिनि दमक सुनावय दादुर झुखित रे॥
पहिल पहर जब बीतल पहरू सूतल रे।
ललना, सूतल नगरक लोक क्यौ नहि जागल रे॥
दोसर पहर केर बितितहिं पहरू जागल रे।
ललना, देवकी वेदने व्याकुलि की इगरिनि आनिय रे॥
एतय कत इगरिनि पाविअ विधि सौं मनाविअ रे।
ललना, पुरविल जनम तप चूकलहुँ तें दुख पाओल रे॥
जब जनमल यदुनन्दन बंधन छूटल रे।
ललना, जनमल त्रिभुवननाथ अनाथक पालक रे॥
बालक हाथ हम देखल शंख-चक्र-गदा-पंकज रे।
ललना, गर बैजन्ता-माल कान सोभै कुण्डल रे॥
जखन कृष्ण भेल गोविन्द वसुदेव लय सिधारल रे।
ललना, यमुना-नीर अथाह थाह नहि पाविअ रे॥
तखन कृष्ण भेल कोपित यमुना हराइलि रे।
ललना, छमिअ मोर अपराध पार निकें जाइ रे॥
'मोदनाथ' कवि गाओल गावि सुनाओल रे।
ललना, धनि देवकि तोर भाग प्रभु पाओल रे॥[1]

✿

१ 'मिथिला-गीत-संग्रह' (वही, तृतीय भाग), पृ० १८-१९।

यदुनाथ

उदाहरण

साहुरे बरस मुख छूटल सजनि गे, जखन जायब हम गामे।
तखन मदन जिव महरत सजनि गे, की देखि करब गयाने॥
बिसरि देब नहि बिसरत सजनि गे, तुअ मुख पंकज पाने।
विरह-विकल मन तलफत सजनि गे, दिन दिन झूर झमाने॥
जों हम जनितहुँ एहन सजनि गे, हैत मान सो माने।
कथी लै नेह लगाओल सजनि गे, प्राव नहि बाँचत पराने॥
भन 'यदुनाथ' सुनहु सखि सजनि गे, गुजरि तुनकर नामे।
हमर कहल बुझि राखब सजनि गे, विधि पुराओत कामे॥[1]



यदुवरदास

उदाहरण

भागवत गोविन्द-पद को याद करना चाहिए।
धुन्धकारी-से अधम तर गये वैकुण्ठ-धाम॥
और बहुत एसे तर गये संशय न करना चाहिए।
तर गये खट्वाङ्गना पलक मे एक बेरि।
कथा प्रेम स सुनकर पन्थ-जग में तरना चाहिए॥
ए राजा परीक्षित अपने मन में सोच छोड़ दे।
अब है तरो सात-दिन हरगिज न डरना चाहिए॥
सुन के राजा परीक्षित बहुत कृतार्थ हो गये।
दास यदुवर मुक्ति पावो ध्यान धरना चाहिए॥[2]



---

१ मिथिला-गीत-संग्रह (वही, प्रथम भाग) पृ० १।
२. वही (चतुर्थ भाग), पृ० सं० १०।

रंकमणि

उदाहरण

केलि भवन नहिं जायब सजनि गे, आतुर छथि मोर कन्त।
हम नागरि अति नाजुक सजनि गे, होएत ओवक अन्त।
तिल भरि पल नहिं लागय सजनि गे, सपथ करिय हम तोर।
काच कली मोर तोड़त सजनि गे, तौं राखय मन रोपे।
नागरि प्रीति नहिं मानय सजनि गे, पुरुषक इथेह बड़ दोपे।
'रंकमणि' मन गाभास सजनि गे, इ सुनि रहि मन लाइ।
हरि सौं नइ मगाभास सजनि गे, दिन-दिन अति सुख हाइ ॥[1]

*

रघुवीरनारायणसिंह

उदाहरण

(१)

झाँकी बनी बहु भाँतिन का वर देव की देवी की सभु उमा का।
मा की विदेह-सुता की बनी ब्रजराज की औ वृषभानु-सुता की।
ताकी गिरा जब वा छवि-माधुरी मौन भई मति जानिक वाँकी।
वाँकी बना दुर्गा की छटा 'रघुवीर' कहूँ अस झाँका न झाँका ॥[2]

(२)

रसना रसाला षट्रस ही सोमानी रही,
नाम के रटे बिनु होइयहीं तोहि जस ना।
केतिक सिखाय हार्‌यो थाक्यो बहु भाँतिन सों,
वृथा ही बक तु रहे कर्मूँ मेर बस ना।
मानु-मानु अजौं 'रघुवीर' कहे वार-वार,
काहे क सहत तू सब लोगन क हँसना।
पावन जो होन चहे मानि से सिखाव यह,
दुर्गे रटु दुर्गे रटु दुर्गे रटु रसना ॥[3]

---

१ 'मिथिला-गीत-संग्रह' (चौथा प्रथम भाग) पृ० ११-१४।
२. बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रंथ-अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित हस्तलिखित-ग्रंथ 'दुर्गा-प्रेमतरंगिणी' से।
३ इनको [illegible] श्रीलक्ष्मीनारायण सिंह (छपरा, सारन) के समकालीन माने गये हैं। इनका परिचय प्रथम देखिए।

रत्नलाल

उदाहरण

कखन कहब हलो बतिया हे ऊधो ।
सगरो रहनि हम बइसि वेसात कयल, फटय लागल मोर छतिया ।
परसर देखि मनहि म वेसित कयल, नयन पड़ल कुलफतिया ॥
ककरा सँ हम करब मनोरथ, जानि न पड़ल विसेसिया ।
क्वेक नह छल एहि निसि-वासर, परगट भेल सिनेहिया ॥
मास असाढ़ समय ई आयल, रसहिँ भिजल मोर सरिसा ।
दरस न भेल परम दुख पाओल, 'रत्नलाल' कुलफतिया ॥[1]



रुद्रनाथ

उदाहरण

पुरविल प्रीति अयलहुँ हम हेरि, हमरा अवइत बइसल मुख फेरि ।
रहिनहि बइसलि धनि उतरा न देल, नयन-कटाख आब हरि लेल ।
कमल-बदन छल मन दुइ ठाम, कोन अवगति मोर रहल ज्ञान ।
आस धरिय नहि करिय निरास, होइ प्रसन्न पुराबहु आस ।
अस्त-उदय निसि रहय थोर, आब बुझल धनि स्वारथ तोर ।
'रुद्रनाथ' कवि मन दय भान, तँइओ न करि पुरुषक मान ॥[2]



लोकनाथ

उदाहरण

लिखि लिखि पतिया विप्रहि देल सुरन्त द्वारिका जाहु यो ।
देवहु हे ब्राह्मन अन धन लक्ष्मी और सहस्र धेनु गाय यो ॥

---

१ प्रो० देवनाथ झा (वही) से प्राप्त।
२ 'मैथिली-गीत-संग्रह' (वही, प्रथम भाग) पृ० ३१ ३४ ।

वेयहु हे ब्राह्मन पैरक नूपुर गाराक मुक्ताहार यो ।
एक दिवस विप्र मनतहि रहिहह दाछरे सागर-पार यो ॥
कृष्ण लेयाय तुरंत सो अविहह जब होयब क्षास तोहार यो ।

× × × ×

दै पतिया सब बात अनामोल ब्राह्मन ठाढ़ दुआरि यो ॥
खन बाँचयि खन हृदय लगावयि खन पूछयि निज बात यो ।
पाछा सँ बलभद्रहि आयल भगवन कयस गोहारि यो ॥

× × × ×

चललि सखी सब गौरि पुजावय रुक्मिनि मन पहि भाव यो ।
हमरा सँ कृष्ण कत अमोताह हम धनि परम अभाग यो ॥[१]

✿

वंशीधर

उदाहरण

जखन चलल गोपीपति रे, गोकुल भेल सूने ।
बिलपति नारि मधु-ब्रज र, कयलन्हि हरि सून ॥
घुरमि घुरमि घन घहरय रे, हहरय मोर छाती ।
चमकत चपल चहुँदिसि र, कत लाखब पाँती ॥
चानन हृदय दगध करु र, आमोर बनमाला ।
उछलि-उछलि मन्मथ मोहि रे, मारय उर भाला ॥
अनल अनिल अन्तक जनि रे, जिब करय अभिघात ।
कोकिल कुहुकि-कुहुकि कत रे, मारय मिठ बात ॥
कर सौं ससरि-ससरि खसु रे, बासावलि भूमा ।
हरि-हरि कहयि खसयि महि रे, बाला घुमि-घूमा ॥
भन 'बंशीधर' बिरह तजु र, बिरहिनि ब्रजनारी ।
मन जनु करिय बेयाकुल र, तोहि भेंटत मुरारी ॥[२]

✿

१ श्री शिवनाथ झा (बड़ी) से प्राप्त ।
२. 'मिथिला-गीत-संग्रह' (प्रथम 'द्वितीय भाग'), पृ २४-२५ ।

उदयप्रकाश सिंह[1]

'रजत-जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६१०) में उल्लेख है कि आपने 'विनय पत्रिका' की टीका छपवाकर, पचीस-पचीस रुपये दक्षिणा के साथ पाँच सौ रामानुरागियों में वितरित की थी।[2]

❁

केशव[3]

'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही, पृ० २०८) में डॉ० ग्रियर्सन ने आपको मिथिला-नरेश महाराज प्रतापसिंह (सन् १७६१—७६ ई०) का दरबारी कवि बतलाया है।

❁

कृष्णपति

आप मिथिला के 'उजान' नामक ग्राम के निवासी थे।[4] आपके दो पुत्र रमापति[5] एवं लक्ष्मीपति[6] मैथिली के बड़े अच्छे कवि थे। आप स्वयं भी एक सुकवि थे। मैथिली में आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ उपलब्ध होती हैं।

उदाहरण

कि कहव मोरे पहु परदेस गेल परिहार
मोकि हरिहरि जीव धरम सखि कोन् परि।
उपवन मोरे मोर सोकर देखि घन,
मोकि अनुखन, मार-मगन भेल मोर मन।
सुनु सखि मोरे सून शयन देखि होम भय,
मोकि निरदय, बिसरि रहल पहु रसमय।
सुनु धनि! मोरे सुमति 'कृष्णपति' कवि-वाना,
मोकि अनुमानी, अचिरें आओत पिअ गुन आना॥[7]

---

१ 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही) पृ० १४।
२ आपके पिता राजा श्रीप्रकाशनारायण सिंह ने भी 'रामचरितमानस' की टीका की पाँच सौ प्रतियाँ पचीस रुपये दक्षिणा के साथ रामभक्त सन्तों में बाँटी थी।—देखिए, वही पृ० ११३।
३ वही पृ० ११०-११।
४ 'मैथिली-गीत-रत्नावली' (वही) पृ० १२४।
५ इनका परिचय 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही पृ० १११) में द्रष्टव्य।
६ इनका परिचय उक्त ग्रन्थ के पृ० ११६ में द्रष्टव्य।
७ मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद-सं० ५१ पृ० २८। पं० बदरीनाथ झा ने अपनी इस पुस्तक में आरम्भ पद और मैथिली पर उद्धृत किया है— 'संचरि सारंग अम्बर हम तोरा'। डॉ० जयकान्त मिश्र ने अपने A History of Maithili Literature (वही p 426-27) में इसी पद को सहरसा-जिले के परसरमा-ग्राम-निवासी और लोग तथा प्रेम कवि के वंशज कृष्णपति (श्रीकृष्ण) द्वारा रचित बतलाया है।—सं०

चक्रपाणि[1]

'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही, पृ० ११४) में डॉ० ग्रियर्सन ने भी आपकी चर्चा की है।

'जर्नल ऑफ् द एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बंगाल' (खण्ड ५३, पृ० ११) में आपकी रचना का एक उदाहरण भी मिलता है।



चतुर्भुज[2]

आपकी रचना के उदाहरण 'जर्नल ऑफ् द एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बंगाल' (खण्ड ५३, पृ० ८७) में प्रकाशित है। आपकी चर्चा डॉ० ग्रियर्सन ने अपने 'हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही, पृ० ११४) में भी की है।



छत्रनाथ[3]

शिवसिंह-सरोज' (वही, पृ० १४८) में नाथकवि[4] (क्रमांक ६) के नाम से निम्नांकित रचना मिलती है—

उदाहरण

सुंभ-निसुंभ-विनासिनि पासिनि वासिनि विन्ध्य गिरीश की रानी।
शंकर-संग विलासिनि जग-हुलासिनि श्रीकमलासिनि दानी॥
जाहि सदाशिव ध्यान धरैं अरु मान करैं मुनि चातुर ज्ञानी।
नाथ कहै सोई शैलकुमारी कुमारी करै रखवारी भवानी॥[5]



१ हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही), पृ० ११७-१८।
२ आपका परिचय (अपनरा दो स्थानों पर) प्रकाशित हो चुका है।—देखिए, वही पृ० ४८ तथा पृ० ११८।
३ 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही) पृ० ११०-२२।
४ इस नाम से ५ कवियों की रचनाओं का उल्लेख मिलता है। —देखिए, वही, पृ० १२।
५ अनुश्रुत है कि आप गिरधर थे और महादेव के वरदान से कवि हुए थे। इसी आधार पर यह अनुमान है कि यह पद्य छत्रनाथ का ही होगा। मैथिल विप्र होने के कारण आपका राजा होना भी संभव है। शिवसिंह-सरोज में अन्य पाँच नामधारी कवियों के संक्षिप्त परिचय से पता चलता है कि वे अन्य प्रान्त के थे, पर इनके नाम कवि के परिचय में किसी स्थान-विशेष का उल्लेख नहीं है। अतः, आपकी शिव-शिवा-भक्ति के आधार पर ही प्रस्तुत उदाहरण संकलित किया गया है।—सं०

छोटूराम[1]

आप बाँकीपुर (पटना) के निवासी थे।[2] आपकी एक गद्य-रचना 'रामकथा' के नाम से हिन्दी में पुस्तकाकार छपी थी। आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



जयानन्द[3]

'मिश्रबन्धु विनोद' (वही, तृतीय भाग, पृ० ९७१) में मिश्रबन्धुओं ने और 'हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही, पृ० ११४) में डॉ० ग्रियर्सन ने भी आपको कर्ण कायस्थ बतलाया है।



जॉन क्रिश्चियन[4]

'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही, पृ० २६४) में डॉ० ग्रियर्सन ने लिखा है कि 'आपकी भाषा की कविता जनता तक पहुँची है और तिरहुत का प्रत्येक गानेवाला आपकी रचना का मूल मर्म समझे बिना ही गाता है।'



जीवनराम[5]

श्रीउमाशंकरजी ने अपने लेख 'रामभक्त कवि जीवनराम रघुनाथकवि' (नवराष्ट्र दैनिक, २ जुलाई, सन् १९६१ ई०, पृ० २४) में लिखा है कि (१) आपकी गणना उस समय के एक प्रमुख रामभक्त के रूप में थी। (२) आपने वैष्णव धर्म के आदर्श को सामने रखकर सेव्य-सेवक भाव की उपासना-पद्धति पर काफी जोर दिया था। (३) आपने अपने जन्म-स्थान (सिमराहा, मुजफ्फरपुर) में भगवान् राम का एक मन्दिर भी बनवाया था। (४) आपके पुत्र का नाम रामवल्लभ था, जो ईस्ट-इण्डिया कम्पनी की पटना शाखा में हिन्दी-मुंशी थे। (५) आपकी मृत्यु ८५ वर्ष की आयु में हुई थी। (६) आपके वंशज आज भी वर्तमान हैं।



---

१ 'बिहारी-विहार' (पं० अम्बिकादत्त व्यास) की भूमिका में इसी नाम के किसी भक्त द्वारा रचित एक वैराग्य-दीपक की चर्चा मिलती है। कहा नहीं जा सकता कि वे आप ही थे या आप से कोई भिन्न व्यक्ति।—सं०
—देखिए 'नागरी-प्रचारिणी-पत्रिका' (भाग ६, संख्या ३, कार्तिक, सं० १९८५ वि०) पृ० ३०१।

२. 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, तृतीय भाग), पृ० ९७१।

३. —देखिए, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही) पृ० १९६।

४ वही पृ० १९६-२०।

५. वही, पृ० १२०-२५।

जीवाराम चौबे[1]

'रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय' (वही पृ० ४१६,४२) और 'परिषद्-पत्रिका' (वही, वर्ष १, अंक १, पृ० ४१) में डॉ० भगवतीप्रसाद सिंह ने लिखा है—(१) आपके पिता की इच्छा थी कि आप विभिन्न शास्त्रों का अध्ययन कर एक प्रसिद्ध प्रतिष्ठित पण्डित बनें। इसी दृष्टि से उन्होंने आपको व्याकरण और ज्योतिष की शिक्षा दी। किन्तु, आपकी प्रवृत्ति इस ढंग की शिक्षा की ओर न होकर यौगिक शिक्षा की ओर थी। फलतः आप सारीव (छपरा)-निवासी मनसाराम नामक साधु से 'अष्टांग-योग' और 'स्वरोदय' की क्रियाएँ सीखने लगे। आपके पिता को जब इस बात की सूचना मिली, तब उन्होंने आपको योग मार्ग के स्थान पर भक्ति-मार्ग का अवलम्बन करने की राय दी। कुछ विचार वितर्क के पश्चात् भक्ति-मार्ग का अवलम्बन करने का निश्चय कर आप सिरान (सारन) चले आये। वहाँ पहुँचकर आपने अपने पिता का शिष्यत्व ग्रहण कर लिया। उन्होंने सर्व प्रथम आपको अग्रदासजी की 'ध्यानमंजरी' दी और कहा कि 'इसके अध्ययन से तुम शीघ्र ही प्रभु-कृपा के अधिकारी हो जाओगे।' (२) 'ध्यानमंजरी' का अध्ययन समाप्त कर लेने पर अपने पिता के आज्ञानुसार आप रामचरणदासजी[2] की शरण में (जानकी घाट) अयोध्या चले गये। वहाँ उनके आश्रम में रहकर आपने शृंगार-भक्ति की विधि सीखी। इस बीच आपको महात्मा रामचरणदासजी-कृत 'मानस' की टीका भी पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, जिससे आप बहुत प्रभावित हुए। (३) अयोध्या से लौटकर आप सिरान (छपरा) चले आये और अपने पिता की कुटी में रहने लगे। (४) पिता के देहान्त के पश्चात् आपने टिकारी-राज (गया) की सहायता से वहीं एक मठ बनवाकर अपनी गद्दी स्थापित की। एक प्रकार से यहीं अब आपका स्थायी निवास हो गया। यों, बीच-बीच में गुरु-दर्शन एवं सत्संग के लिए आप अयोध्या भी बराबर जाया करते थे। किंवदन्ती है कि अयोध्या जाने पर आप पहले रामचरणदासजी के आश्रम में (जानकी घाट पर) ही ठहरते थे। किन्तु एक दिन जब आपने रामचरणदासजी का अपनी अद्भुत ठाट देखा, तो आपको बड़ी ग्लानि हुई और आप किसी दूसरे स्थान पर ठहरने लगे। (५) आपको मृदंग बजाने का बड़ा शौक था। इसीलिए, 'युगलसरकार' की सेवा के लिए आपने मृदंग बजाने का काम ही चुना था। इस कक्षा में आप जानकीजी की प्रधान सखी और बहन 'चन्द्रकलाजी' को ही अपनी आचार्या मानते थे। इस सम्बन्ध में भी कहते हैं कि एक दिन ध्यानावस्था में आपने देखा कि चन्द्रकलाजी मृदंग सिखा रही हैं। साथ ही यह भी देखा कि उसी समय सर्वेश्वरी चारुशीलाजी आ गईं। उन्हें आते देख चन्द्रकलाजी ने उठकर उनका स्वागत किया। चन्द्रकलाजी, विधिवत्

---

१ —देखिए, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही) पृ० १२८–२९।

२. आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल ने इन्हें रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय का प्रवर्त्तक माना था। परन्तु नवीन अनुसन्धानों के आधार पर यह श्रेय तुलसीदासजी के समकालीन अग्रदासजी को दिया जाने लगा है। फिर भी, इसमें तो निश्चय ही है कि रसिक-सम्प्रदाय के संगठन और प्रचार-प्रसार में इनका प्रमुख हाथ था।—देखिए, 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' (आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल, सम्वत् सं०, सं० २००६ वि०) पृ० १५१।

'सम्बन्ध' लिये और चारुशीलाजी की अनुमति प्राप्त किये, आपको मृदंग की शिक्षा देने में संकोच करती थीं। कारण कि रामचरणदासजी के नाते 'युगलप्रियाजी' (आप) चारुशीलाजी की ही परिकर थीं। चारुशीलाजी ने उसी समय चन्द्रकलाजी को, आपको अपने समाज में रखने की, अनुमति दे दी और आपको उन्हें ही अपनी आचार्या मानने का आदेश दिया। निद्रा भंग होने पर आपने रामचरणदासजी से स्वप्न का सारा वृत्तान्त कहा और उनसे चन्द्रकला-परत्व की अनुमति चाही। रामचरणदासजी ने आपका अपनी भावना के अनुकूल आचार्य निष्ठा की स्वीकृति दे दी। (१) आपकी गणना रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय के प्रमुख संतों में होती है। आपके द्वारा उत्तर-प्रदेश और बिहार में उक्त सम्प्रदाय का बड़ा व्यापक प्रचार प्रसार हुआ। (७) आपके द्वारा रचित निम्नांकित ग्रन्थ मिलते हैं—(क) पदावली, (ख) शृंगाररस-रहस्य, और (ग) अष्टयाम वार्तिक।

'रामभक्ति-साहित्य में मधुर उपासना' (वही, पृ० २२४) में डॉ० भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव' ने लिखा है—(१) आपके प्रेम-भरे गीतों का एक संग्रह लक्ष्मीनारायण प्रेस (मुरादाबाद) से सं० १९५९ वि० में सावन वदी ११ को प्रकाशित हुआ था। उसमें विशेषतः सावन, फागुन के झूला और होली के पद हैं। यत्र-तत्र कुछ उर्दू और फारसी के भी शब्द आये हैं। उसमें कुल १६० पद और ५६ पृष्ठ हैं। (२) आपकी शृंगाररस-रहस्य नाम से प्रचलित पुस्तक का 'नाम शृंगाररस-रहस्य-दीपिका' था।

'रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय' (वही, पृ० ४४१ ४२) में आपकी रचनाओं के निम्नांकित उदाहरण मिलते हैं—

उदाहरण

(१)

जय श्री चन्द्रकला अलबेली। नागरि गर्व गहेली ॥
अति सुकुमारि रूप-गुन-आगरि रसकेला।
निमि-कुल प्रगटि संग सिय प्यारी प्रियकारी नवेली ॥
चन्द्रप्रभाजी के सुकृत कल्पतरु उलही लता मेला।
कंचन-वन प्रमला-प्रमोद वन लीला-लहरी निखेली ॥
मोहन जंत्र बीन स्वर टेरति प्रतिमा चित्त
'युगलप्रिया' अनुराग सदा सम्बन्ध राग की डेली ॥

(२)

नई लगन ललन तोसे लागो।
या मिथिला का भावनि मैं तेरी विपुल भली छवि पागो ॥
लै चलु पिय प्रमोद-वन में जहाँ ऋतु-वसंत अनुरागी।
अवध रंगमणि-महल कांचमा युगलप्रिया बड़भागी ॥

(३)

जादू भरी राम तुमरी नजरिया।
जेहि चितवत तेहि वसकरि राखत सुन्दर श्याम रामधनु धरिया ॥
जुलफन-युत मुख-चन्द्र प्रकाशित नासामणि लटकन मनहरिया।
युगलप्रिया मिथिला पुर-वासिन फसी जाल-बिच मनो मछरिया ॥

'रामभक्ति-साहित्य में मधुर उपासना' (वही, पृ० २६५-६६) में आपकी रचनाओं के और भी कई उदाहरण मिलते हैं, जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं—

(१)

आजु खेलो रंग होरी सइयाँ आपु खेलो रंग होरी हो।
दशरथ-राजकुमार छैल तुम कालि करा बरजोरी हो ॥
तुम रघुवंश-कुमार लाड़िले मैं निमि-वंश किशोरी हो।
कौन बात में घटा हमारे यूथप सखी करोरी हो ॥
रूप-गुनन मे नागर प्यारे हौ नागरि कछु थोरी हो।
युगलप्रिया मुस्कात छबीला रंग-महल की पोरी हो ॥

(२)

उमड़ि उमड़ि आई बादरि कारी।
दशरथ-नंदन जनक-लली जू बैठे सखिन संग महल अटारी ॥
कुसुमा वसन युगल तन राजत जगमगात भूषण उजियारी।
अलक विथुरि रहीं मुख ऊपर मुकुट चन्द्रिका लटक सँवारी ॥
चन्द्रावता मृदंग टकारति चम्पा तानपूर करतारी।
चंद्रकलाजू मान बजावत गावत उमग-भरे पिय प्यारी ॥
अधिक प्रवाह बढ़यो सरयू का भर प्रमोद बिलोकत वारी।
युगलप्रिया रसिकन क संपति अगम निरखि रतिपति बलिहारी ॥

(१)

रंग झूलैं अवध-बिहारी हो सरयू-तट संग लिये सिय प्यारी।
सावन कुंज सुहावन पावन रतन भूमि हरियारी॥
निज-निज कूजन ते वनि आई निरख सखी अधिकारी।
गावहिं सरसाती बरसाती दरसाती सुख भारी॥
कबहु झुलावत प्यारी प्रीतम कबहु प्रीतम प्यारी।
युगलप्रिया रसमास परस्पर दंपति लीला-धारी॥



देवीदास[1]

गया के मन्नूलाल-पुस्तकालय में आपके 'पाण्डवपरितावन' की जो हस्तलिखित प्रति (काव्य ४०) संगृहीत है, उसमें उसका रचना-काल आश्विन-कृष्ण ११, सं० १८४२ वि० (सन् १७८५ ई०) उल्लिखित है।



देवीप्रसाद

आप मुजफ्फरपुर निवासी थे।[2] हिन्दी में 'प्रवीण पथिक' नामक आपकी एक पुस्तकाकार प्रकाशित रचना सुनने में आती है। किन्तु, रचना के उदाहरण नहीं मिले।



नन्दीपति[3]

'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही, पृ० ११६) में डॉ० ग्रियर्सन ने भी आपकी चर्चा की है।



---

१ 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही) पृ० १३५ ३६।
२ 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही तृतीय भाग) पृ० १०८८।
३ हिन्दी-साहित्य और बिहार (वही) पृ० १३६ ३७।

नवलकिशोरसिंह[१]

मार्गिकी' (सन् १९११ ई०, पृ० ४७) में उल्लेख है कि आप अपने वंश के आठवें महाराजा थे। आपका राजत्व-काल सन् १८३८ ई० से सन् १८५५ ई० तक था। आपके शासन-काल में बेतिया-दरबार संगीत के साथ-साथ काव्य-साहित्य का भी मुख्य केन्द्र बन गया था। आपके दरबारी कवियों में अमृतनाथ झा और सुमन झा के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। आपने १५१ ध्रुपदों का एक संग्रह कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी (शुक्रवार) सं० १९१२ वि० को 'ध्रुपद-आनन्द-सागर' के नाम से कराया था। उक्त पत्रिका (पृ० ५२-५३) से आपकी निम्नांकित दो रचनाएँ उद्धृत हैं—

उदाहरण

(१)

सब बन फूले अमवा बौर मुके,
डारि मानो तुव पग परसन के हेत।
कायल कोकिला कूक चातिक पुकार करत,
मेरे आन कान्हो नाम रटत नेत।
मेरो मन भँवर कहाँ भटकत अत तन,
वार बार सिख देत अजहूँ ना चेत।
'नवलकिशोर' अब चरण कमल मन बच कमल,
बहु जो भक्तन को आनन्द सुख देत॥

(२)

दयाला शंभु शरना असरन सरनि,
महिमा अपार तुव जात नहिं बरना।
सत सनकादि आदि अन्त न पावत,
वद कहत तेरो नाम भवसागर तरना।
जोइ आइ तुव नाम लेत चारो फल ताहि देत,
विविध विरद तेरो औढर ढरना।
'नवलकिशोर' बालक तुव कृपा करो,
हूँ सुदिष्ट देखो मातु भक्ति अभै करना॥

---

[१] 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही) पृ० ११८।

शिवसिंह-सरोज' (वही पृ० १५०) में संभवतः आपका ही निम्नांकित छन्द संकलित है—

सखी येसि मृदन के सुख को बसाहक भो
भाँति भाँति दाहक भो सौतिन को छाती को ।
नवलकिशोर नेह नाह को निवाहक भो
मान को उमाहक भो गौरव गुरजाती को ॥
एरी पिय वादिनी अमोल वोल तरोइतो
एकहा विलोक्यो री उच्यो बुंद स्वाती को ।
बालन को विष भो पियूष भो पपीहन को
सीपिन को मुक्ता कपूर केर-पाती को ॥



प्रतापसिंह[1]

'जर्नल ऑफ् द एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बंगाल' (खण्ड ५१, पृष्ठ ८२) में लिखा है कि आप महाराज नरेन्द्रसिंह के पुत्र थे, जिन्होंने 'कनपीघाट' (कन्दर्पीघाट ?) जीता था ।



बालखंडी[2]

'संतमत का सरभंग-सम्प्रदाय' (वही, अध्याय ४ पृ० १७७) में उल्लेख है कि आप अधिकतर पचारी (बरहरवा) मठ में रहा करते थे। यह मठ संभवतः बेतिया (चम्पारन) के पास मिरजापुर में है। उक्त पुस्तक में आपकी अनेक रचनाएँ उद्धृत हैं।



भंजन कवि[3]

'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही, पृ० २१६) में डॉ० ग्रियर्सन ने भी आपकी चर्चा की है। उक्त पुस्तक में इस नाम के एक और कवि की चर्चा मिलती है, जिनका जन्म सन् १७७८ ई० में बतलाया गया है (—देखिए, वही, पृ० २२४) और जिन्हें 'शृंगार-संग्रह' नामक पुस्तक का रचयिता भी कहा गया है।

१ आपका परिचय 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' के प्रथम खण्ड में (अलग-अलग दो स्थानों पर—एक स्थान पर 'प्रताप सिंह' और दूसरे स्थान पर 'मोदनारायण' नाम से) प्रकाशित है।—वही पृ० १४० तथा १६०।

२ —देखिए, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही), पृ० १६१।

३ वही, पृ० १५१-५४।

'मिश्रबन्धु विनोद' (वही द्वितीय भाग, पृ० ८७५, ७६) में भी इस नाम के एक
कवि का उल्लेख है, जिनका जन्म सं० १८३० वि० में हुआ था और जिनकी 'शृंगार-संग्रह'
नामक पुस्तक की भी चर्चा है। मिश्रबन्धुओं ने बतलाया है कि वस्तुतः यह
(शृंगार-संग्रह) सरदार कवि की रचना है।

'जर्नल ऑफ् द एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बंगाल' (खण्ड ५३, पृ० ६०) में आपकी
रचनाओं के दो उदाहरण हैं।



भड्डर[1]

आप शाहाबाद जिले के निवासी थे।[2] आपके सम्बन्ध में अनेक जनश्रुतियाँ
प्रचलित हैं। कृषि-सम्बन्धी आपकी अनेक उक्तियाँ लोक प्रचलित हैं। आपकी उक्तियों
की भाषा में भोजपुरी की बहुलता स्पष्ट दीख पड़ती है, अतः आप भोजपुरी-क्षेत्र के
प्रतीत होते हैं। आपकी प्रसिद्धि एक ज्योतिषी के रूप में भी थी। आपके द्वारा रचि
'ज्योतिष शकुनावली' आज भी मिलती है। ग्रंथाकार आपकी एक ही रचना 'भड्डरीपुरा
सुनने को मिली है, जिसके उदाहरण नहीं मिले।



भिनकराम[3]

'संतमत का सरभंग-सम्प्रदाय' (वही, पृ० ११७) में लिखा है कि आप
'निरबानी' (निर्वाणी) मत के पोषक थे।[4]



---

१ मिश्रबन्धुओं ने आपका नाम भड्डरी बतलाया है।—देखिए, 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, तृतीय भाग)
पृ० ११२।

२. डॉ० ग्रियर्सन-कृत 'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही), पृ० ११२ तथा मिश्रबन्धु-विनोद (वही)
पृ० ११२। आपकी रचना की भाषा (ग्रामीण भाषा) के आधार पर मिश्रबन्धुओं ने आपके निवास-
स्थान का अनुमान बिहार के बाहर भी किया है।—देखिए, वही।

३. —देखिए, 'हिन्दी साहित्य और बिहार' (वही) पृ० १४५।

४ सरभंग-संत, मुख्यतः दो कोटि में विभक्त किये जा सकते हैं— निरबानी और घरबारी। प्रथम में
स्त्रियों के लिए कोई स्थान नहीं है। इस कोटि के संतों के लिए बेटी-बेटी विवाहन आदि करना
वर्जित है। ये संत अपने मठों में कुमारस्था तक नहीं करते।—सं०

मग्घूलाल[1]

आपका उपनाम 'सूरत' था, किन्तु आप प्रसिद्ध थे लाला मग्घूलाल के नाम से। अपनी रचनाओं में आप अपना यही नाम रखते थे।

आप दरभंगा शहर के 'मिश्रटोला' मुहल्ले के निवासी श्रीवास्तव कायस्थ थे। आपके जीवन का अधिकांश मिथिला-नरेश महाराज माधवसिंह के दरबार में व्यतीत हुआ।

आप फारसी के बड़े अच्छे ज्ञाता थे। ब्रजभाषा में आपने दो खण्डकाव्यों की रचना की थी—(१) रुक्मिणी स्वयंवर और (२) पार्वती-स्वयंवर। इन दोनों का प्रकाशन अभी तक नहीं हो सका है। अतः, आपकी रचनाओं के उदाहरण नहीं मिले।



मनबोध[2]

'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही पृ० २०८) में डॉ० ग्रियर्सन और 'मिश्रबन्धु विनोद' (वही, द्वितीय भाग, पृ० ७०२१ और ७२६) में मिश्रबन्धुओं ने भी आपकी चर्चा की है। डॉ० ग्रियर्सन ने लिखा है कि आपका विवाह 'भिखारीदास' नामक व्यक्ति की कन्या से हुआ था, जिससे आपके एक लड़की हुई। मिश्रबन्धुओं ने एक स्थान (पृ० ७०१) पर आपका रचना-काल सं० १८०७ वि० और दूसरे स्थान (पृ० ७२६) पर सं० १८२० वि० में बतलाया है। उनके लेखानुसार आपका वास्तविक नाम 'मोहन झा' था और आप एक प्रसिद्ध नाटककार थे।



महावीरप्रसाद

आप भागलपुर निवासी कायस्थ थे।[3] हिन्दी में आपकी एक पुस्तकाकार रचना 'ज्ञानप्रभाकर' नाम से सुनी जाती है। किन्तु, रचना के उदाहरण नहीं मिले।



---

१ [illegible] यह परिचय डॉ० सियाराम तिवारी (कॉमर्स कॉलेज पटना) द्वारा पटना-विश्वविद्यालय में पी-एच्० डी० के लिए प्रस्तुत किये गये शोध-प्रबन्ध (हिन्दी के मध्यकालीन खण्ड-काव्य) के आधार पर तैयार किया गया है।—सं०

२ —देखिए 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' खंड २ (वही) पृ० १४०-४५।

३ मिश्रबन्धु-विनोद (वही तृतीय भाग) पृ० ११३।

महीपति[1]

हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास (वही, पृ० ११०) में डॉ० ग्रियर्सन और 'मिश्रबन्धु विनोद' (वही, तृतीय भाग, पृ० ९९४) में मिश्रबन्धुओं ने भी आपकी चर्चा की है।



रघुनाथदास[2]

गया के सन्नूलाल-पुस्तकालय में आपके नाम के ही किसी व्यक्ति के लिखे 'बाल गोपाल-चरित' नामक काव्य-ग्रंथ (काव्य-५४) की एक हस्तलिखित प्रति सुरक्षित है।



रमापति उपाध्याय[3]

'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही, पृ० १११) में डॉ० ग्रियर्सन ने भी आपकी चर्चा की है।



रामदयाल तिवारी

आप दरभंगा जिले के गौड़ नामक ग्राम के निवासी थे।[4] संवत् १८७१ वि० (सन् १८१४ ई०) के लगभग आप परलोकगामी हुए।[5] हिन्दी में आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ ही उपलब्ध हैं।

उदाहरण

मजु राम नाम राम नाम रामा
राम-नाम वेद-मूल, इनके नहिं और तूल,
भजत नसत त्रिविध सूल, छूटत भव-थामा ॥१॥
राम-नाम विमल नीर, संगम सत्संग-तीर,
मज्जत निर्मल शरीर, पावन निज धामा ॥२॥

---

१ —देखिए, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही), पृ० १४८।

२ वही पृ० १६० २१।

३. वही, पृ० १६१ २२।

४ 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही चतुर्थ भाग) पृ० ८२।

५. सं० १९११ वि० (सन् १८५४ ई०) में मिश्रबन्धुओं ने आपके विषय में लिखा था कि इनका देहान्त हुए सौ वर्ष के लगभग हुए हैं। इसी आधार पर आपका मृत्युकाल सं० १८७१ वि० (सन् १८१४ ई०) के आसपास अनुमित होता है। —देखिए, वही।

राम-नाम कमल-फूल, संतन-मन भ्रमर भूल,
पीवत रस झूमि-झूमि अमृत अनुपामा ॥३॥
राम नाम निराकार, रामदास नमस्कार,
दीजै हरि-भक्ति सार, पय पल भर रामा ॥४॥[1]



रामप्रसाद[2]

गया के मन्नूलाल-पुस्तकालय में आपके नाम के ही किसी व्यक्ति के लिखे 'सिद्धान्त-सार' नामक दर्शन-ग्रंथ (दर्शन २२) की एक हस्तलिखित प्रति सुरक्षित है ।



रामरूपदास

आप मगध-क्षेत्र के 'मलौव' नामक किसी ग्राम के निवासी[3] राधावल्लभीय वैष्णव-सम्प्रदाय के भक्त थे । हिन्दी में लिखित आपके भजनों का एक संग्रह 'गोपालसागर' नाम से सुनने में आता है । मिश्रबन्धुओं के मतानुसार आप सं० १९११ वि० (सन् १८५४ ई०) में परलोक सिधारे ।[4] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले ।



रामेश्वरदास[5]

श्रीरमाशंकरजी ने 'संत साहित्यकार रामेश्वरदास' शीर्षक अपने लेख ('नवराष्ट्र', २१ जुलाई, सन् १९५१ ई०, पृ० ३) में लिखा है—१ आप एक रामोपासक सरयूपारीण काश्यप गोत्रीय ब्राह्मण पं० चिन्तामणि के पुत्र थे । २ आपका शरीर लम्बा तगड़ा था और आप बिहार-प्रान्त के नामी पहलवानों में थे । ३ आप प्रतिदिन पाँच छन्दों की रचना करके ही अन्न-जल ग्रहण करते थे; इस नियम का पालन आपने चालीस वर्षों तक किया था । ४ आपकी रचनाओं का संग्रह आपके एक वंशधर पं० कस्तूरी रंगनारायणजी ने प्रकाशित किया है । उन्हीं के मतानुसार आप सं० १८८५ वि० (सन् १८२८ ई०) की ज्येष्ठ-कृष्णाष्टमी को एक सौ दस वर्ष की आयु[6] में परलोक सिधारे ।

---

१ 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, चतुर्थ भाग), पृ० ८२ ।
२. 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही), पृ० १५६ ।
३. 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, चतुर्थ भाग), पृ० १०० ।
४ उस समय आपकी मृत्यु सत्तासी वर्ष की थी । इसी आधार पर आपका जन्म अनुमानतः सं० १८२४ वि० (सन् १७६७ ई०) में हुआ ज्ञात होता है । —देखिए, वही ।
५. दे० 'हि० सा० और बि०' (वही प्रथम खण्ड) पृ० १२८-२९ ।
६ इसी आधार पर यह स्पष्ट है कि आपका जन्म सन् १७१८ ई० में हुआ था । अठारहवीं शती के आरम्भ में आपका जन्म और उन्नीसवीं शती के पूर्वार्द्ध में आपका देहान्त हुआ ।—सं०

वृन्दावन[1]

'पारस्य' (वही, भाग १६, अंक २१ शुक्रवार, १४ जुलाई, सन् १९१२ ई०, पृ० १८२) में श्रीद्वारकाप्रसाद गुप्त ने आपका संक्षिप्त परिचय प्रकाशित कराया था। उन्होंने आपका जन्म-स्थान शाहाबाद का 'बारा' नामक स्थान बतलाया है, जो भ्रामक है। उनके लेखानुसार आपका पूरा नाम वृन्दावन जैन, आपके पिता का धर्मचन्द्र जैन और पुत्रों का अजितदास जैन तथा शिखरचन्द्र जैन था। उनका यह भी कहना है कि आपने अपने पुत्र अजितदास जैन को पढ़ाने के लिए जिस छन्दोग्रन्थ की रचना की थी, उसका नाम 'छन्दशतक' था और आपके पुत्र अजितदास आपके अधूरे 'जैन रामायण' की ८१ सर्ग तक ही रचना कर, सन् १९१५ ई० में, असमय ही काल-कवलित हो गये।

✿

शंकरदत्त[2]

'शिवसिंह-सरोज' (पृ० १०७८) में शंकर नामक एक कवि की निम्नांकित रचना संकलित है। पता नहीं, यह रचना आपकी ही है या आपसे भिन्न किसी दूसरे शंकर कवि की।

वाटिका बिहारी अभिसार को सिधारी भारी
शंकर अँधेरी में उजेरी कैसो कंद है।
भादों को विषम मेह दीप-सी दुरै न देह
नागर के नेह को सनेह दृष्टि बंद है॥
शिखा जान्यो नागरि शिखाचिनि कमला जान्यो
मृगनि कलानिधि भी छवी जान्यो छंद है।
विज्जु जान्यो घनघोर घटापट मोर जान्यो
मोर जान्यो चोरनि चकोर जान्यो चंद है॥

✿

---

१. —देखिए, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही), पृ० ११४-१२।
श्रीगुप्त द्वारा लिखित उक्त परिचय में आपकी रचनाओं का निम्नांकित पद्य उदाहरण भी दिया गया है, जिसकी कोई अर्थ-संगति नहीं बैठती।

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

२. 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही) पृ० ११०।

शिवप्रकाश सिंह[1]

आपका जन्म सन् १८२७ ई० में[2] शाहाबाद जिले के डुमराँव-राजवंश में, हुआ था।[3] आप महाराज जयप्रकाश सिंह के सहोदर भ्राता थे। अतः, आप भी 'महाराज बहादुर' कहलाते थे।[4]

आप जबतक जीवित रहे, तबतक परोपकार में ही लगे रहे। अपने जीवन के उत्तरार्द्ध में वैराग्य का संचार होने पर आप काशी जाकर बस गये। वहाँ आपने सरकार को २५ हजार रुपये जन हितार्थ दान किया था, जिससे वरुणा नदी पर एक पुल का निर्माण हुआ

आप हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत-भाषा के बड़े अच्छे ज्ञाता थे। जब आप डुमराँव में थे, तब आपने 'ब्रह्मसंख्यविलास', 'श्रीसारतरंगिणी', 'भागवत-तत्त्वभास्कर', 'वेदस्तुति की टीका', 'उपदेश-प्रवाह' आदि ग्रंथों की रचना की। काशी में रहकर आपने श्रीगोस्वामी तुलसीदास-कृत 'विनयपत्रिका' की टीका 'रामतत्त्वबोधिनी' के नाम से लिखी, जो अपनी भक्तिरस-माधुरी के कारण अत्यधिक प्रसिद्ध हुई।[5]

आप काशी में ही, सन् १८४६ ई० को फाल्गुन-कृष्णाष्टमी (चन्द्रवार) को, मुक्तिधाम सिधारे।

*

उदाहरण

(१)

गणपति शब्द तें ऐश्वर्य सूचित किये जगवन्दन पद करि जगत्-पूज्यत्व जनाए सुमन और नन्दन दोनों पद पुत्रवाचक हैं तहाँ अर्थ की पुनरुक्ति देवे का आशय ऐसो है कि कोउ की माता श्रेष्ठ होय है कोउ को पिता इहां माता पिता दोऊ की श्रेष्ठता जनायबे निमित्त पुनरुक्ति पद दिये यद्वा शिवजी के पुत्र भवानी के नन्दन नाम आनन्दकर्त्ता यह

---

१ पं० भगवतीप्रसाद सिंह ने आपका शिवप्रकाश १९वीं शती बतलाया है। —देखिए, 'रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय' (वही), पृ० ६४४।

२ मिश्रबन्धुओं ने आपका जन्मकाल सं० १८८१ वि० (सन् १८२४ ई०) बतलाया है। वह अप्रामाणिक है। —देखिए, मिश्रबन्धु-विनोद (वही, तृतीय भाग), पृ० ११११।

३ 'बिहार-दर्पण' (वही), पृ० १२०।

४. महाराज जयप्रकाशसिंह बहादुर सन् १८०५ ई० में राजसिंहासन पर बैठे और ईस्ट-इंडिया-कम्पनी द्वारा 'महाराज बहादुर' का पद पाया। तब से डुमराँव के राजा लोग 'महाराज बहादुर' होते आये। —'महाराजचरित्र-चम्पू' (वही) पृ० ६।

५ इस टीका की एक प्राचीन मुद्रित प्रति, जो अपूर्ण है, सन् १८८० ई० में लखनऊ के नवलकिशोर प्रेस से प्रकाशित हुई थी, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के अनुसंधान-पुस्तकालय में सुरक्षित है। —सं०

हेतु ते कि श्रीगणेश जू को गर्भ सें आविर्भाव नहीं है सर्वसिद्धिन्ह को गृह अर्थात् श्रीगणपति कृपा वितरेक काहू को कोऊ सिद्धिकी प्राप्ति नहीं होति जगवन्दन पद ध्यान के अर्थ आमना विनायक नाम विघनन्ह के स्वामी जो कोऊ जीव ध्यान पूजन वितरेक कार्य आरम्भ करे है ताको विघ्न के कर्ता यह भाव है कृपा के समुद्र अर्थात शीघ्र दयालु होवे को सुभाव जाको पूर्व गजवदन पद दिये ताते भयानक कोऊ बूझे यह निमित्त सुन्दर कहे सब लायक पद को यह भाव है कि केवल इहलोक को सुख ऐश्वर्य्यादि ही के दाता नहीं किन्तु योगिन को परलोक सम्बन्धी सुख के भी दाता यह भाव है लड्डू है प्रिय जाको अर्थात थोड़ी पूजा सों प्रसन्न होवे को स्वभाव जाको मुद नाम अन्तरंग आनन्द मंगल नाम वाह्य उत्सव विवाहादि के दाता अर्थात् लेना थोरा देना अनन्त सुख विद्या के समुद्र अर्थात् जो काहू को विद्या होय है सो इन ही को कृपा-कटाक्ष ते बुद्धि के विधाता नाम ब्रह्मा अर्थात् आके अनुग्रह वितरेक बुद्धि को प्रकाश नहीं होत ऐसे जो श्रीगणपति तेहवे तुलसीदास अति नम्र हो करि मांगें हैं कि श्रीजानकी रघुनाथजू मेरे अन्तःकर्ण मा वस याको यह भाव भयो कि भगवत् उपासक को भगवत् वितरेक मोक्षपर्यन्त वासना नहीं होति यह भाव है।[1]

(२)

प्रथम पद को व्याख्या अधिक भयो यह रीति तें सर्वपदन को अर्थ भाव कहत ग्रन्थ बहुत विस्तार होयगो यह हेतु तें सुगम पदन को अर्थ तो न लिखेंगे जहां जहां कठिन पद हैं तथा अर्थ को काठिन्य है तहका भावार्थ कहेंगे तथा जैसे संस्कृत को अन्वय उलटा करि होत है तैसे अन्वय किये वितरेक बहुत पदन का अर्थ नहीं स्पष्ट होत है एक हेतु जहां तहां नीचे ते कहुं कहू मध्य ते अन्वय करि अर्थ लिखेंगे ॥[2]

१-२ "रामचरितमानस की रामचरणदासजी की टीका, प्रथम सं., सन् १८८० ई० में प्रकाशित) पृ० १।

(३)

तुलसी प्रसाद हिय तुलसी श्रीरामकृपा
सोई भवसागर के पुल सी ह्वै लसी है।
जाकी कविताई मनरथ-तरु टगा सम
गङ्गा की सी धार भक्तजन मन धसी है।
परम धरम मारतंड उर व्योम ऊग्यौ
काम क्रोध लोभ मोह तम निसि नसी है।
वाही के प्रकाश यम गन मुँह मसि लाई
अति सुख पाई जिय मेरे आय बसी है॥[1]

(४)

ह्वै तुलसी को गहि रहौ जो चाहत विश्राम।
बाहर भीतर सहज ही होत अधिक अभिराम॥
तुलसि-माल धारन किये बाहर होत सुवेष।
तुलसीकृत के गहत ही अचल भक्ति की रेख॥[2]

❁

शेखावतराय

आपका पूरा नाम था मुहम्मद शेखावत[3] राय। आपकी रचनाओं में कहीं-कहीं आपके नाम के साथ 'राव' भी आया है।

आपका जन्म सारन जिले के मधावपुर[4] नामक ग्राम में हुआ था।[5] कुछ लोगों ने आपका सम्बन्ध महाकवि केशवदास से जोड़ा है, जो भ्रामक ज्ञात होता है। श्रीदुर्गाशंकर प्रसाद सिंह की खोज के अनुसार आप प्रसिद्ध कवि सीताराम के चाचा थे। आप जाति के भाट थे और अनेक छंदों में रचनाएँ करते थे। घोड़ी पर चढ़कर आप हथुआ, मझौली, पवार, मनिआर, बाँसडीह आदि दरबारों में जाकर कविताएँ सुनाया करते थे। खड़ीबोली के अतिरिक्त आपकी रचनाएँ भोजपुरी में भी मिलती हैं। पुस्तकाकार आपकी निम्नांकित रचनाएँ मिलती हैं—१ रावण-संहार, २ मन्दोदरी तथा ३ हरकिसुन-चौंतीसी।[6]

आपकी मृत्यु अत्यन्त वृद्धावस्था में हुई।

१-२. 'विनयपत्रिका की रामतत्त्वबोधिनी टीका' (वही), पृ० १।

३. श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह (भेलाहुर, शाहाबाद) की खोज के अनुसार सन् १८५७ के गदर के समय एक 'शुजायत राय' कवि भी हुए हैं जो आपसे भिन्न नहीं थे।—सं०

४. यह ग्राम मादृ-नदी के तीर पर सिसवन थाने में पड़ता है।—सं०

५. चतुर्थ बिहार-प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (छपरा) के स्वागताध्यक्ष बाबू शत्रुघ्नसहायजी के भाषण से।

६. इसकी रचना अकबर प्रान्तनिवासी और सन् ५७ ई० के गदर के अमर सेनानी बाबू कुँवरसिंह के सिपहसालार बाबू हरिकृष्ण सिंह पर हुई है।—सं०

उदाहरण

(१)

ढाला है कृपान कर बाबू कुँअर सिंह
दाहिनो अलंग बाँह फरकत फर-फर ।
साथ के समीपी लिये छिपी मुख ओह रहे
जितने सिपाही बात पूछत हैं डर-डर ॥
'सखावत' कहत हथियार की तैयारी देख
कादर वो कूरन के कपाट लगे थर-थर ।
चढ़ के तुरङ्ग रङ्गभूमि में उजैन-वंश
लखि के सरूप अरि डर काँपे थर-थर ॥[1]

(२)

इत-उत दोऊ दल चढ़त मैदान बीच
धारा के समान गोली तोप छूटे झप-झप ।
चचल बदन मन सुपक तयार करि
मार गोला अंग म जु बैठि जात गप-गप ॥
कहत 'सखावत' धाम रहे धूम चहुँ ओर
गिरे ओप ओपन पर बाजत हैं थप थप ।
गोरा साहबान के जवान भये चटपट
बाबू कुँवरसिंह के कृपान काटे छप-छप ॥[2]



साहबरामदास[3]

'मिश्रबन्धु विनोद' (वही, चतुर्थ खण्ड, पृ ८१) में आप दरभंगा-जिले के पचाढ़ी स्थान' के निवासी बतलाये गये हैं ।



१ श्रीराजेन्द्र राय (बलिया-जिला के भाट-मड़ैया) से प्राप्त ।
२ वहीं से प्राप्त ।
३ —देखिए 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही), पृ १७४-७५ ।

हरतालिकाप्रसाद त्रिवेदी

आप भोजपुर (शाहाबाद) के निवासी थे।[1] हिन्दी में आपकी एकमात्र पुस्तक 'हनुमन्नाटक' की चर्चा मिलती है। उदाहरण नहीं मिले।



हरिचरणदास[2]

'हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही, पृ० १०५-६) में डॉ० ग्रियर्सन ने लिखा है—(१) आपका नाम 'हरिकवि' भी था। (२) आप 'भाषा-भूषण' की 'चमत्कार चन्द्रिका' नामक और 'कविप्रिया' की 'कर्णाभरण' नामक छन्दोबद्ध टीकाओं के रचयिता थे। (३) आपने 'अमरकोष' का एक भाषानुवाद भी तैयार किया था।[3]

'हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण' (वही, पृ० १५४, १५७ और ६६१) में लिखा है—(१) आप चैनपुर-ग्राम (गोआ-परगना, सारन) के निवासी सरयूपारीण ब्राह्मण थे। (२) आपके पितामह का नाम वासुदेव था और आप (राजस्थान) के कृष्णगढ़-नरेश राजा बहादुरराज के पुत्र बिरदसिंह के आश्रित थे और सं० १८३५ वि० (सन् १७७८ ई०) के लगभग वर्तमान थे।

'हिन्दी हस्तलेखों की खोज की १९२१-२२ की ग्यारहवीं रिपोर्ट' (वही, सन् १९२९ ई०, पृ० ६६-७०) में उल्लेख है—(१) आपका रचना-काल सन् १७५७ ई० से सन् १७७९ ई० तक है। (२) 'भाषा-भूषण' की टीका का नाम 'चमत्कार' भी था तथा सतसई-टीका आपके निधन के पश्चात् 'हरिप्रकाश-टीका' के नाम से प्रसिद्ध हुई और विद्वानों द्वारा प्रशंसित भी। (३) आपकी कृतियों का रचना-काल इस प्रकार है—

(क) 'कविप्रिया' की टीका-रचना सं० १८३५ वि० में माघ शुक्ल १५, शुक्रवार, ५ फरवरी, सन् १७७९ ई० को हुई।

(ख) सतसई-टीका की रचना समाप्त हुई—सं० १८३४ वि० की जन्माष्टमी (२२ अगस्त, सन् १७७७ ई०, मंगलवार) को।

---

१ 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, तृतीय भाग), पृ० १०११। मिश्रबन्धुओं ने 'भोजपुर' मात्र लिखा है। शाहाबाद का भोजपुर ही विशेष प्रसिद्ध है। अनेक स्थलों में मिश्रबन्धुओं ने जिले वो स्थानों का विशिष्ट पता नहीं दिया है जिससे मन में शंका और जिज्ञासा रह जाती है तथा भ्रम भी होता है। वस्तुतः बिना भोजपुर मध्यप्रदेश का है या बिहार का ठीक-ठीक बताना कठिन है। पर शाहाबादी भोजपुर से पता चला है कि आप (त्रिवेदीजी) शाहाबादी भोजपुर के ही थे।—सं०

२. —देखिए, हिन्दी-साहित्य और बिहार (वही), पृ० २०५-०७।

३. श्रीकृष्णाराम गुप्त के कथनानुसार 'अमरकोश' का भाषानुवाद पण्डित रामनाथ (पं० म०) के लिए 'हरप्रकाश' नामक ग्रन्थ में सं० १८८२ वि० में किया था।

(ग) 'सभा-प्रकाश' का रचना-काल सं० १८१४ वि०, श्रावण शुक्ल ११, शुक्रवार (२६ जुलाई, सन् १७५७ ई०)।

(घ) बृहत्कविवल्लभ का रचना-काल सन् १७७८ ई०।

बिहारप्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के तृतीय अधिवेशन (सीतामढ़ी) के सभापति श्रीशिवनन्दन सहायजी ने अपने भाषण में बतलाया है—(१) आपका निवास-स्थान सारन जिले का प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान 'चिरान' नामक ग्राम था। (२) आपने बिहारी-सतसई की टीका की, जो 'हरिप्रकाश टीका' के नाम से प्रसिद्ध हुई गणना सतसई की उत्तम एवं प्रामाणिक टीकाओं में होती है।[1]



सोमनाथ[2]

'शिवसिंह-सरोज' (वही, पृ० ३२४) में इसी नाम के एक और कवि की निम्नांकित रचना संकलित है। पता नहीं, दोनों एक ही व्यक्ति हैं या एक दूसरे से भिन्न।

उदाहरण

दिसि विदिसान ते उमड़ि मढ़ि लीनो
नभ छोरि दिये धुरवा जवासे यूथ जरिगे।
हहहहे भये द्रुमरज्जक हवा के गुण
कुहकुह मुरवा पुकारि मोद भरिगे॥
रहि गये चातक जहाँ के तहाँ देखत ही
सोमनाथ कहूँ-कहूँ बूँदहू न करिगे।
सोर भयो घोर चहूँ ओर नभ-मण्डल में
आये घन आये घन आय कै उमड़िगे॥



---

१ आपने स्वयं लिखा भी है—

कोऊ बिहारी भाव को पावै न काहू पास।
ऐसी टीका करत है हरिकवि हरिपरकास॥

—देखिए, वही भाषण।

२. —देखिए 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही), पृ० १११।

देवदत्त[1]

'गया के लेखक और कवि' (वही, पृ० ८१) में लिखा है कि (१) आपका नाम 'रत्नप्राचीन' भी था। (२) आप गया[2] जिले के निवासी थे और आपका रचना-काल सं० १८०४ वि० (सन् १७४७ ई०) था।

'हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण' (श्यामसुन्दरदास, पहला भाग, प्रथम सं०, सं० १९८० वि०, पृ० ९४) में आप कुँवर फतहसिंह (टिकारी-नरेश के उत्तराधिकारी, सं० १८०४ वि०) के आश्रित बतलाये गये हैं।

'शिवसिंह-सरोज' (वही, पृ० १३४) में उदाहरण-स्वरूप आपका निम्नांकित छन्द संकलित है—

उदाहरण

सून केलि-मन्दिर मे नायक नवीने साथ
नायिका रसीली रस बात को छुवा गई।
देवदत्त कौनहूँ प्रसंग ते सुने ते नाऊ
सौति सों रिसाइ पिय प्यारी को बिदा दई॥
ताहि समय पापी पपीहा की धुनि कान परी
आँसुई अनंग ऋतु पावस की ह्वै गई॥
छूटे केस छटा देखि-देखि मेघ घटा वारी
फिरे अटा-अटा बाजीगर को बटा भई॥

*

प्रयागदास[3]

आपकी रचनाओं में आपके नाम 'परागदास' और 'प्रागदास'[4] भी मिलते हैं।

आपकी जन्मभूमि का पता नहीं चलता। 'रसिकप्रकाश-भक्तमाल' में लिखा है कि आप बाल्यावस्था में ही विरक्त होकर काशी तथा प्रयाग होते हुए जनकपुर पहुँचे,

---

१ —देखिए, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही) पृ० १६७।

२. इस पुस्तक के प्रथम खंड में आपका जन्मस्थान [illegible] 'आयमक' (पचपरेवा) अंकित है पर आप गया-जिले के टिकारी-दरबार में ही रहते थे, अतः आप गया-जिले के निवासी माने गये। —सं०

३ आपका प्रस्तुत परिचय डॉ० भगवतीप्रसाद सिंह द्वारा लिखित जीवनी के आधार पर तैयार किया गया है। —देखिए, 'रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय' (वही) पृ० ४०१; तथा 'परिषद्-पत्रिका' (त्रैमासिक, वर्ष १, अंक १, सन् १९६१ ई०) पृ० ३९-४०।

४ 'रसिकप्रकाश-भक्तमाल' में आपके नाम का यही रूप उल्लिखित है। डॉ० भगवतीप्रसाद सिंह को आपकी जो तीन बड़ी रचनाएँ उपलब्ध हुई हैं उनमें भी आपका यही नाम मिला है। —देखिए, वही।

जहाँ महात्मा सूरकिशोर से आपने शृंगारी उपासना का रहस्य प्राप्त किया। मिथिला के गाँवों में अनेक दिनों तक 'नर्मसखा' के रूप में आप क्रीड़ा करते रहे। जब बड़े हुए, तब आपके गुरु सूरकिशोरजी[1] ने आपको 'करवा' देकर अपनी पुत्री (सीता) से मिलन के लिए अयोध्या भेजा। अयोध्या पहुँचकर आप सीधे कनक-भवन गये। वहाँ आप अपनी बहन से 'करवा' लेकर एक नीम के पेड़ के नीचे रहने लगे।[2] अयोध्या में कई वर्षों तक इस प्रकार जीवन यापन करने के पश्चात् आप पहले मिथिला और फिर प्रयाग चले आये। प्रयाग में आप त्रिवेणी-संगम पर रहते थे। इसी समय कई शैवमतावलम्बियों को, शास्त्रार्थ में पराजित कर, आपने अपना शिष्य बनाया था। कहते हैं, एक दिन संगम पर किसी कथा में राम-वनगमन का प्रसंग सुनकर मातुलता-वश आप व्याकुल हो गये और शीघ्र ही तीन जोड़े जूते और तीन चारपाइयाँ को सिर पर लेकर चित्रकूट की ओर चल पड़े। चित्रकूट में जब श्रीसीताराम और लक्ष्मण के दर्शन आपको न हुए, तब आप पंचवटी गये, जहाँ आपकी साध पूरी हुई। पंचवटी से आप पुनः अयोध्या और फिर मिथिला चले आये।

आपने 'जनकपुर के सखा' नाम से रसिक-साधना में एक नवीन मार्ग का प्रवर्त्तन किया था। इस दृष्टि से उक्त साधना में आपका विशिष्ट स्थान माना जाता है। आपकी कोई पुस्तकाकार रचना नहीं मिलती, स्फुट काव्य-रचनाएँ ही मिलती हैं।

उदाहरण

(१)

दामिनी-सी सिय-संग विराजति
मोति हिय बग-पाँति छए हैं।
प्रेम अनेउ मनों धनु इन्द्र को
पीत पिछौरी के रूप जए हैं॥

---

१ इनका परिचय इसी पुस्तक में अन्यत्र द्रष्टव्य। इनके शिष्य होने के नाते आप अपने को जानकीजी का छोटा भाई मानते थे। इसी आधार पर श्रीरामजी आपके बहनोई होते थे। अपने इस नाते पर आपको बड़ा गर्व था। अयोध्या के सखाओं को ये मधुर गालियाँ देते थे। यहाँ रसिक-भावना के भक्त तथा अन्य नागरिक इन्हें 'मामा' कहते थे जिससे आप 'मामा प्रयागदास' के नाम से विख्यात हुए।

—'रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय' (वही) पृ० ४ १।

२ आपके अयोध्या-जीवन के सम्बन्ध में अयोध्या में आज भी निम्नांकित पंक्तियाँ प्रसिद्ध हैं—

नीम के नीचे खाट पड़ी है खाट के नीचे करवा।
'प्रयागदास' अयोध्या छोड़ें रामलला के सरवा॥

आपमें विरक्ति-भावना भी बड़ी ही तीव्र थी। अयोध्या में मेलों के लगने पर आप रामघाट के निकट पेड़ों में रहने चले जाते थे। मेलों को आपने देहातियों का मरण कहा है—

मु दर्यों ने सरसंग रचा है इसे काम का मेलों में।
'प्रयागदास' रघुवर को लेके, चले रहेंगे बेलों में॥

—वही, पृ० ४ ३।

बैन कहूँ मुख तें प्रमाधार-सो
दोनन कौं वरसाइ दए हैं।
भावें सदा 'प्रागदास'-मयूर कौं
रामसखा घन से उनए हैं ॥[1]

(२)

स्याहा सिंगारई सलाई किये
जहाँ जात निछावर मैन घन हैं।
कुंडल लोल लसैं अलकैं ढिग
पीन कपोल सुगंध-सने हैं ॥
मोती विराजति नासिका मैं
वरनौं कहा रूप के तंबु तने हैं।
सोहैं सदा 'प्रागदास' कौं भावत
रामसखा जू के नैन बने हैं ॥[2]

(३)

आछे प्यार रामजी सखा। तुम्हारे बदन पर अनत कला ॥
मुख मे तारा नैना बिसाल। जित चितए तित कर निहाल ॥
जहाँ पड़े भक्तन पर भीर। हरषत आवें सिय-रघुवीर ॥
छोटा-सा धनुम्यां छोटा-छाटा तार। खेलन निकस सरजू के तीर ॥
'प्रागदास' चल सरयू-तीर। बीच मे मिलि गए सिया रघुवीर ॥[3]

(४)

परागदास जो पीपर होते, राघो छात भुलवा रे।
आठ पहर छाती पर रहते, व दसरथ के पुतवा रे।
धुनि-धुनि कसवा कहै महेसवा, पार न पावै सेसवा।
परागदास पहुसदवा के कारन, रघवा होइगे बघवा।[4]

---

१ 'परागद-पदावली' (वही वर्ष २ अंक १) पृ० ४०।
२. वही।
३. वही। उक्त तीनों रचनाएँ डॉ० भगवतीप्रसाद सिंह को जिज्ञासावश रामसखा की रचनाओं के मार्गदर्शन हस्तलेखों में प्राप्त हुई हैं। देखिए, वही।
४ रामपद्धति में रसिक-सम्प्रदाय (वही) पृ० ४ १।

लक्ष्मीनाथ ठाकुर[१]

डॉ० ग्रियर्सन ने भी अपने 'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही, पृ० २६१) में बतलाया है कि (१) आप सन् १८७० ई० में वर्तमान एक मैथिल कवि थे। (२) आपने बैसवाड़ी बोली में बहुत-सी रचनाएँ की थीं, जिसके कारण आपको पर्याप्त प्रशंसा हुई।[२]



सरसराम[३]

'हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास' (वही, पृ० १२१) में डॉ० ग्रियर्सन ने लिखा है—(१) आप सुन्दर नामक राजा के दरबारी कवि थे। (२) यह सुन्दर तिरहुत के राजा सुन्दर ठाकुर थे, जो सन् १६४१ ई० में गद्दी पर बैठे और सन् १६६६ ई० में दिवंगत हुए।



१ —देखिए, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही) पृ० १६८।

२ यदि यह सत्य है कि आपने बैसवाड़ी में ही रचना की थी तो आप ही बैसवाड़ी के प्रथम मैथिल कवि माने जा सकते हैं।—सं०

३ —देखिए, 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (वही), पृ० २००। १७वीं शती में दरभंगा-जिले के लोहना-ग्राम के रमापति नामक एक कवि भी इसी नाम से काव्य-रचना करते थे। —देखिए वही पृ० ८८।

परिशिष्ट-४

[प्रस्तुत खण्ड के प्रथम अध्याय के कुछ शेष परिचय]

भिक्षुक मिश्र[1]

आपका उपनाम 'नम्र' था। अपनी रचनाओं में आप अपना यही नाम रखते थे।

आपका जन्म सन् १८२५ ई० (सं० १८८२ वि०) में, दरभंगा शहर के 'मिश्रटोला' मुहल्ले में हुआ था।[2] आप शाकद्वीपीय ब्राह्मण थे। आपके पिता का नाम था पं० मोमोहन मिश्र। आपकी शिक्षा घर पर ही हुई।

आपने घर पर ही साहित्य, व्याकरण, वेदान्त, वैद्यक आदि विषयक महत्त्वपूर्ण ग्रंथों को पढ़ डाला। इन ग्रंथों को पढ़ने के बाद सबसे पहले आप नॉर्मल स्कूल, दरभंगा में शिक्षक के रूप में नियुक्त हुए। इसके पश्चात् गम्हरिया, कठवन, खिमरी आदि ग्रामों में भी आपने शिक्षक का कार्य किया। वैद्यक तो आपकी वंशगत जीविका थी। इसके साथ ही आप कभी कभी श्रीमद्भागवत एवं अन्य पुराणों की कथाएँ भी बाँचते थे, जो बहुत ही मनोरंजक हुआ करता था। महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह और महाराज रमेश्वर सिंह के समय आपका सम्बन्ध दरभंगा राज से भी था। उक्त राज्य से अवसर अवसर पर आपका उचित सत्कार भी हुआ करता था।

आपका कद छोटा था तथा आप सदा स्वस्थ रहा करते थे। आपके शरीर की बनावट ऐसी थी कि वृद्धावस्था में भी आप वृद्ध जैसे नहीं लगते थे। बन्ददार मिर्जई, पाग, धोती और देशी जूता आपका पहनावा था। आप हृदय के बड़े उदार थे। जो कुछ भी आमदनी होती थी, उसे दान-पुण्य में ही खर्च कर डालते थे। आपने दो-दो विवाह किये किन्तु संतान एक भी नहीं हुई।[3]

आपके यहाँ प्राचीन हस्तलिखित संस्कृत हिन्दी-ग्रंथों का बड़ा अच्छा संग्रह था। किन्तु, आग लग जाने के कारण वे सभी ग्रंथ भस्मसात् हो गये।

आपको काव्य-कला, चित्र कला, छंद अलंकार, ताल सुर आदि का बड़ा अच्छा ज्ञान था। काव्य-रचना की ओर आप १७ वर्ष की अवस्था से ही प्रवृत्त हो गये।

---

१ आपका परिचय मुख्यतः पं० रवीन्द्रनाथ चौधरी (मिश्रटोला दरभंगा) द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर तैयार किया गया है।—सं०

२ वही। स्व० महामहोपाध्याय पं० रघुनन्दनप्रसाद मिश्र आपका जन्म सन् १८३१ ई० (सं० १८८८ वि०, कार्तिक वदी ४ में हुआ बतलाते हैं।—सं

३ पं० रघुनन्दनप्रसाद मिश्र को ही आप पुत्रवत् मानते थे।—सं

कवितायें बनाकर आप अक्सर उन्हें स्वयं गाया करते थे। आप आशुकवि थे और बात की-बात में कठिन-से-कठिन समस्यापूर्तियाँ कर डालते थे। कहते हैं, आपने अनेक पुस्तकों की रचना की थी। किन्तु, आपके द्वारा रचित 'मिथावती' नामक एक उपन्यास और गद्य-पद्य में अनेक स्फुट रचनाएँ ही मिलती हैं। आप १ ९ वर्ष की आयु में सन् १९२७ ई० में परलोक सिधारे।

उदाहरण

(१)

चलुचलु सखि मिलि श्याम को
झूला झुलाओ पालना।
क्या खूब गोल कपोल सुन्दर
श्रवण मोतिन झालना।
श्याम नीरज श्याम मुख सुठि
नासिका वर झूलना।
लाल लाल सुबिन्दु केसर
हिम धरे सुचि मालना।
मन्दार तुलसी कुन्द कल्प
सुपारिजातक पालना।
आराम शायक विप्रपद उर
रेख सजनी चाहना।
पीत पट कटि जड़ित ऊपर
कस मुरली लालना।
आजानुकर उर जानु जंघ
सुगुल्फ पद 'नन्द' धारना।[1]

---

१ पं० हरिनाथ चौधरी (बड़ी) के पास।

(२)

कालि कहि हेरत पुनि नीकी कहि टेरत
हरि घेरत कहि धूसरो तू
आओ सुख पाओ री।
हरित तृण हाथ निज लाओ री
जमुना जल पान करि
दुःख विसराओ री।
चित चेतत नित आए इत
हों ए वलैया मिलि
तेरे गुण गाओ री।
यह घरत पगु
पाछे 'मन्द' होत अवेरा
आसकेरा घर जाओ री।[1]

(३)

बरै जस विना वाइ के दीप ॥
बरै धीर तस चित असथिर कर
जस मोती रह सीप।
बरै समाधि लगाए निरन्तर
जग तेजि ब्रह्म समीप ॥
दवा भव रोगन के सतसंग ॥
दम शम उपरति द्वन्द सहनता
समाधान विस्वास।
दयादान व्रत नित्यात्रिक जेंह
करि सुठि ज्ञान प्रकाश ॥
नगारा साईं सभ में बाज ॥

१ पं० शशिनाथ चौधरी (वही) से प्राप्त।

नहिं कोई पुरुष नारि नहिं कोई
मानन आपन सार।
नहिं कोइ कुल अकुलीन सबै सब
एक मिल्यो संसार।[१]

(४)

अब मेरे मन का सुनिये। मैं इन देशवासी श्याम काकातूआ तोतों को विमल हृदय जाना तो इनके सुख के लिये दूर-दूर के विपिनों से अनेक भाँति के वृक्ष मँगावें और मणिमय वस्त्रमय सम्पदों को ऐसे ही अनके भाँति से बान्ध कर लिखी हुई अनके इतिहास और काव्य की कविता का किताबें अपने पीठ पर चढ़ा चढ़ा ला ला कर ऐसे ही अपने देश के अनेक पोशाकें भी ला दिखाई और सामुदा अपनी विद्या भी पढ़ा कर राजिश चाकू से भी बढ़ कर बुद्धि देखकर अनन्तर जलथल पर ले जाने वाले रेल जहाजों के द्वारा देश विखला और अन्य अन्य देश भी घुमा फिरा सब देश की अनेक भाँति ओहोदा मजिस्ट्रेट डिपोटी डिपोटी कलक्टर आदि बना बना कर परीक्षित कर उत्तराद स्थापित भी कर दिये गये।[२]

*

जनकधारी लाल[३]

आप दानापुर (पटना) के निवासी थे।[४] आपका जन्म सन् १८७५ ई० में २७ सितम्बर को हुआ था।

---

१ पं० दर्शनाथ चौबे (वही) से प्राप्त।

२ वही।

३ आपका परिचय श्री रामेश्वर प्रसाद, विशारद (दानापुर कैंट, पटना) द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर तैयार किया गया है। आपका परिचय नवलकिशोर प्रेस (लखनऊ) से सन् १९१२ ई० में प्रकाशित 'दूरदर्शी' में भी छपा था।—सं०

४ वही।

आपके पिता का नाम इन्द्रजीत सिंह था,[१] जो एक सदाचारी एवं निष्ठावान कृषक थे। अध्ययन की ओर आपकी विशेष अभिरुचि देखकर उन्होंने आपको उचित शिक्षा की व्यवस्था कर दी। प्रवेशिका परीक्षा में आप प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए थे। आपके सहपाठियों में बिहार निर्माता डॉ० सच्चिदानन्द सिन्हा भी थे। अपनी शिक्षा समाप्त होते ही आपने भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के रक्षार्थ दानापुर में 'आर्यन ऐंग्लो संस्कृत विद्यालय' नाम से एक स्कूल की स्थापना की, जिसके प्रधानाध्यापक-पद पर छात्रों ने आपको ही प्रतिष्ठित किया। आपके अध्यापन की शैली अत्यन्त सरल एवं हृदयग्राहिणी थी।

आपकी गणना इस राज्य के प्रमुख आर्यसमाजियों में होती थी। वर्षों तक आप आर्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द के निकट सम्पर्क में रहे। सन् १८७८ ई० में आपने उन्हें दानापुर में बुलाकर एक आर्यसमाज मंदिर की स्थापना भी कराई थी।

आपकी प्रसिद्धि एक लोकप्रिय समाजसेवी के रूप में भी थी। जनता ने लगातार छः बार आपको दानापुर निजामत-म्युनिसिपैलिटी का वाइस-चेयरमैन बनाया। उस समय एस० डी० ओ० ही चेयरमैन हुआ करते थे। आपने उक्त पद पर रहकर समाज की निष्ठापूर्वक सेवा की। लगभग चौदह वर्षों तक जनता की सेवा करके आप स्वयं हट गये। आपकी सार्वजनिक सेवाओं से प्रभावित होकर तत्कालीन सरकार ने सन् १९११ १२ ई० के दिल्ली-दरबार में आपको 'रायसाहब' की उपाधि से सम्मानित किया था।

आडम्बर से दूर रहकर आपने हिन्दी का प्रचार भी बड़ी लगन से किया। आपने विधि, रेखागणित, आदि विषयों की कुछ अँगरेजी पुस्तकों का हिन्दी में अनुवाद किया था। आपका द्वारा सम्पादित 'सुनीति-सप्तक' हिन्दी की एक शिक्षाप्रद पुस्तक मानी गई है। आप सन् १९२० ई० की २० मई को परलोक सिधारे।[२] आपकी रचना के उदाहरण नहीं मिले।



१ आपके तीन पुत्र थे—जटेश्वरी सिंह, भोलाप्रकाशाली सिंह तथा अंबरराज सिंह। इनमें द्वितीय भोलाप्रकाशाली सिंह ने संभवतः कुछ हिन्दी-पुस्तकों की भी रचना की है। इन दिनों वे सम्प्रति ठेकर महोदय के निकट नर्मदा-तट पर निवास कर रहे हैं।—सं

२ जनता ने आपकी स्मृति में वर्द्धमान विद्यालय की स्थापना की है और म्युनिसिपल बोर्ड ने आपके नाम पर एक सड़क का नामकरण किया है। आर्यसमाज ने अपने भवन में आपका तैलचित्र भी लगाया है।—सं०

दिवाकर भट्ट[1]

आपका जन्म शाहाबाद जिले के शाहपुरपट्टी थाने के अन्तर्गत 'नरुआर' नामक ग्राम में सन् १८४८ ई० (सं० १९०५ वि०) की कार्तिक शुक्ल सप्तमी को हुआ था।[2] आपके पिता पं० रामभूषण भट्ट उक्त ग्राम में, शाहाबाद के ही एक दूसरे ग्राम, 'बाबाबाँध' से आकर बस गये थे।[3]

आपकी आरम्भिक शिक्षा गाँव की ही एक पाठशाला में हुई। आपने अल्प समय में ही अरबी और फारसी में अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। तदनन्तर काशी जाकर आप संस्कृत और प्राकृत-साहित्य के अध्ययन की ओर प्रवृत्त हुए और उसमें भी सिद्ध हस्त हुए। प्राकृत भाषा के आपके गुरु थे डुमराँव (शाहाबाद) निवासी पं० राधा वल्लभजी। संस्कृत-प्राकृत का अध्ययन करते समय आपने हिन्दी में कविता करने की योग्यता प्राप्त कर ली। आपके काव्यगुरु काशीवासी आचार्य श्रीरामकवि थे। सं० १९२६ वि० (सन् १८६९ ई०) में, लगभग बीस इक्कीस वर्ष की अवस्था में जब आप काशी रहकर अध्ययन कर रहे थे, तब आपके पिताजी का स्वर्गवास हो गया और आपको अपनी अधूरी पढ़ाई छोड़कर अपनी जमीन्दारी सँभालने के लिए अपने घर लौट आना पड़ा। तब से आपने

१ आपका प्रस्तुत परिचय आपके वंशज पं० प्रभाकर भट्ट (बाबाबाँध डुमराँव शाहाबाद) द्वारा प्रेषित विवरण के आधार पर तैयार किया गया है। यों आपके शब्दों में ही आपका परिचय इस प्रकार है—

श्री कविराज के पोता भये, परपोता सुभट्ट नारायण केरो।
श्री नृपभूषण को हूँ मैं पुत्र सुभट्ट दिवाकर नाम है मेरो॥
रामकी कृपि, गुरुपद कालिका अवधक नगर में वासी बसेरो।
राम्य गुरुजन भी वर्णौ, भयो तहाँ कवितन सांग बसेरो॥

२ वही। मधुसूदन ओझा 'सरोज' प्रभृति आपका जन्मकाल सन् १८९० ई० मानते हैं।—सं०

३ बाबाबाँध शाहाबाद-जिले के पिरो (पीरो) थाने में एक प्रसिद्ध गाँव है। यहाँ के ब्राह्मण अपनी विद्वत्ता और बुद्धि के लिए विख्यात हैं। यहाँ अनेक कवि लेखक और विद्वान् हो गये हैं। ये लोग डुमराँव महाराज के पूर्वजों के साथ राजपुताने से आये थे और उन्हीं के साथ रहते थे। डुमराँव के प्रथम महाराजा नारायणमल्ल के साथ गोस्वामी भट्टारक आये थे। गोस्वामी भट्टारक प्रकांड विद्वान् देवी के परमभक्त और युद्धविद्याविशारद थे। इन्हीं की मंत्रणा और सहायता से चेरोखरवार-वंश के डुमराँव नरेश को हराकर राजा नारायणमल्ल डुमराँव के महाराजा बने। डुमराँव-राज की प्राप्ति में उनका हाथ होने के कारण गोस्वामी भट्टारक को महाराज अधिक आदर की दृष्टि से देखते थे और उन्हीं की राय से राज्य का सारा प्रबंध करते थे। पुरस्कार-स्वरूप महाराजा ने इन्हें अपने राज्य के दसवें भाग का जमींदार बना दिया। कहा जाता है कि इनका वंश बालभट्ट के वंशज बाबाबाँध-निवासी एक व्यक्ति के यहाँ हुआ। कालक्रम से ये बाबाबाँध में स्थायी रूप से बस गये और अपनी जमींदारी की आय से जीवन-यापन से निश्चिन्त हो सरस्वती की आराधना में अपना समय व्यतीत करने लगे। इनके वंश में दिवाकर भट्ट परम प्रतिभाशाली कवि और विद्वान् हुए, जिन्होंने अपनी काव्य-कुशलता और प्रकाण्डता से हिन्दी-संसार के रसज्ञों में प्रतिष्ठा एक साथ पाने का निर्विवाद अधिकार प्राप्त किया।—सं०

घर पर ही रहकर आपने आजीवन साहित्य-सेवा की। आपका सम्मान विशेषतः राज-दरबारों में ही था। डुमराँव-राज्य के तो आप दरबारी कवि थे। इस कारण उक्त दरबार में आपकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। कहते हैं, गया जिले के टिकारी रियासत में भी आपका बड़ा मान था। उक्त दोनों दरबारों की ओर से आपको कई गाँव भी प्राप्त हुए थे।

आपकी प्रमुख पुस्तकाकार रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं—(१) नखशिख[1] (२) नवोढ़ारत्न[2], (३) वेश्या विलास[3], (४) संध्या विनोद, (५) संध्या-सर्वस्व, (६) सर्वधर्म विवेक संहिता[4] तथा (७) धर्मनिर्णय[5]। इसके अतिरिक्त केशव की 'कविप्रिया', 'रसिकप्रिया', बिहारी की 'सतसई' एवं मतिराम के 'भाषाभूषण' और 'रसराज' की टीकाएँ भी आपने लिखी थीं।

अपने जीवन के सान्ध्य काल में आप ज्वर-रोग से ग्रस्त हो गये और सं० १९६१ वि० (१ अक्टूबर, सन् १९०४ ई०) के क्वार मास में परलोक सिधार गये। आपकी मृत्यु पर आपके एक शिष्य 'शिवमोद' नामक एक कवि ने एक कविता लिखी थी।[6]

उदाहरण

(१)

छीरधी का छोहरी-सी छाजे छितिपाल-सभा,
छीन लंक छवान छबीले वार छाये ते।
छवि भरी छोटी-सी छटाँक-तौल छूटा छटा,
चमकति छरकि छिनक राग गाये ते।
सुकवि 'दिवाकर' जु छाती उचकाय छरा,
छोर छिवराय छलछन्द छिप्र छाये ते।
पोंछति रुमाल मुख, परत मसाल मन्द,
वदन छपाकर छबीला छवि छाये ते॥[7]

---

१ यह सं० १९४१ वि० (सन् १८८४ ई०) में भारत-जीवन प्रेस, काशी से मुद्रित हुआ था।—सं०
२ इसकी रचना सं० १९४५ वि० (सन् १८८८ ई०) में हुई थी।—सं०
३ इसकी रचना सं० १९४६ वि० (सन् १८८९ ई०) में हुई थी।—सं०
४ इसकी रचना सं० १९५५ वि० (सन् १८९८ ई०) में हुई थी। यह ग्रन्थ आजकल चम्पारन-जिले के चंपापुर-निवासी पं० बनेसर भट्ट भारद्वाज के पास सुरक्षित है। सुनने में आया है कि वे इसके प्रकाशन की व्यवस्था कर रहे हैं।—सं०
५ इसकी रचना सं० १९५८ वि० (सन् १९०१ ई०) में हुई थी।—सं०
६ वह कविता इस प्रकार है—

"भव रस अंक इन्दु संवत सुविक्रम को आसिन सुकुल तिथि तीरसी सुपायो है।
सोमवार अरु मघवार चार दंड बीते, आनन्दी विश्राम करी ब्राह्मण कहायो है।
रितु नव अंक भरी रसी तारीख अक्टूबर, मास अनूपुर सु यह उदायो है।
कहे 'शिवमोद' मदनेश दिवाकर जू, ऐसे समय पर सुरलोक को सिधायो है॥"

७ भोजपुरी के कवि और काव्य (वही) से प्राप्त।—सं०

(२)

चम्पा ते चमेली से गुलाब गुलसब्बतों ते,
बेला बेली ऐला से रसाल-बौर कच्चा ते।
जाहो जूही सेवती मसीर गुलचीनी कन्द,
गेंदा गुलदाऊदी कपूर बीन बच्चा ते।
सन्दल-अतर-कस्तूरी-भू 'दिवाकर' पू,
श्वेत-वनवासी कृष्णासार मृगबच्चा ते।
इतने सुवास ते सुवास है करोर गुन,
तेज अफताब ते, सुगन्ध मुख सच्चा के ॥[1]



१ पं० [illegible] भट्ट (दरी) से प्राप्त।

परिशिष्ट-५

[परिचय-तालिका]

प्रथम अध्याय

क्र०सं०	पृ० सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थिति या जन्म-काल	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
१	१	प्रभुनाथ	सन् १८०१ ई०	मुसीसमरा (चम्पारन)	स्फुट रचनाएँ	कवि
२	२	*सुबासिन दास	”	पकुमबेर (चम्पारन)	” (अनुपलब्ध)	”
३	२	शिवनारायण सिंह	सन् १८०३ ई०	शारणपुर (पटना)	”	”
४	३	कृष्णदत्त पाण्डेय	सन् १८०५ ई०	भोजपुर (शाहाबाद)	१ कृष्णपदावली २ भारत का गदर (अनु०) तथा स्फुट रचनाएँ	” ”
५	४	यशोदानन्द	सन् १८११ ई०	[illegible]पुर (शाहाबाद)	स्फुट रचनाएँ	”
६	५	तपस्वीराम (तपसीराम)	सन् १८१५ ई०	मुबारकपुर (सारन)	१ श्रीभागवतसूची २ श्रीअयोध्या-माहात्म्य ३ कथामाला ४ प्रेमगंगतरंग ५ श्रीसीतारामचरण चिह्न	”
७	८	हेमलता (युगलानन्यशरण)	सन् १८१८ ई०	इस्लामपुर (पटना)	ग्रंथ-सं ७५ —देखिए, प०पृ० १०	”
८	१२	धनारंग दुबे (धनारंग मलिक, धना मलिक)	सन् १८१९ ई०	धनगाँई (शाहाबाद)	कृष्णरामायण तथा स्फुट रचनाएँ	”
९	१५	जगनारायण सिंह	”	पटेढ़ी (सारन)	१ श्रीयुगप्रेमतरंगिणी २ दुर्गानामार्थ दोहावली तथा स्फुट रचनाएँ।	”

क सं०	पृ० सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थिति या जन्म-काल	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
१०	२०	रामावर झा (भाविनाथ)	सन् १८२१ ई०	महेश (दरभंगा)	१ देवीगीत-शतक	कवि
					२ काम-दर्पण	
					३ कृष्ण-कुतूहल	
					४ मूलचरित	
					५ गीतावली	
					६ मिथिला आयुर्वेद-शब्दकोश	
					७ आयुर्वेद-समह	
११	२१	भाना झा (भानुनाथ)	सन् १८२१ ई०	पिलखवाड़ (दरभंगा)	प्रभावतीहरण (अन्य ग्रन्थ अनु०)	नाटककार
१२	२१७	मिश्रक मिश्र (नन्द)	सन् १८२५ ई०	मिश्रटोला (दरभंगा)	विद्यावली (अन्य ग्रन्थ अनु०) एवं स्फुट रचनाएँ	कवि एवं गद्यकार
१३	२४	*चिरंजीवी मिश्र	सन् १८२६ ई०	सिरियावाँ (गया)	स्फुट रचनाएँ (अन्य अनु०)	गद्यकार
१४	२४	बच्चू दुबे (प्रकाश मलिक, प्रकाश)	सन् १८२७ ई०	बनगाँव (शाहाबाद)	१ सुर प्रकाश	कवि
					२ रस-प्रकाश	
					३ संगीत प्रकाश तथा	
					४ भैरव-प्रकाश	
१५	२८	अयोध्याप्रसाद मिश्र	सन् १८३० ई०	नई मोहाम (गया)	१ सुधासिन्धु	
					२. स्वप्न विचार	
					३ आरोग्य शिक्षा	गद्यकार
					४ संध्या-शोधन	
					५ मांस-भक्षण-मीमांसा	
					६. जीव-जीवन सिद्धान्त	
					७ प्रश्नगुण-दर्पण	
					८. श्रीमद्भगवद्गीतार्थचन्द्रिका	
१६	३०	भक्तिराम	,,	डुमराँव (शाहाबाद)	१ कुँअर-हजारा	कवि
					२ भक्तमाला	

क०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थिति या जन्म-काल	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
१७	११	चन्दा झा (चन्द्र, चन्दीश्वर)	सन् १८३० ई०	पिण्डारुच-ठाढ़ी (दरभंगा)	१ मैथिली-भाषा रामायण २ पुरुष-परीक्षा का मैथिली गद्य-पद्यानुवाद ३ चन्द्रपद्यावली ४ महेशवाणी गीतिसुधा ५ अहिल्याचरित नाटक ६ वातभञ्जनकाव्य कथा ७ श्रीलक्ष्मीश्वर विलास	कवि, नाटककार एवं गद्यकार
१८	१६	भयभञ्जनदास (भगवती)	,,	शीतलपुर (सारन)	१ अध्यात्मज्ञान मंजरी २ भुवनमोहनस्मरण कथा ३ संसार विटप-नारायणी	कवि
१९	१८	राधावल्लभ जोशी (विप्रवल्लभ, वल्लभ विप्र, वल्लभ, काकाजी)	सन् १८३१ ई०	डुमराँव (शाहाबाद)	१ रसिक-रंजन-रामायण २ रसिकोल्लास भागवत ३ प्रेमरत्नाकर ४ विजयोत्सव ५ कृष्णलीलामृत ध्वनि ६ मधुरलतिका ७ गंगामृत तरंगिणी ८ वल्लभभुवमोष ९ वल्लभ विनोद १० वल्लभीसार ११ जेपुर [illegible] १२ सद्‌गमसी	,,

क०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थिति या जन्म-काल	स्थान		ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
२०	४१	हरनाथप्रसाद शर्मा	सन् १८११ ई	बिहारशरीफ (पटना)	१	व्याकरण-वाटिका	
					२	गुरुभक्ति-दर्पण	
					३	भाव विनोद	कवि एवं गद्यकार
					४	कन्या-दर्पण	
					५	मानस विनोद तथा	
					६	धर्मबोध	
२१	४५	*गणेशानन्द शर्मा	सन् १८११ ई०	सुरार (गया)	१	षट्ऋतुवर्णन और	कवि
					२	नायक-नायिका-लक्षण तथा स्फुट रचनाएँ	
२२	४५	रामकुमार सिंह (कुमार)	,,	सूर्यपुरा (शाहाबाद)		स्फुट रचनाएँ	,,
२३	४८	रामचन्द्र लाल (एनहगार)	सन् १८१४ ई०	डुमराँव (शाहाबाद)		,, ,,	,,
२४	५०	बैजनाथ द्विवेदी	सन् १८१८ ई०	टेकारी (गया)	१	श्रीसीतारामनामरत्नमंजरी	
					२	नख-शिख	
					३	रामरहस्य	
					४	कृष्ण-विनोद-कदम्ब	,,
					५	नाम विलास	
					६	उद्दीपन-शृंगार मंजरी	
					७	अनुभव-उल्लास	
					८	चित्राभरण	
					९	पंचदेवता-वंदन-चालीसा तथा	
					१०	भूषण-चंद्रिका	
२५	५१	नर्मदेश्वरप्रसाद सिंह (ईश)	सन् १८१९ ई०	जमीरापुर (शाहाबाद)	१	शिवाशिवशतक	
					२	शृंगार-दर्पण	कवि एवं गद्यकार
					३	धर्मप्रदर्शनी	
					४	पंचरत्न एवं स्फुट रचनाएँ	

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थिति या जन्म-काल	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
२६	५७	*जगतप्रसाद लाल	सन् १८४० ई०	अपहर (सारन)	जगोपकारक	गद्यकार
२७	५७	भगवान प्रसाद (श्रीसीतारामशरण, रूपकला)	"	मुबारकपुर (सारन)	१ तन-मन की स्वच्छता	कवि एवं गद्यकार
					२ शरीर-पालन	
					३ भागवत-गुटका	
					४ श्रीपीपाजी की कथा	
					५ श्रीभगवद्भक्तनामृत	
					६ भक्तमाल की टीका	
					७ श्रीसीताराम-मानसपूजा	
					८ भगवन्नाम-कीर्तन	
					९ श्रीसीतारामीय प्रथम पुस्तक	
					१० मीराबाई तथा स्फुट रचनाएँ	
२८	६७	रामबिहारी सहाय (बिहारी)	"	नवागाँव (सारन)	स्फुट रचनाएँ	कवि
२९	६९	रामलोचन मिश्र (भक्तभूषण)	सन् १८४१ ई०	मकसी (सारन)	१ श्रीसत्यनारायण-कथा का हिन्दी पद्यात्मक अनुवाद	
					२ बहुलाव्रत-कथा का हिन्दी पद्यात्मक अनुवाद	
					३ चर्पटी-मंजरी (मोहमुद्गर) का हिन्दी-पद्यात्मक अनुवाद	
					४ रामायण-महत्त्व	
					५ रामनाम-महिमा	
					६ ऋतु-संगीतावली	
					७ पुष्पपत्र-वर्णन	
					८ रामभक्ति-भजनावली	कवि एवं गद्यकार
					९ पिंगला-गीत	

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थिति या जन्म-काल	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
					१० गंगा सरयू महिमा ११ समस्यापूर्त्ति १२ पत्र-पद्यावली १३ आत्मजीवनी १४ स्फुट-कवितावली १५ हनुमत्प्रार्थना १६ प्रासंगिक कवितावली १७ पिंगल-कृष्णगमाष्टक-वर्णन तथा १८ शाकद्वीपीयविप्र-वर्णन	
१०	७१	अवधकुमार	सन् १८७१ ई०	बाघ (मुजफ्फरपुर)	१ रसिकविलास-रामायण २ वर्णबोध तथा स्फुट रचनाएँ	कवि
११	७४	*शिवप्रकाश लाल	,,	अपहर (सारन)	१ भागवतरस-संपुट २ भजन-रसामृतायन ३ विनयपत्रिका-टीका ४ गीतावली-टीका ५ रामगीता-टीका तथा ६ इतिहास-लहरी	कवि एवं गद्यकार
१२	७४	*हरिनाथ पाठक	,,	पाठकबिगहा (गया)	१ ललित-रामायण २ ललित भागवत ३ सत्यनारायण विनोद तथा स्फुट रचनाएँ	कवि
१३	७५	बालगोविन्द मिश्र (कमलेश कमलापति, बालगोविन्द और गोविन्द)	सन् १८७४ ई०	बेलखरा (गया)	स्फुट रचनाएँ	,,

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थिति या जन्म-काल	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
१४	८०	रामचरण राम	सन् १८७४ ई०	शाहपुर (सारन)	१ विविध विनोद तथा २ पावस-पचीसी	कवि
१५	८२	ब्रजविहारी लाल	"	महुकपुर (शाहाबाद)	१ प्रबोधचन्द्रोदय-नाटक २ रसावली-नाटिका ३ संगीत हरिश्चन्द्र ४ संगीत-सभा ५ संगीत-सुधा ६ मीसिद्धान्त-रामायण ७ मीसिद्धान्तमाला ८ पाठबोध ९ कजली-कल्याण १० आयमत-मार्तण्ड ११ सिद्धान्त-दर्पण १२ वाराणसी-आदर्श तथा १३ विद्यासुन्दर-नाटक	कवि, गद्यकार एवं नाटककार
१६	८४	*रमानाथ मिश्र	सन् १८७५ ई०	समकुरा (पटना)	१ गणित-पचीसी २ गणित-छत्तीसी ३ रेखागणित ४ गणितसार ५ रससार तथा ६ खेतीबारी	गद्यकार
१७	१४०	*जमकधारी लाल	"	दानापुर (पटना)	सुनीति-संग्रह (सं०)	"
१८	८५	उग्र मिश्र	"	डुमराँव (शाहाबाद)	स्फुट रचनाएँ	कवि
१९	८८	बनवारीलाल मिश्र	"	शाहकुण्ड (भागलपुर)	१ ज्ञानविनोद	

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थिति या जन्म-काल	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
					९. नाटक, प्रहसन तथा स्फुट रचनाएँ	कवि एवं नाटककार
४०	८८	गुरुदयाल दास	सन् १८७६ ई०	नाखिरा (गया)	१ सज्जन विलास २ निर्वाणशतकम् ३ श्रीगुरुनामविलास ४ श्रीतत्त्वचिन्तामणि ५ तत्त्वतरङ्गिणी ६ अनुभव प्रभाकर ७ सन्त-मन उन्मनी ८ पातञ्जल योगदर्शन ९ श्रीसद्गुरुस्तवराज १० मानस अभिराम तथा ११ परतर-अभिधानम्	कवि एवं गद्यकार
४१	९२	चतुर्भुज मिश्र	,,	कुमरिया (गया)	१ भाखा-रामायण २ गयाभाखी-रामायण ३ गयाभाखी-भागवत ४ सरोज-रामायण ५ षड्रस-आनन्द-कल्लोलिनी ६ सुबोध-सूर्योदय ७ मनोहर-रामायण ८ सुबोध-चन्द्रोदय ९ गीतासार तथा १० विरह-पचीसी	कवि
४२	९४	सैयद अली मुहम्मद (शाद)	,,	पटनासिटी (पटना)	स्फुट रचनाएँ	,,

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थिति या जन्म-काल	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
४३	६५	हर्षनाथ झा	सन् १८४७ ई०	उजान (दरभंगा)	१ उषाहरण २ माधवानन्द ३ राधाकृष्ण मिलन-लीला तथा स्फुट रचनाएँ	कवि और नाटककार
४४	१४२	दिवाकर भट्ट	सन् १८४८ ई०	मझवार (शाहाबाद)	१ नखशिख २ नवोढारत्न ३ प्रेमा-विलास ४ संध्याविनोद ५ संध्यासर्वस्व ६ वर्णधर्मविवेक-संहिता ७ धर्मनिर्णय एवं कुछ टीकाएँ	कवि
४५	६६	संसारनाथ पाठक (बाबा रामायणदास)	सन् १८५० ई०	मकरा डुमरा (शाहाबाद)	१ महामारी निवारण-स्तोत्र २ कवित्तनामा ३ दोहावली ४ कविता-कुंज ५ भजनावली ६ ज्ञानयोगावली ७ गुरु शिष्य-विचार ८ आत्माराम की नासिका ९ भक्ति-विनोद १० संकीर्तन माहात्म्य ११ तिलक माला महिमा तथा १२ विचार-पत्रिका	कवि एवं गद्यकार
४६	१०४	मधुरस त्रिपाठी (मठ, जगमोहन)	सन् १८५० ई०	मसुआ (सारन)	१ मठ-लहरी एवं स्फुट रचनाएँ	कवि

द्वितीय अध्याय

क०सं०	पृ०सं०	ग्रन्थकर्ताओं के नाम	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
१	१०७	*कविलदास	आरा (शाहाबाद)	स्फुट रचनाएँ	कवि
२	१०७	कमलाधर मिश्र	रतनमाला (चम्पारन)	"	"
३	१०८	करनश्याम	मिथिला	"	"
४	१०६	कान्हजी सहाय (कन्हैया)	धमार (शाहाबाद)	कन्हाजी की बधाई एवं स्फुट रचनाएँ	"
५	१११	कन्हारामदास	मिथिला	गौरी-स्वयंवर	नाटककार और कवि
६	११२	कामवर्मन	गया	१ पंचभक्ति-रसों के पदबद्ध पद और २ कहाँ कहिं न जाय का कहिये	कवि
७	११४	*कालिकाप्रसाद	बिसहर (सारन)	सिया-स्वयंवर	"
८	११४	*कालीचरण	भोजपुर (शाहाबाद)	वृन्दावन-प्रकरण	कवि
९	११४	*कालीचरण दुबे	बेतिया (चम्पारन)	स्फुट रचनाएं	"
१०	११५	*कुंजनदास	पटना	सुदामा विनोद	"
११	११५	*केदारनाथ उपाध्याय	चम्पारन	१ श्रीमद्भागवत २ कृष्णचरित्र ३ रामाश्वमेध-रामायण सभा ४ नरसिंह चरित्र	गद्यकार एवं कवि
१२	११५	गणपत सिंह	पटना	भूगोल-वर्णन	गद्यकार
१३	११६	गुरुप्रसाद सिंह	गिद्धौर (मुंगेर)	१ राजनीति-रत्नमाला २ भारत-संगीत सभा ३ पुत्रकथा	कवि एवं गद्यकार
१४	११७	*गुरुबख्श लाल	मकसूदा (गया)	कुंडलिया-रामायण	कवि

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
१५	११७	*गुलाबचन्द्र लाल (अंध कवि)	छपरा (सारन)	स्फुट रचनाएँ	कवि
१६	११८	*गोपी महाराज	बनैली (पूर्णिया)	"	"
१७	११८	गोपीश्वर सिंह (गोपीश)	दरभंगा	गोपीश्वर विनोद	"
१८	१२१	*गोविन्ददेव	मगध	स्फुट रचनाएँ	"
१९	१२१	*चतुर्भुज सहाय	सुलम्मनगर (सारन)	"	
२०	१२१	*चन्द्र शर्मा	मिथिला	उषा-हरण	"
२१	१२२	चन्द्रश्वरी राय	पचपेनिया (सारन)	स्वयंवर एवं स्फुट रचनाएँ	गद्यकार कवि
२२	१२५	*छकनलाल	गया	स्फुट रचनाएँ	
२३	१२६	*छोटक पाठक	बेतिया (चम्पारन)	"	"
२४	१२६	जगदम्बालाल बख्शी	इचाक (हजारीबाग)	१ सबरस-सागर २ प्रबन्ध शिखरोपी एवं स्फुट रचनाएं	
२५	१२८	जयदत्तनारायण सिंह	गया	स्फुट रचनाएँ	"
२६	१२९	*जयनाथ तिवारी	बेतिया (चम्पारन)	"	"
२७	१२९	टिम्मल ओझा	पटना	पुनपुन-महात्म्य	"
२८	१३०	ठाकुर	साहबगंज (छपरा)	स्फुट रचनाएँ	"
२९	१३२	*देवदत्त मिश्र	पटना	बालविवाह नाटक	नाटककार कवि
३०	१३२	नाम्हक	सारन	स्फुट रचनाएँ	
३१	१३३	*नारायण	पटना	ब्रजधाम	"
३२	१३३	*नारायणदत्त उपाध्याय	बेतिया (चम्पारन)	स्फुट रचनाएँ	"
३३	१३३	परमानन्ददास	कोरी (शाहाबाद)	१ बारहमासा २ कबीर-भानु प्रकाश एवं स्फुट रचनाएँ	"
३४	१३६	फजूरीदास (फजूरदास)	मिथिला	१ कवित्त प्रकाशी एवं स्फुट रचनाएँ	"
३५	१३७	*बद्रीनाथ	पटना	स्फुट रचनाएँ	गद्यकार एवं छन्दात्मक कवि
३६	१३८	मधुसूदन झा	पिताम्बाद (मिथिला)	"	

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
३७	११८	*बहादुरदास	डुमराँव (शाहाबाद)	निबन्ध-रामायण	—
३८	११९	*बिहारी सिंह	सारन	१ बिहारी नखशिख-भूषण २ मारुती-मंजरी तथा ३ दूती-दर्पण	कवि
३९	११९	*बुद्धराम	छोटानागपुर	स्फुट रचनाएँ	„
४०	११९	*गोपीदास	पटना	भक्त विवेक	—
४१	१४	*भगवानप्रसाद वर्मा	इचाक (हजारीबाग)	१ गोपाल-बाललीला-सार २ करुण-क्रन्दन शतक ३ श्रीनारद-कृत भक्ति-सूत्र-भाषा ४ श्रवण-माहात्म्य और हरिव्रत माहात्म्य ५ सप्तश्लोकी गीता ६ स्फुटगीतावली या कवितावली ७ भजनावली ८ श्रीमद्भगवद्गीता-माहात्म्य तथा ९ भक्ति निवेदन एवं अन्य ग्रंथ	कवि एवं गद्यकार
४२	१४०	भजनदेव स्वामी (पयहारीबाबा, निमर्बाबा)	खैरा (गया)	१ गुरु एक-एक २ श्रीवेष ज्ञान ३ ब्रह्मस्वरूप रूपक तथा ४ ज्ञानसरोवर	कवि
४३	१४२	*भवानीचरण मुखोपाध्याय	कटरा (छपरा)	स्फुट रचनाएँ	गद्यकार एवं सम्पादक
४४	१४२	भागवतनारायण सिंह (भगवंत)	रूपस (पटना)	१ रामलीला-संवाद २ वरणावली-दोहा ३ मनोहर-दोहा	कवि

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
४५	१४४	*मधुसूदनरामानुजदास	मझुआ बाजार (भागलपुर)	४ श्रीरामनामामृत दोहा तथा स्फुट रचनाएँ भगवद्धर्म दीपिका	।
४६	१४५	*महावीर चौबे	बेतिया (चम्पारन)	स्फुट रचनाएँ	कवि
४७	१४५	*महेशदास	पटना	एकादशी माहात्म्य	।
४८	१४५	मुकुन्दलाल मिश्र (रस)	पटनासिटी (पटना)	१ दुर्गा विजय २ गणिका-साधु संवाद तथा	कवि
४९	१५०	मुनीन्द्र	बिठौली (मिथिला)	३ बिहारी-सतसई की टीका श्रीजगदम्बा-स्तुति तथा स्फुट रचनाएँ	कवि
५०	१५१	*रघुवंश सहाय	छपरा (सारन)	समधन-माला	"
५१	१५२	रत्नपाणि (खरैया झा)	मिथिला	उषा-हरण तथा स्फुट रचनाएँ	नाटककार एवं कवि
५२	१५४	रामचन्द्रशरण (बालकीमणा)	छपरा (मुँगेर)	रसिक-परतार	कवि
५३	१५५	राम	जगदीशपुर (शाहाबाद)	कुँवर पचासा एवं स्फुट रचनाएँ	"
५४	१५६	*रामचरणदास (हंसकला, मागा पाठक)	गंगहरा (सारन)	राम माहात्म्य-चन्द्रिका	।
५५	१५७	रामरूपदास	पुष्पपुर (दरभंगा)	गोपाल-सागर तथा स्फुट रचनाएँ	कवि
५६	१५८	रामसनेहीदास	मथुरा (दरभंगा)	"	"
५७	१६१	रिपुभंजन सिंह	दलीपपुर गढ़ (शाहाबाद)	"	"
५८	१६१	*लक्ष्मीनारायण	अखिलयारपुर (शाहाबाद)	स्फुट रचनाएँ	"
९	१६४	लक्ष्मीसखी (लक्ष्मीदास)	अमनौर (सारन)	१ भ्रमरसीढ़ी	"

क० सं० पृ० सं०	ग्रंथकारों के नाम	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
			२ भ्रमर-कहानी ३ भ्रमर विलास ४ भ्रमर-फाग तथा स्फुट रचनाएँ	
९० ११७	लालदास्	गोपालपुर (भागलपुर)	स्फुट रचनाएँ	कवि
९१ ११८	*विजयगोविन्द सिंह	फरकिया-स्टेट (पूर्णिया)	दिल्लीनामा तथा स्फुट रचनाएँ	"
१८	श्यामसुन्दर	बनैली (पूर्णिया)	स्फुट रचनाएँ	"
१६	श्यामसेवक मिश्र	सूर्यपुरा (शाहाबाद)	"	"
७	शिवप्रसाद (कवीश्वर)	गया	१ सप्त-छप्पै-रामायण २ नन्दनवन हरखंड-रामायण ३ सप्त-खण्डनो छंद-रामायण ४ संक्षिप्त दोहावली-रामायण ५ सप्तहारि-गीत-छंद-रामायण ६ सप्त सोरठा-रामायण ७ अनुष्टुप् रामायण ८ पंचपदावली-रामायण ९ हरिहरात्मक-हरिवंशपुराण तथा स्फुट रचनाएँ	"
	शिवस्वरूप मिश्र	केसपा (गया)	स्फुट रचनाएँ	"
	नसाम (रायसाहब)	पटना	१ बौद्ध बिजली-बल २ रसद बिजली-बल तथा ३ वायुविद्या	गद्यकार, कवि एवं सम्पादक
	हरनाथ सहाय	सारन	काशीखण्ड	
	*हरनारायण दास	इस्लामपुर (पटना)	स्फुट रचनाएँ	कवि

क्र॰ सं॰	पृ॰ सं॰	साहित्यकारों के नाम	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
६९	१७६	*हरवहाय भट्ट	पटना	१ रामरत्नावली तथा २ रामरहस्य	।
७०	१७७	हरिचरणदास	कसबा (पूर्णिया)	१ हरिचरणामृत-सतसई तथा २ चिन्तामणि	कवि
७१	१७८	*हरिराम द्विवेदी	दे भुंठवा (चम्पारन)	रामायण का हिन्दी पद्यानुवाद (अपूर्ण) तथा स्फुट रचनाएँ	,,

तृतीय अध्याय

१	१८०	*चम्पालिका देवी	रामनगर (चम्पारन)	राजपूत-रमणी का हिन्दी अनुवाद	गद्यकार
२	१८०	*अम्बिकाप्रसाद उपाध्याय	रामनगर (चम्पारन)	नेपाल का इतिहास	
३	१८०	अम्बिकाचरण	सारन	स्फुट रचनाएँ	कवि
४	१८१	ईनरराम	चम्पारन	,,	,,
५	१८१	उमानाथ वाजपेयी	पिडोरवा (चम्पारन)	,,	,,
६	१८२	करतारास	कोटी (मुजफ्फरपुर)	करताराम कपद तथा स्फुट रचनाएँ	,,
७	१८४	कवीन्द्र	मिसोधी (मिथिला)	स्फुट रचनाएँ	,,
८	१८४	*कारीराम	चम्पारन	,,	,
९	१८५	कृष्णदास	बेलवतिया (चम्पारन)	,,	,,
१०	१८६	कोसेश्वर बाबा	सारन	,	,,
११	१८६	कृपानारायण	नयागाँव (सारन)	आशिक मया तथा स्फुट रचनाएँ	,,
१२	१८७	*कृष्णप्रताप शाही	हसुआ (सारन)	शाक सुरगर तथा स्फुट रचनाएँ	
१३	१८७	*चन्दन मिश्र	ममरखा (चम्पारन)	चैनसिंह का पँवारा	कवि
१४	१८८	*गंगारस उपाध्याय	चम्पारन	।	।
१५	१८८	गुमानचन्द्र (आनन्द)	शाहाबाद	आनन्द-भण्डार	कवि
१६	१८९	*गोविन्द मिश्र (कबीरपर)	दरभंगा	स्फुट रचनाएँ	,,

क्र सं०	पृ० सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
१७	१८८	*गोरीदत्त	चम्पारन	स्फुट रचनाएँ	कवि
१८	१८९	*जगन्नाथ सहाय	हजारीबाग (छोटानागपुर)	१ आनन्द-सागर २ प्रेमरसामृत ३ भक्तरसनामृत ४ भजनावली ५ कृष्णबाललीला ६ मनोरंजन ७ चौपहरत्न ८ गोपाल सहस्रनाम तथा स्फुट रचनाएँ	,,
१९	१९०	अमरवरी मधुमालिन	महरपोखिया (दरभंगा)	स्फुट रचनाएँ	,,
२०	१९१	जयगोविन्द महाराज	महेरा (पूर्णियाँ)	१ साहित्य-पयोनिधि २ अलंकार-भास्कर ३ कविता-कौमुदी ४ समस्यापूर्ति ५ दुर्गाष्टक तथा स्फुट रचनाएँ	,,
२१	१९५	*भवनाथ झा (कमलेश्वर)	हरिहरपुर (दरभंगा)	स्फुट रचनाएँ	
२२	१९५	*बहादुर प्रसाद	चम्पा खरौरी (शाह बाद)	,,	,,
२३	१९६	*जानकी प्रसाद	पटना	मानस अभिप्राय दीपक पर वार्तिक-टीका	टीकाकार
२४	१९६	*ठाकुर प्रसाद (जगदीशपुरी)	जगदीशपुर (शाहाबाद)	स्फुट रचनाएँ	कवि
२५	१९६	*बीहूराम	चम्पारन	,,	,,

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
२६	१६७	रोशनराम	सगारि (सारन)	१ झूमर पचासा २. मझौली-विवाह-वर्णन तथा ३ विन्ध्यवासिनी-स्तोत्र स्फुट रचनाएँ	कवि
२७	१६८	रतनदास	चम्पारन	"	"
२८	१६६	*दीनदयालु	मठिया (चम्पारन)	अनुभव प्रकाश तथा स्फुट रचनाएँ	"
२९	१६६	दोलतराम	फतुहा (पटना)	स्फुट रचनाएँ	"
३०	२०१	द्वारकाप्रसाद मिश्र (कविरत्न)	पचरुखिया (शाहाबाद)	"	"
३१	२०१	धनराम	कोटी (मुजफ्फरपुर)	"	"
३२	२०४	*धुरदास	छपरा (सारन)	१ बानी २ सिद्धान्त विचार और ३ भक्ति नामावली सुखसागर स्फुट रचनाएँ	कवि एवं गद्यकार
३३	२ ४	*नवरंगी सिंह	रीगा (मुजफ्फरपुर)	"	कवि
३४	२ ४	*परमहंसबाबा	मँगुराहा (चम्पारन)	"	"
३५	२०५	पूरनराम	बाराचुर (चम्पारन)	"	"
३६	२०५	*प्यारेदास	बेतिया (चम्पारन)	"	"
३७	२०६	माधपुरुष	चम्पारन	रामनारायण प्रेम कथा का पद्य गुबाद तथा स्फुट रचनाएँ	"
३८	२०६	फल्लबाबू	मोतीहारी (चम्पारन)	नाटक-प्रेम भंग	नाटककार
३९	२०७	भुवन झा	पचुमन्जर (चम्पारन)	स्फुट रचनाएँ	कवि
४०	२०८	*भगनाथ झा	गंगौली (दरभंगा)	१ गंगालहरी २ नखशिख रामचन्द्रजी ३ मदनेश मौजमालिका ४ मदनेश-कल्पद्रुम	"
४१	२०८	मनगाराम	धुधरमा (चम्पारन)		
४२	२०९	*महारथप्रसाद (मदनेश)	फतुहा (पटना सिटी)		

क०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
				५. संकटमोचन-आरती ६. मल्लेश-कोप ७. मनमोद-बाबा की सरहदार कुंजी तथा ८. भैरवाष्टक	
४३	२०९	माधवेश्वरेन्द्र प्रताप शाही (माधव)	मौंका (सारन)	माधव-मुक्तावली तथा स्फुट रचनाएँ	कवि
४४	२१०	*मायाराम चौबे	मुसहरवा (चम्पारन)	"	"
४५	२११	मित्रनाथ	गंगौली (दरभंगा)	"	"
४६	२११	मिसरीदास	चम्पारन	"	"
४७	२१२	*युगलकिशोर	कुर्था (गया)	"	"
४८	२१२	योगेश्वर राम (परमहंस बाबा)	स्वर्गसिखा-मठ (चम्पारन)	स्वरूप-प्रकाश एवं स्फुट रचनाएँ	"
४९	२१३	*रमाकान्त	मिथिला	स्फुट रचनाएँ	"
५०	२१३	*रमापति	"	"	"
५१	२१३	*राजेन्द्रकिशोर सिंह	बेतिया (चम्पारन)	"	"
५२	२१४	राजेन्द्रप्रसाद सिंह	पटेढ़ी (सारन)	"	"
५३	२१५	रामधन राम	चम्पारन	"	"
५४	२१६	रामलाल मिश्र	माधोपुर (चम्पारन)	"	"
५५	२१७	रामस्वरूप राम	कनवरा-मठ (चम्पारन)	"	"
५६	२१७	*रामेश्वरप्रसादनारायण सिंह (महाराजा बहादुर, टेकारी)	मकसूदनपुर (गया)	"	"
५७	२१८	शंकरदास	चम्पारन	"	"
५८	२१८	*शालिग्रामदास	छपरा (सारन)	रसिक प्रकाश (भक्तमाल की सुबोधिनी टीका)	टीकाकार
५९	२१८	*शत्रुघ्न मिश्र	मलपटिया (चम्पारन)	मंत्रदीपिका	गद्यकार
६०	२१९	शम्भुदत्त झा	उजान (दरभंगा)	स्फुट रचनाएँ	कवि

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	स्थान	ग्रन्थों के नाम	प्रवृत्ति
६१	२१९	शिवकविराय	जगदीशपुर (शाहाबाद)	स्फुट रचनाएँ	भक्ति
६२	२२०	*शिवेन्द्र शाही (लाल साहब)	माँझा (सारन)	,,	,,
६३	२२०	*शोभा उपाध्याय (शोभन मिश्र)	शीतलपुर-बरेजा (सारन)	,,	,,
६४	२२१	*शोभनराम	चम्पारन	,,	,,
६५	२२१	*श्रीधर शाही	माँझा (सारन)	,,	,,
६६	२२१	सनाथराम	चम्पारन	,,	,,
[illegible]	२२१	सबलराम	,,	,,	,,
६८	२२१	*हरिनाथ मिश्र (कवीश्वर)	शाहबाजपुर (मुजफ्फरपुर)	वैद्यनाथ-विलास एवं स्फुट रचनाएँ	,,
६९	२२१	*हीरा साहब	माँझा (सारन)	स्फुट रचनाएँ	,,

१ *तारक-चिह्नित साहित्यकारों की रचना के उदाहरण नहीं मिले हैं।

परिशिष्ट-६

[मूल पुस्तक में संकलित उदाहरणों की प्रथम पंक्ति की अक्षरानुक्रम से सूची]



* प्रकाशन : कुल १८० पदसंख्या । तारक-चिह्नित अंश पत्र के अपठनीय है ।—सं०

व्यक्तिनामानुक्रमणी

ग्रन्थ एवं पत्र-पत्रिकाओं की नामानुक्रमणी

●

सहायक ग्रन्थों की सूची

Biography of Kunwar Singh and Amar Singh—Dr K.K. Datta
Eighteen-fifty Seven –Dr Surendranath Sen.
चम्पारन की साहित्य-साधना—रमेशचन्द्र झा
बिहार-दर्पण—रामदीन सिंह
मिश्रबन्धु-विनोद—मिश्रबन्धु
श्रीसीतारामशरण भगवानप्रसादजी की जीवनी—शिवनन्दन सहाय
रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय—डॉ॰ भगवतीप्रसाद सिंह
कविता-कौमुदी—पं॰ रामनरेश त्रिपाठी
रामभक्ति-साहित्य में मधुर उपासना—डॉ॰ भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव'
दुर्गानिमतरंगिणी या दुर्गाभक्तितरंगिणी (हस्तलिखित)—जयनारायण सिंह
History of Maithili Literature—Jaikant Mishra
मैथिली-गीत-रत्नावली—पं॰ बदरीनाथ झा
पुस्तकभंडार-रजत जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ—समारोह-मण्डल
प्रभावतीहरण—भाना झा (भानुनाथ)
गया के लेखक और कवि—द्वारकाप्रसाद गुप्त
बिहार की साहित्यिक प्रगति—बिहार हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पटना
आत्मचरित-चम्पू—प्रो॰ जयचन्द्र मिश्र
श्रीमद्भगवद्गीतार्थचन्द्रिका—पं॰ अयोध्याप्रसाद मिश्र
कविवर पं॰ चन्दा झा—पं॰ बलदेव मिश्र
श्रीलक्ष्मीश्वरविलास—पं॰ चन्दा झा
चन्द्रपद्यावली—श्री बलदेव मिश्र
मैथिली रामायण—पं॰ चन्दा झा
श्रीराजराजेश्वरी-पद्यावली—राजा राजराजेश्वरीप्रसाद सिंह 'प्यारे'
विन्दा कवि और बैजनाथ कवि का जीवन-परिचय (हस्तलिखित)—प्रो॰ घनश्याम सिन्हा
हिन्दी-साहित्य और बिहार (प्रथम खण्ड)—आचार्य शिवपूजन सहाय
शिवाशिवशतक—डा॰ नर्मदेश्वरप्रसाद सिंह
शृंगार-दर्पण— ,,
धर्म मदरान्ते— ,, ,,

हिन्दी-पुस्तक-साहित्य—डॉ० माताप्रसाद गुप्त
हरिऔध-अभिनन्दन-ग्रन्थ—सम्पादक-मण्डल
श्रीरूपकला-परिचामृत—रामलोचनशरण
श्रीरूपकला के संस्मरण—रघुनाथप्रसाद मुख्तार
श्रीरूपकला : एक झाँकी—भगोरी वासुदेवनारायण
श्रीरूपकलाप्रकाश—रघुवंशभूषण
Shri Rupkala and His life and teachings—A.B.N Sinha
Bhagwan Rupkala and His Mission— ,,
श्रीभक्तमाल भक्तिसुधास्वाद-तिलक—रूपकला
भोजपुरी के कवि और काव्य—दुर्गाशंकरप्रसाद सिंह
श्रीसीतारामीय प्रथम पुस्तक—भगवानप्रसाद 'रूपकला'
श्रीरामनाममहिमा (हस्तलिखित)—पं० रामलोचन मिश्र
रसिक-विलास-रामायण—अवधकुमार
डॉ० ग्रियर्सन-कृत हिन्दी-साहित्य का प्रथम इतिहास—किशोरीलाल गुप्त
कमलेशविलासः—पं० मोहनशरण मिश्र
कविता-कुसुमाञ्जलि— ,, ,,
गयावासी-भागवत—पं० चतुर्भुज मिश्र
मनोहर-रामायण— ,, ,,
शेर-ओ-सुखन—अयोध्याप्रसाद ग्रोमतीव
उर्दू शायरी और बिहार—रजा नक़वी
An Introduction to Maithili Language of North Bihar Containing Grammer, Chrestomathy and Vocabulary—G A Grierson
मट्टिकाव्यम्—जयराम शर्मा
मैथिली साहित्यक इतिहास—पं० कृष्णकान्त मिश्र
हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण—श्यामसुन्दरदास
भूगोल-वर्णन—गणपत सिंह
प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण—डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री
भागलपुर-दर्पण—पं० कारवाणी झा
गोपीश्वर-विनोद—गोपीश्वर सिंह
पुनपुन-माहात्म्य—विश्वास ओझा
कबीर भानुप्रकाश (हस्तलिखित)—परमानन्ददास
बारहमासा (हस्तलिखित)— ,,
मिथिला-गीत-संग्रह—भोला झा
हिन्दी-साहित्य को बिहार की देन—प्रो० कामेश्वर शर्मा

बाबू कुँवरसिंह—दुर्गाशंकरप्रसाद सिंह
तवारिखे उज्जैनिया—मुंशी विनायकप्रसाद
अमर-कहानी—लछमीसखी
अमर-विलास— ,, ,,
भजन-संग्रह — ,, ,,
अयोध्याप्रसाद खत्री-स्मारक ग्रन्थ—शिवपूजनसहाय तथा नलिनविलोचन शर्मा
हरिचरणामृत सतसई—श्रीमहन्त हरिचरणदास
संतमत का सरभंग-सम्प्रदाय—डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री
रघुवीरनारायण—जीवनी तथा कवितायें (टंकित)—चन्द्रकिशोर पाण्डेय
हिन्दी सेवी-संसार—प्रेमनारायण टंडन
मिथिलाभाषामय इतिहास—पं० मुकुन्द झा बख्शी
अनुभव-प्रकाश—धीरजराम
सुभाषितरत्नभाण्डागारम्—पं० शिवदत्त कविरत्न
स्व० बाबू साहबप्रसाद सिंह की जीवनी—बाबू शिवनन्दनप्रसाद
श्रीराजेन्द्र अभिनन्दन-ग्रन्थ—सम्पादक-मण्डल
मैं वही हूँ—दामोदर शास्त्री सप्रे
भूषन के पद (हस्तलिखित)—अज्ञात
हिन्दी-शब्दसागर—सम्पादक-मण्डल
कलम-शिल्पी—उमाशंकर
हिन्दी-साहित्य का इतिहास—पं० रामचन्द्र शुक्ल
हिन्दी-भाषा और साहित्य का विकास—पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'
उमापति उपाध्याय और नव पारिजात मंगल—बजरंग वर्मा
The Tenth Report on the Search of Hindi Manuscripts
for the years 1917 1918 and 1919—Rai Bahadur Hiralal
शिवसिंह-सरोज—शिवसिंह सेंगर
अनन्य-परिचय और अनन्य-सागर—स्वामी हनुमानदास
The Eleventh Report on the Search of Hindi Manuscript
for the year 1920 1921 and 1922—Rai Bahadur Hiralal
हिन्दी के मध्यकालीन खण्डकाव्य (टंकित)—सियाराम तिवारी
कुँवरसिंह-अमरसिंह—डॉ० कालीकिंकर दत्त
बिहारी-विहार—पं० अम्बिकादत्त व्यास
पाण्डवचरितार्णव (हस्तलिखित)—रवीदास
विनयपत्रिका की रामतत्त्वबोधिनी टीका—शिवप्रकाश सिंह
रसिक-उद्गार—राजेन्द्रशरण

सहायक पत्र-पत्रिकाएँ

नईधारा (मासिक)—पटना
गंगा (मासिक)—भागलपुर
साहित्य (त्रैमासिक)—पटना
Journal of Asiatic Society of Bengal (त्रैमासिक)—कलकत्ता
देवनागर (मासिक)—कलकत्ता
गृहस्थ (साप्ताहिक)—गया
नागरी प्रचारिणी-पत्रिका (त्रैमासिक)—काशी
आर्यावर्त (दैनिक)—पटना
सुधा (मासिक)—लखनऊ
माधुरी (मासिक)—लखनऊ
समस्यापूर्ति (मासिक)—पटना
शतदल (अर्द्ध वार्षिक)—गया
बालक (मासिक)—पटना
सरस्वती (मासिक)—प्रयाग
संकीर्तन-सन्देश (मासिक)—मेरठ
किशोर (मासिक)—पटना
सम्मेलन पत्रिका (त्रैमासिक)—प्रयाग
मनोरमा (मासिक)—प्रयाग
आर्यमहिला (मासिक)—काशी

कल्याण (मासिक)—गोरखपुर
लक्ष्मी (मासिक)—गया
कवि (मासिक)—गोरखपुर
शाहाबाद (साप्ताहिक)—आरा
गाँवघर (पाक्षिक)—आरा
आदिवासी (साप्ताहिक)—राँची
आज (दैनिक)—काशी
श्रीहरिश्चन्द्र-कला (मासिक)—काशी
मुरारका महाविद्यालय-पत्रिका (वार्षिक)—भागलपुर
साहित्य-पत्रिका (मासिक)—आरा
रसिक-मित्र (मासिक)—कानपुर
प्रभाकर (साप्ताहिक)—मुंगेर
वार्षिकी (वार्षिक)—मोतीहारी
नवराष्ट्र (दैनिक)—पटना
परिषद् पत्रिका (त्रैमासिक)—पटना
पाटलिपुत्र (साप्ताहिक)—पटना
हिन्दी-अनुशीलन (त्रैमासिक)—प्रयाग
उत्तर बिहार (साप्ताहिक)—पटना
शिक्षा (साप्ताहिक)—पटना